ओ३म्
राष्ट्रधर्मी
डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे
अभिनन्दन ग्रन्थ

राष्ट्रधर्मी डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे
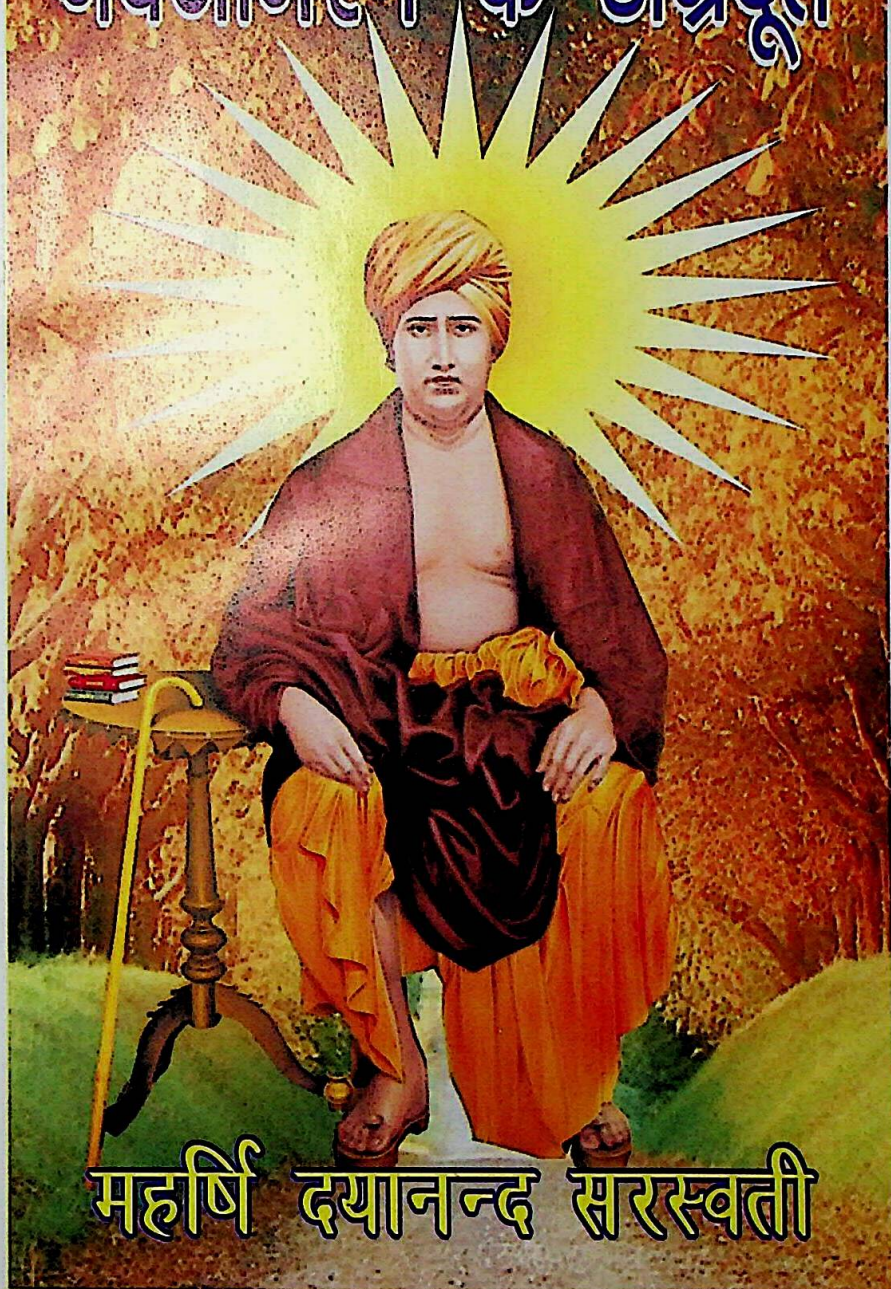
नवजागरण के अग्रदूत
महर्षि दयानन्द सरस्वती

राष्ट्रधर्मी
डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे
अभिनन्दन ग्रन्थ

यो भूतं च भव्यं च सर्व पश्चाधि तिष्ठति।
स्वर्यस्व च केवलं तस्मैं ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः।।

जो परब्रह्म भूत, भविष्य एवं वर्तमान इन तीनों कालों के व्यवहार को जानने वाला है तथा जो सब जगत् को अपने विज्ञान से ही जानता, रचता, पालन करता तथा प्रलय करता है और संसार के सब पदार्थों का अधिष्ठाता अर्थात् स्वामी है। जिसका आनन्द ही केवल स्वरूप है । जो कि मोक्ष और व्यवहार सुख देने वाला है, उस सबसे महान् सामर्थ्ययुक्त परब्रह्म को अत्यन्त श्रद्धा एवं प्रेम से हमारा नमस्कार हो।

राष्ट्रधर्मी

डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे

जन्म : २३ अक्टूबर १९४८

अभिनन्दन ग्रन्थ समिति

पं. आत्मानन्द शास्त्री

पं. दीनानाथ शास्त्री

डा. चन्द्रकान्त गर्जे

कुलदीप कुलश्रेष्ठ

डा.सुशील कुमार त्यागी

संजय सत्यार्थी

डा. अशर्फीलाल शास्त्री

प्रो. रामअवतार शर्मा

डा. राजेन्द्र कुमार व

डा. ओमप्रकाश भटना

प्रो. नरदेव गुडे विद्याभास्कर

आचार्य मोक्षराज

सम्पादक मण्डल

पं. आत्मानन्द शास्त्री

डा. हरीसिंह पाल

सौ.ज्योति देशमुख

डा. देवदत्त तुंगार

प्रो. नरदेव गुडे

प्रो. यज्ञमित्र आयंगार

पं. सत्यवीर शास्त्री

दिनकरराव देशपांडे

मुख्य सम्पादक

डा. अखिलेश आर्येन्दु

वायुदूत : 9868235056

अभिनन्दन ग्रन्थ की आत्मकथा

मानव जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि है, उसका प्राणिमात्र हेतु समर्पित होना। मानव जीवन से सम्बन्धित अनेकानेक मूल्यों का विभिन्न क्षेत्रों में जितना अवदान हो सकता है, उसका वर्णन करना यदि असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य है। मानवीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, राष्ट्रीय और साहित्यिक मूल्यों को जीवन को सार्थक करने के लिए समावेशित करना एक उत्कृष्ट व्यक्ति ही कर सकता है। संसार में ऐसे बहुत कम लोग हैं जिनका समग्र जीवन मूल्यों के साथ व्यतीत होता है। जिन्होंने अपना जीवन मानवीय मूल्यों और अन्य मूल्यों के लिए समर्पित कर दिया, वे समाज के लिए प्रेरणीय होते हैं । ऐसे ही प्रेरणा पुरुष हैं डॉ. चन्द्रशेखर । और महाराष्ट्र की धरती तो उन अनेक मूल्यों को उद्भाषित करने वाली मानी जाती है जिससे देश ,समाज, संस्कृति और धर्म का उत्कृष्ट–रूप सकल धरा पर विस्तारित होता है। 'मूल्य' शब्द ही अपने आप में इतना गुरु–गम्भीर्य है कि जिसके साथ भी इसका प्रयोग किया जाता है, उसमें एक 'विशेषता' अवश्य प्रतीत होती है। वह चाहे वस्तु के साथ हो, जीवन के साथ हो या समाज के साथ। जब मैं किसी व्यक्ति विशेष के जीवन मूल्यों के सम्बन्ध में बात करता हूँ तो उसका कोई गम्भीर अर्थ अवश्य निकाला जाना चाहिए। आज डॉ. चन्द्रशेखर के सम्बन्ध में जब हम बात करने जा रहे हैं तो उनके जीवन मूल्यों के प्रेरक सन्दर्भ अवश्य समझे और देखें जाने चाहिए।

मैं मानता हूँ, महाराष्ट्र कई अर्थों में देश के अन्य प्रान्तों से भिन्न ही नहीं आदर्श भी है। उसके अनेक कारणों में यहाँ के लोगों में समाजसेवा, समाजसुधार और जीवनधर्मिता की तेजस्विता और जीवन्तता का होना तो है ही देश और मानवता के प्रति सेवा की उत्कृष्ट भावना का भी होना है । ऐसा लगता है जैसे इस माटी में संस्कृति, धर्म, समाज के मूल्य समाहित हैं । एक दो नहीं सैकड़ों उदाहरण इसके लिए दिये जा सकते हैं । इस पुण्यभूमि के ही राष्ट्रधर्मी सपूत हैं डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डेजी।

सन् 2012 के जुलाई मास की बात होगी। चन्द्रशेखरजी का फोन आया। उन्होंने दिल्ली में हिन्दी सेवी पुरस्कार उन्हें प्राप्त होने की मुझसे चर्चा की। मुझे सुनकर बहुत ख़ुशी हुई। खुशी मित्र के कारण नहीं बल्कि इस लिए हुई की मराठी क्षेत्र के व्यक्ति को 'हिन्दी–सेवी' का पुरस्कार दिया जा रहा था। हिन्दी के लिए जो अच्छा कहा जा सकता है । दो दिन बाद फिर फोन आया कि यह पुरस्कार वे ग्रहण करने नहीं आ रहे हैं, इस लिए मुझे ही उनके प्रतिनिधि के रूप में पुरस्कार ग्रहण करना है। इसी दौरान, दिल्ली में अन्तरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया गया था।

इसमें चन्द्रशेखर जी सहित महाराष्ट्र के अनेक आर्य लेखकों और समाजसेवियों का आना हुआ। लेकिन, इसके पूर्व यह पता चला कि मुम्बई और लातूर की कुछ संस्थायें डॉ. चन्द्रशेखरजी की आयु के 65 वर्ष पूर्ण होने और उनके समाज, साहित्य, संस्कृति और धर्म के लिए दिये गए अवदान व उनके द्वारा मानवता के लिए की गई सेवा को लेकर एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट करने और अभिनन्दन समारोह आयोजित करने का विचार कर रहीं हैं। इसके लिए समूची रूपरेखा भी तैयार कर ली गई है। यह सुनकर मुझे, इस बात का सन्तोष हुआ कि ऐसे जीवनधर्मी और सृजनधर्मी व्यक्ति का अभिनन्दन करना ऐसी प्रवृतियों के अभिनन्दन करने जैसा है जिनका जीवन ही समाज, साहित्य और संस्कृति के उन्नयन और रक्षा के लिए समर्पित होता है। कुछ दिन बाद एक पत्र आया जिसमें अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन और अभिनन्दन समारोह आयोजित करने की चर्चा की गई थी। साथ में यह भी निवेदन था कि मुझे अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रधान सम्पादक के रूप में उनकी इच्छा का सम्मान करना चाहिए। मैंने अपने उत्तर में निवेदन किया कि इसके लिए किसी अन्य सुयोग्य व्यक्ति को इसका कार्य–भार सौंपा जाय, क्योंकि उस समय मुझे किसी बड़े और जिम्मेदारी वाले कार्य के लिए समय नहीं मिल पा रहा था। उसका कारण था, मेरा स्वतन्त्र लेखन और आर्य सन्देश(सा.) का सम्पादक होना। लेकिन मेरे आग्रह को अस्वीकार करके फिर एक पत्र आया कि आप की स्थिति, ज्ञान, अनुभव और योग्यता के कारण हम सभी ने यह निर्णय लिया है कि अभिनन्दन ग्रन्थ के सम्पादन का कार्य मुझे स्वीकार करना ही पड़ेगा,सभी लोगों की ऐसी इच्छा है। जनभावना और विद्वत समाज की भावना का आदर करते हुये मैंने इस गुरु–गम्भीर्य कार्य को स्वीकार कर लिया। अब मेरे सामने इसको ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित कराना ही नहीं बल्कि आर्य जगत् के विशाल विद्वत परिवार से अनेक विषयों पर लेख जुटाना भी गम्भीर चुनौती थी। मैंने संकल्प किया, जब मैंने सम्पादन का कार्य स्वीकार किया है तो चाहे जो भी समस्या आये उससे भागना नहीं है।

चन्द्रशेखर जी में अनेक प्रकार के जीवन मूल्य उनके कार्यों में ही नहीं व्यवहार और अन्य अवसरों पर भी प्रत्यक्षता देखे जा सकते हैं । एक उदात्त चरित्र के व्यक्ति में जो विशेषतायें और मूल्य होने चाहिए, वे चन्द्रशेखर जी ने अपने जीवनपथ पर सजोये संवारे हैं । यह राय और विचार उनके सहपाठियों का ही नहीं बल्कि उनके सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति रखता है ।

देश–धर्म अन्य सभी धर्मों से उत्कृष्ट और संप्रेषणीय माना जाता है । इस लिए मातृभूमि के लिए जीना सबसे उत्कृष्ट माना गया है । इस लिए जब हम कहते हैं कि देशसेवा सभी सेवाओं से उत्कृष्ट और पुण्य है, तो इसके साथ यह बातं भी जुड़ जाती है कि जीवन की उत्कृष्टता, सफलता और पूर्णता इस सेवा से प्राप्त हो जाती है। चन्द्रशेखर जी इस विचार को लेकर ही बचपन से लेकर अब तक सतत् आगे बढ़ रहे हैं । समाज और राष्ट्र के लिए की गईं उनकी सेवाओं को देखकर ही उनके लिए 'राष्ट्रधर्मी' जैसा शब्द का प्रयोग किया गया है ।

देश, समाज और धर्म की सेवा करने वाले व्यक्ति में सम्मान की इच्छा शायद ही कभी आती हो। लेकिन ऐसे व्यक्तियों का सम्मान करके संस्थायें खुद को गौरवान्वित अनुभव करती हैं । यही

बात डॉ. लोखण्डे जी के सन्दर्भ में भी लागू होती है । जिन संस्थाओं ने इनका सम्मान करने का संकल्प किया, वे ऐसा करके स्वयं को गर्व का अनुभव कर रही हैं ।

कुछ वर्ष पूर्व की बात होगी। एक बार किसी ने चन्द्रशेखरजी के कार्यों को लेकर उनका सम्मान किये जाने की बात की तो चन्द्रशेखर जी मुस्कराये और बोले—क्या होगा सम्मान—अम्मान । अपना जो कार्य है, उसे सतत् करते जाना है । निश्चित ही निःस्पृह सेवा चाहे समाज की हो या देश की, धर्म की हो या संस्कृति की और चाहे साहित्य की, वह सम्मान के लिए नहीं की जाती । यदि सम्मान के लिए सेवा की जाती है तो वह 'सेवा' नहीं 'स्वार्थ' के दायरे में मानी जायेगी। चन्द्रशेखरजी की सेवाओं के सन्दर्भ में मैं तो कुछ विशेष नहीं कह सकता लेकिन उन लोगों की दृष्टि और विचार का हमें तो आदर करना ही चाहिए जो इन्हें (चन्द्रशेखरजी को) इनके कार्यों, सेवाओं और राष्ट्रधर्मिता के सम्बन्ध में जानते हैं ।

समाजसेवा हो या राष्ट्रसेवा अथवा धर्मसेवा सभी व्यक्ति के स्वयं के जीवन को उत्कृष्ट और सफल बनाते हैं । राष्ट्र और समाज को इनसे जो लाभ मिलता है उसका मूल्य अमूल्य होता है । डॉ. साहब की सेवाओं को लेकर हम ऐसा विचार सुदृढ़ कर सकते हैं । अभी तो उन्होंने 65 वसन्त पार किये हैं । उनका समग्र मूल्यांकन अभी हम कर भी नहीं सकते हैं, लेकिन किसी व्यक्ति के श्रेष्ठ कार्यों की समीक्षा के लिए 65 वर्ष कम भी नहीं होते हैं । यह अभिनन्दन ग्रन्थ उनके प्रेरणाप्रद कार्यों की एक प्रकार से समीक्षा ही है । मेरी कोशिश भी यही है कि मैं अपनी ओर से कोई दर्शन, विचार या प्रमाण उनके सन्दर्भ में प्रेषित न करूं। इस ग्रन्थ में जितनी भी सामग्री सम्मिलित की गई है उसका मूल्यांकन विद्वत् समाज तो करे ही, इस ग्रन्थ का स्वाध्याय करने वाले सुधि पाठक भी करें।

मुझे इस बात की खुशी होगी कि चन्द्रशेखरजी के सम्बन्ध में इस ग्रन्थ में सम्मिलित सामग्री पर विद्वत समाज और पाठकगण अपनी निष्पक्ष राय प्रेषित करें। इससे मुझे इस बात का सन्तोष होगा कि मेरे परिश्रम का मूल्यांकन उचित और संतुलित ढंग से किया गया।

अन्त में, मैं चन्द्रशेखर जी के 65 वें जन्मदिवस पर अपनी अनेकशः शुभकामनायें प्रेषित करता हुआ यह कामना करता हूँ कि जिस जीवन्तता, दृढ़ता और शुभ संकल्प के साथ वे अपनी सेवायें समाज, राष्ट्र, धर्म, साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में देते रहे हैं, उसी संकल्प, दृढ़ता और जीवन्तता के साथ निरन्तर आगे भी देते रहें और मानवता व राष्ट्र को अपना अवदान समर्पित करते रहें ।

भूयश्य शरदः सतात् की कामना के साथ

अखिलेश आर्येन्दु
प्रधान सम्पादक, डॉ. चन्द्रशेखर अभिनन्दन ग्रन्थ

सम्पादकीय

मनस्वी व्यक्तियों का जीवन अद्भुत, प्रेरक और अनुपम होता है। समय की धारा को मोड़ने की कूबत रखने वाले इन मनीषियों के सम्बन्ध में महात्मा भतृहरि ने बहुत प्रेरक और मननीय बात कही है। श्लोक इस प्रकार है-

क्विवत् पृथ्वीशय्यः क्विवदपि च पर्यकड.शयनः, क्विच्छाकाहारः क्विवदपि च शाल्योदनरुचि।।
क्विवत् कन्थाधारी क्विवदपि च दिव्याम्बरधरो, मनस्वी कार्यार्थी न गणपति दुःखं न च सुखम्।।

अर्थात् कार्य की सिद्धि चाहने वाला मनस्वी पुरुष कहीं पृथ्वी पर शयन करता है तो कहीं पलंग पर शयन करता है। कहीं साग-पात खाता है तो कहीं शालिधान भात का स्वाद लेता है। कहीं गुदड़ी को धारण करता है, तो कहीं बहुमूल्य वस्त्र भी धारण करता है, फिर भी वह सुख या दुख की परवाह नहीं करता अर्थात् मनस्वी व्यक्ति कार्यसिद्धि के लिए सुख-दुख की परवाह नहीं करता है बल्कि हर पल अपने कर्म के प्रति कटिबद्ध रहता है।

धीर-वीर-गम्भीर मनुष्य प्रत्येक कार्य को अच्छी प्रकार से विचार और परिणाम को ध्यान में रखकर करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन अनमोल है। इसका हम जितना अधिक सदुपयोग कर सकें उतना ही उत्तम होता है। कुमार संभव नामक संस्कृत-ग्रन्थ में ऐसे विचारवान व्यक्तियों के सम्बन्ध में ही कहा गया है-

विकारहेतौ सति विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एव धीराः। कहने का अर्थ यह है कि वास्तव में धीर पुरुष तो वह है जिनका चित्त विकार उत्पन्न करने वाली परिस्थितियों में भी विचलित नहीं होता है।

प्रो. चन्द्रशेखरजी का सारा जीवन उपरोक्त श्लोक में कही गई बात के समरूप द्रष्टव्य होता है। आप के वंश के १५० वर्ष के समय में ये प्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने संघर्ष, तप, त्याग, साहस, सद्-संकल्प और बहुत ही धैर्य के साथ जीवन व्यतीत करते हुये उस मुकाम पर पहुँचे, जहाँ व्यक्ति केवल व्यक्ति नहीं रह जाता बल्कि एक जीवन्त 'संस्था' बन जाता है। आज जीवन के पैसठ बसन्त व्यतीत करने के उपरान्त भी न तो इनके आत्मिक बल में कमी आई है और न बौद्धिक में ही। शारीरिक शक्ति भले २५ वर्षीय तरुण जैसी न हो लेकिन जिस स्फूर्ति के साथ समाजसेवा, साहित्य-सृजन, इतिहास-लेखन, समाज-सुधार, राष्ट्रभाषा के उन्नयन और धर्म-संस्कृति की रक्षा के कार्य में निरन्तर रत हैं, उससे यह तो कहा ही जा सकता है कि डॉ. लोखण्डे का जन्म ही परहित, सृजन और जन सहयोग देने के लिए हुआ है।

पारिवारिक स्थिति अच्छी न होने से बचपन भले ही अभावों में व्यतीत हुआ हो, समुचित शिक्षा प्राप्त करने के लिए भले ही संसाधनों की बेहद कमी रही हो और कोई अन्य स्रोत धन प्राप्ति का न रहा हो लेकिन जीवन-धन और सद्गुण-रूपी धन की जो अतुलित पूंजी आप ने शिक्षा, संस्कार और चिन्तन के द्वारा अर्जित की वह सभी धनों, संसाधनों से अनन्त गुना अधिक कहा जा सकता है। जो अवदान आप ने अपने प्रतिभा, ज्ञान, तप, विद्या और समाजसेवा के द्वारा मानव समाज को दिया उसका मूल्यांकन करना सहज नहीं है। आने वाली पीढ़ियों के लिए यह सद-प्रेरणा और संग्रहणीयता के लिए अत्यन्त उपयोगी होगा- ऐसे मनस्वी का दिया हुआ अवदान।

एक आदर्श आर्य जीवन, एक आदर्श पुत्र, एक आदर्श भाई, एक आदर्श पति और एक आदर्श मित्र कैसा होना चाहिए यह चन्द्रशेखरजी के जीवन में हमें द्रष्टव्य होता है। यह आज के संक्रमणकाल में बहुत बड़ी बात है। मेरे

लिए ही नहीं सृजनधर्मियों के लिए भी गौरव की बात है। एक सद्गृहस्थ रहते हुये एक सफल लेखक, समाजसेवक और प्राध्यापक के कर्तव्यों का बहुत ही निष्ठा, शुभ-संकल्प, सच्चाई और कर्मठता के साथ सन्तुलित ढंग से निर्वाह करना इनके अदभुत व्यक्तित्व का ही उदाहरण है। धर्म, अध्यात्म, वेद प्रचार, हिन्दी का प्रचार-प्रसार और निष्काम भाव से समाजसेवा के कार्यों को निरन्तर करते जाना लोखण्डेजी के जीवन-धर्मिता और जीवनीशक्ति का निरन्तर बने रहने का भी प्रमाण है। सन्त तुलसीदास के शब्दों में ऐसे परोपकारी जीवनव्रती व्यक्ति का सारा जीवन धर्ममय होता है। ऐसे महान व्यक्तित्व हमेशा अन्यों के लिए अपना जीवन-धर्म समर्पित किये रहते हैं रहीम कवि ने ऐसे सज्जन लोगों के बारे में कहा है -

तरुवर फल नहिं खात हैं, सरवर पियहिं न पान। कहि रहीम परकाज-हित, सम्पत्ति संचहि सुजान।।

व्यक्ति के बचपन में मिले संस्कार उसका जीवन-धन होते हैं। जितना श्रेष्ठ और आदर्शमुखी संस्कार बचपन में मिलता है, उतना ही उसका जीवन कुन्दन बनता जाता है। जैसी विद्या व संस्कार व्यक्ति प्राप्त करता है वैसा वह निर्मित होता जाता है। और जिसने विद्या पढ़ी ही नहीं उसकी गति तो निःसार घुने अन्न की तरह है। संस्कृत के एक श्लोक में कहा गया है-अविद्यं जीवनं शून्यम्। अर्थात् विद्या के बिना जीवन शून्य है।

चन्दशेखरजी ने एक स्थान पर रहकर विद्या भले ही न ली हो लेकिन अधिकांश विद्याकाल का समय प्रसिद्ध गुरुकुल महाविद्यालय में रहकर विद्यार्जन किया। 'होनहार वीरवान के होत चीकने पात' की कहावत इनके विद्यार्थी जीवन में ही दिखाई देने लगी थी। यह बात, इनके अनेक सहपाठी और इस गुरुकुल के अन्य छात्र और शिक्षक भी बताते हैं। कहा जाता है, यदि वास्तव में व्यक्ति ने विद्यार्जन किया हो तो वह जीवन में कभी खाली हाथ नहीं रहता। विद्या तो बांटने के लिए होती है, चन्द्रशेखर जी इसे शिक्षा पूर्ण करने के उपरान्त समाज के सामने करके दिखाया। संस्कृत भाषा, साहित्य और इसका गुण जिसके मनस् चेतना में आ जाता है, उसका जीवन निश्चित ही कुन्दन बन जाता है। इसका प्रमाण एक नहीं लाखों हैं।

डॉ. चन्द्रशेखर के जीवन के जितने भी पक्ष हैं सभी अत्यन्त सशक्त और सुशोभित हैं। एक अत्यन्त निर्धन परिवार में जन्मा, पला बढ़ा और शिक्षा पाया हुआ व्यक्ति अपने अमित पुरुषार्थ के बलपर शून्य से शिखर तक पहुँचा, यह कोई साधारण बात तो नहीं है। व्यक्ति साधारण से असाधारण तब बनता है जब वह तपस्वी, ज्ञानी, विद्यावान, परोपकारी और व्यवहार कुशल हो। लोखण्डेजी में, ये सारे सद्गुण हम देख सकते हैं। व्यक्ति के पास जब धन-सम्पत्ति और ऐश्वर्य के संसाधन नहीं होते तो उसे अपने भी अपना कहने में शर्म महसूस करते हैं। इतना ही नहीं यही 'अपने लोग' गैरों जैसा बर्ताव करने लगते हैं। अनेक पीड़ाओं, कष्टों, विसंगतियों और उपेक्षाओं से उन्हें एकाकार होना पड़ा,लेकिन उससे कभी विचलित नहीं हुए। अनेक समस्याओं और चुनौतियों के बावजूद बड़े धैर्य से अपने लक्ष्य की ओर आगे बढ़ते रहे, इस बात को जब हम सुनते हैं तो इनके जीवन के प्रति एक अलग ही भाव उमड़ पड़ता है।

वैदिक पथ पर चलकर जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति या परिवार की स्थिति और चरित्र अलग तरह का होता है। उसे समाज से लेने की नहीं बल्कि समाज को देने की हमेशा इच्छा रहती है। वेद में कहा गया है, 'सौ हाथों से कमाओ और हजार हाथों से खर्च करो। किसके लिए खर्च करो। उनको दो, जो इसके अधिकारी हैं, इसके पात्र हैं।

इसी प्रकार से विद्या-रूपी धन भी बाँटने की प्रेरणा वेदों में अत्यन्त मार्मिक ढंग से दी गई है। बिना विद्या के जीवन व्यर्थ है। महान् आचार्य चाणक्य कहते हैं-अविद्यं जीवनं शून्यम्। अर्थात् विद्या के बिना जीवन व्यर्थ है। विद्या कल्प वृक्ष की तरह है। भोज प्रबन्ध में विद्या के सम्बन्ध में बहुत चिन्तनयुक्त प्रेरणा दी गई है- किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या यानी कल्पवृक्ष की भाँति विद्या क्या-क्या सिद्ध नहीं करती?चन्द्रशेखरजी ने इस विद्या के चमत्कार से अपने कुल के ही नहीं समाज के लिए एक प्रतीक बन गए हैं। महाराज भतृहरि ने विद्या से प्राप्त होने वाले फलों की चर्चा कर के विद्या हरहाल में प्राप्त करने की प्रेरणा हर मनुष्य को दी है। वे कहते हैं- विद्या भोगकरी यशःसुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः अर्थात् विद्या भोग, यश और सुख को देने वाली है। वह गुरुओं की भी गुरु है। विद्या के इस चमत्कार को प्रत्येक मनुष्य को समझने की आवश्यकता है। जिसने समझ लिया, उसका स्वयं का ही कल्याण नहीं हुआ बल्कि वह अगणित लोगों का कल्याण करने वाला मनस्वी बन गया।

व्यक्ति के महतोमहान मनुष्यता के कार्यों का सम्मान करने और कर्म की महानता का अभिनन्दन करने की प्रेरणा हमारी संस्कृति की धारा में समावेशित है। समाज ऐसे महामना पर गर्व करता है जिसने अपना सम्पूर्ण जीवन समाज, संस्कृति, धर्म, राष्ट्र और मानवता के कल्याण के लिए अर्पित कर दिया हो। डॉ. लोखण्डे का अभिनन्दन, उनके कृतित्व और व्यक्तित्व का अवलोकन करते हुये ग्रन्थ के प्रकाशन के साथ करने का जो निर्णय उनके विद्यार्थियों, संस्थाओं और बुद्धिजीवियों ने लिया, उसे इसी परिपेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। कर्मवीर अपना कर्म किसी सम्मान, पद या प्रतिष्ठा के वशीभूत होकर नहीं करता। उसका तो जीवन ही जीवन-धर्म और कर्तव्य परायणता को समुचित ढंग से निभाने के लिए समर्पित होता है। परोपकार और धर्म-परायण कर्म कभी भी स्वार्थ या किसी विशेष चाह के साथ नहीं किये जाते हैं। यदि स्वार्थ या किसी विशेष इच्छा के साथ ये दोनों कर्म किये गए तो वह न परोपकार कहे जा सकते हैं और न तो धर्म परायण ही। चन्द्रशेखरजी के जीवन चरित से यह पता चलता है कि उनका जीवन इसी वैदिक धारा के साथ व्यतीत हो रहा है। इस लिए, ऐसे सुजीवन-धर्मी के जीवन-धर्म के सम्बन्ध में लिखते हुये गर्व का बोध होता रहा। ऐसे प्रशंसायुक्त पत्र, उन ज्ञान पिपासुओं, उनके मित्रों,सहपाठियों, आर्य विद्वान और उन व्यक्तियों द्वारा मेरे पास आये जिन्हें उन्हें शेखरजी के सम्बन्ध में दो शब्द(लेख या शुभकामना के रूप में) लिखने के लिए निवेदन स्वरूप मैंने पत्र लिखे थे। कहना न होगा कि कुछ को छोड़कर सभी महानुभावों ने बहुत प्रेम और श्रद्धा के साथ मेरे निवेदन को स्वीकार करते हुये लोखण्डे जी के कृतित्व और व्यक्तित्व के सम्बन्ध में अपनी लेखनी को गति देकर हमारे निवेदन को शिरोधार्य किया। अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन पर जब चर्चा प्रारम्भ हुई तब ही यह विचार बनाया गया कि इस 'ग्रन्थ' में वेदों से सम्बन्धित ऐसे लेख भी सम्मिलित किये जाएं जो वेद में रुचि रखने वाले, शंका रखने वाले, श्रद्धा रखने वाले और जिज्ञासा रखने वाले पिपासुओं की पिपासा को शान्त कर सके। इनमें भी जिन आर्य विद्वान मनीषियों से मैंने पत्र लिखकर निवेदन किये, उनमें कुछ को छोड़कर लगभग सभी ने अपने अनुसन्धानपरक, प्रेरणादायक और ज्ञानवर्द्धक लेख भेंजे। इससे अभिनन्दन ग्रन्थ की शोभा और उपयोगिता चार गुनी हो गई। अभिनन्दन ग्रन्थ में राष्ट्र भाषा हिन्दी और मराठी भाषा में लिखे लेखों को सम्मिलित किया गया है। इससे देवनागरी लिपि में लिखी गई दोनों सहोदर बहनों(हिन्दी और मराठी) का एक साथ समावेश हो जाने से इस ग्रन्थ की व्यापकता और उपयोगिता कुछ अधिक ही बढ़ गई है। देवनागरी लिपि में हिन्दी और मराठी दोनों भाषायें लिखी जाती

हैं। दोनों की जुगलबन्दी से इस ग्रन्थ में कितनी जीवन्तता और ज्ञानवृद्धि का विस्तार हुआ है यह तो अभिनन्दन ग्रन्थ के पाठक महानुभाव ही बता सकते हैं, लेकिन एक सम्पादक के नाते मैं इतना तो कह ही सकता हूँ, विषय और सन्दर्भ के अधिक विस्तार के कारण इसे प्रकाशित करने में पूरे एक वर्ष का समय लग गया। मेरे लिए यह 'ग्रन्थ' किसी चुनौती से कम नहीं रहा। समय के साथ-साथ इसमें बुद्धि, तन-शक्ति और चिन्तन-शक्ति का जितना उपयोग किया गया, उसके सम्बन्ध में कुछ कहना अपनी प्रशंसा करने के समान है। मैं इस विशेष आयोजन के अवसर पर, विशेष रूप से रुचि लेकर अपने लेख प्रेषित करने वाले सभी विद्वतजनों और चन्द्रशेखरजी के सहपाठियों, मित्रों और गुरुजनों के प्रति हृदय से बहुत विनम्रता पूर्वक आभार प्रकट करता हूँ। यदि इन सभी महानुभावों का लेखकीय सहयोग न प्राप्त होता तो यह 'ग्रन्थ' प्रकाशित होना सम्भव नहीं था। इस लिए यदि इसमें प्रशंसा की कोई बात है तो इसके हकदार ग्रन्थ में सम्मिलित सभी विद्वान लेखक महानुभाव हैं और यदि किसी प्रकार की त्रुटि इसमें दिखाई पड़ती है तो इसकी सारी जिम्मेदारी मेरे ऊपर होनी चाहिए।

अन्त में इस ग्रन्थ के प्रकाशक श्री घूडमल प्रहलाद कुमार आर्य ट्रस्ट के स्वामी श्री प्रभाकरदेव आर्यजी, मुद्रक राधा प्रेस (दिल्ली), सम्पादक मण्डल के सभी सहयोगी जनों, अभिनन्दन ग्रन्थ समिति के सहयोगियों के साथ ही साथ इस ग्रन्थ में छायांकन, रूपांकन, शब्द संयोजन के लिए विद्यार्थी और जिज्ञासु प्रवीण कुमार और संजय कुमार कुशवाह(बसगित, इलाहाबाद) को भी हृदय से धन्यवाद और आशीष देता हूँ कि इनकी बुद्धि इसी प्रकार से सृजन के कार्यों में निरन्तर लगी रहे।

आशा है अभिनन्दन ग्रन्थ से समाज के सभी वर्गों को लाभ होगा। विशेषकर, नई पीढ़ी को इससे प्रेरणा मिलेगी और युवक राष्ट्र, समाज, संस्कृति, धर्म और आर्ष साहित्य के उन्नयन के लिए आगे आयेंगे।

शुभकामनाओं के साथ
अखिलेश आर्येन्दु

विषय सूची

खण्ड -१

- पारिवारिक पृष्ठभूमि
- लोखण्डे वंशावली
- बाल्यकाल
- शिक्षा
- कर्मक्षेत्र में
- गृहस्थाश्रम में प्रवेश
- डा. चन्द्रशेखर के आदर्श
- सामाजिक व अन्य कार्य
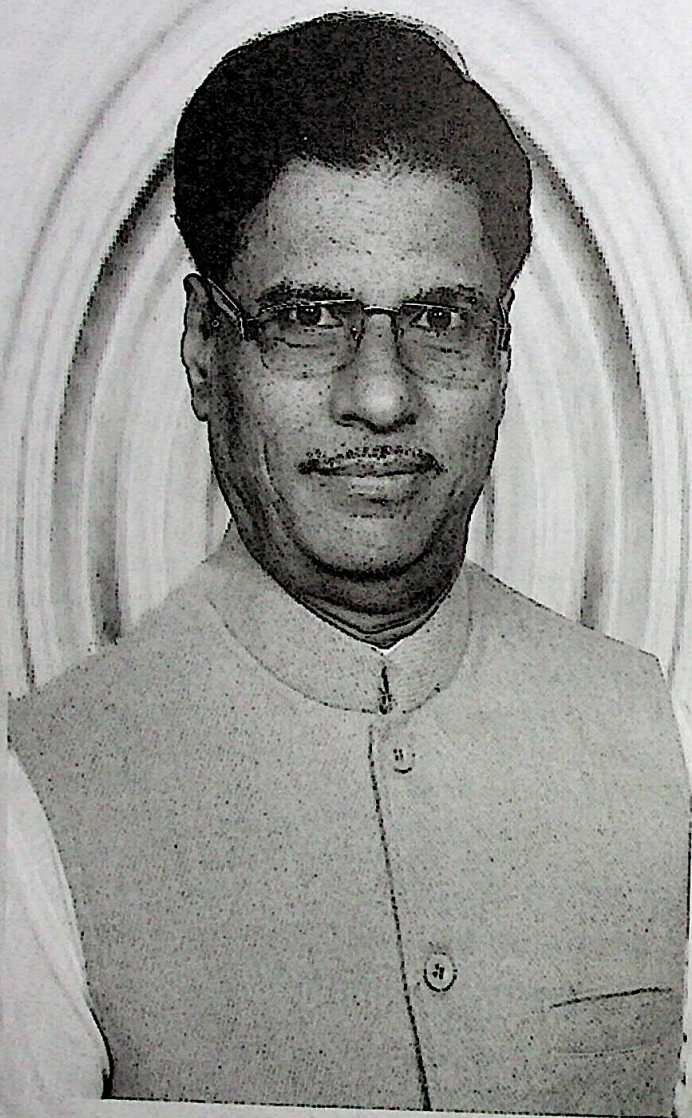
राष्ट्रधर्मी डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे

प्रथम अध्याय

उदय से उत्थान

1 उदय से उत्थान

जन्म

एक आदर्श समाज और महान राष्ट्र जागृत, कर्मवीर और उत्साही व्यक्तियों से निर्मित होते हैं। जब तक देश, समाज में ऐसे व्यक्ति होते हैं, जो हर प्रकार से अपने कर्तव्यों का ईमानदारी से पालन करते हैं तब तक समाज और देश किसी बड़ी समस्या से ग्रस्त नहीं होते । लेकिन आज की स्थिति ऐसी नहीं कि देश और समाज के कर्तव्यशील व्यक्तियों के कार्यों पर निश्चिन्त हुआ जा सके। यह भी कहा जा सकता है कि आज समाज में ऐसे कर्म–योद्धाओं की बेहद कमी हो गई है जिससे एक आदर्श व जागृत तथा महान देश का निर्माण होता है। समाज में भौतिकवाद इतना बढ़ गया है कि वस्तु ही नहीं अनेक प्रकार के सम्बन्ध भी बाजारू हो गए हैं। मान–प्रतिष्ठा ही नहीं बल्कि अन्य सभी चीजें भौतिकता के मापदण्ड से तौले जाने लगे हैं। मानव मूल्यों और पारिवारिक मूल्यों का जैसा आज अपघटन हो रहा है शायद इसके पूर्व कभी नहीं हुआ। समाज में 'बहु उपदेश कुशल बहुतेरे' को चरितार्थ करने वाले लाखों उपदेशक कुकुरमुत्ते की भाँति उग आये हैं। समाज में उत्तम प्रवृतियों के स्थान पर बुरी प्रवृतियाँ बढ़ती जा रही हैं। ऐसे में देश व समाज को दिशा और देश के युवा वर्ग को प्रेरणा देने वाले ऐसे कर्मवीरों के महान कृतित्व को सामने लाना आवश्यक हो जाता है जिससे भ्रमित युवा पीढ़ी प्रेरणा पाकर सही दिशा में आगे बढ़ सके। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे ऐसे ही एक कर्म–धर्म योद्धा हैं जो जीवन पर्यन्त राष्ट्रधर्म को बहुत ही कर्तव्य परायणता और सत्साहस के साथ निभाते आ रहे हैं। आप के जीवन के कई फलक हैं, जिसमें 'व्यक्तित्व' और 'कृतित्व' सबसे महत्त्वपूर्ण हैं। जिसके सम्बन्ध में यहाँ जानकारी दी जा रही है।

प्रा. डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे का जन्म 23 अक्टूबर 1948 में लातूर जनपद के रेणापूर नामक गाँव में स्वनाम धन्य श्री रामस्वरूप लोखण्डे के यहाँ हुआ था। पिता जी एक सैद्धान्तिक और कर्मवीर आर्य जीवन के जीते–जागते प्रतीक थे । आप की माताजी का नाम स्व.त्रिवेणीबाई था। वे एक धर्मनिष्ठा और कर्तव्यपरायणा महिला थीं। जिस गाँव रेणापूर में चन्द्रशेखर जी का जन्म हुआ तब वह निजाम रियासत का भाग हुआ करता था।

पारिवारिक पृष्ठभूमि

आप के पूर्वज, प्रपितामह रामलिंग लोखण्डे मूलतः अहमदपुर तहसील के जानवल ग्राम के रहने वाले थे। यह गाँव रेणापूर से 30 किमी दूर है। यहाँ(जानवल में) एक पुश्तैनी घर था। परदादा रामलिंगप्पा बहुत दिन तक जीवित नहीं रहे। गृहस्थी खेतिहर मजदूरी के द्वारा चलाते थे। लेकिन इसके बावजूद मानवीय सुचिता और संवेदना ऐसी रही कि कभी असत्य या अधर्म का रास्ता नहीं पकड़ा। मानव या तो बहुत निर्धन होता है तब उसके चरित्र में जल्द दोष आने की सम्भावना अधिक होती है या अत्यधिक धनवान होने पर, उसमें अनेक दोष आ जाते हैं। इनसे वही बच सकता है जिसके माता–पिता के संस्कार बहुत उत्कृष्ट कोटि के होते हैं या भगवत्–कृपा से वह सुपथगामी बना रहता है। रामलिंगप्पा का एक सुपुत्र था जिसका नाम साखराप्पा था। साखराप्पा अपने पिता की तरह ही निरक्षर रह गए थे। उस समय निजाम का शासन था। शासन की ओर से कोई शिक्षा की व्यवस्था नहीं थी, इस लिए जिसे शिक्षा प्राप्त करना होता था, उसे अपने बूते मंहगी शिक्षा प्राप्त करनी होती थी। गाँवों में निजीतौर पर शिक्षा की व्यवस्था नाम मात्र की ही थी, वह भी ऐसे व्यक्ति के लिए ही उपलब्ध थी जो अपना सारा समय इसमे लगा सके। कृषक या श्रमिक की सन्तानें इस निजी शिक्षा–व्यवस्था का लाभ नहीं उठा पाती थीं। फिर भला साखराप्पा कैसे पढ़ सकते थे, जिसके पास किसी प्रकार का संसाधन ही उपलब्ध नहीं था। घर की स्थिति भी अच्छी नहीं थी। इनके माँ का देहावसान हो जाने के कारण इनको सौतेली माँ के संरक्षण में बचपन व्यतीत करने के लिए विवश होना पड़ा। सौतेली माँ की प्रताड़ना के कारण वे घर त्यागकर अपने एक सम्बन्धी के यहाँ सालना मजदूरी पर आकर रहने लगे। इसके पूर्व का जीवन कई प्रकार की विसंगतियों और बिडम्बनाओं से भरा रहा। खेती किसानी तो थी नहीं इस लिए

डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे के जनक एवं जननी
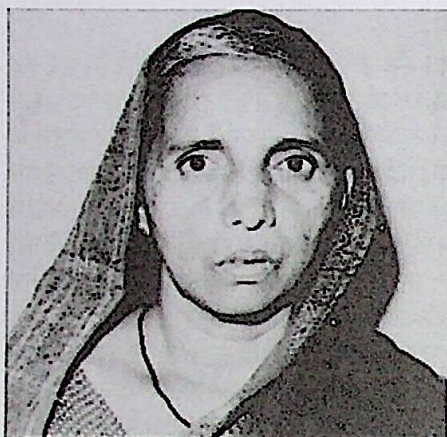
पूजनीया माता
श्रीमती त्रिवेणीबाई लोखण्डे
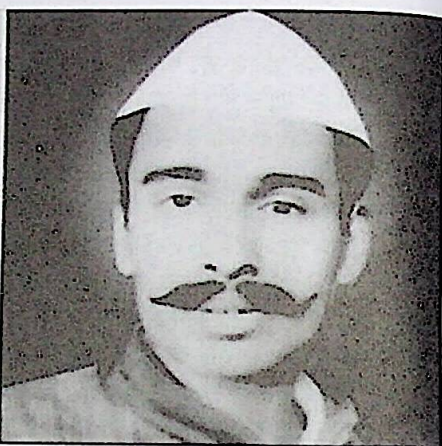
पूजनीय पिता
श्री रामस्वरूप लोखण्डे

निर्धनता के कारण महाजन(साहूकार) से कर्ज लेना पड़ा। आय न होने के कारण ऋण चुकाना जब कठिन हो गया तो घर किसी रेड्डी समाज के समृद्ध व्यक्ति को बेच कर ऋण का चुकता किया। अब तो सिर से छत भी जाती रही। ऐसे में इधर–उधर भटकने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं था। लेकिन निराश नहीं हुये। जब व्यक्ति घोर संकट में होता है तो इसी समय वह इस संकट से उबरने का उपाय भी सोचता है। यदि वह ईश्वरीय–व्यवस्था पर विश्वास करने वाला है तो वह इसे बड़े धैर्य से पार कर जाता है और यदि भाग्य पर भरोसा करने वाला है तो निराशा में घिरकर धैर्य खो देता है।

मकान का बिक्रय करके साखराप्पा बिटर गाँव आ गए। अब वह पूरे यौवन पर थे। यौवन व्यक्ति के जीवन का सबसे स्वर्णिम काल होता है। यदि वह इस अवस्था का उचित उपयोग करे तो वह दुनिया को अपने आगे झुकने के लिए विवश कर सकता है। इस धरती पर जितनी भी सम्भावना दिखाई पड़ती है या असम्भव को सम्भव करने की चुनौती द्रष्टव्य होती है वह इस तरुण–ऊर्जा के द्वारा ही पूरी की जा सकती है। लेकिन अशिक्षित व्यक्ति की समझ कई अर्थों में सही दिशा नहीं खोज पाती, इस लिए वह दूसरों पर आश्रित रहने के जिए मजबूर होता है। ऐसा ही साखराप्पा के साथ भी हुआ। यौवन की दहलीज पर कदम रखने के उपरान्त वह अपनी माली स्थिति से उबरना तो चाहते थे लेकिन कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिल पा रहा था जो इसमें उनका पूर्ण सहयोगी बनता । लेकिन सम्बन्धी के यहाँ रहते हुये उन्होंने ग्रामवासियों के सहयोग से अपनी पूर्व स्थिति से उबरने में सफलता पा ली। हुआ यह, विवाह के योग्य हो गए साखराप्पा के विवाह के सम्बन्ध में सगे–सम्बन्धी और अन्य हितैषी–जन इनके विवाह के लिए रेणापूर के पर्वताप्पा राऊत नामक एक कृषक के यहाँ बात करनी प्रारम्भ कर दी। लेकिन जिसके पास रहने की न छत हो और न कोई आय का मुकम्मल स्रोत हो, उसे भला अपनी बेटी कौन देता। रेणापूर के पर्वताप्पा राऊत के दो बेटियाँ थीं–हऊबाई और काशीबाई। काशीबाई का विवाह अभी नहीं हुआ था। लेकिन पर्वताप्पा ऐसे व्यक्ति को अपनी बेटी भला कैसे देते जिसके पास न तो सिर छिपाने के लिए छत हो और न गुजारे की कोई स्थिर जरिया। लेकिन सम्बन्धियों ने जब साखराप्पा को परिश्रमी और चरित्रवान नौजवान कहकर उसके साथ विवाह करने में भलाई की बात पर्वताप्पा को बताई तो वे मान गए। और बहुत धूमधाम से गाँवों वालों ने चन्दा करके साखराप्पा का

विवाह करा दिया। पर्वताप्पा के कोई बेटा नहीं था। ऐसे में साखराप्पा(चन्द्रशेखरजी के पितामह) घर जमाई बनकर बिटर गाँव छोड़कर रेणापूर आकर रहने लगे। अब तो गृहस्थी अच्छी प्रकार चलने लगी।

रेणापूर आने के उपरान्त साखराप्पा को एक सन्तान की प्राप्ति हुई जिसका नाम रामलिंग लोखण्डे था। जो बाद में स्व. रामस्वरूप लोखण्डे के नाम से जाने गए। इनका जन्म सन् 1927 में हुआ। उस समय सातवें निजाम का इस्लामिक राज्य था। लेकिन आर्य समाज का समाज सुधार और वेद प्रचार का कार्य सम्पूर्ण प्रान्त में बहुत ही व्यापक–रूप से चलाया जा रहा था। सारे रियासत में आर्य विद्वानों की धूम मची रहती थी। स्पष्ट है, आर्य समाज का प्रभाव आम जनता पर गहरे तक पड़ रहा था। रियासत की 89 प्रतिशत जनसंख्या हिन्दू थी, इसके बावजूद भी उसे पूरी तरह अपने पर्व – त्योहार मनाने की स्वतन्त्रता नहीं थी। आर्य समाज के प्रचार–प्रसार का भी मुस्लिम कट्टरपंथी और मुस्लिम सरकारी कर्मचारी विरोध करते थे। लेकिन आर्यजनों में उस समय आर्य समाज और वेद प्रचार को लेकर जो जुनून था, उसके आगे उनका विरोध केवल विरोध साबित होता। इस प्रचार–प्रसार के प्रभाव–स्वरूप रेणापूर में 1937 में आर्य समाज की विधिवत् स्थापना हुई। जिन आर्य जनों का इस नूतन आर्य समाज की स्थापना में विशेष योगदान रहा वे थे–रंगनाथ रवमालजी,मुर्गाप्पा खुमसेजी, गोविन्द जाधवजी, हरिभाऊ जाधवजी, रंगनाथ कातलेजी आदि। उस समय श्री रामस्वरूप की अवस्था दस वर्ष की थी। वे आर्य समाज के सत्संगों और अन्य कार्यक्रमों में जाया करते थे, जिससे उन पर आर्य समाज का गहरा प्रभाव पड़ा। और अब वे आर्य समाज, वेद और दयानन्द के दिवाने होते जा रहे थे। रामस्वरूप जी के जन्म का नाम रामलिंग था। रामस्वरूप जी के माता–पिता लिंगायत मत को मानने वाले थे। लिंग पूजा किये बगैर वे भोजन को स्पर्श भी नहीं करते थे। लिंगायत समाज में अस्पृश्यता जैसी बुराई बहुत गहरे तक व्याप्त थी। निचली कही जाने वाली जातियों को स्पर्श करना भी पाप माना जाता था। यदि परिवार के किसी भी व्यक्ति का स्पर्श नीची कही जाने वाली जाति के व्यक्ति से हो जाता तो, उसे हरहाल में स्नान करके ही घर के अन्दर प्रवेश करना होता था। परिवार व समाज में फैले इन अनेक अन्धविश्वासों, बुराइयों और कुरीतियों को देखकर बालक रामलिंग(स्व. रामस्वरूप) का बाल मन विद्रोह कर उठा। आर्य समाज का प्रभाव तो गहराई ले ही चुका था। अब केवल बाकी था, उस प्रभाव का प्रदर्शन। और एक दिन परिवार में बालक ने सभी प्रकार के अन्धविश्वासों, कुरीतियों और पाखण्डों के प्रति विद्रोह का झण्डा उठा लिया। बस क्या था, घर में माता–पिता और अन्य जनों को बालक के विचारों को मानना पड़ा। अब जो परिवार लिंगपूजा में फंसा हुआ था अब वहाँ वेदवाणी और विज्ञान के स्वर सुनाई पड़ने लगे। मूर्तिपूजा, अस्पृश्यता और जन्मगत जात–पाँत जैसे सभी अन्धविश्वास और बुराइयों के विरुद्ध बालक रामस्वरूप ने ऐसा 'विचार–आन्दोलन' चलाया कि क्षेत्र में इनकी एक पहचान बन गई। बड़े होकर रामस्वरूपजी ने दलितों के लिए जहाँ पाठशालायें खोलीं वहीं पर सहभोज का भी प्रारम्भ किया। और आगे चलकर समाजसेवी श्री रामस्वरूप का विवाह बाबुराव फँसगाले की कन्या त्रिवेणीबाई के साथ हुआ।

डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे   सौ.संध्या लोखण्डे

त्रिवेणीबाई का ननिहाल रेणापूर में था। रेणापूर में उनके नाना बाबन राऊत और नानी देवईबाई रहते थे। त्रिवेणीबाई की माँ किसी गम्भीर रोग से पीड़ित हो चुकी थीं, इस लिए नानी अपनी नतिनी के पालन–पोषण हेतु घर रेणापूर ले आईं। नाना की जल्द मृत्यु हो जाने के कारण त्रिवेणीबाई और उसकी नानी अकेले पड़ गईं। जैसे–जैसे त्रिवेणीबाई बड़ी हो रही थी नानी को उसके विवाह की चिन्ता सताने लगी। लिंगायत समाज के लोगों ने देखभाल कर त्रिवेणीबाई का विवाह 23 वर्ष के युवा रामस्वरूप के साथ तय कर दिया। और 1946 में दोनों का विवाह धूमधाम
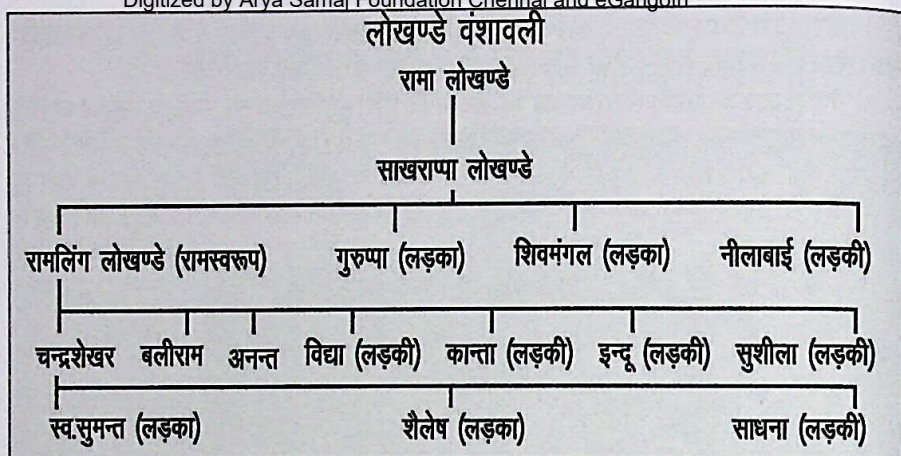
लेकिन सादगी के साथ हो गया।

यह वह समय था जब महामारी के रूप में हैजे का प्रकोप बहुत अधिक था। गाँव के गाँव देखते ही देखते हैजे के चपेट में ऐसे समाप्त हो जाते थे कि पता ही नहीं चलता था। लोगों को अपने प्राण बचाने के लिए खेतों में जाकर डेरा डालना पड़ता था। देवई बाई राऊत का इकलौता बेटा भी इस प्रकोप में मृत्यु को प्राप्त हो गया। अब नानी देवईबाई अकेले पड़ गईं। भला अकेले एक बूढ़ी स्त्री कैसे जीवन का निर्वाह कर सकती थी।

स्व. रामस्वरूप लोखण्डे और उनकी पत्नी श्रीमती त्रिवेणीबाई (चन्द्रशेखरजी की माताश्री) का मन पूर्णरूपेण आर्य समाज में रम चुका था। आर्य समाज के विचारों को अपने जीवन का प्रवाह बनाकर दोनों प्राणी समाजसेवा के कार्यों में समय देने लगें।

रामस्वरूप और त्रिवेणबाई का आर्य समाज के प्रति समर्पण

आर्य समाज का प्रचार–प्रसार गाँवों में उस समय आर्य धर्म प्रचारकों ने किया जब प्रचार के ऐसे सुगम साधन नहीं थे जैसे आज हैं। लेकिन आर्य समाज के धर्मधुरीण लोगों में एक जुनून था। लोगों को लगता था बिना वेद प्रचार के उनका सारा जीवन व्यर्थ हो जायेगा। इस लिए अपने परिवार और सगे–सम्बन्धियों के प्रति उनका लगाव बहुत कम था। आर्य समाज के सुधारवादी कार्यों से जुड़ना अपने जीवन की सार्थकता समझने वाले महाराष्ट्र में सौ–दो सौ नहीं बल्कि हजारों की संख्या में लोग थे। यही कारण था कि आर्य समाज कुछ ही वर्षों में सम्पूर्ण महाराष्ट्र में फैल गया। लातूर सहित महाराष्ट्र में आर्य समाज मुख्यतः दो प्रकार के कार्य में रत था। प्रथम, वैदिक धर्म का प्रचार–प्रसार और द्वितीय, रूढ़ियों, बुराइयों, अन्धविश्वासों और पाखण्ड को समाप्तकर एक आदर्श समाज का निर्माण करना। इसी समय इस्लामी निजामशाही अपनी अमानवीय शासन व्यवस्था से लोगों को लगातार प्रताड़ित कर रही थी। आर्य समाज ने इसका भी खुलकर विरोध किया। स्व.रामस्वरूप और स्व.त्रिवेणीबाई ने दोनों कार्यों को साथ मिलकर करने का वीड़ा उठाया साथ ही निजामशाही की क्रूरता के विरोध में भी आर्य युवकों की टोली बनाकर संघर्ष करना प्रारम्भ किया। यह टोली उन अत्याचारी मुस्लिम युवकों का भी विरोध करती जो दलितों की महिलाओं पर अत्याचार मनमाने ढंग से बिना किसी भय के करते रहते। इससे मुस्लिम समाज में विशेषकर मुस्लिम युवकों में एक सन्देश यह भी गया कि आर्य समाज के युवादल के रहते वे मनमानी तरीके से दलितों की महिलाओं और परिवार पर अत्याचार नहीं कर सकते हैं। समाज, राष्ट्र और संस्कृति के संरक्षण का जैसा जज्बा तत्कालीन आर्यजनों में था वैसा यदि आज आ जाये तो देश व समाज की कायापलट होने में बहुत समय नहीं लगेगा। 1947 में हैदराबाद को छोड़ बाकी भारत अंग्रेजी शासन व्यवस्था से छुटकारा ले चुका था लेकिन हैदराबाद निजामी शासन व्यवस्था में पिसने के लिए अभिशप्त रहा। यहाँ की 89 प्रतिशत हिन्दू जनता स्वतन्त्रता के लिए

डा. लोखण्डे की सन्तान : पुत्र स्व. सुमंत व शैलेष पुत्री : साधना

श्री. शैलेष लोखण्डे सौ.अनिता लोखण्डे कु.सांची लोखण्डे

तड़फड़ा रही थी। लेकिन वहाँ का क्रूर शासक(निजाम) मीर अली खाँ बहादुर हिन्दुओं पर अत्याचार करने पर कोई कोर कसर बाकी नहीं रखा था। ज्ञातव्य है आर्य समाज को इसके अत्याचारों के विरुद्ध एक लम्बी लड़ाई लड़नी पड़ी। जिसका बहुत ही तथ्यात्मक वर्णन डॉ. चन्द्रशेखर जी द्वारा लिखित इतिहास 'हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास' में बहुत ही विस्तार से प्रेरणाप्रद रूप में किया गया है। प्रा. चन्द्रशेखर लोखण्डे पर– माता–पिता का वैदिक विचारों और समाजधर्मी होने के कारण ही आर्य संस्कारों का उत्तम प्रभाव पड़ा था। लेकिन निजामी शासन से मुक्ति पाने की तड़फड़ाहट आप की माता में उस समय जैसी रही होगी वह डॉ. लोखण्डे द्वारा लिखे हैदराबाद के मुक्ति संग्राम के इतिहास में देखा जा सकता है। इस लिए कहा जाता है कि जब सन्तान गर्भ में आये तभी से गर्भवती माँ को ऐसे सुखद और उत्तम कोटि के वातावरण उपलब्ध कराया जाना चाहिए जो गर्भ में पल रही सन्तान पर बहुत ही सकारात्मक पड़े।

प्रा. चन्द्रशेखर का बचपन का नाम शंकर था। लेकिन गुरुकुल में दीक्षित होने के उपरान्त गुरुकुल के आचार्य ने इनका नाम बदलकर 'चन्द्रशेखर' रख दिया जो आगे चलकर प्रा. डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे कहलाये।

बाल्यकाल– चन्द्रशेखर के जन्म के समय और उसके उपरान्त कई वर्षों तक मुस्लिम क्रूरता किस कदर बढ़ी हुई थी इसका प्रमाण यह है कि जब चन्द्र शेखर का जन्म हुआ, तो भय के कारण सारी महिलायें घर के किसी अन्धेरे कोने में जाकर बैठ गईं। क्योंकि रजोकारी गुंडों का अत्याचार इतना बढ़ गया था कि वे जिस घर में चाहते घुस जाते और महिलाओं के साथ जैसा चाहते वैसा अनाचार और अत्याचार करते। शिशु चन्द्रशेखर के जन्म के समय और बाद में भी उन अत्याचारियों का भय लगातार बना रहा। घर में सभी को डर यह भी था कि, वे मिट्टी का तेल डालकर घर में आग लगा सकते थे। इस डर के कारण माता त्रिवेणीबाई अपने पाँच दिन के शिशु को वस्त्र से ढककर गाँव के बाहर माणिकराव कुलकर्णी के एक विशाल बाड़े में ले गईं। शिशु के सुरक्षा की यह व्यवस्था रेणापूर के स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों ने की थी। इस बाड़े में गाँव के सैकड़ों बच्चों व महिलाओं को मुस्लिम आतताइयों से बचाकर रखा गया था। यह ऐसा समय था जब गाँव में रजाकारों का अत्याचार प्रतिदिन चलता था। ये आतताई प्रतिदिन बन्दूक और छूरे से सैकड़ों लोगों पर आक्रमण किया करते थे। इसी समय की घटना है– मराठवाड़ा में 45 गाँवों को लूटपाट करके रजाकारों ने जला दिया था।

चन्द्रशेखरजी के जन्म के पाँचवें वर्ष में गाँव के ही महादेव मन्दिर की निजामशाही की 'खानगी पाठशाला' में प्रवेश कराया गया। वहाँ उनको गाँव के ही गुरुजी श्री गिरधरलाल बद्दर, जो आर्य विचारों वाले अनुशासन–प्रिय शिक्षक थे बालक चन्द्रशेखर की प्रतिभा से प्रभावित हुये और उन्होंने बहुत मनोयोग से शिक्षा दी। एक वर्ष पढ़ाई करने के उपरान्त उन्हें आचार्य बंशीलाल व्यासजी जो हैदराबाद में गुरुकुल चलाते थे के गुरुकुल में प्रविष्ट कराया

श्री.राघवेन्द्र गोजे सौ.साधना गोजे सुमंत्र चन्द्रशेखर

गया। इनके साथ, इनके दोनों चाचाओं श्री भरत और श्री शिलिंग को भी गुरुकुल भेजा गया। इनके पिता जी अपने सभी भाइयों को भी गुरुकुल की शिक्षा देना चाहते थे। अब दोनों चाचा और भतीजा साथ–साथ गुरुकुल में पढ़ने लगे। इस बीच 1957 में आर्य समाज की ओर से हिन्दी सत्याग्रह का आन्दोलन रेणापूर के आर्यजनों को पंजाब जाकर करना पड़ा। इसमें चन्द्रशेखरजी के पिताश्री स्वरूपजी ने भी बढ़ चढ़कर भाग लिया। इस सत्याग्रह में उन्हें 5 वर्ष की कैद हुई, इससे घर की हालात बिगड़ गई। इनकी माँ(श्रीमती त्रिवेणीबाई) अकेले घर संभालने में अक्षम पा रही थीं। जिससे विवश होकर इन्हें गुरुकुल से वापस घर आना पड़ा । पढ़ाई बीच में छूटने से बालक के समय की जहाँ बर्बादी होती है वहीं पर उसके मनोबल और उत्साह पर भी प्रभाव पड़ता है। इसे देखते हुये चन्द्रशेखरजी की पढ़ाई गाँव के सरकारी पाठशाला में कराने का निश्चय किया गया। यह 1958–59 का वर्ष था।

आगे की विशेष शिक्षा– पंजाब में हिन्दी सत्याग्रह में नौ महीने कारावास भुगतने के बाद जब पुनः रामस्वरूप जी अपने गृह लौटे तो घर की दशा अच्छी नहीं थी। उन्हें जहाँ घर की माली हालात को लेकर चिन्ता होने लगी वहीं पर बालक चन्द्रशेखर की शिक्षा को लेकर चिन्तित रहने लगे, क्योंकि सरकारी पाठशाला की शिक्षा का स्तर किसी भी दृष्टि से अच्छा नहीं था। बेटे की उत्तम शिक्षा की चिन्ता उन्होंने अपने घनिष्ट मित्र श्री विट्ठलराव खण्दाडे से बताई। विचार करने के बाद दोनों मित्रों ने निश्चय किया कि बालक चन्द्रशेखर को आगे की उत्तम शिक्षा के लिए इसे किसी श्रेष्ठ गुरुकुल में भेज दिया जाय। लेकिन समस्या यह थी कि दोनों मित्रों के पास इसका कोई समाधान नहीं दिखाई पड़ता था। फिर इसके लिए दोनों ने हैदराबाद जाकर पं. नरेन्द्रजी से, जो उस समय आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद के मन्त्री थे से अपनी समस्या बताई। पं. नरेन्द्रजी के सामने श्री रामस्वरूपजी और रावजी ने बालक को हरिद्वार स्थित गुरुकुल में प्रवेश दिलाने की बात रखी। पं. नरेन्द्रजी ने बालक को प्रवेश हेतु एक पत्र आर्य जगत् के उद्‌भट आर्य विद्वान और वक्ता पं.प्रकाशवीर शास्त्रीजी को लिखा, जिसमें उन्होंने बालक का प्रवेश पूरी शिक्षा–दीक्षा निःशुल्क दिये जाने के सम्बन्ध में चर्चा की गई थी। बिट्ठलरावजी बालक चन्द्रशेखर को लेकर पं. प्रकाशवीर शास्त्री के पास दिल्ली आये। पं. नरेन्द्रजी का पत्र पाकर पं. प्रकाशवीर शास्त्री पूरी तरह आश्वस्त होकर गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के अधिष्ठाता को एक पत्र लिखकर निःशुल्क प्रवेश देने की सलाह दी। पत्र लेकर श्री विट्ठलरावजी गुरुकुल ज्वालापुर महाविद्यालय आये और उन्होंने पं. प्रकाशवीर शास्त्री का पत्र गुरुकुल के अधिष्ठाता को सौंपा। यह बात 1961 की है। कुछ दिन पूर्व ही गुरुकुल के अधिष्ठाता पं. नरदेव राव शास्त्री जी का देहावसान हो चुका था, उनके स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति ने कार्यभार संभाला था ने पत्र पाते ही प्रवेश दे दिया। चूंकि चन्द्रशेखरजी की सम्पूर्ण शिक्षा निःशुल्क होने का पत्र पं. प्रकाशवीर जैसे महतोमहान् व्यक्ति के द्वारा लिखा गया था, इस लिए इनकी सारी शिक्षा, (लगभग 11 वर्ष) निःशुल्क ही हुई।

यदि बालक होनहार हो तो उसे केवल घर–परिवार और सगे–सम्बन्धी ही अधिक प्रेम नहीं करते बल्कि समाज के अन्य लोग भी प्रेम देने में कोई कोताही नहीं बर्तते । यही बात बालक चन्द्रशेखर के साथ भी घटित हुई। जब तक चन्द्रशेखरजी गुरुकुल में रहे सब के कृपापात्र ही नहीं प्रेम–स्नेह के पात्र भी बने रहे। गुरुकुल में

चन्द्रशेखरजी की छवि बहुत अच्छी बनी रही। हर कोई इनसे प्रेम करता था। ये भी सभी से प्रेम करते थे। उत्तम स्वभाव से व्यक्ति सबका प्यारा बन जाता है। चन्द्रशेखर जी के साथ भी यही हुआ। वे जब तक गुरुकुल में रहे अजातशत्रु बने रहे। आज भी वे अजातशत्रु हैं। अपने ग्यारह वर्ष के शिक्षाकाल में अपनी प्रतिभा, योग्यता और कर्मनिष्ठा के बल पर गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर से विद्याभास्कर व शास्त्री की उपाधियाँ और सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से आयुर्वेद भास्कर तथा मेरठ विश्वविद्यालय से हिन्दी साहित्य में परास्नातक की उपाधियाँ प्राप्त कीं। इसके उपरान्त आप ने बी.एड्. और अन्य उपाधियाँ अपने कठिन श्रम के द्वारा प्राप्त कीं।

इस प्रकार मेधावी चन्द्रशेखर ने अपने संकल्प, श्रम और तप के द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में जो मानक स्थापित किया वह आज की पीढ़ी के लिए प्रेरणा देने वाली है। बिना किसी संसाधन के सतत् आगे बढ़ते हुये अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की।

कर्मक्षेत्र में – मानव अपने कर्म के द्वारा अपने किसी भी लक्ष्य को पा सकता है, यदि उसमें संकल्प, साहस, तप और इच्छाशक्ति हो। बिना कर्म किये मानव रह नहीं सकता। इस लिए जो भी करें वह 'अच्छा' या 'सर्वहित' को ध्यान में रखकर करें तो जीवन सफल हो जाता है। परहितकारी कार्य मनुष्य को सही अर्थों में मानव बनाते हैं।

डॉ. चन्द्रशेखरजी के जीवन में सच्चे अर्थों में मानव बनने का एक संकल्प द्रष्टव्य होता है। गुरुकुल और अन्य शिक्षालयों से शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त अपने जनक के कार्यों को आगे बढ़ाते हुये परहितकारी कार्य करने लगे। 1962 से 1972 तक सरस्वती की घोर आराधना के उपरान्त जब लोखण्डेजी अपने गाँव लौटे तो उनके सामने जीविका की तो समस्या थी ही परिवार को व्यवस्थित और सहारा देने का भी भार, सिर पर था। ज्ञान और विद्या की पूंजी तो बीते ग्यारह वर्षों में खूब अर्जित की थी लेकिन अर्थ अभी अर्जित करना बाकी था। देश की स्वतन्त्रता के उपरान्त देश और समाज जिस दिशा में आगे बढ़ा वह दिशा अर्थ की प्रधानता वाली है। जिसके पास धन–सम्पत्ति हो वह समाज में मान–सम्मान के साथ ही कीर्तिवान और सामर्थ्यवान हो जाता है। सरस्वती से भूषित व्यक्ति को आज के समय में इने–गिने लोग ही मान–सम्मान देते हैं। लेकिन चन्द्रशेखरजी इस मायने में अपवाद कहे जा सकते हैं। चिकित्सा–क्षेत्र में जाने के लिए जो विद्या पढ़ी थी, उसका उन्होंने पूरा लाभ उठाना निश्चित किया। 1972 का समय। गृह वापस लौटने के उपरान्त डॉ. लोखण्डे ने शहर और कस्बे की अपेक्षा ग्राम–सेवा करना अच्छा समझा। उन्होंने तय किया कि गाँवों में जाकर वह उन निर्धन, असहाय और जरूरतमन्द लोगों की सेवा करेंगे जिनका जीवन उचित चिकित्सा के अभाव में निरर्थक हो जाता है। उन्होंने गाँव–गाँव जाकर आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति से रोगियों की सेवा करने और स्वस्थ व्यक्तियों को सतत् स्वस्थ बने रहने की प्रेरणा और सलाह देने लगे। इससे जहाँ वह आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति की अच्छाइयों से लोगों को सुपरिचित कराने लगें वहीं पर चिकित्सा के उपरान्त जो आय होती उससे परिवार का भरण–पोषण भी करने लगें। अब तो चिकित्सा उनका कर्म, धर्म और सेवा तीनों बन गए। उन्होंने 17 वर्ष तक आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के द्वारा मानव–सेवा की। इन 17 वर्षों में लोखण्डे जी ने 150 गाँवों में जा जाकर जनसेवा के कार्य चिकित्सा के द्वारा किये। इससे दो लाभ और हुये। प्रथम, यह कि 150 गाँवों के लोग उनसे जुड़ गए द्वितीय, वेद और आर्य समाज का भी परिचय लोगों को होता गया।

शिक्षा और विद्या दो विषय हैं। विद्या से आत्मिक उन्नति होती है और व्यक्ति दुखों से पार हो जाता है और शिक्षा से व्यक्ति की योग्यता और प्रतिभा को आगे बढ़ाने में अवसर प्राप्त होता है। चन्द्रशेखरजी ने अपनी विद्या और शिक्षा दोनों को अपने जीवन में सही दिशा में सदुपयोग किया है। जिससे आज उनका व्यक्तित्त्व और कृतित्त्व लोगों के लिए प्रेरक बन गया है। चिकित्सा उनके लिए व्यवसाय नहीं– सेवा–कर्म बना । इस लिए वह जन सामान्य के लिए प्रेम और श्रद्धा के पात्र बन सके। चिकित्सा के समय लोग जो दे देते, वह ग्रहण कर लेते इस लिए लोगों की दृष्टि में वह आम–चिकित्सक जैसे नहीं रहे। चिकित्सा के द्वारा मानवता को दिए गए अवदान के अतिरिक्त चन्द्रशेखरजी समाज सुधार, व्याख्यान, भजनोपदेश और अन्य सृजन के कार्य करते रहते थे। आर्थिक सपन्नता की कभी चिन्ता ही नहीं की। लेकिन समाज, साहित्य, संगीत और संस्कृति के उन्नयन के लिए जिस संकल्प और संवेदना की आवश्यकता होती है सभी उनमें पाये जाते हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी कहे जाने वाले लोखण्डेजी ने

बहुविधि क्षेत्रों में अपना परचम लहराकर सबके सामने एक उदाहरण प्रस्तुत किया। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि लोखण्डेजी का व्यक्तित्त्व इतना व्यापक और प्रेरक है कि कोई भी व्यक्ति इनकी प्रशंसा किये बगैर नहीं रह सकता है। जीविका हेतु कोई एक व्यवसाय कभी साथ नहीं रहा। सामाजिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक अभिरुचि के होने के कारण व्यवसाय पर ध्यान स्थिर कभी नहीं रहा। समाज में सार्थक दिशा में परिवर्तन कैसे हो इस बात पर हमेशा चिन्तन चलता रहता था। परिवार के लिए एक चिकित्सा मात्र जीविका का साधन होने के बावजूद डाक्टर साहब का सारा ध्यान सामाजिक और सांस्कृतिक कल्याण की ओर रहा। जैसे इनका जन्म ही समाज सुधार के लिए हुआ हो।

गृहस्थ आश्रम में प्रवेश– शिक्षा पूर्ण हो जाने और जीविका के लिए चिकित्सा को साधन बनाने के बाद सगे–सम्बन्धी इनके विवाह की बात करने लगे थे, लेकिन प्रश्न यह था कि जिस प्रकार का जीवन लोखण्डेजी चाहते थे– क्या उस प्रकार की पत्नी मिलेगी?विवाह जीवन का एक महत्त्वपूर्ण संस्कार है। चन्द्रशेखरजी समाज सुधार के हावी वाले व्यक्ति थे, इस लिए वह विवाह जात–पाँत तोड़कर करना चाहते थे। भारतीय समाज को मूर्तिपूजा के बाद यदि किसी अन्य प्रथा से भारतीय समाज और देश को हानि उठानी पड़ी है तो वह प्रथा है–जाति प्रथा। इस विष बेल से चन्द्रशेखर जी हमेशा के लिए मुक्त हो जाना चाहते थे इस लिए उन्होंने जन्मगत जात–पाँत को त्यागकर विवाह करने का निश्चय किया।

27 वर्ष की आयु में 1975 में डॉ. चन्द्रशेखर जी का विवाह पौराणिक विट्ठलभक्त परिवार की कन्या सौ. भागीरथी कापसे के साथ हुआ। विवाह के पश्चात् इनका नाम परिवर्तित होकर सन्ध्या लोखण्डे हो गया। श्रीमती सन्ध्याजी को विवाह के पश्चात् अनेक विकट समस्याओं का सामना करना पड़ा लेकिन वह कभी हताश निराश नहीं हुईं। परिवार की स्थिति बहुत ही नाजुक थी। दोनों पति–पत्नी जितना कमाते, वह परिवार पालने के काबिल भी न होता, लेकिन पितृ–गृह से कुछ भी न लेते थे। अपरिग्रह का पालन पति–पत्नी दोनों करते थे। मात्र दो वस्त्रों से काम चलाते लेकिन कभी किसी के सामने हाथ नहीं पसारा। वैद्यकीय सेवा में 17 वर्ष गुजारने के बाद भी वह उतना भी धनोपार्जन नहीं कर सके थे जिससे गृहस्थी की गाड़ी सुचारू रूप से चलती।

डॉ. चन्द्रशेखर के आदर्श– वैदिक धर्म, संस्कृति और साहित्य सृजन का अपने जीवन का उद्देश्य बनाने वाला व्यक्ति कभी लोभ, मोह और धन संग्रह जैसे विकारों में नहीं फँसता। ऐसा जीवन प्रा. लोखण्डे के जीवन में हम देखते हैं। अपरिग्रह, त्याग, सुचिता और तप जीवन के मूल्य और सद्गुण रहे हैं। इस लिए 17 वर्ष के चिकित्सकीय जीवन के बाद भी निरा निर्धन के निर्धन ही रहे। परिवार में भाइयों में सबसे बड़े हैं। पिता, पितामह और प्रपितामह के जमाने से घर की जो स्थिति थी वह इनके परिवार में 1991 तक रही। पिता की मृत्यु के उपरान्त दोनों अनुजों ने पैतृक सम्पत्ति पर कब्जा कर लिया। लेकिन बड़े होने के कारण इसका कोई विरोध नहीं किया और सारी जंगम सम्पत्ति भाइयों को दे दी तथा खाली हाथ पति–पत्नी घर से निकल पड़े। कभी औषधि बेचने का व्यवसाय तो कभी कम्पाउन्डर का काम करते तो पत्नी सन्ध्या कभी परिचारिका का काम करतीं तो कभी श्वेटर बेचने का। लेकिन घर की स्थिति जितनी सुधारने का प्रयास करते उतनी ही बिगड़ती जाती। इसके बाद भी दम्पत्ति (दोनों) कभी निराश न हुये। समाज में मान–सम्मान उसी का होता है जिसके पास धन होता है। विद्वता हो या न हो लेकिन यदि धन हो तो मान–सम्मान खुद–ब–खुद मिलता रहता है। पैसा न होने के कारण इनकी उपेक्षा होने लगी । सगे–सम्बन्धी इनकी माली हालत पर ताने मारते। घर पर इन्हें खाली पेट भी सोना पड़ा। कहीं–कहीं पर तो भोजन को बीच में ही छोड़कर उठने के लिए विवश होना पड़ा।

इस धनहीनता की ही स्थिति में 1982 में पिता श्री रामस्वरूपजी का साया भी इनके सिर से उठ गया। अब इनके परिवार से सहानुभूति का भाव रखने वाला कोई नहीं बचा। इस समय तक परिवार में तीन सन्तानें भी आ चुकी थीं। कुल पाँच लोगों का खर्च चलाना मुश्किल होने लगा। चिकित्सा के अतिरिक्त अन्य छोटे–छोटे व्यवसाय में भी हाथ आजमाये लेकिन स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया।

आर्य प्रतिनिधि सभा में उपदेशकीय कार्य–चिकित्सकीय सेवा में 17 वर्ष व्यतीत करने के बाद भी परिवार की आर्थिक स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया। अब उन्होंने इसे त्यागकर आर्य प्रतिनिधि सभा महाराष्ट्र में उपदेशक के द्वारा वैदिक धर्म, आर्य समाज और वैदिक संस्कृति को जन–जन तक पहुँचाने के लिए संकल्प लिया।

सभा उन्हें इसके लिए मात्र 600 रुपये देती थी। इन 600 रुपये में तीन बच्चों का परिवार चलाना होता था। यह 1982 की बात है। पत्नी 600 रुपये देकर डॉ. चन्द्रशेखर पुनः धर्म प्रचार के कार्य में महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश और अन्य क्षेत्रों में चले जाते। एक माह उपरान्त ही फिर परिवार से मिल पाते। कभी–कभी तो और समय बीत जाता। पत्नी श्रीमती सन्ध्याजी तीन बच्चों के साथ पति(डॉ. लोखण्डे) का इन्तजार करतीं। जब स्थितियाँ प्रतिकूल हों तो समाज भी सहायता के लिए आगे नहीं आता। ऐसे में वे भी बेगाने जैसे व्यवहार करने लगते हैं, जिसे अपना कहा जाता है। 1982–87 तक सभा के उपदेशक के रूप में चन्द्रशेखरजी ने जिस समर्पण भाव से कार्य किया वह आर्य समाज के पुराने 'आर्य सेवक' से किसी मायने में कम नहीं कहा जा सकता है। सभा में विद्वानों का कितना मान–सम्मान या अपमान होता है इसका अनुभव भी उन्हें प्रचार के इन 5 वर्षों में हुये। लेकिन अपनी पीड़ा किसी से कही नहीं। पाँच वर्ष का सारा समय परिवार को न देकर समाज कार्य में व्यतीत हुआ। परिवार की अनदेखी करके समाज सेवा करते हुये किन–किन स्थितियों का सामना करना पड़ता है, उस अनुभव को वही समझ सकता है जिसके ऊपर गुजरा हो। चन्द्रशेखरजी ने सभा को अपना अर्जित ज्ञान, प्रतिभा और जीवनी–शक्ति लगा दी लेकिन इससे परिवार की स्थिति अच्छी होने के स्थान पर दिनोंदिन बदतर होती गई। लेकिन सभा ने कभी भी इस पर विचार नहीं किया कि जो व्यक्ति अपना सर्वस्व सभा को समर्पित किया हुआ है क्या मात्र 600 रुपये दे देने के बाद उसके परिवार के लिए कोई उत्तरदायित्व नहीं होता?

शोषण के इस जमाने में आज कोई भी संस्था भारत में नहीं है जो अपने पूर्ण समर्पित कार्य कर्ताओं का शोषण करना पाप या अपराध मानती हो। इस लिए जब कोई भी व्यक्ति समाजसेवा के लिए 'घर फूंक तमाशा देख' का संकल्प लेकर घर से निकलता है तो सबसे पहले उसे संस्था के उन क्रूर और दुर्गुणी लोगों से दो–चार होना पड़ता है जो खुद को संस्था का सबसे बड़ा 'हितुआ' घोषित करते हुये नये कार्यकर्ताओं का शोषण करने के लिए तैयार बैठे रहते हैं।

जीवन–संघर्ष– चन्द्रशेखर जी के घर की आर्थिक स्थिति इतनी कमजोर हो गई थी कि तीन बच्चों का भरण–पोषण करना ही दूभर हो गया था, उनकी शिक्षा और स्वास्थ्य की चिन्ता तो की ही नहीं जा सकती थी। इसकी चिन्ता श्रीमती सन्ध्या लोखण्डे को हमेशा सताये रहती थी। बच्चों को शिक्षा और संस्कार देना बहुत आवश्यक था। इसे देखते हुये उन्होंने(सन्ध्याजी) आगे बढ़ने और संघर्ष करने का फैसला किया। इसी क्रम में उन्होंने 5वीं से आगे पढ़ने का संकल्प लिया । उन्होंने केन्द्रीय मन्त्री विलासराव देशमुख के गाँव में उनके चचेरे दादाजी, जो नाभक गाँव के रहने वाले थे और आर्यसमाजी थे का एक विद्यालय था जिसका नाम दयानन्द विद्यालय था का संचालन करते थे, उस विद्यालय से सन्ध्याजी ने 9वीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। उसके बाद उन्होंने रेणापूर(ससुराल) से 10वीं की परीक्षा उत्तीर्ण की। विवाह के बाद अपनी तीन सन्तानों के साथ जब वह विद्यालय जातीं तो सगे–सम्बन्धी और जान पहचान के लोग ताना मारते, उलाहना देते और फब्तियाँ कसते, लेकिन सन्ध्याजी यह सब सहन करते हुये भी पढ़ाई करतीं रहीं। इस समय इनकी आयु 27 वर्ष की थी। वे बड़े पुत्र सुमन्त के साथ ट्यूशन करती। बाहरी दुनिया के लोग इनके हौसले को देखकर इनकी प्रशंसा करते । संघर्ष करते हुये वह 1986 में 10वीं कक्षा उत्तीर्ण हुई। अपने कठिन संघर्ष से श्रीमती सन्ध्या लोखण्डे ने उतनी योग्यता प्राप्त कर लिया जिससे वह अध्यापिका बन सकती थीं और परिवार का पोषण अपने बल पर कर सकती थीं। उन्हें अध्यापिका बनने की तीव्र इच्छा होने लगी लेकिन लोखण्डे जी पत्नी से नौकरी कराने के पक्ष में नहीं थे। लेकिन जब उन्होंने देखा कि पत्नी की इच्छा अध्यापिका बनने की बहुत तीव्र है तो उन्होंने अध्यापिका के रूप में समाज की सेवा करने की अनुमति दे दी। जब तक अध्यापिका बनने के लिए आवश्यक शिक्षा न हो भला कैसे यह कार्य पूरा हो सकता था। एक दिन पं. लोखण्डे जब आर्य समाज के प्रचार–प्रसार हेतु बाहर गये हुये थे। सन्ध्याजी बच्चों को लेकर औराद शहाजनी चलीं गई जहाँ महिला डिप्लोमा इन एजूकेशन कालेज(डी.ई.एड् के लिए) था। महाराष्ट्र में ऐसे कालेजों में अनुदान(डोनेशन) देना होता था लेकिन उनके पास तो अनुदान देने के लिए सौ रुपये भी नहीं थे। ऐसे में पं. चन्द्रशेखर की समाज सेवा काम में आई। वहाँ कालेज से सम्बन्धित सभी लोग पं. लोखण्डे से भली भांति परिचित थे। यह परिचय उनके संकल्प को पूरा करने में सहयोगी बना। अतः विद्यालय में डी.ई.एड् में प्रवेश मिल गया। जब

चन्द्रशेखरजी को इस साहस और जुनून का पता चला तो उन्हें आश्चर्य मिश्रित गर्व हुआ। उन्होंने कहा–'जब सन्ध्याजी की इच्छा अध्यापिका बनने की है तो हमें उन्हें नहीं रोकना चाहिए।'

दो वर्ष तक कठोर परिश्रम करते हुये तीन बच्चों को साथ लेकर सौ. सन्ध्याजी ने उस लक्ष्य को प्राप्त किया जिसे वह प्राप्त करना चाहतीं थीं। अब वह किसी विद्यालय में सेवा देने के लिए लालायित थीं। ईश्वर ने इस सात्विक इच्छा की पूर्ति भी की। कई विद्यालयों में अस्थाई शिक्षिका के रूप में अपनी सेवा देने के बाद वह 1991 में जयहिन्द हाईस्कूल में अध्यापिका के रूप में स्थाई हो गई।

सभा में उपदेशक के रूप में लोखण्डेजी ने जितनी सेवा की, उसका वर्णन सहज नहीं। जिस समर्पण और कर्तव्यनिष्ठा से उन्होंने वैदिक धर्म का प्रचार–प्रसार किया वह एक समर्पित आर्य विद्वान का उदाहरण– जैसा है। सन् 1987 में चन्द्रशेखरजी सभा से अलग हो गए। लेकिन अब उनके दिन बहुरने लगे थे। धैर्य, संयम और त्याग की प्रतिमूर्ति डॉ. लोखण्डे जी का 30 वर्ष का संघर्ष पूर्ण जीवन ने इन्हें बहुत कुछ सिखाया और समझाया। 1990 में समय ने पलटा खाया और इनकी बदहाली समाप्त हुई। जयहिन्द महाविद्यालय में संस्कृत और हिन्दी के प्रवक्ता बने।जब अच्छा समय आता है तो अनेक सहयोगी मिलते जाते हैं। प्रा. लोखण्डे के साथ भी कुछ ऐसा हुआ। विद्यार्थी जीवन के मित्र प्रा. नरदेवजी गुडे और उनकी पत्नी सौ.वसुन्धरा गुडे ने शिक्षक के रूप में स्थायित्व दिलाने में बहुत सहायता की। इस प्रकार संघर्षपूर्ण जीवन के अनेक उतार–चढ़ाव में इन्हें अनेक अनुभव दिये। इन अनुभवों से यह से यह बात साफ हो गयी कि यदि व्यक्ति धैर्य, संयम, साहस, सत्य और उत्साह के साथ आगे बढ़ता रहे तो जीवन में उसके बुरे दिन भले ही लम्बे समय तक रहें हों लेकिन भले दिन भी आते हैं और जीवन को सुखमय बनाते हैं।

राष्ट्रवादी प्रा.चन्द्रशेखर के कार्य – व्यक्ति अपने परिवार, समाज, स्वाध्याय, घटनाओं और निजी अनुभवों से जो सीखता है, उसके जीवन में बहुत गहरे से प्रभाव डालने वाले होते हैं। इसके साथ ही, उसकी संवेदना, वेदना और मानव मूल्यों के प्रति उसकी सद्भावना या आत्मसात् करने की क्षमता उसे एक श्रेष्ठ या अश्रेष्ठ मानव के रूप में ला खड़ा करती है। यदि व्यक्ति में परहित के प्रति और आत्म–उन्नति के प्रति शुभसंकल्प है तो वह उस शिखर को स्पर्श कर सकता, जिसे वह चाहता है। एक बहुत अदना सा व्यक्ति भी एक बहुत बड़े घर के व्यक्ति से महान् हो सकता है, यदि उसमें प्रबल संवेदना, शुभसंकल्प और शिखर छूने की प्रबल इच्छाशक्ति हो। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे एक सामान्य घर में जन्म लेने के बावजूद, उन्होंने उस महान उच्चता को प्राप्त किया जो एक 'आग्नेय' व्यक्ति में होना चाहिए। शैक्षिक, सामाजिक, साहित्यिक, संगीत और आध्यात्मिक क्षेत्र में अपनी जीवन–धर्मिता, सुचिता, दृढ़–संकल्पना और धैर्य को जीवन की पूंजी मानने वाले डॉ. लोखण्डे शून्य से शिखर तक पहुँचने वाले उन बिरले व्यक्तियों में से हैं जिनका सारा जीवन परहित में आज भी व्यतीत हो रहा है।

लातूर में आये भूकम्प पीड़ितों की सहायता हो, आर्य महासम्मेलनों का आयोजन हो, अन्तर्जातीय विवाह के सामूहिक आयोजन हों, अस्पृश्यता के विरुद्ध चलाये गए अभियान हों, वैदिक विचारों और मानवता की रक्षा हेतु सतत् किये जा रहे लेखन के कार्य हों हर क्षेत्र में उन्होंने बुलन्दी प्राप्त की है।

एक दर्जन से अधिक पुस्तकों के लेखक, अनेक समाज सुधारों के प्रणेता और समाज सेवा के क्षेत्र में उत्कृष्ट योगदान देने वाले प्रा. लोखण्डेजी 65 वर्ष की इस आयु में भी उतने ही सक्रिय हैं जैसे वह 25 वर्ष पहले थे। दृढ़ संकल्प, साहस, धैर्य और त्यागपूर्ण जीवन का ही परिणाम है कि 150 वर्षों से शिक्षा और अर्थ के क्षेत्र में अत्यन्त पिछड़ा परिवार आज उन श्रेष्ठ परिवारों में गिना जाता है जिसने साहित्य, समाज और धर्म के क्षेत्र में अपनी अलग पहचान बना ली है। अभिनन्दन ग्रन्थ इस ऊर्जास्विता और संघर्ष का परिणाम है।

प्रस्तुति : प्रा.चन्द्रहास मेटे
(संस्कृत विभाग श्री व्यंकटेश मा. विद्यालय, लातूर)

वेद एवं वैदिक संस्कृति

डॉ. महनाज़ इज़हार

डा. महनाज इज़हार वैदिक धर्म एवं संस्कृति की प्रखर शोधार्थीनी हैं। आप ने वेद विषय लेकर पी.एच.डी की उपाधि प्राप्त की है। अनेक वेद विषयक गोष्ठियों में निरन्तर भाग लेती रहती हैं।

वैदिक धर्म के आधार ग्रन्थ, ज्ञान के अनन्त भण्डार, आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक इन त्रिविध अर्थों के प्रतिपादक, पुरुषार्थ चतुष्ट्य्य के सर्वोत्तम साधक, विपुल ज्ञान–विज्ञान एवं संस्कृति के संवाहक, विश्व के प्राचीनतम् साहित्य के रूप में सर्वस्वीकृत, भारतीय ऋषियों–महर्षियों के प्रत्यक्ष ज्ञान के महान् आदर्श वेद केवल भारतीय समाज द्वारा ही समादत नहीं हैं, अपितु विश्व के महान विद्वानों ने भी उन्हें श्रद्धा दी है तथा उनके महत्त्व को भी स्वीकार किया है। शब्द रचना की दृष्टि से विद् ज्ञाने धातु से पुल्लिंगवाची घञ् प्रत्यय के योग से निष्पन्न वेद शब्द का अर्थ– जानना है। वेद शब्द ज्ञानार्थक है, किन्तु इसका प्रयोग उस विशेष ज्ञान राशि अथवा शब्दराशि के लिए किया जाता है जिसका हमारे ऋषियों–मनीषियों ने अपनी गहन तपस्या द्वारा साक्षात्कार किया है–**ऋषयः मन्त्रद्रष्टारः।**[1] साक्षात्कृत धर्मा तपोलीन महर्षियों द्वारा प्रत्यक्ष दृष्टि होने के कारण अपौरुषेय वेद अनादि एवं नित्य हैं। इनकी प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध है–तस्मैनूनम् अभिद्यवेवाचा विरुप नित्यया। ज्ञान–विज्ञान का कोई ऐसा मूल्य अवशिष्ट नहीं है जो वेदों में अप्राप्य है– सर्वज्ञानमयो हि वेदाः।[2] विविध विधाओं, विभिन्न दर्शनों, सकल शास्त्रों, विश्व भाषाओं एवं संस्कृतियों के स्रोत प्राप्त होने के कारण तथा जीवन मूल्य, संस्कृति, धर्मदर्शन, सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक जीवन से सम्बन्धित सभी विषयों को निहित रखने के कारण इन्हें विश्वकोश की संज्ञा दी गई है।

मानवीय जीवनोपयोगी समस्त कर्तव्याकर्तव्य, अभ्युदयनिःश्रेयस का एक मात्र प्रमाणिक स्रोत होने के कारण वेदाध्ययन मानव का परम धर्म है–

अस्मिन् धर्मोऽखिलेनोक्तो गुणदोषौ च कर्मणाम्।
चतुर्णामपि वर्णनामाचारश्चैव शाश्वतः।।[3]

वेदोऽखिलोधर्म मूलम् के रूप में स्वीकृत वेदों ने जिन कर्मों का विधान किया है, वे धर्म हैं तथा जिनका निषेध किया है, वे अधर्म हैं। वेद स्वयं प्रकाश ज्ञान हैं। कहा गया है–

वेदप्रणहितो धर्मो ह्मधर्मस्तद्विपर्ययः।
वेदो नारायणः साक्षात् स्वयम्भूरिति शुश्रुम।।[4]
ये पितरों, देवों, मनुष्यों के चक्षुस्वरूप हैं–
पितृदेवमनुष्याणां वेदश्चक्षुः सनातनम्।।[5]

वेदों का इतना महत्त्व एवं सबसे बढ़कर उनका मूल्यवान् होना उनकी सर्व प्राचीनता एवं उनमें सन्निहित ज्ञान–विज्ञान एवं जीवन मूल्यों के कारण ही नहीं है अपितु इस कारण से भी है कि वेदों के अध्ययन ने नवीन–नवीन शोधों एवं वैज्ञानिक आविष्कारों को प्रवर्तित किया है। आधुनिक भाषा–विज्ञान का जन्म भी वेदों से ही हुआ है।

सन्दर्भः 1.ऋग्वेद–10/8/3, 2.मनुस्मृति–2/6, 3.मनुस्मृति –1/106, 4.श्रीमदभगवत – 6/1/40/, 5. मनुस्मृति –12/94

वैदिक संस्कृति तथा उसी से आविर्भूत लौकिक संस्कृत की आश्चर्यजनक समता लैटिन, ग्रीक, फारसी आदि भाषाओं में दृष्टिगोचर हुई है। इनसे प्राचीन इतिहास पर भी महत्त्वपूर्ण प्रकाश पड़ा है तथा भारतीय संस्कृति के साथ ही साथ विश्व की संस्कृतियाँ भी प्रकाश प्राप्त करती रहीं हैं

वैदिक संस्कृति

मेरे विचार से मन अथवा आत्मा का, आचार एवं विचारों का संस्करण ही संस्कृति है। वैदिक मन्त्रों द्वारा प्रतिपादित संस्करण की पद्धति ही वैदिक संस्कृति कहलाती है। विश्वस्य प्राचीनतमा श्रेष्ठतमा संस्कृतिरियमेव। साक्षात्कृतधर्मा तपोलीन महर्षियों ने सतत् साधना के द्वारा मनुष्य के लौकिक जीवन के साथ ही साथ पारलौकिक जीवन के परिष्कार एवं कल्याण के लिए शाश्वत सिद्धान्तों का दर्शन किया तथा जीवन के लिए कुछ नैतिक नियम निर्धारित किये। इस प्रकार वैदिक मन्त्रों में वैदिक संस्कृति के आत्मभूत कुछ अनेकानेक भव्यभाव पूर्ण गरिमा के साथ आलोकित हुए हैं–

जिनमें विश्व बन्धुत्व, सर्वभूत मंगल कामना, मानव–प्रेम, लोककल्याण , सत्य, दान, त्याग, परोपकार, औदार्य, आशावादादि प्रधान हैं। इन अनमोल जीवन मूल्यों को सजोए वैदिक संस्कृति की अमूल्य एवं अजस्र ज्ञानधारा किं वा शिष्टाचार धारा अनन्त काल से अद्यावधि निरन्तर प्रवाहित हो रही है।

प्रथमा संस्कृति

वेद विश्व के प्राचीनतम् ग्रन्थ हैं अतएव वैदिक संस्कृति भी प्राचीनतम् है। प्रथमा संस्कृतिः, वैदिकी संस्कृतिरेव– विश्व संस्कृतियों के बीज वेद मन्त्रों से ही उद्भूत हुए हैं–

सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा।[1]

यहाँ प्रथमा से वैदिक संस्कृति का प्रमुख होना तथा विश्ववारा पद से इसकी सार्वभौमिकता एवं विश्वजनीयता प्रकाशित होती है।

ऋत् एवं सत्य–

वेदों में ऋत् को सर्वोपरि माना गया है। ऋत् वह सनातन नैतिक नियम है जो सर्वदा सर्वथा अनुल्लंघनीय है, प्रत्येक परिस्थिति में सब के द्वारा अनुकरणीय हैं। ऋत् ऐसा अनुशासन अथवा व्यवस्था है जिससे सब नियन्त्रित है। सृष्टि का अस्तित्व इसी ऋत पर निर्भर करता है। सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व जब सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जलमग्न था सृष्टि की संरचना के क्रम में सृष्टिकर्ता के द्वारा ऋत् एवं सत्य का आविर्भाव हुआ–

ऋतं च सत्यं चाभीद्धत्तपसोऽध्य जायते।[2]

वैदिक वांगमय में ऋत् को ऋतम् वृहत के रूप में व्याख्यायित् एवं व्याव्हृत किया गया है। यह ऋत् सत्य प्रकाशमय चेतना की अवस्था का द्योतक है। ऋत् का प्रयोग अनेकशः सत्य के पर्याय के रूप में हुआ है–

ऋतम् इत्येश वै सत्यम्।[3]
सत्यं व ऋतम्।[4]

सायण ने 'ऋत्' को सत्यवाची बताते हुए अपने भाष्य में लिखा है कि 'ऋत्' सत्यवाची है। यह सत्य विविध होता है–व्यावहारिक, परमार्थिक।

वाणी से सत्य बोलना व्यावहारिक सत्य है तथा परब्रह्म परमार्थिक सत्य है। ऋत् सर्वदा अयोगी रहा है।

सन्दर्भः1. यजुर्वेद –7/14, 2.ऐतरेय ब्राह्मण–4/3/6/, 3. शतपथ ब्राह्मण

ऋत्वाद की उपयोगिता के सन्दर्भ में डॉ. वृजेश के ग्रन्थ अंग्रांकित पक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–'ऋत्' के सम्बन्ध में राजनीति शास्त्र के पण्डित डॉ. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने अपने वैदिक राजनीति शास्त्र में ऋत् सम्प्रभुतावाद को वेद का विराट राजनैतिक दर्शन सिद्ध करते हुए यह लिखा है कि ऋतवाद का अर्थ है–मानव के नैतिक एवं आत्मिक चैतन्य का पोषण। इस ऋत् का ज्ञान व्यावसायत्मिकता बुद्धि के द्वारा होता है। इनके अनुसार ऋतवाद की सम्प्रभुता मानने से दो व्यावहारिक लाभ होंगे। प्रथमतः व्यापक मानवता को समर्थन मिलेगा। आज के 'मानवाधिकार आयोग' जैसी संस्था इसी ऋत्वाद के अधीन कार्यरत रहेगी। दूसरा लाभ यह होगा कि मानव गरिमा का हनन जैसे भी हो, किसी अधिनायक तंत्र के अधीन या नस्लवादी व्यवस्था के अधीन उसके नियम को तत्क्षण अवैध घोषित किया जा सकेगा। युद्धलिप्सा, बलवाद, दण्डवाद को नियन्त्रित करना ऋत सम्प्रभुतावाद का सुपरिणाम होगा। इसी कारण से डाक्टर वर्मा सम्प्रभुतावाद का आद्यस्तर ऋत सम्प्रभुता को मानते हैं। और दूसरा स्तर, जन सम्प्रभुता और तृतीय स्तर वे संविधान सम्प्रभुता को रखते हैं।[5]

वेदों में ऋत् को सर्वोच्च वरीयता प्राप्त है। वहीं सृष्टि का आधायक है, सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त है। पृथ्वी की समस्त क्रियाओं का, दिन–रात का, जलों का, अन्तरिक्ष का एवं आकाश का जनक एवं नियामक है–

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात तपसोऽप्यजायत। ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः।[6]
समुद्रादर्णवादधिं संवत्सरोऽअजायत। अहोरात्राणिं विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी।[7]

वैदिक साहित्य के प्राण तत्त्व के रूप में प्रतिष्ठित ऋत् वैदिक संस्कृति का अभिन्न अंग है। वेदों का यह नैतिक नियम देवताओं एवं जीवों को सन्मार्ग पर चलने का निर्देश करता है। जीवों के लिए स्पष्ट निर्देश है कि वे भावों से बचकर पुण्य की ओर प्रवृत हों।

यज्ञ का सिद्धान्त

यज्ञ वैदिक संस्कृति का केन्द्रभूत है। वेदों में सर्वत्र यज्ञ का प्राधान्य है। ऋत् यदि सृष्टि का प्राण है तो यज्ञ वैदिक आचार की आत्मा है। सर्वप्रथम ऋग्वेद के सर्वप्रथम मण्डल के सर्व प्रथम सूक्त की सर्व प्रथम ऋचा में ही यज्ञ शब्द का प्रयोग दिखाई देते हैं–

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् होतारं रत्नधातमम्।[1]

वेदों में इस समग्र संसार की सृष्टि को ही एक यज्ञ का रूपक स्वीकार करते हुए एक आदिकालीन यज्ञ ही माना गया है। सम्पूर्ण वैदिक वांगमय का प्रथम विवक्षित पद 'यज्ञ' ही है। वैदिक ऋषि द्वारा शिव संकल्पमय मन के द्वारा सम्यक् विचारपूर्वक निरंहकार भाव से ललाम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किए गए कर्म को ही यज्ञ कहा गया है। यज्ञ का यह वैदिक सिद्धान्त शाश्वत एवं सार्वभौमिक है। इस विश्व में परिलक्षित प्रत्येक कर्म यज्ञ है, प्रकृति यज्ञपरा है, ईश्वर होता है– अयं होता प्रथमः पश्यतेमम्।[2]

यज्ञ ही भोगों एवं सिद्धियों का प्रदाता है, यही सर्वकल्याण का साधन है। इस सर्व गुण सम्पन्न सर्व सौन्दर्यमय यज्ञ का स्वरूप मन्त्रद्रष्टा वैदिक ऋषि द्वारा इस प्रकार वर्णित किया गया है।

अयं वो यज्ञ.......................................अग्रियोत वाजाः।[3]

अर्थात् –ऋभुजों ने (अमर शिल्पियों ने) आपके लिए यह यज्ञ किया, जिसे भली–भाँति विचारकर आप धारण करें, जिससे आप उत्कृष्ट ज्ञान–विज्ञान प्राप्त कर समाज की अच्छी–अच्छी सेवा कर सकें और उत्तम कार्य

सन्दर्भः 5. वाल्मीकि रामायण में मूल्य चेतना पृष्ट. 35, 6. ऋग्वेद – 10/190/1,3, 1. ऋग्वेद – 1/1/1, 2ऋग्वेद –4/34/3

के भागी बनें।"

यज्ञ का कर्तव्य कर्म, पालनीय एवं अनुल्लंघनीय है। सृष्टिरयि यज्ञमयी प्रकल्पिता। वैदिक पुरुष सूक्त में यज्ञ के रूपक के द्वारा परमपुरुष तथा सृष्टि–रचना का निरूपण किया गया है।[3] यज्ञ का उल्लंघन करके मनुष्य तो क्या देवता भी उत्कृष्ट नहीं हो सकते हैं – नहि देवो न मर्त्योमहस्त क्रतुं परः।[4]

हमारी संस्कृति में प्रयुक्त कर्म फलवाद के मूल में यही यज्ञ है। वस्तुतः किया गया प्रत्येक कर्म ही यज्ञ है जो मानव मात्र को अवश्य ही आत्मिक सन्तुष्टि प्रदान करता है। कर्मरूप यह यज्ञ फलप्रसू है अर्थात् फलदायी है।

वर्ण व्यवस्था : वेदों में जहाँ एक ओर अलौकिक ज्ञान का प्रकाश भाषित हो रहा है, वहीं दूसरी ओर लौकिक क्रियाओं का भी समन्वय है। वैदिक ऋषि स्वयं भी तो इसी लोक में जीते थे। अतएव लौकिक जीवन के प्रत्येक तथ्य एवं सत्य को स्वरूपतः जानते थे। वैदिक संस्कृति वर्णाश्रम प्रधान है । वर्ण–व्यवस्था का आदि ऋग्वेद के प्रस्तुत मन्त्र द्वारा होता है। इस एक ही मन्त्र में चारों वर्णों का वर्णन किया गया है–

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहूराजन्यः कृतः। उरु तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत्।।[1]

इस मन्त्र में चारों वर्ण प्रजापति पुरुष के अंगभूत चित्रित किए गए हैं। ये चारों विराट रूप समाज के ही अंग हैं। इस शरीर में ज्ञानेन्द्रिय सम्पन्न मुख की जैसी प्रधानता है, समाज में वैसी ही श्रेष्ठता ज्ञान–विज्ञान का प्रसार करने वाले ब्राह्मणों की होती है। मानव–देह रक्षा के लिए जो स्थान भुजाओं का है, समाज अथवा राष्ट्र की रक्षा के कारण वैसा ही वैशिष्ट्य क्षत्रियों का है। मानवीय देह के भरण–पोषण के लिए उरु भाग की स्थिति के समान ही समाज की आर्थिक उन्नति एवं समृद्धि के लिए वैश्यों की स्थिति है। शरीर को चलायमान्–क्रियाशील बनाने में पैरों का जो महत्त्व है वैसा ही महत्त्व प्रगतिशील समाज में शूद्रों का है। इस प्रकार वैदिक संस्कृति में स्थापित चतुर्वर्ण–व्यवस्था में ही सर्वांगपूर्ण सामाजिक सुख, समृद्धि एवं उत्थान अवलम्बित है। वैदिक ऋषियों द्वारा निर्धारित यह विधान वस्तुतः समाज को सुदृढ़ प्रेमपाश आबद्ध कर शान्ति की प्रतिष्ठा करने वाला, सामाजिक क्रियाओं का योग्य व्यक्तियों द्वारा सफल क्रियान्वयन कराने वाला है।

आश्रम–व्यवस्था

वैदिक ऋषियों ने समाज के वर्ण विभाजन के पश्चात् उसकी क्रियाशैली पर प्रकाश डालते हुए जीवन का एक सुष्ठु निर्धारित क्रम प्रदर्शित किया है। उन्होंने शतायुर्वै पुरुषः, इस मान्यता के अनुसार –ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास इन चार आश्रमों का अवस्थानुसार विधान किया है–

आचार्यो ब्रह्मचारी ब्रह्मचारी प्रजापतिः। प्रजापति विराजति विराडिन्द्रो भवादृशीः।।
ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपामुपाघ्नत। इन्द्रो हि ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभात्।[2]

वैदिक संस्कृति के उपासक आर्यों के जीवन की यह परमपावनी पद्धति रही है–प्रथम ब्रह्मचर्याश्रम में तपोमय एवं श्रममय जीवन यापन के द्वारा विद्यार्जन एंव शारीरिक शक्ति के संचय का विधान है। द्वितीय गृहस्थाश्रम में विवाह संस्कार के पश्चात् दाम्पत्य जीवनयापन के साथ योग्य सन्तानोत्पति एवं पंच महायज्ञों के अनुष्ठान का विधान, तृतीय वानप्रस्थाश्रम में दार्शनिक चिन्तन एवं ईश अराधना की जाती है, तथा चतुर्थ संन्यासाश्रम में वैराग्यभाव के साथ सब कुछ त्यागकर योगाभ्यास एवं धर्म का प्रचार एवं प्रसार करते हुए अन्त में योग द्वारा ही देह–त्याग का विधान प्रदर्शित है।

सन्दर्भ: 3. ऋग्वेद – 10/90–6,8,9,15,16, 4. ऋग्वेद – 1/19/2, 1. – ऋग्वेद – 10/90/12, 2. ऋग्वेद –16/32

वैदिक संस्कृति की उदात्त भावना – वैदिक संस्कृति औदार्य की परिपोषक है। वैदिक ऋषि सर्वत्र छोटे–बड़े के भाव की निन्दा करते हुए सहभाव का उपदेश करते हैं कि न तुममें कोई ज्येष्ठ है न कनिष्ठ–

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधूः सौभगाय।
नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजाय चापराजाय च नमः।[3]

मन्त्र द्वारा छोटे–बड़े, अपने–पराए सभी को प्रणाम करने को कहा गया है। वैदिक ऋषि ईर्ष्या–द्वेषादि भावों को त्यागकर उदात्तमना होने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं कि आन्तरिक एवं वाह्य रूप से मानव का व्यवहार एक समान होना चाहिए– यदन्तरं तद्वाध्यं यद् वाह्यं तदन्तरम्।3।

सब सभी को प्रेम की दृष्टि से देखें तथा सब सभी का प्रिय चाहें–यही वैदिक संस्कृति का आदर्श है– प्रियं सर्वस्य पश्यत उत शूद्रे उतार्ये।[4]

वैदिक संस्कृतिः सत्यमेव मानवसंस्कृतिः। इस संस्कृति का सारभूत मधुरोपदेश है–:मनुर्भव।

विश्वबन्धुत्व भाव – अत्रविश्व भवत्यैकनीडनम् वस्तुतः विश्वमैत्री की महनीय भावना सर्वप्रथम वेद मन्त्रों में ही आविर्भूत हुई है–

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।[5]

भूमिर्माता अदितिर्नो जनित्रम्।[6] के रूप में वैदिक ऋषि के अनुसार पृथ्वी माता के उदर से उत्पन्न तथा उसकी गोद में पले–बढ़े सब मनुष्य सहोदर हैं–भाई–भाई हैं, उनमें परस्पर कोई भेदभाव नहीं है। अतएव सब को सभी को बन्धुत्व की दृष्टि से देखना चाहिए–मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समिक्षन्ताम्।[7] वेदों का यह उपदेश सतत् उपयोगी है–

समानि व आकूतिः समाना ह्रदयानि वः। समानमस्तु यो मनोयथा वः सुसहासति।।[8]

सब वर्ग, सब वर्ण, सब जाति एवं सम्प्रदाय एक ही विश्व परिवार के अंगभूत हैं। यह विश्व मैत्री भावना वैदिक संस्कृति की आत्मा है।

समानी प्रपा सह वोऽन्नभागः समाने योक्त्रे सह वो मुनज्मि।
समयञ्चोऽग्निं सपर्यतारा नाभिमिवाभितः।[9]

अर्थात् "तुम सब का जल पीने का स्थान एक हो। तुम्हारा अन्नभाग भोजन एक साथ हो, तुम सब समाज कार्य अर्थात् एक केन्द्र के नीचे रहकर कार्य करने वाले हो, तुम सभी आराधना एवं उपासना करते हुए मानव कल्याण की प्रार्थना करो, जैसे चक्र के आरे नाभि से समद्ध रहते हैं, वैसे ही तुम समाज में एक साथ मिलकर रहो।

वैदिक संस्कृति का यह सन्देश वर्तमान की महती आवश्यकता विश्वबन्धुत्व एवं विश्व शान्ति स्थापना का मूल आधार है।

आशावाद : वैदिक ऋषियों की दूरगामी अन्तःदृष्टि निराशा को कहीं प्रश्रय नहीं देती। आशा हि परमज्योतिः के रूप में आशा ही जीवन में प्राणों का संचार करती है। आशावाद वैदिक संस्कृति का प्राणभूत है। वैदिक ऋषियों के मन्त्रों में सर्वत्र कर्म करते हुए जीने की इच्छा जागृत की गई है– कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।[1] उनके मन्त्रों में सर्वदा सर्वथा स्वस्थ, अदीन एवं समृद्ध जीवन की आशा की गई है–

पश्येम शरदः शतम् जीवेम शरदः शतम् श्रुणुयाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतम् भूयश्च शरदः

सन्दर्भः(3) अथर्ववेद –2/30/4, (4) अथर्ववेद –19/61/1 (5) अथर्ववेद – 12/1/12, (6) अथर्ववेद – 6/120/2 (7) यजुर्वेद–36/18 (8) ऋग्वेद–10/19/14 (9) अथर्ववेद – 3/30/6

शतात्।[2] वैदिक ऋषियों के मन्त्र मनुष्य को आशा का ही सहारा लेकर दुख कण्टकमय कठिन जीवन–पथ पर आगे बढ़ाते हैं। उनके मन्त्रों में आशावाद का परम पावन स्रोत सतत् रूप से प्रवाहित हुआ है।

उच्छ्रयस्व महते सौभाग्य।[3] वयं स्याम पतयो रयीणाम्।[4]
स नो देवेष्वा यमद् दीर्घमायुः प्र जीवसे।[5]
वयं भगवन्तः स्याम।[6] मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्रः।[7]

इत्यादि मन्त्रों में सुखमय जीवन की आशा प्रकृष्टेण दृष्टि गोचर हुई है। भारतीय संस्कृति का प्राणभूत कर्मवाद एवं आशावाद वैदिक संस्कृति के कर्मवाद एवं आशावाद से ही अग्रसारित हुआ है।

निज से पूर्व पर चिन्तन का भाव : वैदिक ऋषि के चिन्तन में सर्वत्र 'अहम्' के स्थान पर 'वयम्' का प्राधान्य है। अहंकार का भाव स्वार्थपरता को जन्म देने वाला है। वैदिक ऋषियों ने इसे कहीं पर भी कुछ भी प्रश्रय नहीं दिया है। उनके चिन्तन में सर्वत्र सर्वकल्याण का भाव निहित है। न केवल मानव मात्र के कल्याण अपितु इस जगत् के चेतन प्राणी पशुादि तथा वनस्पति आदि जड़ पदार्थों के कल्याण का भाव भी उनकी प्रार्थनाओं में मार्मिक अभिव्यक्ति पाता है।

मानव जीवन के कल्याणार्थ वैदिक संस्कृति की उपयोगिता

वैदिक संस्कृति शाश्वत एवं सार्वभौम है। मानव जीवन के कल्याणार्थ इसका महत्त्व एवं उपयोगिता सर्वविदित ही है। लौकिक जीवन के साथ–साथ पारलौकिक जीवन के उत्थान का भी मार्ग यह प्रशस्त करती है। वैदिक शिक्षा व्यावहारिक है, यह संसार से पलायन नहीं सिखाती है। एक ओर यह जीवनोपयोगी समस्त सांसारिक संसाधनों को जुटाने की कामना व प्रार्थना से युक्त है तो दूसरी ओर आत्म–तत्त्व प्राप्ति का मार्ग भी प्रशस्त करती है। विश्व हितकारिणी त्याग भावना ने वेदों में ही जन्म लिया– तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।[8] वेदानुप्राणित इस त्यागमय उपभोग एवं दूसरों के धन–सम्पत्ति का लोभ न करने के उपदेश में भोग लिप्सित वर्तमान जगत् की ज्वलन्त समस्याओं का समाधान निहित है। सदाचरण की प्रेरणा, लोकमंगल की कामना, अभ्युदय एवं निःश्रेयस की सिद्धि के उपाय बताने वाली वैदिक संस्कृति बुद्धि एवं मन के संस्कार के साथ ही साथ आत्मा को भी विमल बनाने वाली है। यही कारण है कि वैदिक संस्कृति के सन्देश चिरकालिक, सार्वभौमिक, व्यावहारिक एवं सार्वकालिक हैं जो सृष्टि के आदिकाल से लेकर आबालवृद्ध को अनुकूल आचरण करते हुए शुद्ध एवं पवित्र जीवन के साथ ही साथ सुखी एवं समृद्ध जीवन व्यतीत करते हुए अद्यावधि विकास के पथ पर सतत् रूप से अग्रसर करने वाली है, क्योंकि यह व्यक्तिगत सुख–समृद्धि की नहीं समष्टिगत सुख–समृद्धि की कामना से युक्त है–

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुख भाग भवेत्।[9]

सम्पर्क सूत्र : डॉ. महनाज़ इज़हार

मृत्यु के बाद, परलोक में माता–पिता, पुत्र–पुत्री, सगे सम्बन्धी कोई भी सहायक नहीं होता, केवल अपने द्वारा किया हुआ एक मात्र धर्म ही हमारा साथी, रक्षक और सहायक होता है। प्राणी अकेला पैदा होता है, अकेला ही मरता है, पाप–पुण्य का भोग भी अकेला ही करता है, जन्म–मरण और पाप–पुण्य में एक प्राणी दूसरे प्राणी का न तो सहायक हो सकता है और न तो हिस्सेदार ही।

सन्दर्भः 3.मनुस्मृति –1/106, 4.श्रीमद भगवत – 6/1/40/, 5. मनुस्मृति –12/94

वेद और भारतीय संविधान

डॉ. प्रवेश सक्सेना

डॉ.सक्सेना जी संस्कृत,देद और वैदिक संस्कृति की प्रसिद्ध विदुषी और 'वेद सविता' की सम्पादक हैं। आप वेदों की विश्वविद्यालयीन स्तर पर आचार्या रही हैं।

भूमिका

वेद चिर प्राचीन धरोहर, विश्व की थाती तो भारतीय संविधान अर्वाचीन हमारे देश की शासन–पद्धति, लोकतन्त्र का लिखित विधान। वेद–परम्परा जिन्हें अपौरुषेय मानती है और संविधान जिसे राष्ट्र–पुरुष भीमराव अम्बेडकर(संविधानसमिति के अध्यक्ष) ने (अपनी टीम के साथ) डॉ.राजेन्द्र प्रसाद की छत्रछाया में रचा। वेद चिर–पुरातन मानव मात्र का संविधान हैं जब कि भारतीय संविधान मात्र 62 वर्ष पुराना भारतीय नागरिकों का संविधान है। इस पर भी दोनों में कई साम्य हैं, समानताएँ हैं। वैदिक ऋषियों ने आत्मसाक्षात्कार द्वारा युग–युग के लिए सार्वभौमिक सिद्धान्त, अमर विधान, शाश्वत व्यवस्था या विधि अथवा धर्म शास्त्र प्रस्तुत किये(वेदोऽखिलोधर्म मूलम) वेद के आदर्शों को ही स्मृति–ग्रन्थों (व्यावहारिक धर्म तथा नियम के ग्रन्थ) ने स्वीकार किया। फिर भी देश कालगत कारणों से स्मृतियाँ भिन्न–भिन्न विचार धाराएँ प्रस्तुत करती थीं। श्रुति–स्मृति में विरोध होने पर श्रुति ही मान्य होती रही(श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्) यही नहीं संस्कृत के अन्य वांगमय में भी वेद के विधान की ही मान्यता रही। संस्कृत का स्थान जब अन्य भाषाओं ने ले लिया तब भी भारतीय साहित्य में सर्वत्र, या कहें भारतीय जीवन में भी वेद का मूल सिद्धान्त स्वीकृत रहा, वही व्यक्ति के चरित्र को अनुशासित तथा व्यक्तित्व को सजाता संवारता रहा। कारण कि वैदिक धर्म मानवता का धर्म है, हिन्दू, मुसलिम, सिख जैसे किसी पंथ किसी विशेष का धर्म नहीं है। जीवन के मूलभूत सिद्धान्त, नियम–विधान, अधिकार, कर्तव्य सब यहाँ प्राप्त होते हैं।

21वीं सदी के इस युग में जब विज्ञान, प्रोद्यौगिकी चरम विकास पर है। सूचना–प्रोद्यौगिकी के नित नये आविष्कार हो और नैनो टेक्नोलाजी का 'जादू' बस सर पर चढ़कर बोलने वाला ही है, तब भी 'वेद' की पुरातनता आज के मनुष्य को आकर्षित कर रही है। वैसे भी जन्म–विवाह–मृत्यु के अवसरों पर आज भी वैदिक कर्मकाण्ड सम्पन्न करके ही सन्तुष्टि पाई जाती है। वेदों के प्रति गहन श्रद्धाभाव जनमानस में युग–युग से पुष्ट होता रहा है। प्राचीन पीढ़ी में ही नहीं आज की नई पीढ़ी में 'वेदों में क्या है?' इस प्रकार की जिज्ञासाएँ हैं। इस सब का परिणाम यह हुआ है कि 'वेद, वैदिक, वैदिकी' जैसे शब्द अत्यन्त प्रचलन में या बोलचाल की भाषा में कहें तो 'फैशन' में आ गए हैं। 'वैदिकी'–यह विज्ञापन देखकर मैं चौकीं– पाया कि सिलेसिलाए वस्त्रों के शोरूम का नाम 'वैदिकी' है। इसी प्रकार समाचार–पत्रों में धर्म, अध्यात्म के कॉलमों में कोई श्लोक या उद्धरण वेदों का कह दिया जाता है। यह वेदों के प्रति 'अज्ञानता' का प्रतीक तो है, पर अपनी बात को वजन देने के लिए 'वेद' का आश्रय लेना भी है।

प्रश्न अब यह है कि डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा रचित संविधान में वैदिक कैसे प्रतिच्छायित हो रहा है? डॉ. अम्बेडकर के जीवन चरित से ज्ञात होता है कि 'अन्यज' होने के कारण संस्कृत पढ़ने का अवसर उन्हें नहीं मिला परन्तु विद्याध्ययन में गहन रुचि के कारण वे इस उच्च स्थान तक पहुँचे कि 'सविधान' बनाने का कार्य सौंपा गया। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के निर्देशन में बनी 'संविधान निर्माण समिति' के अन्य सदस्य भी भारतीय संस्कृति के आदर्शों से

प्रेरित थे। डॉ. अम्बेडकर इस समिति के अध्यक्ष थे जिन्होंने बहुत उदार दृष्टिकोण से इसे रचा। श्री चतुरसेन शास्त्री ने 'मेरी आत्मकहानी' में (315–317 पृष्ठों पर) उन्हें अपना अप्रतिम मित्र बताते हुए लिखा है कि–

'मेरे कानों में डॉ. अम्बेडकर का वह गम्भीर नाद गूँज उठता है जो उस पुरुष–श्रेष्ठ की व्यक्तिगत विशेषता थी। लोग कहते हैं कि वह कानून के असाधारण विद्वान थे। आर्य धर्म शास्त्रों के कितने गम्भीर मनन करता थे इस बात का साक्षी तो मैं स्वयं हूँ। ....वैसे वह संस्कृत के पण्डित नहीं थे पर सभी धर्म ग्रन्थ मौलिक रूप में उन्होंने अंग्रेजी अनुवाद के साथ पढ़े थे। '......अपनी ईमानदारी के ही कारण वह अपने सत्य से डिगे नहीं।' परन्तु इतना 'सत्यवादी' होते हुए, ज्ञान दीक्षित होते हुए जीवन के मोड़ों पर उन्हें हर क्षेत्र में कुत्सित व्यवहार झेलना पड़ा। जिसके विषय में श्री कृष्ण सेमवाल ने भीमशतकम् में बहुत सुन्दर अनुप्रासमयी भाषा में लिखा है–

'मानवाः मानवाः सर्वे समरक्ताः समक्रियाः कथम स्पृश्यता तत्र किमाश्चर्यमतः परम्।।25।। अर्थात् संसार में सभी मनुष्य समान रक्त एवं समान क्रियाशील हैं। फिर इनमें परस्पर अस्पृश्यता कैसे? इससे महान आश्चर्य और क्या हो सकता है? जीवनभर सत्य की प्रतिष्ठा, जाति प्रथा की समाप्ति तथा दलितोद्धार में लीन डॉ. अम्बेडकर ने मानवाधिकार सम्बन्धी चिन्तन को अपने भाषाणों द्वारा गुंजित किया। विधि मन्त्री के पद को तो सुशोभित किया ही, हिन्दू कोड बिल बनाया तथा संविधान का निर्माण किया'। एक सच्चे विद्वान की भाँति 'अपने अन्य साथियों के साथ' संविधान निर्माण में अत्यन्त उदारता का परिचय दिया। हिन्दुओं ने सदा उन्हें नीची दृष्टि से देखा पर उन्होंने संविधान–निर्माण में 'विद्वेष' अभिव्यक्त नहीं किया। यही नहीं जैन, बौद्ध, सिक्ख सभी को हिन्दुओं का अभिन्न अंग बताया। डॉ. अम्बेडकर की विचार धारा इस प्रकार के सार्वभौम धर्म का अनुसरण करने वाली है।

भारतीय संविधान : किसी भी देश का संविधान वहाँ की शासन पद्धति के अनुसार होता है। लोक तन्त्रात्मक शासन पद्धति में 'लोक' की इच्छाएँ, 'लोक' की आशाएँ 'लोक' की अपेक्षाएँ निहित रहती हैं। भारतीय संविधान का वाह्य रूप या बाहरी ढाँचा अमेरिका–ब्रिटिश मॉडल का है परन्तु उसका अन्तर वैदिक संस्कृति से प्रभावित है। इस सम्बन्ध में सभी सहमत नहीं हैं। डॉ. मु. म. जोशी ने 'विकल्प' पुस्तक में टिप्पणी की है कि 26 जनवरी 1950 को भारत एक राष्ट्र के नाते हार गया। उसी दिन भारत के संवैधानिक शरीर में मैकाले का भूत घुस बैठा। श्री नरेन्द्र मोहन ने 'भारतीय संस्कृति ' के पृष्ठ 368 पर कहा है–संविधान के निर्माताओं ने भारत की संस्कृति के प्रतीक चुनने में तो कोई भूल नहीं की और प्रतीकों के माध्यम से भारत के सांस्कृतिक एकत्व को स्पष्ट भी कर दिया, पर पता नहीं क्यों यह भाव लिखित रूप से नहीं आया। वर्ष 1949 में स्वीकृत भारतीय संविधान में संसद द्वारा देश–कालानुसार या नई–नई परिस्थितियों से निपटने के लिए अपने बनाए कानूनों में संशोधन–परिवर्तन भी किए जाते रहे हैं। पिछले पचपन वर्षों में कई बार पुराने कानून निरस्त करके नये कानून बनाए गए हैं।

वैदिक संविधान : वेद ईश्वरीय ज्ञान, दिव्य विधान है। इसमें देश काल भेद से कोई विपर्यय उलटफेर नहीं करना पड़ता । अर्थात् वेद के विधान, सार्वभौमिक, सार्वकालिक हैं। यह सार्वभौमिकता या सार्वकालिकता अन्य पन्थों में होती ही है। और यही है जो कभी बदलती नहीं। डॉ. भीमराव अम्बेडकर को भी वैदिक ऋषियों की परम्परा की कड़ी माना जा सकता है, जिन्होंने अत्यन्त कठिनाइयों के बाद स्वतन्त्र हुए देश के संविधान निर्माण में उसी दूरदर्शिता का परिचय दिया है।

वेद और भारतीय संविधान में जो समानताएँ हैं उनके तुलनात्मक अध्ययन करने से पूर्व निम्न बातों का स्मरण रखना आवश्यक प्रतीत होता है।

1. कोई भी आदर्श पूर्णत : यथार्थ में परिणत नहीं हो पाता है। अर्थात् वैदिक संविधान में जो विधान मानव के बृहत्तर हित के लिए दिए गए हैं वे उच्च उदात्त आदर्श रूप में हैं। अपेक्षा यही रही कि मनुष्य उनका अनुसरण करे।

2. ....पर मानवीय दुर्बलता के वशीभूत होकर सभी जन उन आदर्शो पर चल नहीं सकें हैं– जो चले हैं–वे महाजन,– महापुरुष कहलाएँ हैं–सामान्य जन उनसे प्रेरणा लेते रहे हैं। लेकिन कई कारणों वश पूर्णतः उन सिद्धान्तों की अनुपालना सम्भव नहीं रही है।

3. भारतीय संविधान की कुल धाराएँ 395 रही हैं जिनमें समय–समय पर संशोधन, परिवर्धन भी होते रहे हैं। इसके अतिरिक्त अनेक अनुसूचियाँ भी हैं जिनके माध्यम से संसद व विधान सभाओं के कामकाज चलते हैं। इन सभी का उल्लेख स्वभावतः वेदों में नहीं हो सकता है।

4. अत : स्वतन्त्र राष्ट्र का ध्येय वाक्य सत्यमेव जयते संविधान की प्रस्तावना या उद्देश्य तथा मौलिक अधिकार व कर्तव्यों का तुलनात्मक अध्ययन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

'सत्यमेव जयते': राष्ट्रीय प्रतीक चिन्ह के नीचे अंकित यह पंक्ति हमारे लोकतन्त्रात्मक राष्ट्र भारत का ध्येय वाक्य है। 'भारत का संविधान' वास्तव में इस ध्येय वाक्य से निर्देर्शित होता है। भले ही यह वाक्य संविधान का हिस्सा न हो परन्तु राष्ट्र के मूल आदर्श को अभिव्यन्जना देता है, अतः इसका अध्ययन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। 'सत्येमव जयते' अर्थात् सत्य की ही जीत होती है। यह वाक्य वैदिक वांगमय की अन्तिम कड़ी उपनिषद् से उदधृत है। मुण्डकोपनिषद्(III. 1 . 6) में कहा गया है–सत्यमेव जयते नानृतम्। सत्य ही विजय पाता है असत्य नहीं । उपनिषदों के इस वाक्य का महत्त्व अनेक वेद मन्त्रों में अभिव्यक्त हुआ है।

कई बार सत्य क्या है असत्य क्या है, इसमें अलग–अलग व्यक्तियों की विचारधारा अलग–अलग होती है। जो एक की दृष्टि में व्यक्तियों की विचारधारा अलग–अलग होती है, जो एक ही दृष्टि में सच है। वही दूसरे की दृष्टि में झूठ होता है। फिर दर्शन में 'परम सत्य' के विषय में खोज की जाती है। वेदों में ही देखें तो इस पारमार्थिक तत्त्व को विभिन्न ऋषियों ने विभिन्न नामों से पुकारा है–

एकं सत् विप्रा बहुधा वदन्ति यही नहीं, वैदिक दर्शन में नासदीय सूत्र में सत्–असत् से अलग की स्थिति भी विचारी गई है। बृहदरण्यक 1/3/28। में असत् से सत् की ओर ले जाने की प्रार्थना है–असतो मा सद् गमय। बाद के चिन्तक भी इसी प्रकार के विचार अभिव्यक्त करते रहे हैं। गुरु नानक ने कहा है–एक ओम् सत् नाम(जपुजी) यहाँ उस परम सत् की ओर ही संकेत है।

नैतिक शास्त्र की दृष्टि से 'सत्य' व्यक्ति की सच्चाई, अखण्डता तथा व्यवहार की पारदर्शिता बताता है। सत् यदि शोध ज्ञान–दृष्टि का विषय है, तो सत्य चरित्र का एक गुण । पुराणों में सत्य को सबसे बड़ा तप बताया गया है। (ऋग्वेद 10/85/1) तथा अथर्ववेद (12/1/1) में कहा गया है– पृथ्वी को सत्य ही धारण करता है। यजुर्वेद सत्यं जिन्व सत्य को शीघ्रता से प्रेरित करो– कहता है। यजुर्वेद के ऋषि का कथन है सत्यं वदिष्यामि–सत्य बोलूँगा। सत्य बोलने का संकल्प यदि व्यक्ति कर ले, जीवन में रूपान्तरण हो जाए। जहाँ पूरा राष्ट्र सत्य मेव जयते का उद्घोष करे वहाँ तो किसी प्रकार की समस्या रहने ही नहीं चाहिए। इतने व्यापक स्तर पर 'सत्य' की तपस्या साधना हम नहीं कर सकें हैं–यह भी सत्य है। महर्षि दयानन्द ने वेदों को 'सब सत्य विद्या का पुस्तक' कहकर 'सत्य' की खोज में जीवन बिताया और वेदों की लौटो' अर्थात् सत्य की ओर ले चलने का आह्वान किया।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना : हमारे राष्ट्र के संविधान की प्रस्तावना (या उद्देशिका अथवा अंग्रेजी

में **Preamble**) महत्त्वपूर्ण है जिसमें संविधान की मूलभूत भावनाएँ समाहित हो गई हैं। यह प्रस्तावना इस प्रकार है कि–

हम भारत के लोग, भारत को, एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को :–

न्याय– सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय।

स्वतन्त्रता– विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की

समता– प्रतिष्ठा और अवसर को प्राप्त करवाने के लिए (जो उन सब में) व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली।

बन्धुता– बन्धुता को बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज दिनांक 26 नवम्बर 1049 ई. (मिति मार्ग शीर्ष शुक्ला सप्तमी संवत् दो हजार छः विक्रमी) को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत अधिनियमित आत्मार्पित करते हैं।

व्याख्या– भारतीय संविधान की भूमिका की शब्दावली जरूर अलग है पर इसमें अभिव्यक्त आदर्श वेदों में 'मानवीयता के धर्म' की याद दिलाते हैं। न्याय, स्वतन्त्रता, समता तथा बन्धुता के आदर्श वैदिक मन्त्रों की पवित्रतता तथा उदात्तता तथा मानव धर्म की प्रतिष्ठा उजागर करते प्रतीत होते हैं। यही नहीं 'समाजवादी' पन्थनिरपेक्ष"दो विशेषण जो गणराज्य के यहाँ गिनाए गए हैं काफी बाद में जोड़े गए थे।

समाजवाद– समाजवाद का सिद्धान्त समाज में हर व्यक्ति के अधिकार को सुरक्षित करता है। सब के लिए न्याय, सब को जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके– यही इसका आदर्श है। संक्षेप में समाजवाद सर्वभूत हिताय की भावना को अभिव्यक्ति देता है।

जब हम कहते हैं कि भारत एक 'सेक्यूलर' राज्य है या पन्थनिरपेक्ष राज्य है, तब इसका अभिप्राय्य यह होता है यहाँ का कोई एक शासकीय धर्म (Official relision) नहीं है। पन्थनिरपेक्षता हर व्यक्ति को अवसर देती है कि वह अपनी इच्छा के पन्थ पर विचार कर सकता है, आचरण और प्रचार–प्रसार कर सकता है। यही नहीं संविधान ऐसे व्यक्ति की स्वतन्त्रता का सम्मान करता है जो अपना पन्थ विशेष में विश्वास नहीं रखता । धर्म कोई भी हो संविधान समान नागरिकता का अधिकार प्रदान करता है। डॉ. राधाकृष्णन्(पूर्व राष्ट्रपति ने अपनी पुस्तक Recevery of Faith* (पृ.184) में पन्थनिरपेक्षता को इस प्रकार व्याख्यायित किया है जिसका भाव इस प्रकार से है– भाव यही है कि किसी एक पन्थ को प्राथमिकता नहीं दी जाएगी। धार्मिक सहिष्णुता तथा धार्मिक अपक्षपात् वास्तव में राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

वैदिक विधान में 'पन्थ निरपेक्षता' स्पष्टतः प्रतिपादित हुई है। वहाँ बहुत से देव–देवता हैं– इन्द्र, मित्र वरुणादि। ऋषि उनके प्रति प्रार्थनाएँ प्रस्तुत करते हैं, मन्त्र रचना, दर्शन करते हैं, यज्ञ करते हैं। इन्द्र भक्त है कोई वरुण भक्त या कोई अग्नि भक्त सब को अपने देवों की उपासना करने का अधिकार है।मात्र यह नहीं कि वैदिक ऋषि सब देवताओं में 'एकं सत्' को मानते हैं वे 'पन्थ' विशेष को महत्त्व देना तो दूर उनका नामोल्लेख भी नहीं करते। सम्प्रदायवाद से रहित वेदों में हिन्दू–मुसलिम–ईसाई आदि नहीं हैं। वैदिक धर्म मानवता का धर्म है। 'मनुर्भव'–मनन शील हो–यही आदेश यहाँ विद्मान है।

न्याय– संविधान की उद्देशिका में इसके बाद महत्त्वपूर्ण शब्द है न्याय जिसके सामाजिक, आर्थिक और

राजनैतिक पहलू हैं। वैदिक विधान में 'न्याय' शब्द भले ही उल्लिखित न हो परन्तु न्याय सम्बन्धी सभी रूप उपलब्ध है। वैदिक देवमण्डल में वरुणदेव न्यायकर्ता हैं, न्याय के देवता हैं। अपराधी को दण्ड देते हैं। नियम पालनकर्ता को पुरस्कार देते हैं। पाप करने से, उनके व्रत भंग करने से वे क्रोध करते हैं। उनके दण्ड विधान में 'पाशों से सम्बन्ध' विशेष है। ऋग्वेद 7.86 में कोप भाजन बनने से विचलित उपासक के मर्मोद्गार हैं। अपने उपासकों को वे क्षमा कर देते हैं। वरुण व्यक्ति व समाज दोनों के सन्दर्भ में 'न्याय' के देवता के रूप में चित्रित हुए हैं। ए.डी. ग्रिसवोल्ड ने वरुण के 'न्याय' के विषय में कहा है कि जब व्यक्ति का अपराध के प्रति दृष्टिकोण बदल जाता है तब वरुण स्वयं को 'न्यायकर्ता' सिद्ध करते हैं क्योंकि वे पश्चाताप करने वाले के प्रति क्षमाशीलता ही दिखाते हैं–

'It is because of a change of attitude on the past of the sinner to word his sin that Varune can show himself just whole jutifying the sinful Because Varuna is Gracious and merciful. He delights to sespond to the cry of the jenitant.

परन्तु न्याय का यही रूप नहीं है। संविधान में व्यक्ति मात्र के लिए जिन न्यायों की व्यवस्था की गई है वे हैं सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय। एक प्रकार से ये नागरिक के अधिकारों की श्रेणी में आते हैं।

सामाजिक न्याय : हमारी शासन प्रणाली में सामाजिक न्याय का अर्थ है–आर्थिक असमानता को दूर करना, सबको (काम करने वालों को) उचित जीवन स्तर प्रदान कर तथा समाज के निर्बल वर्ग के अधिकारों की व्यवस्था की गई है। वास्तव में जब समाज में सबको 'मानव' माना जाएगा, उसमें 'मानवीयता' का व्यवहार करते हुए समान समझा जाएगा तो सामाजिक–विषमता नहीं रहेगी। अतः एक ऋग्वेद (10/53/6) में व्यक्ति मात्र को 'मनुर्भव' 'मननशील बन' यह आदेश है तथा दूसरी ओर सबको सम्पूर्णभूमि का पुत्र कहा गया है–

'माता भूमि पुत्रो अहं पृथिव्याः अथर्ववेद 12/1/12 पृथ्वी के पुत्रों में सामाजिक न्याय के लिए जरूरी है कि ऊँच नीच का भेदभाव न हो।–

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय।।ऋग्वेद 5/60/5)

सब अमरता के पुत्र हैं–अमृतस्य पुत्राः'(ऋग्वेद 10/13/1) अत : सबको एक धरातल पर रखने का प्रयत्न यहाँ किया गया है। यही नहीं वैदिक संस्कृति में हर व्यक्ति में 'देव' बनने की सम्भावनाएँ देखी गई हैं। तभी आदित्य सूक्तों में कहा गया है–

The Religion of the Rigveda p.131)

आदित्यासः। आदितयः स्याम् (ऋग्वेद 7/52/1) हे आदित्यो! हम अदिति (बन्धनविहीन) हो जाएँ। इसी प्रकार 'विश्वेदेवाः ' की अवधारणा भी सिद्ध करती है कि सभी में दिव्यता या देवत्व है। 'विश्वेदेवाः' देवसमूह माना जाता है जिसमें बहुत से देवों को सम्बोधित कर प्रार्थनाएँ की जाती हैं। परन्तु भावार्थ में उपर्युक्त अर्थ भी लिया जा सकता है। उपरिलिखित वर्णन से लगता है कि वैदिक युग में क्यों कि सामाजिक समरसता थी अत : सब के लिए भोजन या मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती है। निम्न मन्त्रों से यही ज्ञात होता है–

सग्धिश्च मे सपीतिश्च मे (यजुर्वेद 18/9) अर्थात् एक भोजनालय और एक जलपान गृह। अथर्ववेद में (3/30/6) में भी कहा गया है–

'समानी प्रपा सह वो अन्नभागः' यही नहीं कोई भूखा–प्यासा न रहे यह भी धारणा स्पष्ट है–

अक्षुध्या अतृष्या स्त। अथर्ववेद 7/60/4) जब मूलभूत आवश्यकताएँ पूरी हो रही हों तभी सब के विचार, मन, हृदय समान होते हैं। ऋग्वेद (10/191) का सामंनस्यम् सूक्त इसी भाव को अभिव्यक्ति देता है–

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।। (ऋ.10/191/4)
सामाजिक समरता तथा सामाजिक न्याय की यह स्थिति एक आदर्शात्मक स्थिति है। संविधान में सामाजिक न्याय की व्यवस्था करके भी हम आज इस प्रजातन्त्र के हर व्यक्ति को सामाजिक न्याय दिलवा नहीं पाए हैं। गरीब अमीर की खाई बढ़ती गई है। कुछ विद्वानों का मानना है कि पूर्व के अनेक कालखण्डों में सामाजिक न्याय नहीं था। डॉ. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने वैदिक राजनीति शास्त्र(247–248) नामक ग्रन्थ में वैदिक न्याय के कई पक्षों का अध्ययन प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार जिस प्रकार के न्यायाधिकारण आज हैं वे उस युग में नहीं रहे होंगे। सम्भवतः राजा ही फौजदारी अभियोगों का निर्णय करता होगा। 'वैरदेय' शब्द का प्रयोग बताता है कि अपराध मुक्ति के लिए कुछ वस्तुएँ अपराधी दण्डरूप में देता होगा–

उत धा नेमो स्तुतः पुमा इति। ब्रुवे पणि। स वैरदेय इत् समः।। ऋग्वेद 5/61/8।

न्याय का सैद्धान्तिक पक्ष 'दैवीय न्याय'(जिसका उल्लेख वरुण के सन्दर्भ में किंया जा चुका है) के रूप में ही दिखाई पड़ता है। न्याय की कल्पना का आधार है यह भावना कि यथा कर्म यथापराध मनुष्य को दण्ड मिले। दारुण कुकर्म के लिए भीषण दण्ड, साधारण अपराध के लिए अल्प दण्ड, डॉ.वर्मा का कहना है कि यहाँ जो देवोपासक हैं वे क्षमा भी पा सकते हैं जबकि जो अक्रतु, अयज्ञ, इन्द्र द्वेषि उनका समूलोच्छेद होता है। उनके अनुसार यह न्याय का सीमित अर्थ है'। 'न्याय की चरम महत्ता' तब होती है जब दस्यु, असुर, दास और अनिद्र को भी यथा अपराध दण्ड मिलता। परन्तु यहाँ कहा जा सकता है कि सच्चा न्याय वही है जो दण्ड देकर व्यक्ति को सुधार सके–और सुधार की गुंजाइश न हो तो 'मृत्यु दण्ड' देकर उसकी दुष्टता से अन्यों को बचा सकें ।

आर्थिक न्याय : संविधान के अनुसार आर्थिक न्याय का अर्थ है हर नागरिक को काम करने का, पैसा कमाने का अधिकार, बराबर काम के लिए बराबर वेतन मिले आदि। वेदों में भी प्रत्येक व्यक्ति को धनार्जन करने और उसके संग्रह का अधिकार दिया गया है। धन संग्रह तथा धन की सुरक्षा के लिए योगक्षेम शब्द आया है। यजुर्वेद में कहा गया है कि हम धन ऐश्वर्यों के स्वामी हों–वयं स्याम पतयो रयीणाम। (यजुर्वेद .10/20) अर्थात् धन पर एकाधिकार किसी का न हो। सब धन के स्वामी हों। इसी प्रकार योगक्षेम के विषय में प्रार्थना है–योगक्षेमो नः कल्पताम (यजुर्वेद 22/22) समुचित अर्थव्यवस्था के लिए दानादान या परस्पर के विनिमय के सिद्धान्त को अभिव्यक्ति मिली है–देहि मे ददामि ते मे धेहि नि ते दधे। निहारं च हरासि मे निहारं नि तराणि ते। (यजुर्वेद 3/50) डॉ. विश्वनाथ प्रसाद के अनुसार सामाजिक न्याय पर आर्थिक व्यवस्था आधृत नहीं थी। पुरोहितवाद था। यज्ञ करने पर दक्षिणा मिलती थी। उसके मापकरण के आधार स्पष्ट नही हैं। दक्षिणा यज्ञमान की तुष्टि पर आधृत थी । वैदिक अर्थ व्यवस्था में गाय, अश्वादि का महत्त्वपूर्ण स्थान था। पर उनका सामाजिक वितरण किस प्रकार होता था– यह भी स्पष्ट नहीं।

राजनैतिक न्याय–भारतीय संविधान में प्रत्येक नागरिक को मत देने का अधिकार किसी भी दल की सदस्यता आदि का आधार है। राजनैतिक न्याय का अर्थ यह भी है कि राजनैतिक शक्ति का प्रयोग इस तरह किया जाय कि वह सबके हित की रक्षा कर सके। वैदिक विधान में (स्वराज) की अवधारणा है। (ऋग्वेद अ. 1/80) के सोलह मन्त्रों में 'अर्चन् अनु स्वराज्यम्' कहकर स्वराज्य की स्तुति की गई है। यजुर्वेद में कहा गया है कि राष्ट्र में महान जनतान्त्रिक राज्य की स्थापना की जानी चाहिए जिससे जनता को अपना अधिकार प्राप्त हो सके–महते क्षत्राय, महते जनराज्याय (यजुर्वेद 9/40) अथर्ववेद में प्रजा को अधिकार दिया गया है कि वह राजा को

चुने–त्वम् विशो वृणतां राज्याय (अथर्ववेद 3/4/2)

स्वतन्त्रता– विभिन्न प्रकार के न्यायों के पश्चात् नागरिकों की 'स्वतन्त्रता' की अवधारणा आती है जिसके अन्तर्गत उन्हें विचार, अभिव्यक्ति, धर्म तथा उपासना की स्वतन्त्रता देने का संकल्प है। पर यह 'स्वतन्त्रता' समाज के सन्दर्भों में ही है। अर्थात् व्यक्तिगत स्वतन्त्रता जब तक समाज के अन्य व्यक्तियों की स्वतन्त्रता में बाधक नहीं होती तभी तक वांछनीय है अन्यथा नहीं। यहाँ पर ध्यातव्य है कि स्वतन्त्रता का अर्थ कानून का उल्लंघन करना नहीं है। वेद में 'स्वतन्त्रता की देवी' अदिति 'ऋतावरी' 'ऋत का पालन' करने वाली है अर्थात् दोनों संविधानों में 'स्वतन्त्रता' और 'नियम' या 'विधान' साथ–साथ चलते हैं। वेद में भी व्यक्ति को 'स्वतन्त्रता' का अधिकार इसी रूप में मिला है। वेदों में देखें तो स्वतन्त्रता के ये सभी रूप विद्यमान हैं।

विचार की स्वतन्त्रता–वेद में विभिन्न विचार धाराओं वाले ऋषि हैं जो अपने ढंग से 'सत्य' पर विचार करते हैं। हर ऋषि का अपना चिन्तन है। अपनी विचार–प्रक्रिया है। यही कारण है कि धर्म व दर्शन के जितने भी रूप बाद में विकसित हुए उनका मूल वेदों में मिल जाता है। डॉ. कृष्णलाल ने उचित ही कहा है–'वास्तव में वेद अप्रत्यक्ष रूप में भारत के सारे साहित्य और परवर्ती चिन्तन में भी अन्तर्भूत है।' दूसरे के 'विचार' का अपमान करना विचार की स्वतन्त्रता नहीं है।

अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता– अपने विचारों को अभिव्यक्त करने की स्वतन्त्रता भी संविधान में सबको दी गई है। पर यहाँ पर भी 'स्वतन्त्रता' वहीं तक है जहाँ तक वह दूसरों को कष्ट न दें अर्थात् किसी को भी कुछ भी ऊटपटांग बोलने का अधिकार नहीं है। वेद में भी अभिव्यक्ति का अधिकार हर ऋषि को रहा है तब ही तो विभिन्न छन्दों में,विभिन्न रूपों में, विभिन्न देवों की स्तुतियाँ उन्होंने की हैं। पर ये सब अभिव्यक्तियाँ कहीं न कहीं सर्वकल्याण,सर्वहित के लिए ही हैं।जैसे पृथ्वी विविध रूपों वाली होती हुई भी सब प्रकार के मनुष्यों की रक्षा करने में समर्थ होती है उसी प्रकार पृथ्वी पर रहने वाले लोग भी अपने विचारों की अभिव्यक्ति से'स्वस्तिभाव' पोषित करते हैं।

विश्वास, धर्म व उपासना की स्वतन्त्रता– हमारे संविधान में सबको अपने विश्वास रखने का तथा अपने धर्म या पन्थ को चुनने की स्वतन्त्रता है। यही बात 'उपासना' के सम्बन्ध में है। 'पन्थनिरपेक्षता' की व्याख्या ऊपर की जा चुकी है जिसका भाव यही है कि विश्वास धर्म अथवा उपासना की विधि के आधार पर किसी से भेदभाव नहीं किया जाएगा। 'विविधता' हमारे देश की विशेषता है, संस्कृति की विशेषता है। इसी विविधता के कारण देश में रंगारंग उत्सवधर्मिता रही है। वेदों में भी सर्वत्र विभिन्न विश्वासों का उल्लेख है। जैसे कहा जा चुका है कि ऋषि कहीं अग्निपूजक यज्ञकर्म में लीन रहने वाले हैं तो कहीं मन्त्र विधि से पूजन करने वाले। द्वैत अद्वैतादि दर्शनों की पृष्ठभूमि भी वेदों में है। ज्ञान, कर्म, उपासना के लिए क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद हैं।

समता की भावना– संविधान की उद्देशिका में नागरिकों को प्रतिष्ठा और अवसर की समता देने की बात भी उल्लिखित हुई है। हर व्यक्ति को उन्नति करने तथा व्यक्तित्व का विकास करने के लिए समान अवसर मिले तथा प्रतिष्ठा मिले।

वैदिक धर्म तो सम्पूर्ण मानवता का धर्म है। वहाँ विश्वभर के नागरिकों को साथ चलने, समान विचार करने की प्रेरणा दी गई है– सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। ऋग्वेद 10/19/2।।
समानता का अर्थ यह नहीं है कि समाज से विविधता समाप्त हो जाए। अर्थ है कि व्यक्ति–व्यक्ति में भेदभाव न किया जाए। किसी एक व्यक्ति या वर्ग को आवश्यकता से अधिक अधिकार न दिए जाएँ। सभी को अपने विकास के लिए

समान अवसर प्रदान किए जाएँ। यजुर्वेद में उल्लेख है कि सबको वेदाध्ययन का अधिकार है।–

यथेमाँ वाचँ कल्याणीम् आ वदानि जनेभ्यः।

ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय च चारणाय च।। यजुर्वेद 26/2।।

अर्थात् वेदवाणी सभी वर्गो के लिए है। तेजस्विता, अभ्युदय और श्रीवृद्धि की कामना भी चारों वर्णों के लिए है–

रुचं नो धेहि ब्रह्मणेषु, रुचं राजसु नस्कृधि।

रुचं विश्येषु शूद्रेषु, मयि धेहि रुचा रुचम्।।। यजुर्वेद 18/48।। समता का अर्थ यह भी है कि सबके साथ मानवीयता का व्यवहार किया जाए, मित्रता का व्यवहार किया जाए–

मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।।यजुर्वेद 36/18।।

बधुंता–इसके अन्तर्गत नागरिकों की व्यक्तिगत् गरिमा की सुरक्षा के साथ राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने की बात आती है। वेद में 'बन्धु' शब्द बन्धन या सम्बन्ध' से बँधे व्यक्ति या देवता के सन्दर्भ में आया है। यजुर्वेद में कहा गया है–अस्मे ते बन्धुः 'हम सब तुम्हारे बन्धु हैं'। बन्धुता का अर्थ है 'बन्धु–भाव' या भातृभाव'। समाज में सभी जन 'बन्धुभाव' में बँधे रहे तो सबका कल्याण होता है–

एते सं भ्रातरो वावृधुः सौमगाय। ऋग्वेद 5/60/5।

ऊपर वर्णित 'मित्रता' के भाव वाले मन्त्र भी यही इंगित करते हैं कि वैदिक विधान में बन्धुता समाज में तो अपेक्षित है ही विश्व में सर्वत्र सब प्राणियों के प्रति 'मित्रता' रखना उपादेय है। तभी कहा गया है–

सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ' ।। अथर्व 19/15/6।।– सब मनुष्यों में स्नेह सम्बन्ध हो तो यह स्थिति स्वयं अपने आप से प्रारम्भ होगी। हमारा आचरण इतना स्नेहपूर्ण और सहानुभूति पूर्ण हो कि कोई भी हमारे प्रति द्वेष न करे। द्वेष से, ईर्ष्या से ही हिंसा पनपती है। जब हमारे मन में ये नकारात्मक वृतियाँ नहीं रहतीं तब हम अपने मित्र स्वयं हो जाते हैं। यही 'व्यक्ति की प्रतिष्ठा' है। जब व्यक्ति स्वयं आत्मसम्मान से युक्त होता है तब वह औरों का भी सम्मान करता है। ऐसी परिस्थिति में ही मनुष्य मनुष्य की रक्षा करता है– पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः।(अथर्ववेद 6/75/14।। जब व्यक्ति व्यक्ति की रक्षा करने को तत्पर हो तब राष्ट्र की 'एकता' अखण्डित ही रहती है। राष्ट्र की स्वतन्त्रता और अखण्डता को किसी को छीनने का अधिकार नहीं है यह ऋग्वेद में स्पष्ट उल्लिखित है– न मिनान्ति स्वराज्यम् न देवो नाधिगुर्जनः।।ऋग्वेद 8/93/11।। अथर्ववेद में कहा गया है स्वराज्य प्राप्ति के लिए जनान्दोलन तो जरूरी है। स्वराज्य से बढ़कर कोई सुख भी नहीं–यदजः प्रथमं संबभूव स ह तत् स्वराज्यम् इयाम तस्मान्नान्यत् परमस्ति भूतम्।।अथर्ववेद 10/7/31।। वास्तव में वैदिक यज्ञ की भावना में पूर्ण समर्पण की भावना है, दानशीलता का उदात्त विचार है। जहाँ पूरा विश्व एक नीड है–

यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्। वहाँ किसी प्रकार की असुरक्षा का प्रश्न ही नहीं होता।

भारतीय संविधान में अधिकार और कर्त्तव्य– वैदिक संस्कृति में अधिकार, (मानवाधिकार) और कर्त्तव्य का अन्योन्य सम्बन्ध बताया गया है। जहाँ अधिकार की चर्चा है वहाँ कर्त्तव्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया गया है। भारतीय संविधान में भी भारतीय संस्कृति की यह विशेषता रेखांकित हुई है। नागरिकों का अधिकार हो या कर्त्तव्य सर्वत्र'संविधान की प्रस्तावना' में वर्णित आदर्श ओतप्रोत हुए हैं। जहाँ तक मूल अधिकारों का प्रश्न है वे संविधान के भाग तीन में (14, 18, 19– 22, 23, 24, 25–28, 29, 30, 32) वर्णित हुए हैं। विभिन्न धाराओं में इन मूल अधिकारों

की चर्चा हुई है। जो इस प्रकार हैं 1.समता का अधिकार,2.स्वतन्त्रता का अधिकार,3.शोषण के विरुद्ध अधिकार,4.धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार,5.संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार, 6.संवैधानिक उपचारों का अधिकार

समता का अधिकार—'संविधान की प्रस्तावना' की व्याख्या के सन्दर्भ में 'समता' के विविध रूपों का वेद में भी संक्षिप्त वर्णन किया गया है। मूल अधिकारों (Fundamental Rights) के सन्दर्भ में सर्व प्रथम समता का अधिकार गिनाया गया है तथा धारा 14 तथा 18 तक इनका वर्णन हुआ है। संविधान में सर्वप्रथम 'विधि' (कानून) के समक्ष समता की बात आती है फिर धर्म मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध है। कोई भी नागरिक उपर्युक्त बताए आधारों पर दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, मनोरंजन के स्थानों पर जाने के लिए या जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुँओं, तालाबों, सड़कों, सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग के सम्बन्ध में अयोग्य या शर्त के अधीन नहीं होगा। यही बात सार्वजनिक नियुक्तियों के सम्बन्ध में है। 'अस्पृश्यता' का अन्त 'समता' के अधिकार की सबसे बड़ी विशेषता है। साथ ही विदेशी राज्यों से प्राप्त उपाधियों के अन्त की बात भी यहाँ कही गई है। 'समता' का अधिकार स्त्री तथा बाल वर्ग को विशेष सुविधा देने का निवारण भी नहीं करता। कुल मिलाकर भाव यही है कि स्त्रियों को बच्चों को समानाधिकार देने तथा अस्पृश्यता का अन्त करने का आदर्श यहाँ प्रस्तुत है। 'यथार्थ में देखें तो यह सब कुछ सीमा तक ही हुआ है। गाँवों में कूप, मन्दिरों में अन्त्यजों का प्रवेश निषिद्ध है। यही नहीं, सामाजिक स्तर पर अभी भी लिंगभेद तो है ही जाति–भेद पर्याप्त होता ही है। वैदिक विधान में इस दृष्टि से वहुत उदार है। यहाँ समता का अधिकार कई रूपों में विद्यमान है। –

1. वेद पढ़ने का अधिकार सबको है। यजुर्वेद(26/2) में कहा गया है वेदवाणी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सब के लिए है। – **यथेमां वाचं कल्याणीम् आ वदानि जनेभ्यः।**

ब्रह्मराजन्याभ्याँ शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय् च।।

2. स्त्रियों को भी यज्ञ करने का अधिकार अनेक मन्त्रों में प्रदान किया गया है।(ऋग्वेद 8/33/19) में 'स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ' कहकर यज्ञ में ब्रह्मा का स्थान ग्रहण करने का उल्लेख है तो लगभग 29 मन्त्र दृष्टा ऋषिकाओं का भी। जैमिनीय ब्रह्मण में तो स्त्रियों को मन्त्र कुतः कहा गया है। वैसे भी दाम्पत्य जीवन में वेदों में स्त्री पुरुष की सहधर्मिणी है। बाल शोषण तथा अस्पृश्यता भी यहाँ नहीं मिलती।

3. पुरुष सूक्त(10/90/12) के एक मन्त्र के आधार पर शूद्रों को पैरों से जन्मने के कारण नीचा मानकर बहुत से लोग वेद की आलोचना करते हैं, पर पाँवों के आधार पर शरीर खड़ा होता , गति करने में सामर्थ्य होता, उसी प्रकार शूद्र भी सम्पूर्ण समाज का आधार है। डॉ. कृष्णलाल ने वेद परिचय(पृ.178) में उचित कहा है–(शूद्र) वही शुद्धि के द्वारा रोग रहित स्वस्थ जीवन को सम्भव बनाता है जिससे समाज के सभी वर्ग गति करने में, प्रगति करने में समर्थ होते हैं। इस प्रकार वैदिक वर्ण व्यवस्था का अर्थ–गुण कर्म है, जाति नहीं। इसके अनुसार सब की समान आवश्यकता है, सबका समान महत्त्व है, ऊँचनीच का भेदभाव नहीं। कोई गर्हित नहीं। कोई अस्पृश्य नहीं, यही कारण यजुर्वेद(16/17/46) में सभी जैसे बढ़ई, रथ निर्माता, कुम्हार, लोहार, निषाद, शिकारी आदि सब को नमस्कार किया गया है। वैदिक युग में यौनापराध तथा बाल अपराधों की कल्पना भी नहीं की जा सकती। (समानी प्रपा सह वो अन्नभाग)। (अथर्ववेद 3/30/6) में सबके लिए यह सुविधायें प्रदान की गई हैं।

2. स्वतन्त्रय अधिकार– 'स्वतन्त्रता' के विविध आयाम भी ऊपर चर्चित हो चुके हैं। मूल अधिकारों के विषय में वाक् स्वातन्त्रय और अभिव्यक्ति–स्वातन्त्रय की बात भी की जा चुकी है। इसके अतिरिक्त 19–22 धाराओं में इस अधिकार का स्पष्टीकरण किया गया है। कोई भी नागरिक शान्तिपूर्वक निरायुध रूप में एकत्रित हो सकते

हैं–संघ या एसोसिएशन्स बना सकते हैं, भारतभर में अबाध रूप से आ जा सकते तथा बस सकते हैं। कोई भी वृत्ति–व्यापारादि अपनाने की स्वतन्त्रता भी है। एक और महत्त्वपूर्ण बात जो धारा 21 में आती है वह है–'प्राण और दैहिक स्वतन्त्रतता' का संरक्षण। भाव यह है कि किसी के प्राण या व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का हरण नहीं किया जाएगा, केवल मात्र विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही(विशेष परिस्थिति में) ऐसा होगा।

वैदिक वांगमय में 'समिति' 'सभा' का उल्लेख है जहाँ सब एक साथ मिलकर विचार करते थे–

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्। ऋ. 10/191/2।।

यही नहीं 'वृत्ति' के सम्बन्ध में स्वतन्त्रता का आलम यह है कि एक ही परिवार के अलग–अलग व्यक्ति अलग–अलग कार्यों में संलग्न रहते थे– कारूरहं ततो मिषगुपलप्रक्षिणी नना।

नानाधियो वसूयवोऽनुगा इव तस्थिमेन्द्राययेन्द्रो परिसुव" (ऋग्वेद 9/112/3।।)

मैं कारु(मन्त्र रचयिता) हूँ, मेरे पिता वैद्य हैं, मेरी माता पिसाई करने वाली, हमारे विचार नाना प्रकार के हैं। और हम अपनी अभीष्ट वस्तु की ओर उसी प्रकार दौड़ रहे हैं जिस प्रकार बछड़े गायों की ओर। जीवन अनमोल है अत : जीने का अधिकार, जीवन का संरक्षण जरूरी है। वैदिक संस्कृति में अमर्य का प्रकाश की प्रार्थनाएँ हैं जिनसे जीवन संरक्षित रहता है, सबको सौ वर्ष जीने का अधिकार है–

तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रम् उच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम्।। ऋग्वेद 766/16।।

यह तभी सम्भव होगा जब कोई व्यर्थ में किसी का प्राण हरण न करे। यद्यपि भारतीय संविधान में 'प्राण संरक्षण' का वैधानिक पक्ष है ऐसे तो बहुत बार हिंसा की वारदातें होती रहती हैं पर कानून बिना उचित कार्रवाई के ऐसा नहीं करेगा– यह अभिप्रेत है। वेद में भी हम देखते हैं–'दुष्टों के प्रति हिंसा करनी ही पड़ती है। जीवन के अधिकार में शुद्ध वायु, शुद्ध जल को पाने का अधिकार भी आता है।

3. शोषण के विरुद्ध अधिकार– यह एक महत्त्वपूर्ण मूल अधिकार है। जिसके अन्तर्गत मनुष्य के दुर्व्यापार बेगार या बलात श्रम का प्रतिषेध किया जाता है। धारा 23 में वर्णित यह अधिकार मनुष्य की गरिमा प्रस्थापित करता है तथा किसी भी प्रकार के शोषण का निषेध करता है। धारा 24 में विशेषतः कारखानों में बच्चों के नियोजन का प्रतिषेध है। 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को खानों, कारखानों तथा अन्य संकटमय कार्यों में नियोजित करना अपराध होगा। मानवाधिकारों की निरन्तर चर्चा होते रहने पर ही बच्चे अनेक ऐसे कार्यों में नियोजित किए ही जाते रहे हैं। बाल शोषण 21वीं सदी में भी रुक नहीं सका है। भिक्षावृत्ति का निषेध भी इसके अन्तर्गत स्वीकृत होता है। देवदासी प्रथा, यौन शोषण, स्त्री के प्रति अपराध भी इसी श्रेणी में आते हैं।

जहाँ तक वेद का प्रश्न है वहाँ शोषण विहीन समाज की अवधारणा है। वास्तव में जहाँ 'समता' होगी वहाँ शोषण हो ही नहीं सकता। उस युग की सामाजिक व्यवस्था में 'शोषण' की गुंजाइस थी ही नहीं। महिलाओं का सम्मान था, बच्चों का स्नेह भरे वातावरण में पालन–पोषण था। सरल अर्थ व्यवस्था थी। दान, त्याग भावना अर्थात् यज्ञ, वैदिक समाजवाद की विशेषता थी। यज्ञ क्षुद्र स्वार्थ को छोड़कर निःस्वार्थ भाव से व्यापक जन कल्याण के लिए किया गया श्रेष्ठतम् कर्म है। यह 'अध्वर' अर्थात् हिंसा रहित था।

धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार– यह भी मूल अधिकारों में परिगणित है। संविधान में 'धर्म' शब्द वास्तव में 'पन्थ' या 'सम्प्रदाय' के अर्थ में प्रयुक्त है। तभी सेकुलर का अर्थ धर्म निरपेक्ष नहीं 'पन्थ निरपेक्ष' है। 'पन्थ' निरपेक्ष शब्द की व्याख्या की ही जा चुकी है। भारत जैसे विविधता पूर्ण देश में प्रत्येक नागरिक को मन पसंद (पन्थ) (धर्म) चुनने का अधिकार दिया गया है। संविधान की धारा 25 में स्पष्ट किया गया है कि हर किसी को अन्तःकरण

की और धर्म के अबाध रूप से मानने आचरण और प्रचार करने की स्वतन्त्रता है परन्तु लोक व्यवहार, सदाचार और स्वास्थ्य के अधीन रहते हुए। धारा 26 में स्पष्ट है सरकारी शिक्षण–संस्थाओं में धर्म की शिक्षा नहीं दी जाएगी, पर कोई यदि अपने पन्थानुसार शिक्षण –संस्थान खोलना चाहे तो स्वतन्त्र है।

वेद साम्प्रदायिक हैं ही नहीं, अत : हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई की बात तो दूर वे वैष्णव, शैव, शाक्त आदि की बात नहीं कहते हैं। वेद तो मानवता के सार्वभौम धर्म की बात करते हैं। वेद की दृष्टि में समस्त पृथ्वी ही एक विशाल, सबके साथ–साथ रहने का स्थान है। यह इसी लिए इतनी बड़ी है कि सभी प्रकार के लोग यहाँ रह सकें– 'महत्सधस्थं महती बभूविथ' (अथर्व. 12/1/18) वेद के अनुसार यहाँ सब प्रकार के विचारों वाले कर्तव्यों का पालन करने वाले, विभिन्न भाषाएँ बोलने वाले सभी लोगों का एक घर है। पृथ्वी माता एक समान उन सबका भरण–पोषण करती है– **जनं बिभृति बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।** (अथर्व. 12/1/45)

5. संस्कृति और शिक्षा सम्बन्धी अधिकार– संविधान में यह मूल अधिकार अल्पसंख्यक वर्गों के हितों के संरक्षण के लिए है। किसी के भाग के नागरिक को अपनी विशेष भाषा या संस्कृति है, उसे बनाए रखने का अधिकार होगा। इसके अतिरिक्त राज्य द्वारा पोषित या सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को धर्म, मूलवंश,जाति या भाषा के अधिकार पर वंचित नहीं किया जाएगा। इसी सन्दर्भ में धारा 30 में अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षण संस्थाएँ स्थापित करने व उनके प्रशासन का अधिकार दिया गया है।

6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार– इसके द्वारा मूल अधिकार प्रवर्तित कराने के लिए समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय तक जाने का अधिकार दिया गया है। धारा 32 में वर्णित यह अधिकार स्वभावतः वेद में नहीं मिलेगा। इसके अतिरिक्त धारा 31 में वर्णित सम्पत्ति का अधिकार मूल अधिकारों में से हटा दिया गया है, पर इसके संशोधित रूप संविधान में स्वीकृत हुए हैं।

जहाँ तक वेदों का प्रश्न है वहाँ 'सम्पत्ति का अधिकार' सब को है, पर साथ ही कर्तव्य निश्चित है कि कोई भी अकेले सम्पत्ति का उपभोग न करे।

इन अधिकारों के अतिरिक्त एक सबसे नवीन अधिकार जो संविधान में जोड़ा गया है वह है (सूचना का अधिकार) वास्तव में जब शासन पद्धति और राजनीति'सत्याधृत' हो तो पारदर्शिता होती ही है। लोकतन्त्र शासन तो वैसे भी लोक का, लोक के द्वारा, तथा लोक के हित के लिए होता है। ऐसी स्थिति में 'सूचना का अधिकार' जरूरी नहीं होता। परन्तु आज के युग में बहुत सिद्दत से महसूस किया जा रहा था कि 'शासित' को 'शासक' के निर्णयों, कार्य पद्धति आदि जानने का अधिकार होना चाहिए। जब शासक जन प्रतिनिधि स्वार्थ पूर्ति में लगें हों, लोक कल्याण की उपेक्षा करने लगें तब जागरूक जनता 'सूचना का अधिकार' चाहती है। यह जनता को नागरिकों को नई स्वतन्त्रता, आत्म सम्मान व शक्ति प्रदान करने वाला है। भ्रष्टाचारी नेता व जालसाज नौकरशाही परेशान हैं पर ईमानदार नेता व निर्भीक नौकारशाह उत्साहित हैं। विश्व के करीब तीस देशों में सूचना का अधिकार वहाँ की जनता को प्राप्त है। भारतीय लोकतन्त्र भी इससे परिपक्व होगा तथा प्रजातन्त्र में आस्था व विश्वास बढ़ेगा।

मूलकर्तव्य– वैदिक संस्कृति में कर्तव्य को प्रधानता मिली है । वहाँ कर्तव्य यदि हम करते हैं तो अधिकार मिल ही जाते हैं। भारतीय संविधान पहले नागरिकों के मूल अधिकारों की परिगणना करता है बाद में कर्तव्यों की। पर जो भी हो कर्तव्य अधिकार एक दूसरे से जुड़े हैं। यदि शासन हमें अधिकार देता है तो हमारा भी कर्तव्य बनता है कि हम शासन के प्रति निष्ठा रखें तथा सामाजिक कल्याण के लिए प्रतिबद्ध हों। अब देखें संविधान ने नागरिकों को कर्तव्य की दृष्टि से क्या निर्देश दिए हैं तथा वेद में क्या समानान्तर कर्तव्य बताए गए हैं।

प्रत्येक नागरिक– 1. 'संविधान का पालन करें और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे। वेद में भी वरुण के विधान का या 'ऋत' (नियम) का पालन करने का आदेश तो है ही। वेदों को पढ़कर उनके अनुकूल आचरण करना–आवश्यक माना गया है। (यजुर्वेद 22/22) में दिए गए राष्ट्रगान में वर्णित भावनाओं के अनुरूप जीवन में आचरण करने का सन्देश भी मिलता है। इसकी अन्तिम पंक्तियों में सामाजिक कल्याण की भावना भरपूर है–

'यजमास्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु
फलवत्यो नऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।।

2. स्वतन्त्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखें और उनका पालन करें। राष्ट्र को स्वतन्त्र रखने का अधिकार तो है ही वेदों में–

स्वराज स्थ राष्ट्र दा राष्ट्रम् मुष्मै दत्त। (यजुर्वेद 10/4) साथ ही राष्ट्ररक्षा के लिए 'ऋत' 'सत्य' आदि का पालन की बात भी बराबर कही गई है। अथर्ववेद (12/1/1) पृथ्वी रक्षा या राष्ट्ररक्षा के महनीय सिद्धान्त घोषित किए गए हैं जिनके पालन से ही कल्याण होता है।

3. भारत की प्रभुता एकता और अखण्डता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्य करे। वेद में जहाँ प्रजा को राजा चुनने का अधिकार दिया गया है वहीं प्रजा के कर्तव्यों में निर्देश है कि वह देश को माता के तुल्य समझे–**माता भूमिः पुत्रो अहम् पृथिव्या,** (अथर्ववेद 12/1/12) 1–एक पुत्र जैसे माता की रक्षा करता है वैसे ही प्रजा, देश (पृथिवी) की एकता, अखण्डता की रक्षा करें।

4. देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे। अथर्ववेद(12/1/7) में कहा गया है जहाँ पृथ्वी की रक्षा की जाती है वहाँ मधु व वर्चस् की प्राप्ति होती है –

यो रक्षन्त्य स्वजा विश्वदानीं देवा भूमिं अपमादम्। सा नो मधु प्रियं दुहामथो उक्षतु वर्चसा।।

'जिस विश्वदानी पृथ्वी की शयनहीन प्रमादरहित, देवगण रक्षा करते हैं, वह हमें मधु, प्रिय दे और वर्चस् से अभिषिक्त करे।

5. भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा, प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से रहित हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध है।

वैदिक संविधान में सामाजिक समरसता के अनेक मन्त्र हैं। अथर्ववेद (6, 74/1) संज्ञपन सूक्त में – **सं व पृच्यन्तां तन्वः सं मनांसि समुव्रता** कह कर स्पष्ट किया गया है–सबके तनु संयुक्त रहें, तुम्हारा मन और व्रत संयुक्त रहें। स्पष्ट निर्देश है कि समान मन वाले सखा होकर जागो– **उद्बुध्यध्वं समनसः सखायः** (ऋग्वेद 10/10/1)

स्त्रियों का सम्मान– महिलाओं का सम्मान करने के लिए विशेष आदेश इस मूल कर्तव्य में दिया है। विशेषत : ऐसी प्रथाओं को त्यागने को कहा है जिनसे स्त्रियों का अपमान होता है। वेदों में तो नारी के अधिकार विस्तार से वर्णित हुए हैं। उसे गृहस्वामिनी और कुल का पालक (कुलपा) कहा गया है। ऋग्वेद (3/3/3 /4) में 'जायेदस्तम्' कह कर पत्नी को घर से ही समीकृत कर दिया है। परिवार व वृद्धजनों की सेवा सुश्रुषा का कार्य पत्नी को वधू को था तो सभी की 'सम्राज्ञी' भी वह कहलायी जाती थी।

सम्राज्ञी श्वसुरे भव, सम्राज्ञी श्वस्रवां भव'।

ननान्दरि सम्राज्ञी भव, सम्राज्ञी अधिदेव वृषु।। (ऋग्वेद 10/85/ 46)

स्त्री का केवल परिवार में ही महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं था उसे युद्ध स्थल में जाने का भी अधिकार था। (अथर्व 20/12/6) 'विधवा' के पुनर्विवाह का अधिकार भी वैदिक सिद्धान्तों की उदारता व उदात्तता दिखाता है। आधुनिक सन्दर्भों में 'स्त्री के सम्मान की रक्षा' के लिए यौन अपराध, बलात्कार, दहेजप्रथा, वधूविवाह जैसी घिनौनी बातों को रोकने की बात कही गई है।

6. सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परम्परा का महत्त्व समझें और उसका परीक्षण करें । भारतीय संस्कृति की अपनी विशेषता है। विविध भाषा, जाति, धर्म(पन्थ) उत्सवों वाली इस संस्कृति का संरक्षण करना सब का कर्तव्य होना ही चाहिए। संस्कृति शब्द यजुर्वेद में आया है–

सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्वारा' (यजुर्वेद 7/14)

प्राचीनतम् हमारी संस्कृति विश्व द्वारा वरणीय है। आध्यात्मिकता, समन्ववादिता, सहिष्णुता, सर्वांगीणता, उदारता, विश्व शान्ति की भावनाओं से परिपूर्ण यह संस्कृति तो रक्षणीय है ही। उसके भीतर जो अन्य–अन्य संस्कृतियाँ,(मुस्लिम, ईसाई आदि) भी इस देश में फल फूल रही हैं।

7. प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अन्तर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करें और उसका संवर्द्धन करें तथा प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव रखें। यह मूल कर्तव्य आज के युग में बहुत समीचीन है। जब पर्यावरण निरन्तर छीजता जा रहा हो, ओजोन छतरी का छिद्र बढ़ रहा हो, जलवायु चक्र बिगड़ता जा रहा हो, ऐसे में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन बन्द हो यह प्रयत्न करना ही होगा। वेद के सूक्त–सूक्त मन्त्र–मन्त्र में यह संचेतना भरी हुई है। अथर्ववेद का ऋषि तो पर्यावरण(धरती) के दोहनकर्ता का नाश करने की घोषणा करता है। हन्मि दोधतः (अथर्ववेद 12/1/58)

प्राणिमात्र के प्रति दया का भाव वैदिक–संस्कृति का प्राण है। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे (यजुर्वेद 36/18) जैसे मन्त्राशं प्रकृति के कण–कण, प्राणी–प्राणी को मित्रता, प्रेम व करुणा की दृष्टि से देखने की प्रेरणा देते हैं तथा जहाँ करुणा होती है वहाँ पर्यावरण संरक्षित हो ही जाता है। पर खेदजनक तथ्य है यही कि आज का मनुष्य स्वार्थान्ध हो गया, करुणाहीन हो गया है। भोगवाद की लिप्सा के वशीभूत होकर वह अध्यात्म को भूल गया है। 'वन्यजीव' की लुप्त होती प्रजातियाँ मनुष्य के लिए गहन संकट का कारण बन गई हैं। पर 'नवाब पटौदी' जैसे लोग 'काले हिरण' व 'खरगोश' का शिकार करके भी कानून से बचना से चाहते हैं।

8. वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना

यह मूल कर्तव्य भी वैदिक संविधान के मन्त्र–मन्त्र में गुथा है। 'वेद' और 'विज्ञान' एक दूसरे के पूरक हैं। 'मनुर्भव' इसका नारा तथा ज्ञानार्जन की पिपासा इसके सरस्वती को सम्बोधित तथा 'ज्ञान सूक्त' में कूट–कूट कर भरी है। निरन्तर आत्मपरिष्कार के लिए वैदिक संस्कृति प्रेरित करती है। 'मानववाद' ही है यह जो कहता है–

केवलाघो भवति केवलादि (ऋग्वेद 10/117/6) अर्थात् अकेला खाने वाला पाप का भागी होता है।'

या फिर पुमान् पुमांसं परिपातु विश्वतः'(ऋग्वेद 6/75/14) अर्थात् मनुष्य मनुष्य की रक्षा करे।

9. सार्वजनिक सम्पत्ति को सुरक्षित रखें और हिंसा से दूर रहें–

यह मूल कर्तव्य भी कुछ सीमा तक वेद में मिलता है। वैदिक काल में व्यक्तिगत सम्पत्ति अधिक थी। सार्वजनिक सम्पत्ति की अवधारणा विकसित नहीं हो पाई थी परन्तु जहाँ तक हिंसा से दूर रहने की बात है वह बहुत

बार सामने आई है। यज्ञ का तो एक नाम 'अध्वर' है ही अन्यत्र भी मा हिंसी' जैसे वाक्य हिंसा से विमुख रहने को प्रेरित करते हैं।

10. व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत् प्रयास

आगे बढ़ते हुए हम राष्ट्र उन्नति का प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाइयों को छू लें। यह मूल कर्तव्य भी वैदिक विधान के अनुरूप है। वेद में व्यक्ति नहीं समूह को महत्त्व सदा दिया गया है। वेद की अधिकांश प्रार्थनाओं में प्रार्थी के लिए बहुवचन के प्रयोग से यह स्पष्ट हो जाता है कि वेद समष्टिगत विचारधारा ले कर चलता है। प्रसिद्ध गायत्री मन्त्र में हम सब की बुद्धियों को प्रेरित करने की प्रार्थना है– धियो यो नः प्रचोदयात् ।

एक अन्य मन्त्र में ' हम सब के लिए अन्धकार से निकलकर उत्तम ज्योति सूर्य के समान ऊपर उठने की प्रार्थना– उद्वयं तमसस्परि ...सूर्यमगन्म ज्येतिरुत्तमम् (यजुर्वेद 20/21) है। अग्निदेव से प्रार्थना है– 'हे सब का नेतृत्व करने वाले परमेश्वर हम सब को उत्तम धन के लिए शोभन मार्ग से ले जाओ– अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् (यजुर्वेद 5/36) सामूहिक कल्याण की प्रार्थनाओं के साथ–साथ सबके लिए अभय की प्रार्थनाएँ हैं– यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु। शं नं कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्य :।।(यजुर्वेद 36/22) स्वस्ति–कामनाएँ, शान्ति की प्रार्थनाएँ पूरे ब्राह्मण्ड के लिए हैं। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि व्यक्ति के उत्कर्ष पर ध्यान नहीं है। यजुर्वेद के शिव संकल्प सूक्त में तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु' कहकर व्यक्ति के मन के परिष्कार की बात है। वास्तव में व्यक्ति–व्यक्ति करके ही समाज बनता है। व्यष्टि के उत्कर्ष से समाज का उत्कर्ष होता है। समाज के उत्कर्ष से राष्ट्र का उत्कर्ष। अतः सदा जागरूक रहकर राष्ट्र के उत्कर्ष में योगदान दिया जा सकता है तथा देश रक्षा के लिए बलिदान देने की तत्परता भी अपेक्षित रहती है–

वयं राष्ट्रे जागृयाम् पुरोहिताः'(यजुर्वेद 9/23)

वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम। (अथर्ववेद 12/1/62)

11. इन दस मूल कर्तव्यों की श्रृंखला में 86वें संशोधन नियम 2002 के द्वारा एक और कर्तव्य जोड़ दिया गया है– वह है 'माता पिता या अभिभावक को अपने बच्चे को (6 से 14) शिक्षा प्राप्त करने का अवसर देना होगा। भारत में जहाँ बच्चे श्रम करने में लगे रहते हैं, पढ़ने–लिखने की आयु में उनसे मजदूरी करवाई जाती है तथा अनेक प्रकार से शोषण किया जाता है वहाँ इस मूल कर्तव्य का अपना महत्त्व है।

खेद की बात है आज 21वीं सदी में जब मानवाधिकारों की सबसे अधिक चर्चा होती है। संयुक्त राष्ट्रसंघ (बालवर्ष) (बालिकावर्ष) मनाता रहता है, पर बच्चों की दशा में सुधार नहीं होता । 40 करोड़ से अधिक बच्चे हैं जिनके अधिकार निश्चित नहीं हैं। वे श्रमिक हैं, आधी अधूरी मजदूरी पाते हैं। उनसे बलात्कार होता है, वे वेश्यावृति में धकेले दिये जाते हैं, कुपोषित हैं। रक्तल्पता के शिकार हैं। एड्स पीड़ित हैं। कन्याशिशु की भ्रूणहत्या कर दी जाती है। वास्तव में बच्चों के लिए सामाजिक, राजनैतिक न्याय की अपेक्षा है।

इन परिस्थितियों में वैदिक संस्कृति के आदर्श जो संविधान में प्रतिच्छायित हो रहे हैं आज नितान्त प्रासंगिक हैं।

सम्पर्क सूत्र – जे.एन.7 बी.शालीमार बाग, दिल्ली – 110088

वेदों में आयुर्वेद का विज्ञान परक वर्णन

पद्मश्री डा. कपिलदेव द्विवेदी

वेद विश्व पुस्तकालय के ऐसे ज्ञान–विज्ञान, जीवन–धर्म एवं चेतना के अनुपम ग्रन्थ हैं जिसके सम्बन्ध में विश्व के मनीषियों ने अद्भुत विचार व्यक्त किये हैं। आर्य समाज ने तो इसे विश्व का सबसे पुनीत और सत्यधर्म का अद्वितीय ग्रन्थ माना। आर्य मनीषियों ने इस पर अनेक गहन और उपयोगी अनुसन्धान किये। ऐसे ही अनुसन्धानक, लेखक और विश्व प्रसिद्ध विद्वान थे पद्मश्री डॉ. कपिलदेव द्विवेदी जी। डॉ. साहब का लिखा यह मननीय और संग्रहणीय लेख अभिनन्दन ग्रन्थ में प्रकाशित किया जा रहा है। इसे डॉ. द्विवेदीजी के सुपुत्र डॉ. भारतेन्दु द्विवेदीजी ने मेरे विशेष आग्रह पर प्रकाशन के लिए प्रेषित किया, इसके लिए मैं उन्हें हृदय से धन्यवाद देता हूँ–अ.आ.

वेद विश्व–संस्कृति के आधार–स्तम्भ हैं। वेदों में ज्ञान और विज्ञान का अनन्त भण्डार विद्यमान है। अतएव मनु ने वेदों को सर्वज्ञानमय कहा है, अर्थात् वेदों में सभी प्रकार का ज्ञान और विज्ञान निहित है। आयुर्वेद शास्त्र की दृष्टि से वेदों का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि चारों वेदों में आयुर्वेद के विभिन्न अंगों और उपांगों का यथास्थान विशद् वर्णन हुआ है।

ऋग्वेद और आयुर्वेद – ऋग्वेद में आयुर्वेद के महत्त्वपूर्ण तथ्यों का यथास्थान विवेचन प्राप्त होता है। इसमें आयुर्वेद का उद्देश्य, वैद्य के गुण–कर्म, विविध औषधियों के लाभ आदि, शरीर के विभिन्न अंग, विविध चिकित्साएँ, अग्नि चिकित्सा, जल चिकित्सा, कृमिनाशन, दीर्घायुष्य, तेज, ओज, नीरोगता, वशीकरण, कुस्वप्न–नाशन आदि का विशिष्ट वर्णन प्राप्त होता है।

यजुर्वेद और आयुर्वेद– यजुर्वेद में आयुर्वेद से संबद्ध निम्नलिखित विषयों की सामग्री प्राप्त होती है– वैद्य के गुण–कर्म, विभिन्न औषधियों के नाम आदि, शरीर के विभिन्न अंग, चिकित्सा, दीर्घायुष्य, नीरोगता,तेज,वर्चस् बल, अग्नि और जल के गुण–कर्म आदि।

सामवेद और आयुर्वेद– सामवेद में आयुर्वेद विषयक सामग्री अत्यन्त न्यून है। इसमें आयुर्वेद से संबद्ध कुछ मन्त्र निम्नलिखित विषयों के प्रतिपादक हैं– वैद्य, चिकित्सा, दीर्घायुष्य, तेज, ज्योति, बल, शक्ति आदि।

अथर्ववेद और आयुर्वेद– आयुर्वेद की दृष्टि से अथर्ववेद अत्यन्त महनीय ग्रन्थ है। इसमें आयुर्वेद के प्रायः सभी अंगों और उपांगों का विस्तृत वर्णन मिलता है। अथर्ववेद आयुर्वेद का मूल–आधार है। इसमें आयुर्वेद से संबद्ध निम्नलिखित विषयों का वर्णन प्राप्त होता है– भिषज् या वैद्य के गुण–कर्म,भैषज्य,शरीरांग,दीर्घायुष्य,नीरोगता, तेज, वर्चस्, वशीकरण, वाजीकरण, रोगनाशक विभिन्न मणियाँ, विविध औषधियों के नाम और गुण–कर्म,रोगनाम एवं चिकित्सा,कृमिनाशन,सूर्यचिकित्सा,जलचिकित्सा,विषचिकित्सा,पशुचिकित्सा,प्राणचिकित्सा,शल्य–चिकित्सा आदि।

आयुर्वेद और उसके उद्देश्य– चरक के सुश्रुत में आयुर्वेद का लक्षण और उसके उद्देश्यों का विशेष विस्तार से वर्णन किया गया है।

चरक ने आयुर्वेद का लक्षण दिया है – आयुर्वेदयति इति आयुर्वेदः जो आयु का ज्ञान कराता है, वह आयुर्वेद है। इसका स्पष्टीकरण करते हुए कहा है कि आयुर्वेद ही मनुष्य की आयु के लिए हितकर (पथ्य) और अहितकर (अपथ्य) वस्तुओं का वर्णन करता है, सुखकर और दुखदायी कारणों का वर्णन करता है, पदार्थों की ग्राह्य मात्रा और अनुचित मात्रा का उपदेश देता है तथा आयुवर्धक और आयुनाशक द्रव्यों, गुणों और कर्मों का वर्णन करता है। इसमें आयु की इयत्ता और आयु के स्वरूप का भी वर्णन होता है।

सुश्रुत का कथन है कि जिसमें आयु के हितकर और अहितकर तत्त्वों का विचार हो और जो दीर्घ आयु प्राप्त कराता है, वह आयुर्वेद है।

चरक ने आयुर्वेद का उद्देश्य बताया है– स्वस्थ पुरुष के स्वास्थ्य की रक्षा करना और रोगी व्यक्ति के रोग को दूर करना। सुश्रुत ने भी यही भाव दिया है कि रोगी को रोग से मुक्त करना और स्वस्थ के स्वास्थ्य की रक्षा करना, ये ही दो आयुर्वेद के मुख्य प्रयोजन हैं।

आंगिरस विधि में शल्यक्रिया या चीर–फाड़ की विधि ली जा सकती है। इसमें सूक्ष्म दृष्टि, क्रूर–कृत्य, अंग–छेदन आदि की क्षमता और रोगों के ठीक कारणों आदि का ज्ञान अनिवार्य है।

चरक का कथन है कि धातुओं की विषमता को रोग कहते हैं और धातुओं की समता को नीरोगता या स्वस्थता। आरोग्य का ही नाम सुख है और रोगावस्था का नाम दुःख है।

वेदों में आयुर्वेद के उद्देश्य– वेदों में आयुर्वेद के उद्देश्यों का यत्र–तत्र उल्लेख और संकेत है।

मृत्यु या रोग के कारणों का निवारण– ऋग्वेद और अथर्ववेद में कहा गया है कि– मृत्यु के कारणों को दूर करें। हम दीर्घायु प्राप्त करें। आचार–विचार की शुद्धि को दीर्घायु का साधन बताया गया है। पवित्र आचार और विचार से रोगों को नष्ट करके दीर्घायु हों। तैत्तिरीय संहिता का कथन है कि जिन कारणों से रोग होता है, उन्हें दूर किया जाए। जीवन की सीमा सौ वर्ष या इससे अधिक होने का उल्लेख है। वेदों में अनेक स्थानों पर दीर्घायु, शतायु और पूर्णायु या सर्वायु का उल्लेख है। अथर्ववेद में शरीर के अंगों की नीरोगता और आत्मा की अजेयता की प्रार्थना की गई है। अथर्ववेद में सभी रोगों का कारण विष बताया गया है और उस विषय या रोगकृति को नष्ट करने का उल्लेख है।

इस प्रकार आयुर्वेद के मूलभूत तत्त्वों में रोगनाशन, पूर्ण स्वस्थता, शतायु होना, रोगकृमिनाशन और आचार–विचार की शुद्धि का उल्लेख मिलता है।

आयुर्वेद के आठ अंग– यद्यपि वैदिक वाङ्मय में आयुर्वेद के 8 अंगों का यत्र–तत्र वर्णन प्राप्त होता है, परन्तु आठ अंगों का कहीं पर स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि आयुर्वेद का आठ अंगों में विभाजन परकालीन चिंतन है।चरक, सुश्रुत और अष्टांगहृदय में इन आठ अंगों का कुछ नामभेद से उल्लेख प्राप्त होता है। सुश्रुत ने इनके नाम दिए हैं– 1. शल्यचिकित्सा, 2. शालाक्य चिकित्सा, 3. कायचिकित्सा, 4. भूतविद्या, 5. कौमारभृत्य, 6. अगद तन्त्र, 7. रसायन तन्त्र, 8. बाजीकरण तन्त्र।

चरक ने इनके नाम दिए हैं – 1. कायचिकित्सा, 2. शालाक्य, 3. शल्यापहर्तृक(शल्य तन्त्र), 4.विषगर–वैरोधिक–प्रशमन (अगदतन्त्र), 5. भूतविद्या, 6. कौमारभृत्य, 7. रसायन, 8. वाजीकरण। अष्टांगहृदय में इनके नाम हैं– 1. कायचिकित्सा, 2. बालचिकित्सा, 3. ग्रहचिकित्सा, 4. ऊर्ध्वांगचिकित्सा, 5. शल्यचिकित्सा, 6. दंष्ट्राचिकित्सा (विष चिकित्सा), 7 जरा चिकित्सा (रसायन), 8. वृषचिकित्सा (बाजीकरण)।

चिकित्सा चार प्रकार की– अथर्ववेद में चार प्रकार की औषधियों और चिकित्सा–विधियों का उल्लेख मिलता है। ये निम्नलिखित हैं–1. अथर्वणी चिकित्सा – इस चिकित्सा–विधि का सम्बन्ध अथर्वन् या अथर्वा ऋषि से है। इस चिकित्सा विधि के विषय में मतैक्य नहीं है, परन्तु अधिकांश विद्वानों का मत है कि यह शांतियुक्त विधि से की जाने वाली चिकित्सा है। अथर्वा का अर्थ योगी है। इसमें ध्यान, मनन, चिन्तन और मनोयोग से होने वाली चिकित्सा का समावेश है। अतएव इसे मानस चिकित्सा–विधि कह सकते हैं।

2. आंगिरसी चिकित्सा – इसका सम्बन्ध अंगिरस् या अंगिरा ऋषि से है। इसकी दो व्याख्याएँ हो सकती हैं– (क) अंगों के रस से होने वाली चिकित्सा आंगिरसी है। इसमें अंगों का रस अर्थात् रक्त आदि दूसरों को चढ़ाना, शरीर में बाह्य रसों को पहुँचाना, शरीर में अन्य कार्यशैली तत्त्वों को पहुँचाना आदि का समावेश होगा। अतः यह पद्धति कुछ अंशों तक एलोपैथिक से साम्य रखती है।

आंगिरस की दूसरी व्याख्या घोर कृत्यों से संबद्ध है। अंगिरा ऋषि द्वारा दृष्ट मन्त्रों में व्रण–चिकित्सा,

शत्रुनाशन, शत्रुसेनानाशन, मणि द्वारा समस्त रोगों, शत्रुओं और राक्षसों के नाशन आदि का वर्णन है। यह भी वर्णन किया गया है कि ऋषि घोर होते हैं। इनकी दृष्टि और इनका चिन्तन सत्य है अर्थात् ये सूक्ष्मदृष्टि हैं।

3.दैवी चिकित्सा– पृथ्वी आदि पंचतत्त्वों को देव कहते हैं। सूर्य, चन्द्र आदि भी देव हैं। अतः मृत्–चिकित्सा, जलचिकित्सा, अग्नि–चिकित्सा, वायु चिकित्सा,सूर्य चिकित्सा, प्राणायाम चिकित्सा आदि चिकित्साएँ दैवी चिकित्सा के अन्तर्गत आती हैं।आधुनिक विज्ञान के अनुसार इसे प्राकृतिक चिकित्सा कह सकते हैं।

4.मनुष्यजा या मानवी चिकित्सा– यह मानवों द्वारा बनायी गई चिकित्सा है। इसमें मानवों द्वारा निर्मित चूर्ण, अवलेह, भस्म, कल्प, आसव, वटी आदि सम्मिलित हैं। यह चिकित्सा औषधि चिकित्सा है।

नीरोगता– वेदों में नीरोगता के कुछ साधन बताए गए हैं। दीर्घायु के जो साधन बताए गए हैं, वे नीरोगता के आधार हैं। कुछ अन्य साधन ये हैं –

पाँच आरोग्यकारक तत्त्व– अथर्ववेद के एक सूत्र में पाँच आरोग्य कारक तत्त्वों का उल्लेख है। ये हैं : पर्जन्य (वर्षा का जल), मित्र (प्राणशक्ति), वरुण (जल), चन्द्र और सूर्य। वर्षा का जल शुद्ध और रोगनाशक है। प्राणवायु शरीर को शक्ति प्रदान करती है। जल शरीर के दूषित तत्त्वों को बाहर निकालता है। चन्द्रमा इन्द्रियों और मन को शान्ति एवं शक्ति देता है। सूर्य शरीर का पोषक और रक्षक है।

शुद्ध और निर्विष अन्न का सेवन– अथर्ववेद का कथन है कि शुद्ध अन्न शक्तिवर्धक और रोगनाशक होता है। जौ और चावल पोषक और रोगनाशक है। अन्न के विषय में आवश्यक बताया गया है कि नीरोगता के लिए निर्विष अन्न ही खाया जाए।

भोजन के नियम– अथर्ववेद में नीरोगता के लिए भोजन के कुछ नियम बताए गए हैं। ये हैं– (क) ठीक चबाकर खाना, (ख) ठीक ढंग से पानी पीना, (ग) ठीक ढंग से निगलना। शीघ्रता से खाया हुआ भोजन अपाच्य होता है और अजीर्ण (कब्ज) करता है। इसलिए आयुर्वेद में भोजन के लिए तीन नियम बताए गए हैं :– (क) हितभुक्– हितकारी भोजन करना, (ख) मितभुक्– अल्प या सन्तुलित मात्रा में भोजन करना, (ग) ऋतभुक्– सात्विक एवं ईमानदारी से कमाया गया अन्न ही खाना।

मुल–मूत्र के वेग को न रोकना– मल और मूत्र के वेग को रोकने से नाना प्रकार की व्याधियाँ होती हैं, अतः उन्हें न रोकें। अथर्ववेद में मूत्र के वेग को रोकने से मूत्रकृच्छर का वर्णन किया गया है और मूत्र को तुरन्त निकालना आवश्यक बताया गया है।

त्रिदोषज विकारों को रोकना– वात, पित्त और कफ के विकार से सारे रोग होते हैं और इनको सम रखने से नीरोगता होती है। अथर्ववेद में अभ्रज (कफ), वातज (वात) और शुष्म (पित्त) के विकार से होने वाले सिरदर्द और कास (खांसी) आदि रोगों का उल्लेख किया गया है और इनकी चिकित्सा औषधि–सेवन एवं पर्वतों का आश्रय लेना बताया गया है।

सात्विक विकारों को ही अपनाना– अष्टांगहृदय का कथन है कि रोगों के दो आश्रयस्थान हैं– शरीर और मन। मानसिक रोग रजोगुण और तमोगुण से उत्पन्न होते हैं। आयुर्वेद में नीरोगता के लिए शुभ विचारों को उपादेय बताया गया है। अथर्ववेद में उत्तम भावनाओं और विचारों से दीर्घायु की प्राप्ति बताई गई है। – प्रसन्नचित्र रहने से मनुष्य नीरोग, दीर्घायु और तेजस्वी होता है।

पापों और दुर्गुणों से बचना–पापों,दुष्कर्मों और दुर्व्यसनों केपरित्याग से मनुष्य नीरोग और दीर्घायु होता है।

शरीर को हृष्ट–पुष्ट रखना– अथर्ववेद का कथन है कि शरीर में नेत्र आदि ज्ञानेन्द्रियाँ शरीर के रक्षक हैं। इनको पुष्ट रखने से मनुष्य नीरोग और दीर्घायु होता है। सूर्योदय से पूर्व उठना – अथर्ववेद का कथन है कि उदय होता हुआ सूर्य सोने वाले का तेज हर लेता है। इसलिए नीरोगता और तेजस्विता के लिए सूर्योदय से पूर्व उठना आवश्यक है – समाप्त

अथर्ववेद में क्या है? एक गवेषणा

प्रो. रघुवीर वेदालंकार

प्रो.वेदालंकार आर्यजगत् के प्रसिद्ध विद्वान, सुप्रवक्ता, गवेषक और लेखक हैं। वैदिक वांगमय के माध्यम से समाज में फैले अन्धविश्वास और पाखण्ड निर्मूल करने में आपका बहुत योगदान रहा है।

न केवल सामान्य जनों में ही, अपितु अनेक संस्कृतज्ञों की भी यह धारणा है कि अथर्ववेद में मारण, मोहन, उच्चाटन, स्तम्भन, विद्वेषण तथा वशीकरण के प्रयोग हैं। ऐसा ही एक लेख दैनिक भास्कर (कोटा संस्करण में) डा० उदयेश्वर शर्मा का छपा था। लेखक ने एक ओर तो इन्हें मानसिक शक्ति के चमत्कारी प्रयोग कहा है, दूसरी ओर इन्हें घातक अशोभन अनुष्ठान भी कहा है। लेखक के अनुसार इस प्रकार के तान्त्रिक क्रियाओं और हवनों से व्यक्ति विशेष का अहित, यहाँ तक कि मृत्यु तक भी सम्भव है। प्रश्न है कि वेद जो कि वैदिक संस्कृति का मूल आधार रहा है, क्या उसमें इसी प्रकार के घातक, विनाशक अनुष्ठान हैं? वेद में तो विश्वबन्धुत्त्व तथा विश्व को जीवनदायिनी विद्या होनी चाहिए। ऐसे घातक अनुष्ठानों से इसे सर्वश्रेष्ठ पुस्तक कैसे माना जा सकता है? मन्त्रों के वास्तविक अर्थों को न जानने के कारण ही ऐसी भ्रांतियाँ उत्पन्न होती हैं। अथर्ववेद पर यह दोष सर्वाधिक मढ़ा जाता है, जो सत्य नहीं है।

वेद केवल पढ़ने–पढ़ाने का शास्त्र नहीं है अपितु यह तो प्रयोगशाला में प्रयोग करने की पुस्तक है। वेदों में जो भी ज्ञान–विज्ञान मनोविज्ञान आदि निहित है, उसे व्यवहार में प्रयोग करके देखना चाहिए। यदि वे सिद्ध हो जाते हैं तो उन बातों को वेदों में मान लेना चाहिए, अन्यथा नहीं। डॉ. शर्मा ने जो मारण, मोहन, उच्चाटन आदि षटकर्म का वर्णन अथर्ववेद में माना है, इनसे सबका स्वरूप भी स्पष्ट नहीं है। उच्चाटन से क्या अभिप्राय है, आपने स्पष्ट नहीं किया। रही बात मारण, वशीकरण तथा विद्वेषण की, इनका प्रयोग करके देख लेना चाहिए कि यदि अथर्ववेद के मन्त्रों से यह कार्य सिद्ध हो जाए तो मान लिया जाए कि अथर्ववेद इनका प्रतिपादक है। यदि प्रयोग सफल न हो तथा मन्त्र अपना कार्य न कर पाएं तो यह मान लेना चाहिए कि अथर्ववेद ऐसे किसी भी घातक प्रयोग का प्रतिपादक नहीं। आज तक तो ऐसा यत्न किसी ने किया नहीं है। सभी शोधकर्ता जबानी जमा खर्च ही करते चले आ रहे हैं। प्रश्न है कि ऐसे घातक प्रयोग किस तरह किए जाएँ? यह कोई बड़ा प्रश्न नहीं है। किसी आतंककारी या इसी प्रकार के अन्य किसी भी व्यक्ति पर आप ऐसा प्रयोग करके दिखलाएँ कि अथर्ववेद के मन्त्रानुष्ठान से उनका अनिष्ट या मृत्यु हो जाए तो इस विद्या को सभी को मानना ही पड़ेगा। यदि उन पर ऐसे प्रयोग न करना चाहें तो मैं अपने आपको स्वेच्छया इस कार्य के लिए प्रस्तुत करता हूँ तथा डा. उदयेश्वर शर्मा सहित उन सभी लोगों को निमन्त्रण है, जो कि अथर्ववेद में मारण, उच्चाटन आदि मानते हैं, वे मेरे ऊपर इन प्रयोगों को सिद्ध करके दिखलाएँ।

मारण, उच्चाटन आदि षट्कर्म में एक वशीकरण नामक कार्य भी है। माना जाता है कि अथर्ववेद के मन्त्रों से किसी भी स्त्री का मन अपने वश में किया जा सकता है। सौतन भी अपनी सौतन का मन इन मन्त्रों से वश में कर लेती है तथा पति को अपने अधिकार में रखती है। यह तो बहुत ही उत्तम उपाय है। किसी को भी वश में करने का, किन्तु इस पर विश्वास करने वाले पण्डित हेमामालिनी के मन को अपने वश में कर के दिखलायें तो उनकी बात मान ली जाएगी। हेमामालिनी से डरते हो तो मैं अन्य स्त्री बतला दूँगा जो इस प्रयोग हेतु स्वेच्छा से तैयार होगी। आप प्रयोग करने को तैयार हो जाइए। यदि ऐसा नहीं कर सकते तो क्यों वेद के मत्थे आप इस प्रकार के दोष मढ़ रहे हैं। वेद ज्ञान–विज्ञान की निधि हैं। उनमें इस प्रकार के निकृष्ट प्रयोग नही हैं।

हाँ, मनोवैज्ञानिक कुछ मन्त्र इस प्रकार के अवश्य हैं जो व्यक्ति पर गम्भीर प्रभाव डालते हैं। यथा अथर्ववेद

में एक मन्त्र – **अयं मे हस्तो भगवान् अयं मे भगवत्तरः।** चिकित्सक रोगी को कहता है अरे रोगी, देखो मेरे हाथ का कमाल। मैं तुझे अभी ठीक किए देता हूँ। न मरिष्यसि मा बिभेः तुम मरोगे नहीं, डरो मत।

चिकित्सक का यह आश्वासन ही रोगी पर जादू जैसा प्रभाव डालता है। यह मनोवैज्ञानिक प्रभाव है। इसके विपरीत डाक्टर आते ही कह दे कि बस तुम तो मरने ही वाले हो, रोग असाध्य है। इसका कितना दुष्प्रभाव रोगी पर पड़ेगा, इसका आप अनुमान कर सकते हैं। आजकल भी चिकित्सक ऐसा ही करते हैं। सम्मोहन का प्रयोग भी ऐसा ही है। हमारे मन में अद्भुत शक्ति है। अपने मन की शक्ति को विकसित करके अपने विचारों से अन्य व्यक्ति को प्रभावित किया जा सकता है। आजकल भी ऐसा होता है। प्रकाण्ड पण्डित, श्रेष्ठ वक्ता तथा शक्तिशाली मनुष्य अपना प्रभाव दूसरों पर डाल ही देते हैं। क्या कारण है कि सभा में एक वक्ता को तो हम मन्त्र मुग्ध होकर सुनते रहते हैं तथा दूसरे के भाषण में सीटियाँ बजाने लगते हैं। यह तो उनकी भाषण शैली का भेद है। इसमें जादू जैसी कोई बात नहीं।

डॉ. उदयेश्वर जी ने अथर्ववेद के कुछ मन्त्र उद्धृत करके लिखा है कि इनमें अनिष्ठ कारक कृत्याओं का वर्णन है जिससे व्यक्ति की मृत्यु आदि सम्भव है। ये व्यक्तिगत स्तर के प्रयोग नहीं हैं, अपितु युद्धस्तरीय प्रयोग हैं। युद्ध के समय एक सेना दूसरी सेना के लिए इस प्रकार के विभिन्न प्रयोग करती है। जैसे, कोई गैस छोड़ी जाती है जिससे शत्रु पक्ष के सैनिक अचेत होने लगते हैं। यह तो अब भी होता है तथा सम्भव है। कुछ पक्षियों के पैरों पंखों आदि में विष लगा कर शत्रु पक्ष में छोड़ देते हैं जिससे उनका स्पर्श करके शत्रु मर जाते हैं। जो अथर्व काण्ड 5, सूक्त 31 के जो मन्त्र डा. शर्मा ने उद्धृत किए हैं, उनमें ही आठवें मन्त्र में कहा गया है कि कूपों में भी ऐसी कृत्या की जाती है। कृत्या का अर्थ मारग प्रयोग है। सैनिकों के द्वारा अब भी शत्रु पक्ष के कूप, तालाब आदि में विष मिला दिया जाता है जिसका पानी पीते ही मरने लगते हैं। घरों के अन्दर भी ऐसी चीजें छिपा दी जाती हैं। कभी–कभी मनुष्य के आकार में ही एक पुतला किसी धातु का बनाया जाता है जो देखने में मनुष्य जैसा ही लगता है। शत्रु उसे मनुष्य समझ कर उस पर प्रहार करता है, किन्तु उसका कुछ नहीं बिगड़ता। दूसरी ओर से शत्रु पर आक्रमण करके उसे नष्ट कर दिया जाता है। हिटलर ने भी ऐसे प्रयोग किए थे। उसने सैनिक के आकार के ऐसे पुतले तैयार करवाए थे जो मनुष्य की तरह ही हाथों में तलवार आदि धारण किए थे, किन्तु वे वस्तुतः यन्त्र ही थे। शत्रु सेना उनसे धोखा खा गई। उन पर प्रहार करती रही। युद्धों में इस प्रकार के विभिन्न प्रयोग किए जाते हैं। ऐसे घातक प्रयोगों के शमन के उपाय भी वेद में कहे हैं। अथर्व– 5/14/...में इस प्रकार की औषधियों का वर्णन है जो इनके प्रभाव को समाप्त कर देती हैं। विष के प्रभाव को भी शान्त किया जा सकता है।

अथर्ववेद के सभी प्रयोग वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक तथा आयुर्वेद सम्मत हैं। यथा अथर्व 5/13/4 में एक मन्त्र इस प्रकार है– चक्षु ते चसुर्हन्मि विषेण हन्मि वे विषम्। अहे मियस्व या जीवी प्रत्यगम्येतुते विषम्।।

प्रयोग है कि यदि सर्प आपकी ओर काटने के लिए चला आ रहा हो तो उसकी आँखों में अपनी आँख मिला दो, सर्प लौट जायेगा। यदि सर्प ने काट ही लिया हो तो साहस करके दाँतों से उस सर्प को मनुष्य काट ले। सर्प मर जाएगा, वह व्यक्ति नहीं मरेगा। ये सिद्ध प्रयोग हैं जो आज भी देखे जाते हैं। अथर्ववेद में इसी प्रकार के प्रयोगों का वर्णन है।

सम्पर्क सूत्र : बी–268, सरस्वती विहार, दिल्ली – 110034
वायुदूत : 09627020557

विद्वानों के उपदेशों को ठीक से जानना समझना और उसके अनुसार आचरण करना –ये दो उपाय हैं जो मनुष्य को रोगों की उत्पत्ति से बचाते हैं और उत्पन्न हो चुके रोगों को शान्त भी करते हैं।–चरक संहिता

वेदों में नारी का स्वरूप : एक समीक्षा

डा. भारतेन्दु द्विवेदी

डा. भारतेन्दु द्विवेदी संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित व वेदवेत्ता हैं। आप का.न.रा. स्नातकोत्तर महाविद्यालय ज्ञानपुर (भदोही) उ.प्र. में संस्कृत विभाग में विभागाध्यक्ष हैं। संस्कृत साहित्य के संवर्धन में अनवरत रत रहते हैं।

वर्तमान युग संस्कृतियों के संघर्ष का युग है। प्रत्येक संस्कृति अपनी श्रेष्ठता और उत्कृष्टता स्थापित करने के लिए प्रयासरत है। भारतीय संस्कृति ने विश्व को सांस्कृतिक ज्ञान प्रदान किया है। भारतीय संस्कृति की आधारशिला वैदिक ऋषियों ने उच्च आदर्शों पर स्थापित की थी। इस सुदृढ आधारशिला पर भारतीय समाज पल्लवित और पुष्पित होकर अग्रसर होता रहा। विदेशी आक्रामकों के आक्रमणों, समाज को तोड़ने के प्रयासों के बाद भी भारतीय संस्कृति अपना अस्तित्व बनाए हुए है। नारी पर हुए आघातों ने उसे एक सीमा में आबद्ध कर दिया था। जबकि भारतीय नारी को समाज में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त था। किसी समय वह अपने अस्तित्व के उच्चतम एवं गौरवपूर्ण स्थान पर थी। वैदिक समाज में नारी की शिक्षा–दीक्षा की उत्तम व्यवस्था थी। वह सामाजिक कार्यक्रमों में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। वेदों में नारी के शील, गुण, कर्तव्य और अधिकारों का विशद वर्णन प्राप्त होता है। इस प्रकार का उदात्त वर्णन अन्यत्र प्राप्त नहीं होता है।

नारी का गौरवपूर्ण स्थान– वेदों में नारी को गौरवपूर्ण स्थान दिया गया है। एक समय ऐसा भी था जब नारी को यज्ञ में सर्वोच्च स्थान दिया जाता था। ऋग्वेद के एक मन्त्र में कहा गया है स्त्री ही ब्रह्मा है।[1] नारी पुरुष की सहयोगिनी और सहायिका थी। यह यज्ञ करती थी, युद्ध में पुरुषों के साथ रणक्षेत्र में जाती थी तथा युद्ध में भाग लेती थी। अथर्ववेद में वर्णन है कि नारी पहले से ही मिलकर अग्निहोत्र आदि यज्ञ करना और मिलकर जीवन व्यतीत करना जानती है। वह सत्य ज्ञान का विधान करने वाली वीर सन्तानों वाली, बड़े ऐश्वर्य वाले मनुष्य की पत्नी के रूप में पूज्य है। वह इन्द्र तथा सब प्राणी मात्र से उत्तम है।[2]

अथर्ववेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि स्त्री अबला नहीं, सबला है। वह वीर पुत्रों वाली, वीर की पत्नी और वीर सहायिकों से युक्त है। यह हिंसक व्यक्ति मुझे अबला सा समझता है परन्तु मैं वीर पुत्रों वाली इन्द्र की पत्नी और मरुत् देवों की मित्र हूँ। इन्द्र सबसे उत्कृष्ट है।[3] ऋग्वेद के दशम मण्डल के 159वें सूक्त में नारी के गौरव का वर्णन प्राप्त होता है। वह कामना करती है कि उसे सूर्य के समान तेजस्वी पुरुष प्राप्त हो। उसे पाकर उसका सौभाग्य भी उदित हो। वह विरोधी शत्रुओं को परास्त करने में समर्थ हो।[4] एक अन्य मन्त्र में नारी कामना करती है कि मैं ध्वजा के तुल्य यश, वैभव की वृद्धि करने वाली, मूर्धन्य, बलवती, उच्चकोटि की वक्ता बनूँ तथा शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाली बनूँ। मेरा पति भी मेरे अनुकूल हो।[5] इस मन्त्र में शची के माध्यम से स्त्री के गुणों पर प्रकाश डाला गया है। वह ध्वजा के समान ज्ञान में अग्रगण्य है। वह मूर्धन्य है, उत्कृष्ट है और सबसे प्रमुख है। वह उत्कृष्ट वक्ता है, वह निरन्तर विजयिनी है।

वेदों की नारी जहाँ स्वयं वीर रूप में सामने आती है वहीं उसकी कामना है कि उसके पुत्र शत्रुओं के हन्ता हों। उसकी पुत्री सुदूर देश में विवाहित होकर अपने गुणों को प्रकाशित करे। वह उत्तम विजय प्राप्त करने वाली हो तथा पति के हृदय में भी उसे उत्तम स्थान प्राप्त हो।[6] एक अन्य मन्त्र में नारी कामना करती है कि वह शत्रुसेना के तेज व धन को समाप्त कर सके। उसके समस्त शत्रु समाप्त हों। वह विजय प्राप्त करने वाली और सबको समाप्त करने में समर्थ हो।[7] ऋग्वेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि पत्नी ही घर है। वही कुल वृद्धि का आधार है।[8]

अथर्ववेद के एक मन्त्र में नारी के विराट, सरस्वती और सिनीवाली तीन विशेषणों के द्वारा उसकी गरिमा का

वर्णन किया गया है। 'हे नारी तुम यहाँ प्रतिष्ठित हो, तुम तेजस्विनी हो, हे सरस्वती तुम यहाँ विष्णु के तुल्य प्रतिष्ठित होना। हे सौभाग्यवती नारी, तुम सन्तान को जन्म देना और सौभाग्य देवता की कृपादृष्टि में रहना।'[9]

ऋग्वेद और अथर्ववेद के एक मन्त्र में नारी की रक्षा को राष्ट्रीय कर्तव्य बताया गया है। मन्त्र में बताया गया है जहाँ पर नारियों के शील की रक्षा की जाती है वही राष्ट्र सुरक्षित रह सकता है। नारी के शील के प्रति जहाँ उपेक्षा बुद्धि होती है, वहाँ राष्ट्र की उन्नति नहीं हो सकती तथा सर्वत्र असुरक्षा की भावना बनी रहती है।[10]

ऋग्वेद के एक अन्य मन्त्र में कहा गया है कि स्त्रीहरण या स्त्रीशीलहरण राष्ट्र के लिए कलंक है। "प्राचीन देवों और तपस्या में लीन सप्तर्षियों ने कहा है कि ब्राह्मण की स्त्री का अपहरण राष्ट्र के लिए भयंकर होता है। यह परलोक में भी दुख प्रदान करता है।"[1]

ऋग्वेद और यजुर्वेद में नारी के जो विशेषण दिए गए हैं, उनसे नारी की श्रेष्ठता का ज्ञान प्राप्त होता है। नारी को अषाढ़ा (अजेय), सहमाना (जीतने वाली), सहस्रवीर्या (असंख्य पराक्रमी), असपत्ना (शत्रुरहित), सपत्नघ्नी (शत्रुओं को नष्ट करने वाली), जयन्ती (विजेता), अभिभूवरी (सबको परास्त करने वाली) कहा गया है।[2]

डा. कपिलदेव द्विवेदी के शब्दों में 'अथर्ववेद के अनुसार समाज में नारी का स्थान गौरवपूर्ण है। वह पुरुष की सहयोगी और सहायक है। उसे यज्ञ में बैठने और युद्ध में जाने का अधिकार प्राप्त है। अथर्ववेद में सामूहिक यज्ञों और विभिन्न समारोहों में स्त्री के जाने की स्वीकृति दी गई है। सहोत्रं स्म पुरा नारी समनं वाव गच्छति।[3] मन्त्र में समन शब्द का प्रयोग हुआ है। इसके दो अर्थ हैं– सभा या समारोह और युद्ध। दोनों ही अर्थ यहाँ लिए जा सकते हैं। तदनुसार अर्थ होगा कि स्त्री सामूहिक यज्ञों में और युद्धों में जाती है।'[4]

नारी के अधिकार और कर्तव्य

वेदों में नारी को उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है। वेदों में ऋषियों के तुल्य महिला ऋषिकाओं का भी उल्लेख प्राप्त होता है। वेदों में महिलाओं को वैदिक मन्त्रों को पाठ करने का उतना ही अधिकार प्राप्त है जितना पुरुष को।। ऋग्वेद में 24 और अथर्ववेद में 5 वैदिक ऋषिकाओं का उल्लेख है। इन्होंने वैदिक मन्त्रों का दर्शन किया था। ऋग्वेद में 24 ऋषिकाओं द्वारा दृष्ट मन्त्र 224 हैं और अथर्ववेद में 5 ऋषिकाओं द्वारा दृष्ट मन्त्र 198 हैं। इस प्रकार दोनों वेदों में ऋषिकाओं के दृष्ट मन्त्रों की संख्या 422 है। इनमें से कुछ सूक्त अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। वाक् आम्भृणी के वाक् सूक्त में वाक्तत्त्व का शास्त्रीय विवेचन है। यह भाषा–विज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सूक्त है। श्रद्धा कामायनी का श्रद्धासूक्त मनोविज्ञान की दृष्टि से अत्यन्त सारगर्भित है। इसमें श्रद्धा का महत्त्व वर्णित है।[5] इससे ज्ञात होता है कि उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त था। स्त्री को सरस्वती का रूप माना गया है। वह अपने ज्ञान से प्रतिष्ठित होकर विष्णु की तरह आदर प्राप्त करे।[6] अथर्ववेद में कहा गया है कि वह स्वयं संयमी होते हुए विविध शास्त्रार्थों में भाग ले।

गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमा वदासि।[1]
एना पत्या तन्वं सं स्पृशस्वाथ जिर्विविदथमा वदासि।[2]

पुरुषों के समान स्त्रियों को भी शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। उन्हें ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए ब्रह्मचारिणी के रूप में शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए। अथर्ववेद के ब्रह्मचर्य सूक्त में ब्रह्मचारिणी कन्याओं के सम्बन्ध में वर्णन किया गया है।

ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।[3]

वेदाध्ययन के अतिरिक्त दर्शन, अध्यात्म और ललित कलाओं की भी शिक्षा कन्याओं के लिए आवश्यक है। वेदों में नारी को उच्च शिक्षा के साथ ललित कलाओं में भी पारंगत होने का वर्णन प्राप्त होता है। ऋग्वेद में उषा के माध्यम से नृत्य की शिक्षा का उल्लेख प्राप्त होता है। उषा नर्तकी के तुल्य अपने सौन्दर्य को प्रदर्शित करती है।

जायेव पत्य उशती सुवासा, उषा हस्रेव नि रिणीते अप्सः।।[4]

वेदों में नारी को पत्नी के रूप में उच्च स्थान प्राप्त था। उसे गृहस्वामिनी, गृहलक्ष्मी, साम्राज्ञी, कल्याणी आदि कहा जाता था। अथर्ववेद में उसके पतिगृह पहुँचकर गृहपत्नी या गृहस्वामिनी के रूप में उसका वर्णन प्राप्त होता है।

गृहान् गच्छ गश्हपत्नी यथासः।[5]

नारी का पतिगृह पहुँचकर उस परिवार की स्वामिनी होती है अतः अथर्ववेद में उसे साम्राज्ञी कहा गया है।

यथा सिन्धुर्नदीनां साम्राज्यं सुषुवे वृषा। एवं त्वं साम्राज्ञ्येधि पत्युरस्ते परेत्य।।[6]

नारी का पतिगृह में सास, श्वसुर आदि से भी किसी समय उच्च स्थान हुआ करता था। अथर्ववेद में कहा गया है कि हे वधू, तुम अपने ससुर, देवर और ननद के मध्य साम्राज्ञी हो और अपनी सास की साम्राज्ञी हो।

सम्राज्ञ्येधि श्वशुरेषु सम्राज्ञ्युत देवृषु। ननान्दुः सम्राज्ञ्येधि सम्राज्ञ्यत श्वश्र्वाः।।[7]

पत्नी के रूप में नारी के कर्तव्यों का निर्देश करते हुए कहा गया है कि 'विद्वान् पुरुष समान गुणवती स्त्री से विवाह कर संसार में ऐश्वर्य और शोभा पाते हैं, जिस प्रकार वृक्ष सुन्दर फूलों से शोभायमान होता है। वधू अपने सास, ससुर आदि माननीयों की सेवा और शिक्षा से दृढ़चित्त होकर घर के कार्यों का सुप्रबन्ध करके गृहलक्ष्मी के रूपमें पति, पुत्र आदि कुटुम्बियों के साथ बड़ी आयु भोग कर आनन्द करे।

भगमस्या वर्चः आदिष्यधि वृक्षादिव स्रजम्। महाबुध्नः इव पर्वतो ज्योक् पितृष्व आस्ताम्।।[8]

अथर्ववेद में वधू के लिए निर्देश है कि वधू माता–पिता और भ्राता आदि सब कुटुम्बियों में रहकर अपने सुप्रबन्ध से सबको प्रसन्न रखे।

एषा ते राजन् कन्या वधूर्नि धूयतां यम। सा मातुर्बध्यतां गृहेऽथो भ्रातुरथो पितुः।[1]

यजुर्वेद में वर्णन है कि हे स्त्री तुम सुन्दर घरवाली घृत आदि से युक्त होकर परिवार का पालन करने वाली होकर पृथ्वी के सुखद स्थलों में निवास करो।

कुलायिनी घृतवती पुरन्धिः। स्योनेसीद सदने पृथिव्याः।।[2]

अथर्ववेद में दाम्पत्य जीवन के महत्व का वर्णन करते हुए स्त्री पुरुष दोनों को एक दूसरे का पूरक कहा गया है। पुरुष सामवेद है स्त्री ऋग्वेद है। पुरुष द्यूलोक है और स्त्री पृथ्वी है। इस प्रकार दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।

अमोऽहमस्मि सा त्वं सामाहमस्मि ऋक् त्वं द्यौरहं पृथिवी त्वम्।
ताविह सं भवाव प्रजामा जनयावहै।।[3]

ऋग्वेद में स्त्री का कर्तव्य बताया गया है कि वह लज्जाशील हो। वह अपनी दृष्टि नीचे रखे। वह अपने पैरों को ढककर रखे, उसकी जंघाएँ न दिखाई पड़े, वह ज्ञान की दात्री है। अतः ब्रह्मा के तुल्य आदरणीय है।

अधः पश्यस्व मोपरि संतरां पादकौ हर।
मा ते कशप्लकौ दृशन्, स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथा।।[4]

जागरूकता के सम्बन्ध में कहा गया है कि स्त्री सदा जागरूक रहे। जागरूकता से समृद्धि आती है। ऋग्वेद में वर्णन है कि गृहस्थ धर्म के पालन के लिए पत्नी सदा जागरूक रहे और पतिकुल में सन्तान की प्राप्ति के द्वारा सदा समृद्धि की ओर अग्रसर हो।

इह प्रियं प्रजया ते समृद्ध्यताम्। अस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि।।[5]

पतिकुल में वह पूरे परिवार को सुख देने वाली हो। अथर्ववेद में कहा गया है कि यह वधू पूरे परिवार का कल्याण करने वाली हो। यह पतिगृह में आकर पति की विशेष सेवा करे। सास श्वसुर को सदा सुख दे।

सुमङ्गली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा पत्ये श्वशुराय शंभूः।
स्योना श्वश्रुवै प्र गृहान् विशेमान्।। 6

पति पत्नी दोनों के लिए यज्ञ आवश्यक कर्म बताया गया है। अथर्ववेद में वर्णन है कि यह सौभाग्यवती पत्नी अपने पति के साथ इस यज्ञशाला में बैठे और यहाँ देवों के निमित्त यज्ञ करे।

सुमङ्गल्युप सीदेममग्निं संपत्नी प्रति भूषेह देवान्।[7]

ऋग्वेद के एक अन्य मन्त्र में नारी के लिए निर्देश है कि वह प्रतिदिन प्रातः और सायं घी तथा सामग्री लेकर यज्ञ करे।

उप यमेति युवतिः सुदक्षं दोषा वस्तोर्हविष्मती घृताची। उप स्वैनमरमतिर्वसूयः।[8]

पति–पत्नी दोनों राष्ट्रीय उन्नति को प्राथमिकता देते हुए उन्नति की ओर अग्रसर हों। अथर्ववेद में वर्णन है कि दम्पती धन–धान्य से सदा बढ़ते रहें। ये राष्ट्रीय उन्नति करते हुए आगे बढ़ें। इनके पास सहस्त्रों प्रकार का तेजस्वी ऐश्वर्य हों और इन्हें कभी कोई हानि न पहुँचे।

अभि वर्धतां पयासाऽपि राष्ट्रेण वर्धताम्। रय्या सहस्रवर्चसा इमौ स्तामनुपक्षितौ।।[9]

नारी को उदार होना चाहिए। ऋग्वेद में कहा गया है कि जो स्त्री दीन–दुखियों का दुख दूर करती है, प्यासे और याचक की इच्छा पूर्ण करती है वह देवभक्त है। वह नास्तिक और कृपण पुरुष से श्रेष्ठ है।

वि या जानाति जसुरिं वि तृष्यन्तं वि कामिनम्। देवत्रा कृणुते मनः।[1]

ऋग्वेद में वर्णन प्राप्त होता है कि जो कन्या माता–पिता के साथ रहती है, उसे पैत्रिक अंश में उचित भाग मिलना चाहिए।

अमाजूरिव पित्रोः सचा सती, समानादा सदसस्त्वामिये भगम्।
कृधि प्रकेतमुप मास्या भर, दद्धि भागं तन्वो येन मामहः।।[2]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वेदों में नारी का जो स्वरूप प्राप्त होता है, उससे ज्ञान होता है कि समाज में उसका उच्च एवं गौरवपूर्ण स्थान था। वह सामाजिक कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती थी। वह आवश्यकता पड़ने पर युद्धक्षेत्र में भी जाती थी।

सम्पर्क सूत्रः अध्यक्ष, का.न.रा.स्नातकोत्तर महाविद्यालय ज्ञानपुर, भदोही, उ.प्र.

जे व्यक्ति बड़े–बड़े दिखाई देते हैं उन्हें चिन्ता का रोग दबाए रखता है। माया के कारण मिली प्रशंसा से कोई भी (असल में) बड़ा नहीं है। वह मनुष्य ही बड़ा है जिसने परमात्मा से लगन लगाई हुई है। जमीन का मालिक मनुष्य ज़मीन के लिए दूसरों से लड़ता झगड़ता रहता है पर आखिरकार(जमीन यही)छोड़कर (यहां से) चल पड़ता है, (लेकिन) उसकी तृष्णा नहीं मिटती । गुरुनानक देव कहते हैं कि हमने विचार करके काम की यह बात प्राप्त की है कि परमात्मा के भजन के बिना माया के मोह से मुक्ति नहीं होती है।

हमारी पहुँच का ईश्वर : एक गवेषणा

आचार्य सूर्यादेवी चतुर्वेदा

आचार्या सूर्यादेवी जी आर्य जगत् की विश्व प्रसिद्ध विदुषी, लेखिका, गवेषिका और पाणिनी कन्या महाविद्यालय, वाराणसी उ.प्र. की आचार्या हैं।

ईश्वर सर्वव्यापक

ईश्वर जहाँ सर्वनियन्ता, सर्वशक्तिमान्, सर्वज्ञ, सर्वाधार, सर्वेश्वर आदि पदावलियों का वाच्य है वहीं पर वह 'सर्वव्यापक' इस पद विशिष्ट से भी वाच्य होता है। परमेश्वर सर्वव्यापक है, वह ब्रह्माण्ड के अणु से अणु, परमाणु से परमाणु, स्थूल से स्थूल, सूक्ष्म से सूक्ष्म समग्र पदार्थों में व्याप्त है। उसकी व्यापकता को वेदों ने भलीभाँति प्रतिपादित किया है। मन्त्र है –

सःसध्रीची सविषूचीर्वसान आवरीवर्त्ति भुवनेष्वन्तः।।(ऋ.1/164/31)

अर्थात् सः सध्रीचीः= वह परमेश्वर अपने साथ विचरने वाले, और सः विषूचीः = वह अपने से दूर विषम मति में चलने वाले संसार को, वसानः = आच्छादित करता हुआ, भुवनेषु अन्तः = लोक लोकान्तरों के मध्य, आ वरीवर्ति = निरन्तर अच्छे प्रकार वर्तमान है, विद्यमान है।

एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो ह जातः स उ गर्भे अन्तः।। यजु. 32/4।।

अर्थात् एषः देवः = यह दिव्य परमात्मा, ह= निश्चय से, सर्वाः प्रदिशः= सब दिशाओं उपदिशाओं में, अनु= अनुकूलता से व्याप्त है, सः उ= वही, ह= निश्चय से, पूर्वः जातः= प्रथम कल्प के आदि में प्रकट होता है, सः उ= वह ही, गर्भे अन्तः= अन्तः करण में विद्यमान है।

तस्मिन्निदं सं च विचैति सर्वं सऽओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु।। यजु.32/8।।

अर्थात् तस्मिन्= उस परमेश्वर में, इदं सर्वम्= यह सम्पूर्ण जगत्, सं एति= प्रलय काल में संगत होता है, च= और उत्पत्ति समय में वि, च= पृथक्, स्थूल रूप में विद्यमान होता है। सः= वह, विभूः= व्याप्त हुआ परमेश्वर, प्रजासु= उत्पन्न हुई सृष्टि के जड़ व जीवों में ओतः= खड़े ताने रूप सूत में जैसे वस्त्र, च= तथा, प्रोतः= तिरछे सूत में जैसे वस्त्र, ओत प्रोत है, वैसे वह परमात्मा जगत् में ओत प्रोत है, व्याप्त हो रहा है।

ईश्वर की व्यापकता प्रतिपादक इन मन्त्रों से सुस्पष्ट है कि जगत् की कोई भी वस्तु ईश्वर से खाली नहीं है। ऐसा कोई भी जड़ चेतन पदार्थ नहीं है जहाँ ईश्वर की व्यापकता न हो, उसकी सत्ता न हो।

परमेश्वर की सर्वव्यापक विद्यमानता से देश देशान्तर के पशु पक्षी चहक रहे हैं। कितना अद्भुत वर्णन उपनिषदों में किया गया है– न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकम्',भयादस्याग्निस्तपति' आदि उपनिषद् वचन भी हमें प्राप्त हैं, वह सर्वव्यापक प्रभु की कृपा का ही प्रताप है।

ईश्वर की खोज

वेद और उपनिषदादि वचनों में वर्णित ईश्वर जैसे लोकलोकान्तर की दिशाओं, उपदिशाओं में विद्यमान है वैसे ही मनुष्य के अन्दर भी विद्यमान है। उस महान सर्वव्यापक ईश्वर की सन्निधि, उपलब्धि के लिए मनुष्य ने जब जब होश सँभाला है, तब तब उसने 'इन्द्रस्य युज्यः सखा' जीवात्मा का सदा साथ रहने वाला जो मित्र परमेश्वर है, उसे ढूंढ़ने के लिए बाहरी चकाचौंध के मन्दिरों, मठों, मस्जिदों व गिरजाघरों में खूब दौड़ लगाई है। पर्वतों की ऊँची श्रेणियाँ, गहरी घाटियाँ, गुफाएँ, कैलाश के हिम खण्ड, केदारनाथ, बद्रीनाथ, श्रीनाथ, ऋषिकेश, वैष्णोदेवी, तिरुपति

आदि के देवालय भी नहीं छोड़े। काशी, प्रयाग, हरिद्वार के तीर्थ, मथुरा, वृन्दावन के सकरे गलियारों की खाक भी खूब छानी है।

खोज में असफलता

इस खोज में उन अन्वेषकों को व्यापक ईश्वर मिल गया हो, ऐसा कहने का साहस कोई नहीं कर सका है। उनके इस श्रम में जो मिला है, वह है प्राकृतिक सौन्दर्य, मठ मन्दिरों के ढाँचे, मूर्तियों की सजावट, उनकी काल्पनिक मुखाकृतियाँ, जल स्रोत, झरने, वहाँ की तड़क भड़क और लोगों की भीड़ भाड़। बहुत बार तीर्थ स्थलों में लम्बी कतारों के फंदे में ऐसे फँसते हैं कि निकलना भी कठिन होता है।

असफलता का कारण गलत स्थान चयन :

जानते हैं?मनुष्य के श्रम का यह ईश्वर प्राप्ति विषयक असफल परिणाम क्यों होता है?क्योंकि हम न समझी से ईश्वर को ढूँढते हुए गलत स्थान चुन लेते हैं। गलत स्थान का चयन, परिणाम में सुखदायी नहीं होता। गलत स्थान पर श्रम तो लगाता है, पर विश्रम= आनन्द, सुख, शान्ति, आराम नहीं दे पाता।

गलत स्थान चयन की नासमझी, मनुष्य की ईश्वर की खोज में भी है। स्मरण रखें! दृश्य जगत् में व्यापक ईश्वर मनुष्य के लिए नहीं खोया है। उसके लिए तो उसके अन्तःकरण में वर्तमान जो ईश्वर है, वह खो गया है। जिसकी खोज के लिए मनुष्य बाहर तो दौड़ रहा है और अपने अन्दर झाँकने की कोशिश भी नहीं कर रहा।

ईश्वर प्राप्ति का उचित स्थान

मठ, मन्दिर, चर्च, मस्जिद आदि ईश्वर के गलत स्थान हैं, सही स्थान मनुष्य का अपना शरीर, शरीर के अवयव, अन्तःकरण व आत्मा हैं। क्योंकि मनुष्य की आत्मा जो परमेश्वर का भान करने वाला है वह उसके अपने शरीर में है, शरीर के बाहर नहीं। ईश्वर प्राप्ति का सही स्थान बताते हुए मुण्डकोपनिषद् में कहा है–

यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्यैष महिमा भुवि। दिव्ये ब्रह्मपुरे ह्येष व्योम्न्यात्मा प्रतिष्ठितः।
मनोमयः प्राणशरीरनेता प्रतिष्ठितोऽन्ने हृदयं सन्निधाय।
तद्विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीरा आनन्दरूपममृतं यद्विभाति।।(मुण्ड. 2/2/7।।)

अर्थात् जो सर्व है, सर्ववित् है, सर्वत्र व्यापक है जिसकी महिमा भूलोकादि तथा दिव्य ब्रह्मपुर हृदय में, हृदयाकाश में प्रतिष्ठा पा रही है। जो मनोगम्य है, जो प्राण व शरीर का, नेता= संचालक है, जो अन्नादि भोगों में विद्यमान है उसे हृदय में, सन्निधाय= स्थित कर, धीराः= ज्ञानी उस प्रभु को जानकर उसका साक्षात्कार करते हैं। जिसका हृदय में अमर आनन्द स्वरूप प्रकाशित हो रहा है। उपनिषद् वचन का भाव स्पष्ट है कि ईश्वर प्राप्ति का सही स्थान हृदय है। आत्मज्ञानियों ने हृदय में ही ईश्वर का साक्षात्कार किया है और आज तक ब्रह्मा से लेकर दयानन्द पर्यन्त करते रहे हैं।

उचित स्थान होने पर भी अज्ञान बाधक

सही स्थान का परिज्ञान होने पर भी अज्ञान, अन्धकार ईश्वर प्राप्ति का बहुत बड़ा बाधक है। अन्धकार में हाथ को हाथ भी नहीं सूझता। ईश्वर प्राप्ति का अज्ञान तमस् है– राग द्वेष, दुख दर्द, हानि ग्लानि, मोह माया, मद मात्सर्य आदि। इस अन्धकार में ईश्वर का आनन्द, प्रकाश, ज्ञान आदि का मूल्य घट गया है। अमूल्य मूल्यवान् हो गया है और मूल्यवान् अमूल्य बन गया है। लोक लोकान्तर की महनीय शक्ति ईश्वर, मात्र ईश्वर शब्द रूप में सिमट गया है। ईश्वर का मानवीयकरण भी हो गया है। जिसके जयघोष हैं– हरे रामा हरे रामा, सीता राम, राधे श्याम, जय श्री कृष्ण आदि।

निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वाधार, सर्वव्यापक ईश्वर की प्राप्ति के लिए, उसकी खोज के लिए वेद, उपनिषद् आदि ग्रन्थों में अनेक उपाय, प्रकार निर्दिष्ट किए हैं। जिनमें प्रथम कल्पिक सर्वोपरि उपाय है, अपने अन्दर का अज्ञान, अन्धकार, दुरित को दूर करना।

अज्ञान निवारण आवश्यक

अज्ञान निवारण निर्देश का प्रसिद्ध परिज्ञात वेदादेश मन्त्र है–

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव।। यजु. 30/3।।

महर्षि दयानन्द ने संस्कारविधि में इस मन्त्र का एवंविध अर्थ किया है– हे सकल जगत् के उत्पत्ति कर्ता, समग्र ऐश्वर्य युक्त, शुद्ध स्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके, हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुखों को दूर कर दीजिए, जो कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ हैं, वह सब हमको प्राप्त कीजिए।

सुख जो दो प्रकार का है– एक जो सत्य विद्या की प्राप्ति में अभ्युदय अर्थात् चक्रवर्तीराज्य, इष्ट मित्र, धन, पुत्र, स्त्री और शरीर से अत्यन्त उत्तम सुख का होना और दूसरा जो निःश्रेयस सुख है कि जिसको मोक्ष कहते हैं। और जिसमें ये दोनों सुख होते हैं उसी को भद्र कहते हैं, उस सुख को आप हमारे लिए सब प्रकार से प्राप्त करिए।

महर्षि दयानन्द कृत मन्त्रार्थ से स्पष्ट है कि निःश्रेयस = ईश्वर, मोक्ष प्राप्ति में तथा अभ्युदय= लौकिक सुख की प्राप्ति में, जो दुरितानि= अज्ञान से उत्पन्न राग, क्लेशादि दुर्गुण, दुर्व्यसन व दुख रूप तमस है उन्हें हटाना नितान्त आवश्यक है।

दुरित प्रकार

यह दुर्गुण, दुर्व्यसन, दुखरूप अज्ञान, दुरित तमस् तीन कारणों से आता है–

1. दुष्ट ज्ञान – अनार्ष पुस्तकों, संस्कारहीन व्यक्तियों की संगति से दुष्ट ज्ञान उत्पन्न होता है। वह दुष्ट ज्ञान दुरित= दुर्गुणों की उत्पत्ति करता है।

2. दुष्ट गमन – मदिरालय, वेश्यालय, धूतालय आदि स्थानों में गमनागमन करने को दुष्ट गमन कहा जाता है। जिससे दुरित = दुर्व्यसन की उत्पत्ति होती है।

3. दुष्ट प्राप्ति – हिंसा, छीना झपटी, लाटरी आदि से धन प्राप्ति, दुष्ट प्राप्ति कही जाती है। जो दुरित= दुखों को उत्पन्न करती है।

इन दुर्गुण, दुर्व्यसन दुखों से उत्पन्न राग, द्वेष आदि परमात्मा के आनन्द, सुख, कृपा का पात्र व्यक्ति को नहीं बनने देते और न ही परमात्मा के स्वरूप, उसकी उपलब्धि, प्राप्ति होने के स्थान को ज्ञात होने देते हैं। ईश्वर की प्राप्ति के कथन करने वाले जितने भी वेदादि शास्त्र हैं, आप्तोपदेश हैं, वे सभी अनुपयुक्त हो जाते हैं।

राग, द्वेष का दुष्परिणाम

महर्षि कपिल ने राग,द्वेषादि से समन्वित व्यक्ति की विनष्ट दशा को व्यक्त करते हुए लिखा है–

न मलिनचेतस्युपदेशबीजप्ररोहोऽजवत्। सांख्य. 4/29।।

अर्थात् अजवत् = राजा अज के समान, मलिनचेतसि= मलिन चित्त में, उपदेशबीजप्ररोहः= उपदेश रूप बीज का अंकुर, न= नही उगता।

वचन का तात्पर्य स्पष्ट है कि राग आदि से दूषित चित्त में ज्ञान, वैराग्य, ईश्वर प्राप्ति आदि के लिए जो उपदेश, उपाय निर्दिष्ट हैं उन उपदेशों का चित्त में कोई प्रभाव नहीं होता। ईश्वर प्राप्ति के लिए यम, नियमादि अनुष्ठानों द्वारा अन्तःकरण को निर्मल, दुरितों को हटाना अनिवार्य है।

इस प्रसंग में राजा अज का उदाहरण प्रसिद्ध है। राजा अज अपनी भार्या में अत्यन्त आसक्त थे। भार्या के देहान्त होने पर बहुत विह्वल हो गये और उस वक्त आसक्ति से भार्या के अभाव में बहुत दुखी हुए। वसिष्ठ आदि ऋषियों ने उन्हें विवेक, ज्ञान प्राप्त कराने का बहुत प्रयत्न किया, पर सब व्यर्थ हुआ। क्योंकि राजा अज का चित्त विषयासक्ति से आकण्ठ निमग्न था, राग से लिप्त था। विवेक, ज्ञान, ईश्वर प्राप्ति में राग, द्वेषादि बहुत बड़ी बाधाएँ हैं, जो ईश्वर के सत्य स्वरूप को प्रकट नहीं होने देतीं।

हमारे मन में राग, द्वेषादि का गोमय भरा हुआ है, वह परमात्मा के ध्यान में नहीं बैठने देता। उत्तम गुणों,

अच्छाइयों को नहीं आने देता। मलिन मन ईश्वर के आनन्द, उसके सर्वज्ञ, सर्वव्यापक निराकारादि स्वरूप एवं उसके प्राप्ति स्थान अन्तःकरण के ज्ञान में बाधक बन बैठता है।

दुरित हटाने का फल

यजुः मन्त्र में निर्दिष्ट ईश्वर प्राप्ति की गहराई को जो ढूँढ़ेगा, वह ही ईश्वर दर्शन का साफल्य प्राप्त कर सकेगा। मन्त्रार्थ की दृष्ट गहराई को ऋषि= मन्त्रद्रष्टा, आख्यान= कथा प्रसंग मिश्रित कथन द्वारा अभीष्ट विषय प्रतिपादन में प्रीति रखते हैं। महर्षि यास्क ने इस तथ्य को इन शब्दों में व्यक्त किया है–

ऋषेर्दृष्टार्थस्य प्रीतिर्भवत्याख्यानसंयुक्ता। निरु. 10/1/10।।

ईश्वर उपलब्धि प्रकरण के कथोपकथन में यह चर्चित परिव्राट् कथा अत्यन्त उपयुक्त उदाहरण है। ईश्वर प्राप्ति के बाधक राग, द्वेषादि निवारण प्रसंग में यह भी जानना उपादेय है कि दुर्गुणादि को छोड़ना ईश्वर प्राप्ति में ही आवश्यक नहीं, अपितु शारीरिक, बौद्धिक, परसहाय्य, चतुरता, सत्यविद्या के प्रकाश, लौकिक व्यवहार आदि की उपलब्धियों में भी दुर्गुण आदि का त्याग आवश्यक है। महर्षि दयानन्द ने इस उपादेयता के परिप्रेक्ष्य में विश्वानि देव... मन्त्र का ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के ईश्वरप्रार्थनाविषय में बहुत उत्तम चिन्तन दिया है–

अस्मिन् वेदभाष्यकरणानुष्ठाने ये दुष्टा विघ्नास्तान् प्राप्तेः पूर्वमेव परासुव दूरं गमय, यच्च शरीरबुद्धिसहायकौशलसत्यविद्याप्रकाशादि भद्रमस्ति तत्स्वकृपाकटाक्षेण हे परब्रह्मन्! नोऽस्मभ्यं प्रापय,भवत्कृपाकटाक्षसुसहायप्राप्त्या सत्यविद्योज्ज्वलं प्रत्यक्षादिप्रमाणसिद्धं भवद्रचितानां वेदानां यथार्थं भाष्यं वयं विदधीमहि। तदिदं सर्वमनुष्योपकाराय भवत्कृपया भवेत्। अस्मिन् वेदभाष्ये सर्वेषां मनुष्याणां परमश्रद्धयाऽत्यन्ता प्रीतिर्यथा स्यात् तथैव भवता कार्यम्। (ऋ. भा. भू. ईश्वरप्रा. पृ. 3।।)

महर्षि के इन वचनों का तात्पर्य है कि वेदभाष्य करने के अनुष्ठान में जो दुरित रूप विघ्न हैं, वे प्राप्ति से पहले ही हमसे दूर रहें। वेदभाष्य अनुष्ठान में हमारे शरीर में आरोग्य, बुद्धि, सज्जनों का सहाय, चतुरता और सत्यविद्या का प्रकाश आदि भद्र रूप हैं वह अपनी कृपा से हे परब्रह्म! प्राप्त कराइये। आपकी कृपा के सामर्थ्य से आप द्वारा रचित जो सत्य विद्या से युक्त, प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध वेद हैं उनका यथार्थ अर्थ से युक्त वेदभाष्य सुख से मैं कर सकूँ। जो यह वेदभाष्य आपकी कृपा से सभी मनुष्यों के उपकार के लिए होये। इस वेदभाष्य में सब मनुष्यों की परम श्रद्धा पूर्वक अत्यन्त प्रीति होवे, वैसी ही आप कृपा दृष्टि करें।

महर्षि दयानन्द ने इस मन्त्र की उपादेयता समाधि द्वारा भली भाँति समझ ली थी। राग, द्वेष व कल्मष अपने लिए तथा दूसरे के लिए दोनों के लिए हानिकारक है। कल्मष युक्त व्यक्ति न अच्छा कर सकता है और न ही कलुषित व्यक्ति किसी के अच्छे कार्य को अच्छा मान सकता है। अतः महर्षि ने जहाँ परमात्मा से अपने शरीर, बुद्धि, सहाय, कौशल, सत्य विद्या के प्रकाश आदि की प्राप्ति के लिए उसकी कृपा की प्रार्थना की है, वहीं अपने वेदभाष्य के निर्विघ्न अनुष्ठान, परिपूर्णता एवं सभी प्रीति से पढ़े इसकी भी ईश्वरीय कृपा का सामर्थ्य माँगा है।

महर्षि ने इसी उद्देश्य से अपने वेदभाष्य के प्रति मण्डल, प्रति अध्याय के आरम्भ में एवं ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के आरम्भ में विश्वानि देव... मन्त्र का निर्देश किया है। व्यावहारिक सुखों, उपलब्धियों में मन की पवित्रता, राग, द्वेषादि का निवारण नितान्त अपेक्षित कर्म है।

इस प्रकार निष्कर्ष यह हुआ कि ईश्वर की भक्ति, प्राप्ति का केन्द्र हृदय गुहा है। उस हृदय गुहा को राग, द्वेषादि के अज्ञान, तमस से बचाना अनिवार्य तथ्य है। सही स्थान एवं राग, द्वेषादि से रहित निर्मल स्थान का परिज्ञान ही ईश्वरीय कृपा, ईश्वरीय आनन्द प्राप्ति में सहायक बनता है। ईश्वर की उपलब्धि अपने भीतर होती है। हमारी पहुँच का स्थान अपने भीतर है। भीतर किया हुआ प्रयास ही सार्थक होता है। इधर उधर बाहर प्राप्त करने का प्रयास सदा ही असफल रहा है, भटकना व्यर्थ है। अतः हमें अपने को केन्द्र बिन्दु बनाकर ही अपने अन्दर सर्वव्यापक ईश्वर की कृपा, ईश्वरीय आनन्द प्राप्ति का प्रयत्न करना चाहिए, यही वेदादि शास्त्रों का सार है।

सम्पर्क सूत्र : पाणिनी कन्या महाविद्यालय, वाराणसी, उ.प्र.,वायुदूत : 09680674789

गायत्रोपनिषद् में सविता सावित्री एवं अमृत–प्राप्ति

डॉ. मोक्षराज

डॉ. मोक्षराज आर्य समाज के प्रखर विद्वान और वक्ता हैं। आप का व्यक्तित्व बहुआयामी है। आर्य समाज के प्रचार–प्रसार में गहरी रुचि रखते हैं।

सहस्रवर्त्मा सामवेदः

ऋग्वेद की 21, अथर्ववेद की 9, यजुर्वेद की 101 तथा सामवेद की 1000 शाखाएँ हैं। सभी मिलाकर 1131 शाखाएँ हैं जिनके अन्तर्गत 04 संहिताएँ एक स्वर में स्वीकृत हैं। यदि सामवेद 1000 शाखाओं को केवल गान प्रकार वैविध्य एवं अनेकता से सहस्र रूप में अलंकृत किया जाता है तो फिर वेद की शाखाएँ संहिता सहित 1131 ही हैं, यह कहना मिथ्या हो जाएगा। अर्थात् सामवेद की शाखाएँ वास्तव में 1000 ही रही हैं। सामगान की विविधता से इस पक्ष में कोई दोष नहीं आता बल्कि पुष्टि होती है कि किस प्रकार 1000 रही होंगी।

सहस्र शाखाओं में सहस्रों गान का न होना इस लिए आश्चर्य जनक नहीं है क्योंकि–

1. एक सामयोनि ऋक् पर अनेक गान सम्भव होते हैं।
2. अनेक ऋचाओं पर अनेक गान पृथक्–पृथक् होता है।
3. त्रिवृत्, पञ्चदश स्तोत्र आदि में संख्याएँ बढ़ती ही हैं।
4. अनेक गान सामयोनी ऋक् पर आधारित न होकर स्तोभों पर ही आधारित होते हैं। जिन्हें 'छन्न साम' कहा जाता है।

उदाहरण जैसे कि गायत्र पर्व में गायत्री ऋक् पर केवल एक गायत्र साम मिलता है। जबकि आग्नेय पर्व में 114 सामयोनि ऋचाओं पर 180 साम हैं, ऐन्द्र पर्व में 352 ऋचाओं पर 633 साम हैं, पवमान पर्व की 119 सामयोनि ऋचाओं पर 385 साम हैं, अतः 585 यामयोनि ऋचाओं पर 1198 साम हैं। यही कारण है कि दशरात्र पर्व, सम्वत्सर, एकाह, सम, प्रायश्चित एवं क्षुद्र पर्व के रूप में विभाजित ऊहगानों की संख्या भी सहस्रों हैं। यह तो सहस्रवत्र्मा सामवेद के विषय में प्रकट हुआ है। अब गायत्र उपनिषद् के स्रोत खोजते हैं।

यद्यपि वैदिक उपनिषद् प्रमुखतया 11 हैं तथापि मद्रस पुस्कालय में 230 से अधिक हैं, तो क्या यह नया उपनिषद् गायत्र नाम से है? नहीं। कारण अग्रलिखित है।

जैमिनीय(सामवेदीय) ब्राह्मण संज्ञा सन्दर्भ–

सामवेद की तलवकार ऋषि के नाम से तलवकार शाखा प्रसिद्ध थी। उसी का नाम जैमिनीय शाखा हो गया, इसका कारण क्या रहा होगा, ज्ञात नहीं। कालान्तर में तलवकार ब्राह्मण का नाम जैमिनीय ब्राह्मण हो गया।[1]

गायत्र उपनिषद् : जैमिनीय ब्राह्मण(तलवकार ब्राह्मण) के अन्तिम भाग में जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण (तलवकारोपनिषद् ब्राह्मण) है। यह 40 अध्याय का एक भाग है। इसी का नाम गायत्र–उपनिषद् भी है।[2] इस उपनिषद् में गायत्र, गायत्री, सविता, सावित्री का विशेष उल्लेख है।

केनोपनिषद् का मूल भी यही ब्राह्मण–उपनिषद् है– गायत्र उपनिषद् के अन्तर्गत चतुर्थ अध्याय में दशमे अनुवाक् के चारों खण्ड की विषय सामग्री केनोपनिषद् के नाम से प्रसिद्ध है। अध्याय 4 की कण्डिका संख्या 18 से 21 केनोपनिषद् है। मुद्रण दोष है या ऋषियों द्वारा किया गया पाठ भेद किन्तु कुछ अन्तर दिखाई दे रहे हैं। (1) इह चेदवेदी.....विविच्य(गायत्र उपनिषद् में) विचिन्त्य(सम्प्रति प्राप्त केनोपनिषद् में)[3] (2) न तत्र चक्षुर्गच्छति.....न विघ्न(मूल गा. उप. में) न विदु (सम्प्रति केनोपनिषद् में)[4]

वेदभाष्य एवं सत्यार्थप्रकाश में महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रसिद्ध किया गायत्री मन्त्र का प्रमुख अभिप्राय

भू := कर्मविद्या[5], प्राणः यः प्राणयति चराचरं जगत् स भू : स्वयम्भूरीश्वरः[6]।

भुव := उपासनाविद्या[7], भुवरित्यानः यः सर्वं दुखमपानयति सोऽपानः[8]।

स्व := ज्ञानविद्या[9], स्वरिति व्यानः यो विविधं जगत् व्यानयति व्याप्नोति स व्यानः[10]।

तत् = इन्द्रियैरग्राह्यं परोक्षम्[11]।

सवितु := देवानां प्रसविता, प्रसूता सर्वेकामाः समृध्यन्ते, सर्वजगदुत्पादकस्य[12], सकलैश्वर्यप्रदस्येश्वरस्य[13], सर्वस्य जगतः प्रसवितुः[14]।

वरेण्यम् = अतिश्रेष्ठं[15], वर्तुमर्हम् अत्युतमं[16], स्वीकर्त्तव्यम्[17]।

भर्गो = भृज्जन्ति पापनि दुःखमूलानि तत् भर्गः[18], सर्वदोषप्रदाहकं तेजोमयं शुद्धं[19], चेतनब्रह्मस्वरूप[20]

देवस्य = प्रकाशमयस्य शुद्धस्य सर्वसुखप्रदातुः परमेश्वरस्य[21], स्वप्रकाशस्वरूपस्य सर्वैः मनीयस्य सर्वसुख प्रदस्य[22], सुखप्रदातुः[23], कमनीयस्य[24]

धीमहि = दधीमहि[25], धरेम[26], ध्यायेम[27]।

धियो = प्रज्ञा बुद्धि[28], प्रज्ञा[29], प्रज्ञा : कर्माणि वा[30]।

यो नः = सविता देव परमेश्वर, अस्माकम्

प्रचोदयात् = प्रकृष्टार्थे प्रेरयेत्[31]परमात्मानं प्राप्य ऐहिकपारमार्थिके सुखे भुञ्जीमहीत्येस्मै[32]

गायत्रोपनिषद् में सविता–सवित्री सम्बन्ध

क्र.	सविता	सवित्री	परस्पर सम्बन्ध
.1	अग्निः	पृथिव	स यत्राऽग्निस्तत्पृथिवी यत्र वा पृथिवी तदग्निः। ते द्वे योनी। तदेकम्मिथुनम्।
2	वरुणः	आपः	स यत्र वरुणस्तदापो यत्र वाऽऽपरस्तद्वरुणः। ते द्वे योनी तदेकम्मिथुनम्।।
.3	वायुः	आकाशः	स यत्र वायुस्तदाकाशो यत्र वाऽऽकाशस्तद्वायुः। ते द्वे योनी। तदेकम्मिथुनम्।।
4	यज्ञः	छन्दांसि	स यत्र यज्ञस्तच्छन्दांसि यत्र वा छन्दांसि तद्यज्ञः। ते द्वे योनी। तदेकम्मिथुनम्।।
5	स्तनयित्रुः	विद्युत्	स यत्र स्तनयिन्तुस्तद्विद्युद्यत्र वा विद्युत् तत्स्तनयित्रुः। ते द्वे योनी। तदेकम्मिथुनम्।।
6	आदित्यः	द्यौ	स यत्राऽऽदिस्तद्यौर्यत्र वा द्यौस्तदादित्यः। ते द्वे योनी। तदेकम्मिथुनम्।।
7	चन्द्रः	नक्षत्राणि	स यत्र चन्द्रस्तन्नक्षत्राणि यत्र वा नक्षत्राणि तच्चन्द्रः। ते द्वे योनी। तदेकम्मिथुनम्।।
8	मनः	वाक्	स यत्र मनस्तद्वाग्यत्र वा वाक् तन्मनः। ते द्वे योनी। तदेकम्मिथुनम्।
.9	पुरुषः	स्त्री	स यत्र पुरुषक्तत् स्त्री यत्र वा स्त्री तत्पुरुषः।ते द्वे योनी। तदेकम्मिथुनम्।।

उक्त तालिका में स्पष्ट है समस्त पृथ्वीवासी अग्नि के उपासक हैं, अग्नि के उपयोग के बिना उनका अस्तित्व सम्भव नहीं है। यही कारण है कि आचार्य यास्क ने पृथ्वी स्थानीय देवता–अग्नि को ही माना है। 34 इसमें 8 वसु(अग्नि, पृथ्वी, वायु, अन्तरिक्ष, आदित्य, द्यु, चन्द्रमा, नक्षत्राणि) वरुण, यज्ञः, मन, वाक्, पुरुष, स्त्री, स्तनयित्रु, विद्युत, आपः छन्दांसि ये सभी भौतिकाभौति तत्त्व इस सावित्री–सविता योनी में सम्मिलित हैं जो कि एक दूसरे के पूर तत्त्व हैं। उपास्य–उपासक, आधार–आधेय, जो–जिनका पदार्थ है वह सब सविता–सावित्री मिथुन की भाँति संयुक्त हैं।

आपः तत्त्व में व्याप्त जलीय, द्रवीय गुणों में जो वरणीय श्रेष्ठ तत्त्व वरुण है उसकी उपासना की जा रही है। अर्थात् साधक प्रत्येक स्पन्दनीय पदार्थों में श्रेष्ठ वरुण को साथ ही देखे पृथक् न समझे, एक पल भी उसके मिथुन सम्बन्ध से विरुद्ध न होये।

सर्वत्र गतिमान–अगतिक (एजति न एजति) तत्त्व को जानें जो आकाश जैसे सूक्ष्मतम्, व्याप्त तत्त्व में उस वायुरूप परमेश्वर का निरन्तर ध्यान करते हैं। उस आकाश–वायु मिथुन को पृथक् नहीं देखते उसमें अपनी प्रज्ञा स्थापित करते हैं।

'तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः....छन्दांसि जज्ञिरे।' अथर्ववेदादि मन्त्रसहिताओं का प्रकाश उस यज्ञस्वरूप प्रजापति से ही हुआ है तथा बिना मन्त्र के यज्ञ तामसिक कोटि का अर्थात् यज्ञीय उद्देश्य के विरुद्ध माना जाता है। अर्थात् उस स्रष्टा ब्रह्म तत्त्व में वेद नित्य ही मिथुनवत् स्थिर रहते हैं। इस रहस्य को जानने वाला ही सविता–सावित्री को समझता है। व्याप्त विद्युत तत्त्व स्तनयिन्नु से प्रकाशित होता है। कण–कण में समाये हुए आवेश वर्षा में चमकती बिजली के रूप में अपनी शक्ति दर्शन कराती है । यह प्रकट व अप्रकट स्तनयित्नु व विद्युत् एक मिथुन हैं।

द्यु–आदित्य से प्रकाशित है, उसके प्रकाशक होने की उपासना उसकी सर्वतोदृष्ट ऊर्जा–प्रकाश किरणें व दीप्तमान् तत्त्व निरन्तर करते हैं। ये परस्पर एक मिथुनवत् संयुक्त हैं। यही सविता–सावित्री सम्बन्ध है।

रात्रि का देवता अग्नि हैं किन्तु वह चन्द्रमा न होने पर दीप्ति का आधार है। चन्द्रमा समस्त नक्षत्रों में अपनी शीतल द्युति से शोभायमान होता है। नक्षत्रों की ज्योत्स्ना के साथ उसका गहरा मिथुन सम्बन्ध है। यह नाक्षत्रिक चन्द्र का सावित्री–सविता तत्त्व प्रकृति की गहराई में स्रजक साध्य (ईश्वर) की सामर्थ्य का प्रकाश करते हैं।

मन के अन्दर संकल्प–विकल्प की भी एक भाषा होती है। मन में वाणी समाई हुई है। वाक् बिना मन के अकल्पनीय है ऐसा अन्तःकरण के सूक्ष्म तत्त्वों का एकीभाव साधक को अन्तर्मुखी करता हुआ सविता–सावित्री का वरणकर्ता बना देता है।

(चोद्‌यात्) स्त्री व पुरुष के साथ परम्परा से जुड़ा स्वाभाविक धर्म है। स्त्री के आधार को प्रेरित करना प्रजनन का कारण है। यह मिथुन व द्वे योनी एक दूसरे के समान या पूरक हो जाते हैं। इन सविता व सावित्री के आधार आधेय सम्बन्ध से सुप्रसिद्ध महात्याहृति वाला गायत्री मन्त्र परिभाषित होता है।

भौतिक विज्ञानपरक संक्षिप्त अर्थ

प्रकाशित परमाणु वाला अग्नि ऊर्जा है, उष्मा है जो पृथिवी अर्थात् अप्रकाशित परमाणुओं में प्रविष्ट हो जाता है। अग्नि के ऊर्जा कण अप्रकाशित कणों में घुस जाते हैं।

आपः अर्थात् शब्द, रूप, रस, गंध, स्पर्श –पंचतन्मात्राएँ व्याप्तशील सूक्ष्म परमाणु हैं। जिन्हें उनके मौलिक स्वरूप में वरुण, एक सीमा बनाए रखता है। तन्मात्राओं को परस्पर चिपकाकर भी एक दूसरे में मिलने नहीं देता। अर्थात् उनकी मौलिकता की रक्षा करता है। दो या दो से अधिक कणों में दूरी बना के रखने वाला तत्त्व ही वरुण है।

वायु व आकाश का आधेय–आधार सम्बन्ध है। वायु वहन करने व गति करने वाला तत्त्व है जोकि आकाश व अवकाश के अनुरूप संचारित रहता है।

सारे पदार्थ जो कम्पन, आच्छादन विशेष गतिमान हैं, उन सब में आन्तरिक व वाह्य क्रियाओं का नाम यज्ञ है। वे क्रियाएँ प्रकाशित होती हैं किन्तु छन्द अप्रकाशित तत्त्व हैं।

विद्युत, सर्वत्र व्याप्त शक्ति है जोकि अत्यन्त सूक्ष्म है। वह स्तनयित्नु को वायु–मेघ–आकाश में गम्भीर घोष(ध्वनि) व प्रकाश के रूप में प्रकट करता है।

आदित्य वस्तुत : किरण है। द्यौ अत्यन्त घन वाला मण्डल है। सूर्य के बाहरी भाग में दबाव से उष्मा पैदा होकर नाभकीय संलयन से ऊर्जा बनाने वाला तत्त्व सोम है। सोम यद्यपि ठंठा तत्त्व है लेकिन ठंठे तत्त्व में उष्मा पैदा होती है, यही सोम शक्ति है। सोम से ऊर्जा का नियन्त्रण होता है। लोक में इस दिखने वाले चन्द्रमा में वही तत्त्व प्रधान है। चन्द्रमा का सोम व सूर्य का ताप संसार के सकल पदार्थों में व्याप्त होकर उन्हें स्वरूप, वृद्धि, पोषण का काम करते हैं। ये पृथक–पृथक होकर भी पदार्थों में एक साथ रहते हैं।

मन व वाक् का तथा पुरुष व स्त्री का स्वरूप सविता से प्रारम्भ होकर सावित्री तत्त्व में प्रविष्ट है। अर्थात् उष्ण तत्त्व शीतल की ओर गति करता है, जो इस भौतिक विज्ञान के माध्यम से सृष्टि में छिपे गायत्री तत्त्व के रहस्य को जानता है। वही अध्यात्मीय प्रगति से ईश्वर साक्षात्कार में सफल होता है।

सविता–सावित्री का यह सम्बन्ध और अधिक विस्तार से गोपथ ब्राह्मण में भी उल्लिखित है ।

सविता शब्द की व्युत्पत्ति व स्वरूप महर्षि दयानन्द कृत भाष्य में स्पष्ट ही है। सावित्री देवता का स्वरूप

सविता की उपासिका के सम्बन्ध में है। सवित् + अण्। सवितुः प्रेरकस्योपासिका।

अतः जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण में भूः, भुवः, स्वः तथा वरेण्यं, भर्गः, प्रचोदयात् के साथ सावित्री एवं सवितापदेन व्यवहित तत्त्वों की संगति निम्न प्रकार है–

भूः अग्निः (सविता) वरेण्यम्।

भू आपः (सावित्री) वरेण्यम्।

भू चन्द्रमा (सविता) वरेण्यम्।

अर्थात्– भूः तत् सवितुः (अग्नेः,आपः,चन्द्रस्य) वरेण्यम्।[38]

भुः अग्निः (भर्गः) देवस्य धीमहि।

भुवः आदित्यः (भर्गः) देवस्य धीमहि।

भुवः चन्द्रमा :(भर्गः) देवस्य धीमहि। अर्थात् भुवः भर्गः (अग्निः (सविता) आदित्यः (सविता) चन्द्रमा(सविता) देवस्य धीमहि।[39]

धियो यो नः (प्रचोदयात्)

यज्ञो वै प्रचोदयति। यज्ञः(सविता)प्र–चोद(छन्दांसि(सावित्री) प्रज्ञां यज्ञः प्रचोदयति। प्रज्ञां यज्ञः वेदानुसारं प्रेरयति। स्त्री च वै पुरुषश्च प्रजनयतः (प्र–चोदयात्) अर्थात्–स्वः यज्ञः धियो यो नः प्रचोदयति।

स्वः यज्ञबुद्धिः स्त्री पुरुश्च प्रजनयतः प्रचोदयतः वा।[40]।। गायत्रं ।।(परमेष्ठी प्रजापतिः, गायत्री, सविता।)

ओऽ3म्! तत्सवितुर्वरेणियोम्। भार्गोदेवस्य धीमाहीऽ 2 । धियो यो नः प्रचो 1212। हुम् आर 21 दायो आ 23451141 (स्वराः 6/पर्वाणि विकारा 3।।खि)

जो गायत्री मन्त्रोक्त सावित्री को इस प्रकार से जानता है, वह लोक पर विजय प्राप्त करता है तथा मृत्यु से पार तर जाता है[42] अर्थात् सविता–सावित्री के स्वरूप का साक्षात्कार करने वाला इह लोक व परलोक का विजयी मोक्ष का आनन्द प्राप्त करता है।

सम्पर्क सूत्र – 55/61 अलखनन्दा कॉलोनी, वैशाली नगर, अजमेर(राज.) वायुदूतः 8696429696

पाद टिप्पणियाँ

-भूमिका–जैमिनीयोपनिषदब्राह्मण–पं.भगवद्दत्त
2–सैषा शाट्यायनी गायत्र्योपनिषददेवमुपासितव्या।।–जैमिनीयोपनिषद्अध्याय4–17–2
3–जैमिनीपयोपनिषद्–अ.4,अनु.10,ख.2,म.5
4–वही–4–10–1.3
5–यजुर्वेदभाष्यमहर्षिदयानन्दसरस्वती36.3
6–सत्यार्थप्रकाशसमु.3
7–यजुर्वेदभाष्य–महर्षिदयानन्दसरस्वती36.3
8–सत्यार्थप्रकाश–3
9–यजु.भा.36.3
10–स.प्र.3
11–यजु.भा.36.3
12–वही–3.2
13–वही.36.3
14–वही. 3.35
15–वही. 3.35
16–वही. 22.9
17–वही 36.3
18–वही3.35
19–वही22.9
20–सत्यार्थप्रकाशऋ3
21–यजु.भाष्य–3.35
22–वही. 22.9
23–वही.30.2
24–वही.36.3
25–वही.3.35
26–वही.30.2
27–वही.36.3
28–वही 3.35
29–वही22.9
30–वही30.2
31–वही.3.35
32–वहीभावार्थ–22.9
33–जैमिनीयोपनिषद्ब्राह्मण(गायत्रोपनिषद्)अ.4,अनु.12,ख1,मन्त्र1–17
34–निरुक्त–7.1–2
35–ऋग्वेद–10.90.9,यजु.31.7
36–मन्त्रहीनंविधिहीनं–श्रीमद्भगवद्गीता
37–गोपथब्राह्मण–मौद्गल्यआख्यानपूर्वभागप्रपाठक–1,कण्डिका–33
38–जैमिनीयोपनिषद्–(4.28.1)अनु.12,ख.2,मन्त्र1
39–वही12.2.2
40–वही12.2.3एवं5
41–प्रकृतिसप्तगानान्तर्भूतम्गायत्राख्यंप्रथमंगानम्।
42–"__________एवांसावित्रीमेवंवेदाऽप्युनर्मृत्युंतरतिसावित्र्याएव सलोकतांजयति।"–जैमिनीयोपनिषद्ब्राह्मण4.12.2.9

संस्कृत के संवर्धन में महर्षि दयानन्द की भूमिका

डा. चन्द्रकान्त गर्जे

डा. चन्द्रकान्त गर्जे साहित्य शोधक, प्रखर वक्ता एवं शिक्षा शास्त्री हैं। वैदिक धर्म एवं संस्कृति के लिए समर्पित हैं।

भाषा एक साधन है, जिसके सहारे एक प्राणी अपने भावों, विचारों को दूसरों तक पहुँचाने का प्रयास करता है। इस दृष्टि से भाषा का अपने आप में असामान्य महत्त्व है। भाषा न केवल संस्कृति की निर्मात्री होती है, वह संस्कृति की परिचायक और संवाहक भी है।

भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार समुचे विश्व में 2800 भाषायें हैं, उनमें सबसे प्राचीन वैदिक भाषा है। कालान्तर में इसी वैदिक भाषा का संस्कृत नाम पड़ा। पाणिनी आदि व्याकरण विशारदों ने इस भाषा को व्याकरण की सीमा में आबद्ध किया। प्राचीनतम् आर्ष ग्रन्थ–वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषद्, रामायण और महाभारत आदि सभी ग्रन्थ संस्कृत में ही हैं। बौद्धों एवं जैनियों का बहुत–सा साहित्य संस्कृत में ही पाया जाता है। संस्कृत भाषा पढ़ने से भारत देश की समस्त भाषाओं का मर्म समझा जा सकता है। इस दृष्टि से भारत के सभी भाषाओं की यह जननी भी है। इतना ही नहीं, वह लैटिन, ग्रीक, फेंच आदि भाषाओं की भी जननी है। यह कहने में कोई संकोच नहीं कि संस्कृत समस्त भाषा विधान का आधार है।

धर्म का समाज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। समाज के अनुसार साहित्य की सर्जना भी होती है। सबसे प्राचीन साहित्य आर्ष ग्रन्थों में सत्य धर्म, आदर्श समाज, इसके अनुरूप साहित्य के दर्शन होते हैं। प्राचीनतम् साहित्य की भाषा संस्कृत थी। प्राचीनकाल में संस्कृत भाषा अत्यन्त संवृद्ध थी। 2000 हजार वर्ष पूर्व भारत की भाषा संस्कृत ही थी। संस्कृत भाषा एवं साहित्य का युग ईसा से 500 ईस्वी तक चलता रहा। तत्पश्चात् समय के प्रवाह में संस्कृत के सभी अंगों में गिरावट या हास्र आया। इस गिरावट या हास्र के कई कारण इतिहास के पन्नों में देखें जा सकते हैं। विदेशियों के भारत पर आक्रमण, लूटपाट, विदेशियों का शासन व प्रशासन का संस्कृत के प्रति उपेक्षा आदि कई कारणों के परिणाम स्वरूप भारत के हर क्षेत्र में परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। प्रारम्भ में अरब, तत्पश्चात् अंग्रेजों ने विजेता होने के कारण भारत की मूल भाषा संस्कृत तथा अन्य भाषाओं पर रोकथाम करने का सफल प्रयास किया। विदेशी भाषा थोपने का उनका अलग प्रयास था। भारत की विद्या, ज्ञान, विज्ञान से सम्बन्धित पुस्तकालयों की पुस्तकें अग्नि की ज्वाला में सुलगतीं गईं राख हुईं या हमाम खाने में पानी गरम करने के काम में आईं। महर्षि दयानन्द ने विदेशियों के नीति के फलस्वरूप–सामाजिक परिवर्तनों को समझा था। भारत की प्राचीन परम्परा को विध्वंश करने की प्रवृति को उन्होंने देखा था। इन परिवर्तनों को रोकना आवश्यक था। भारत में पुनश्च सांस्कृतिक

पुनरुत्थान का महत् कार्य पूर्ण करने का निश्चय सर्वप्रथम महर्षि दयानन्द ने ही किया।

महर्षि दयानन्द ने विदेशियों की नीति के फलस्वरूप सामाजिक परिवर्तनों को समझा था। भारत की प्राचीन परम्परा को विध्वंश करने की प्रवृति को उन्होंने देखा था। इन परिवर्तनों को रोकना आवश्यक था। भारत में पुनश्च सांस्कृतिक पुनरुत्थान का महान कार्य पूर्ण करने का निश्चय किसी ने किया तो, वे महर्षि दयानन्द ही थे।

महर्षि दयानन्द के काल में भारत अंग्रेजों का गुलाम था। अंग्रेजों ने राजसत्ता के कारण भारत की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता पर कुठाराघात करने का प्रयत्न शुरू किया। देश में नौकरी पाने के लिए अंग्रेजी भाषा सीखनी पड़ती थी, यह उनके राजनीति के बोल थे। ब्रिटिश शासन की भाषा अंग्रेजी बनी। अंग्रेज, यह कहने में हिचकिचाते नहीं थे कि वेद गड़रियों के गीत हैं–संस्कृत जंगलियों की भाषा। जर्मनी के विद्वान मैक्समूलर ने ईसाइयत की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने के लिए ऋग्वेद के सत्यार्थ प्रकाश को बिना समझे उसका अनुवाद अंग्रेजी में किया था। वैदिक धर्म को नीचा दिखाने का यह प्रथम और अन्तिम उद्देश्य था। मैकाले भारत की प्राचीन शिक्षा को समाप्त करने में ही तुला था। अंग्रेजों के हत प्रयासों में उनका उद्देश्य था– संस्कृत भाषा को देश के नक्शे से मिटाना और भारत की सांस्कृतिक परम्परा को विनष्ट करना। अंग्रेजी और अंग्रेजियत के बढ़ते प्रभाव पर अंकुश लगाने का युगान्तरकारी वीड़ा महर्षि दयानन्द ने उठाया था। उन्होंने संस्कृत तथा आर्य भाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए एक प्रखर आन्दोलन चलाया साथ ही वेदों की विश्व समाज में स्थापना हेतु–'वेदों की ओर लौटो' और 'संस्कृत को अपनाओ' का नारा दिया।

सम्पर्क सूत्र : 11 भोसले नगर इलायट
भोसले नगर, पुणे–410007

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नं गुप्तं धनं,
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः।
विद्या बंधुजनो विदेशगमने विद्या परा देवता,
विद्या राजसु पूज्यते न तू धनं विद्याविहीनः पशुः।।

विद्या मनुष्य की शोभा है। विद्या ही मनुष्य का अत्यन्त गुप्त धन है। विद्या भोग्य पदार्थ, यश और सुख देने वाली गुरुओं की भी गुरु है। विदेश यात्रा में विद्या कुटुम्बीजनों और मित्रों के समान सहायक होती है। विद्या ही सबसे बड़ी देवता है, हर स्थान पर विद्या की ही पूजा होती है न कि धन की। वास्तव में देखा जाय तो विद्याहीन मनुष्य पशु तुल्य है।

वेदों में पर्यावरण विज्ञान : वैश्विक पर्यावरण चेतना

(डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे लिखित महत्वपूर्ण पुस्तक)

डॉ. किशोरीलाल व्यास

डॉ.व्यास एक समाजसेवी, जनशिक्षक और वैदिक धर्म के संकल्पधर्मी अनुयायी हैं।

बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न, समाजसेवी, साहित्य, संस्कृति एवं धर्म को समर्पित, स्वनिर्मित व्यक्तित्व श्री प्रा. डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे शास्त्री समर्पित व कर्मठ आर्यसमाजी हैं। आप केवल महाराष्ट्र के ही नहीं समग्र दक्षिण भारत के शलाका पुरुष हैं।

23 अक्टूबर 1948 को रेणापूर जनपद लातूर में श्री रामस्वरूप लोखण्डे के घर जन्मे श्री चन्द्रशेखर जी ने मेरठ विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. किया तथा गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर से 'आयुर्वेद भास्कर' उपाधि प्राप्त की।

श्री लोखण्डे जी हिन्दी के समर्पित शिक्षक, प्रचारक तो हैं ही आयुर्वेदाचार्य भी हैं। आपके व्यक्तित्व के इतने अधिक पक्ष हैं कि किसी एक पर प्रकाश डालने का अर्थ है, दूसरे पक्ष से वंचित रह जाना। आपने महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा में उपदेशक के रूप में प्रचार कार्य ही नहीं किया, महाराष्ट्र के कई गाँवों में आर्य समाज की स्थापना कर सैकड़ों युवक–युवतियों को आर्य समाज की प्रगतिशील विचारधारा से अवगत कराया तथा उसमें दीक्षित किया। इस प्रकार अपने सात्विक संस्कार युक्त देशभक्तिमय वातावरण के निर्मित करने का बृहतकार्य किया जिसका महत्त्व आने वाली पीढ़ियों तक और अधिक प्रसारित होगा। आपने वेदों, उपनिषदों तथा गीता के विचारों को समाज में प्रसारित कर, सर्वत्र वैचारिक एवं संस्कारगत सुगन्ध को चारों दिशाओं में व्याप्त किया जिससे केवल वाह्य ही नहीं, आन्तरिक पर्यावरण भी शुद्ध एवं विकासमान होता रहे।

समाज में व्याप्त ऊँच–नीच के भेदभाव को दूर करने एवं अस्पृश्यता को दूर कर मानवमात्र की भावनात्मक एकता को संवर्धित किया। लोखण्डे जी ने हिन्दी एवं मराठी में दसाधिक प्रेरणाप्रद ग्रंथों की रचना कर, अपने विचारों को स्थायी बनाया। इस प्रकार लोखण्डे जी के व्यक्तित्व की सुगन्ध समाज में सर्वत्र व्याप्त हो रही है तथा आज भी अपने आस पास के वातावरण को सुरभित, सुसंस्कृत एवं संगीतमय बना रही है। ईश्वर आपको जीवेम शरदः शतम्' का वरदान दे।

वेदों में पर्यावरण विज्ञान यह श्री चन्द्रशेखर लोखण्डे जी की अत्यन्त महत्वपूर्ण पुस्तक है। यह पुस्तक आज की आवश्यकता के अनुरूप है। आज के युग में, जबकि चारों ओर 'पर्यावरण–विनाश' का आतंक छाया हुआ है, जबकि सारा विश्व इस समस्या से जूझ रहा है, चारों ओर भौतिक समृद्धि की होड़ लगी हुई है, प्रकृति के संसाधनों का अति दोहन हो रहा है, जल, थल और आकाश में पर्यावरण विनाश के कारक सर्वत्र मानवमात्र ही नहीं सारे प्राणी जगत् को पीड़ित कर रहे हैं, जबकि आज की 'भोगवादी–संस्कृति' में 'यूज एण्ड थ्रो' (उपयोग करो और फेंक दो) संस्कृति का प्राधान्य होता जा रहा है, तब, ऐसे में भारतीय संस्कृति और वैदिक धर्म ही मानवमुक्ति और त्राण का संदेश देते हैं। तेन व्यक्तेन भुंजीथाः अर्थात त्याग द्वारा परिमित भोग करो। भोगा न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः कि भोग भोगे नहीं जाते, हम स्वयं भोगे जाते हैं, अतः जीवन में सब कुछ पा जाने और विकास के ऊँचे सोपानों को छूने की लालसा में विकास को विनाश में परिवर्तित करने वाली मानवता की दौड़ पर, नैतिक अंकुश लगाने वाली वैदिक विचारधारा ही है। इसी विचारधारा का पालन–पोषण कर मानवता इस आसन्न महाविनाश में मुक्ति पा सकती है।

लगभग 112 पृष्ठों की वह पुस्तक 16 अध्यायों में विभक्त है, यथा पर्यावरण और मानव, पर्यावरण क्यों

बिगड़ रहा है, वृक्षों की कटाई आपदाओं को निमन्त्रण–जनसंख्या वृद्धि–एक समस्या, पर्यावरण सम्बन्धी वेदों की सूक्तियाँ आदि।

प्रकृति के सचेत दृष्टा एवं गहन अध्येता श्री लोखण्डे जी ने पुस्तक के लघु कलेवर में विश्वव्यापी पर्यावरण विनाश की वृहद् समस्या पर विचार कर वैदिक समाधान प्रस्तुत किया है जो अत्यन्त उपयोगी तथा व्यावहारिक है।

दरअसल, भारतीय जीवन विधान, भारतीय चिन्तन–पद्धति तथा वैदिक विचारधारा के अनुरूप पर्यावरण विज्ञान पर बहुत कम पुस्तकें लिखी गई हैं। लेखक ने एक ओर वेदों का गहन अन्तर्मन्थन कर, दूसरी ओर विज्ञान–सम्मत पर्यावरण विनाश ने तथ्यों को जुटाकर, अत्यन्त उपयोगी पुस्तक लिखी है।

सेमेटिक धर्मों के अनुसार (यहूदी, ईसाई तथा मुसलिम जो आज विश्व में बहुसंख्य हैं) संसार की सारी वस्तुएँ मनुष्य के लिए ही बनी हैं। मनुष्य संसार के केंद्र में है। अन्य प्राणी उसके निमित्त बने हैं। उनमें प्राणों का अस्तित्व नहीं है। इसी कारण मुर्गियों को, पशुओं को, मछलियों को बेरहमी से मारना तथा सहज रूप से उनका अत्यधिक भक्षण करना मान्य है। पेड़–पौधों से लकड़ी आदि प्राप्त करना, उन्हें नष्ट–भ्रष्ट कर देना– सामान्य बात है।

परन्तु भारतीय चिन्तन के अनुसार सारे पेड़–पौधों में एवं सारे प्राणियों में, एक केन्द्रीय सत्ता या चेतना का अस्तित्व है। यही चेतना मनुष्य के भीतर भी स्थित है। मनुष्य सारे प्राणियों तक इसी संवेदनात्मक चेतना का विस्तार पाता है। इसी कारण वह अकारण पेड़–पौधों को काटना, प्राणियों को मारना–हिंसा करना–वर्ज्य समझता है। सर्व प्राणी समभाव ही हमारी भारतीय जीवनशैली है। हम भारतीय प्रार्थना भी करते हैं तब केवल हमारी जाति के, हमारे धर्म के लोगों की रक्षा हो, अन्यों का विनाश हो–ऐसी बात नहीं करते। हमारी प्रार्थना होती है–सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत्।। वैदिक ऋषियों ने धरती को माता माना है– माता भूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः।।

अतः माता से प्रतियोगिता नहीं होती। माता को जीतने की इच्छा पुत्र नहीं करता। हमारी दृष्टि सदैव सहयोग और आत्मीयता की होती है। हम माता से उतना ही लेते हैं जिसमें हमारा पोषण हो। भरण हो। माता को व्यर्थ की हानि नहीं पहुँचाते। माता की रक्षा करना भारतीय संस्कृति का आदर्श है। वहीं पाश्चात्य दृष्टि भिन्न है। वे लोग प्रकृति को जीतना चाहते हैं। लूटना–खसोटना चाहते हैं। पृथ्वी की शक्तियों को नियन्त्रित करना चाहते हैं। कभी–कभी ऐसे में प्रकृति झुझला उठती है। असन्तुलित हो उठती है। मनुष्य का जीवन मुश्किल हो जाता है। पर्यावरण का विनाश होने लगता है। ऐसी ही स्थिति आज मानव जाति पर आ गई है। आज मानव जाति विकास से विनाश की ओर अग्रसर हो रही है। वायुमण्डल विषैली गैसों से भर गया है, जल के स्रोतों में प्रदूषित विष व्याप्त होता जा रहा है, धरती रसायनों से पट रही है। अम्ल वर्षा हो रही है, कहीं सूखा तो कहीं बाढ़ आ रही है, विश्वमण्डल का तापमान बढ़ रहा है, ग्लेशियर पिघल रहे हैं, सुनामी जैसी विनाशकारी घटनायें लगातार हो रही हैं– भयंकर व्याधियों से मानवजाति त्रस्त है– कहीं ऐसा होना नहीं बचा है जहाँ की वायु, जल व धरती शुद्ध है। जंगल लगातार काटे जा रहे हैं। ऐसे में प्रकृति और मौसम का सारा चक्र और सन्तुलन ही बिगड़ गया है। इस सब का दुष्परिणाम मानव जाति भोग रही है और आगे भोगेगी।

आने वाली पीड़ित उक्त पीढ़ियाँ पूछेगीं–मनुष्य तुमने यह क्या किया?तुमने हमें कैसी धरती, कैसा आकाश सौंपा है?

पर्यावरण का अर्थ ही है– चारों ओर से आच्छादित करने वाला। हमारे चारों ओर का पर्यावरण ही हमारे शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक स्वास्थ्य को संचालित करता है।

हमारे प्राचीन ऋषि–मुनि प्रकृति के संरक्षण की बात जानते थे। वे जानते थे कि पंचमहाभूतों से यह संसार और यह शरीर बना है। अतः इन पंचमहाभूतों का शुद्ध होना अनिवार्य है। ओऽम् इन्द्र जीव सूर्य जीव देवा जीवा जीव्या समह्म्। सर्वमायुर्जीव्यासम्। प्रकृति के साथ मनुष्य खिलवाड़ न करे। वह प्राकृतिक तत्त्वों का दुरुपयोग न

करे। उन्हें नष्ट न करे। वह युद्ध द्वारा विनाश न रचे। शान्ति से रहे। सहयोग करे। ओऽम् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति पृथिवी शान्ति रापः शान्तिरोषधयः शान्तिः.......... । (यजुर्वेद–36,17)

वेदों में प्रार्थना की गई है कि समय पर वर्षा हो। समय पर फसल पके। 'निकामे निकामे न पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो न कल्पताम्" ।। यजु.22.22 ।।

लोखण्डे जी लिखते हैं– "पिछले 100 वर्षों में कार्बन डाई आक्साइड (सीओ2) का अनुपात 25प्रतिशत से अधिक बढ़ा है। कोयला, पेट्रोल, डीजल, कारखानों से उठ रही अत्यन्त दूषित वायु सीओ 2 सहित अन्य अनेक विषैली गैसे वातावरण में बढ़ती जा रहीं हैं। इससे पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ रहा है। परिणाम स्वरूप बर्फीले पहाड़ पिघल रहे हैं, समुद्र का पानी, सतह से 100 से.मी. बढ़ गया है। (पृ. 43)

इस तरह पुस्तक में पर्यावरण के हर घटक–वायु, जल, पृथ्वी, वन आदि पर लेखक ने सप्रमाण चर्चा की है। वेदों में इन्हीं घटकों को बनाए रखने सम्बन्धी मन्त्र खोज कर दिए गए हैं। पशु–पक्षियों तथा वनस्पतियों के अन्तःसम्बन्धों की भी व्याख्या की गई है। धरती पर निवास करने वाले हर प्राणी को जीने का अधिकार है। उनके अधिकारों की रक्षा होनी चाहिए। सकारण वन्य जीवों का आखेट नहीं करना चाहिए, न उन्हें मारना चाहिए।

लेखक के अनुसार, जंगलों को पृथ्वी के फुफ्फुस या फेफड़े कहा गया है। पृथ्वी इन्हीं जंगलों की वनस्पतियों से साँस ग्रहण करती है। इन्हीं से बादल बनते हैं, वर्षा होती है और वर्षा जल को इन पेड़–पौधों के पत्ते शाखाएँ कई महीनों तक धारण कर धीरे–धीरे छोड़ते हैं। इसी कारण घने वनों से 'सदानीरा' नदियाँ निकलती हैं। फिर भूजल पृथ्वी की सतह पर लाने का कार्य जड़ें करती हैं। जब पुनः वर्षा होती है। वर्षा का यह चक्र सतत् चलता रहता है। यदि जंगल समाप्त हो जाएँ तो वर्षा–चक्र टूट जाएगा। सूखा पड़ जाएगा।

वेदों, उपनिषदों व गीता में कुछ वृक्षों को अत्यन्त पवित्र माना गया है। इन्हें काटना वर्जित है। जैसे पीपल, वट वृक्ष, गूलर, आँवला, ढाल, तुलसी आदि। मानव समाज के लिए गाय, बैल, हिरण, व्याघ्र, हाथी आदि ही नहीं अन्य अनेक अनगिनत पशु–पक्षी उपयोगी हैं। मनुष्य के अतिरिक्त जितने प्राणी हैं वे अपने स्वभाव और कर्मों के अनुसार सृष्टि–चक्र को आगे बढ़ाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।' (पृ. 60) पर मनुष्य बुद्धिमान होकर भी निसर्ग–क्रम भंग कर रहा है। ऐसा कर वह अपरिमित दुख भोग रहा है। अपने ही जाल में फँसकर छूटने के लिए छटपटा रहा है।" मनुज का कर्तव्य है कि सृष्टि को सुन्दर बनाए।

खुद जिए और गैरों के काम आएँ।
सृष्टि को सुन्दर बनाना मनुज के हाथ में है।
वह उसे मरघट बनाए, या कि मधुवन बनाए।

विद्वान लेखक ने पुस्तक में वेदों के प्रमाण देते हुए अपनी बात सिद्ध की है। पुस्तक की भाषा सरल व बोधगम्य है। वैज्ञानिक विषय का बड़ा अच्छा विवेचन किया गया है। निश्चित ही लोखण्डे जी की यह पुस्तक विद्यार्थियों एवं अध्यापकों के लिए उत्तम मार्गदर्शक बनेगी साथ ही अध्ययन–मनन–चिन्तन का नया द्वार खोलेगी। लेखक बँधाई के पात्र हैं।

समाप्त

हमें वैसा आचरण और व्यवहार करना चाहिए जिससे हम सौ वर्ष की आयु पूरी कर वृद्धावस्था तक स्वस्थ जीवन जी सकें। हमारे पुत्र भी हमारे सामने पिता बन जाएं तब तक हम स्वस्थ रहकर पूर्ण आयु भोग सकें, बीच में नष्ट न हो जाएं – यजुर्वेद

नारी उत्थान में महर्षि दयानन्द और आर्य समाज का योगदान

पं. दीनानाथ शास्त्री

पं.दीनानाथ आर्य जगत् के प्रसिद्ध संस्कारवेत्ता, वेदधर्मी और स्वामी सत्यप्रकाश प्रतिष्ठान के मन्त्री हैं। लेखक और सम्पादक के रूप में भी आप का अमूल्य अवदान है।

प्रस्तुत लेख के शीर्षक में तीन उत्कृष्ट एवं उपयोगी बातें समाई हुई हैं। प्रथम, नारी की स्थिति, द्वितीय महर्षि दयानन्द का योगदान, तृतीय, उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज और आर्यों का योगदान। आर्य समाज के संस्थापक युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं–

"आर्यावर्त के राजपुरुषों की स्त्रियाँ धनुर्वेद अर्थात् युद्धविद्या भी अच्छी प्रकार जानती थीं। क्योंकि न जानती होती तो कैकेई आदि दशरथ आदि के साथ क्योंकर जा सकतीं और युद्ध कर सकतीं? इस लिए ब्राह्मणी को सब विद्या और क्षत्रिया को सब विद्या तथा राजविद्या विशेष, वैश्या को व्यवहार विद्या और शूद्रा को पाकादि सेवा की विद्या अवश्य पढ़नी चाहिए। जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म, शिल्प, गणित और अपने व्यवहार की विद्या न्यून से न्यून अवश्य पढ़नी चाहिए। वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, वैद्यक, गणित व शिल्प विद्या तो अवश्य ही सीखनी चाहिए।"

(स.प्र. तृतीय स. पृ. 70)

अर्थात् पुरुषों की तरह ही स्त्रियों को समस्त विद्याओं को पढ़ने–पढ़ाने, सुनने–सुनाने का अधिकार महर्षि दयानन्द ने दिया है और इसे दृढ़ता प्रदान करने हेतु आर्य समाज के नियम में भी कहा है–

"वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सभी आर्यों का परम धर्म है।" इस नियम के माध्यम से भी सभी नारी और पुरुष को समान अधिकारी बताया है। इतना ही नहीं अपितु महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के चौथे समुल्लास में मनुस्मृति का उद्धरण देते हुए लिखा है–

वेदादानधीत्य वेदौ वा वेद चापि यथाक्रमम्। अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत।।(मनु.3/211)

"जब यथावत् ब्रह्मचर्य(में) आचार्यानुकूल वर्तकर धर्म से चारों, तीन या दो अथवा एक वेद को सांगोपांग पढ़ के जिसका ब्रह्मचर्य खण्डित न हुआ हो वह पुरुष व स्त्री गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे।"

"गृहस्थ के दो अंग हैं। एक स्त्री दूसरा पुरुष। पुरुष धन कमाता है और स्त्री उसको धर्म के अनुसार व्यय करती है। पुरुष बाहर का काम देखता है और स्त्री भोजनादि का प्रबन्ध करती और 'जन्म से पाचवें वर्ष तक बालकों को माता........शिक्षा करे।'(स.प्र.स.2)

महर्षि दयानन्द ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के मन्त्र–मथीद्यदीं विभृतो मातरिश्वा गृहेगृहे........भृगवाणो विवाय।|ऋग्वेद 1/71/4) की व्याख्या के अनन्तर भावार्थ में लिखा है–"विद्या ग्रहण के बिना स्त्रियों को कुछ भी सुख नहीं होता जैसे अविद्याओं का ग्रहण किए हुए मूढ़ पुरुष उत्तम लक्षण युक्त विद्वान स्त्रियों को पीड़ा देते हैं वैसे विद्या शिक्षा से रहित स्त्री अपने विद्वान पतियों को दुख देती है।"

इसी प्रकार ऋग्वेद के सातवें मण्डल–प्र शुक्रैतु देवी मनीषा अस्मत्सुतष्टो रथो न वाजी के भावार्थ में लिखा– सब कन्या, विदुषियों से ब्रह्मचर्य नियम से सब विद्या पढ़े।

यजुर्वेद का मन्त्र है–'इडे रन्ते हव्ये काम्ये चन्द्रे......सुकृतं बूतात्।।(यजु.8/43)

का भावार्थ है "जो विद्वानों से शिक्षा पाई हुई स्त्री हो वह अपने–अपने पति और अन्य सब स्त्रियों को यथायोग्य उत्तम कर्म सिखलावे।"

यजुर्वेद के 10वें अध्याय मन्त्र 26 में "स्योनासि सुषदासि.......योनिमासीद।।" का भावार्थ करते हुए ऋषि लिखते हैं–राजाओं की स्त्रियों को चाहिए कि सब स्त्रियों के लिए न्याय और अच्छी शिक्षा देवें और स्त्रियों का

न्यायादि पुरुष न करें क्योंकि पुरुषों के सामने स्त्री लज्जित और भययुक्त होकर यथावत् बोल व पढ़ ही नहीं सकती।

इस प्रकार पदे–पदे महर्षि दयानन्द ने नारी शिक्षा पर बल दिया है। इसका प्रभाव आज सरकार 'महिला आयोग' के रूप में सर्वविदित है। यदि माता पढ़ी न हो तो अपने बच्चों को कदापि नहीं पढ़ा सकती। आरम्भ से पाँचवें वर्ष तक बालक का शरीर और मन दोनों बड़े कोमल होते हैं। इस लिए इस अवस्था में शिक्षा देना लोहे के चना चबाने जैसा कठिन है। यही कारण है कि इस कठिन अवस्था का शिक्षा का भार माता को सौंपा गया है। जिस प्रकार घर की छत उठाने की अपेक्षा उसकी नींव बनाना कठिन होता है और नींव जितनी सुदृढ़ होती है उतना घर भी मजबूत होता है। इस गृहस्थाश्रम में पुरुष की अपेक्षा स्त्री का काम बहुत कठिन है। पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय जी कहते हैं–

"आवश्यक है कि स्त्रियों की शिक्षा का प्रबन्ध पुरुषों की शिक्षा से उत्तम हो।" ऋषि दयानन्द के प्रादुर्भाव के पहले हमारे देश में कन्याओं को पढ़ाना तो दूर रहा लोग पैर की जूती समझते रहे हैं। पूर्ववर्ती समाज सुधारक कवि और मनीषीगण कहते रहे हैं–

"जा तन की छाईं पड़त अन्धो होत भुजंग।कबिरा तिनकी कौन गति जो नित नारी के संग।।

इतना ही नहीं प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रामचरित मानस' में –ढोल गंवार शूद्र पशु नारी सकल ताड़ना के अधिकारी। और अधम ते अधम अधम अति नारी, आदि जैसे वाक्य और पुराणों के वाक्य–'स्त्री शुद्रो न धीयताम्।' तथा 'जिह्वाछेदोऽस्य कर्तव्यो' आदि प्रचलित थे। महर्षि दयानन्द ने मनु के वाक्यों के माध्यम से सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है–सन्तुष्टो भार्यया भर्ता.........कल्याणं तत्र वै ध्रुवम्।। मनु.3/60) अर्थात् जिस कुल में भार्या से भर्ता और पति से पत्नी अच्छी प्रकार से प्रसन्न रहती है उस कुल में सब सुख, सौभाग्य और ऐश्वर्य निवास करते हैं। जहाँ कलह होता है दौर्भाग्य और दारिद्रय स्थिर होता है।"

कुछ मूर्ख लोग समझते हैं कि स्त्रियों को पढ़ाने की प्रथा हमने अंग्रेजों से सीखी है। पहले काल में स्त्रियाँ पढ़ाई नहीं जाती थीं। उनका कथन है...........(प्रश्न) क्या स्त्री और शूद्र भी वेद पढ़े?जो ये पढ़ेंगे तो हम फिर क्या करें?और इनके पढ़ने में प्रमाण भी नहीं है। जैसे–स्त्री शूद्रो नाधीयतामिति श्रुतेः। अर्थात् स्त्री और शूद्र न पढ़ें यह श्रुति है। (उत्तर) सब स्त्री और पुरुष अर्थात् मनुष्य मात्र को पढ़ने का अधिकार है। तुम कुएँ में पड़ो और यह श्रुति तुम्हारी कपोल कल्पना से हुई है। किसी प्रमाणिक ग्रन्थ की नहीं । और सब मनुष्यों के वेदादि शास्त्र पढ़ने, सुनने के अधिकार का प्रमाण यजुर्वेद के 36वें अध्याय में दूसरा मन्त्र है–

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्याम् शूद्रायचार्याय च स्वाय चारणाय।।

(यजु.26/21)

"परमेश्वर कहता है कि जैसे मैं सब मनुष्यों के लिए इस कल्याण अर्थात् संसार और मुक्ति के सुख देने हारी ऋग्वेदादि चारों वेदों की वाणी का उपदेश करता हूँ वैसे तुम भी किया करो। यहाँ कोई प्रश्न करे कि 'जन' शब्द से द्विजों का ग्रहण करना चाहिए क्यों स्मृत्यादि ग्रन्थों में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ही को वेदों का पढ़ने का अधिकार लिखा है स्त्री और शूद्रादि वर्णों को नहीं।' (उत्तर) देखो, परमेश्वर स्वयं कहता है कि हमने ब्राह्मण, क्षत्रिय, (आर्याय) वैश्य(शूद्राय) शूद्र और (स्वाय) अपने भृत्य वा स्त्रियादि (अरणाय) और अति शूद्रादि के लिए भी वेदों का प्रकाश किया है। ....परमेश्वर की बात अवश्य मननीय है, इतने पर भी जो कोई इसको न मानेगा वह नास्तिक कहलाएगा। नास्तिको वेदनिन्दकः क्या ईश्वर शूद्रों का भला नहीं करना चाहता है?क्या ईश्वर पक्षपाती है?

जहाँ कहीं 'निषेध' किया है उसका अभिप्राय यह है कि जिसको पढ़ने पढ़ाने से कुछ भी न आवे वह निबुर्द्धि और मूर्ख होने से शूद्र कहा जाता है। उसका पढ़ना पढ़ाना व्यर्थ है और जो स्त्रियों के पढ़ने का निषेध करते हों वह तुम्हारी मूर्खता, स्वार्थता और निर्बुद्धिता का प्रभाव है। देखो वेद में कन्याओं के पढ़ने का प्रमाण है–ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।। (अथर्व.11/24/3/18)

प्रश्न– क्या स्त्री लोग भी वेदों को पढ़ें?(उत्तर) अवश्य, देखो सूत्रादि स्रौत में–इमं मन्त्रं पत्नी पठेत्। अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मन्त्र को पढ़े।

बहुत से लोग समझते हैं कि स्त्रियाँ पढ़कर स्वतन्त्र हो जाती हैं और उनका चाल चलन बिगड़ जाता है। परन्तु यह कहना भूल है। विद्या से चाल चलन सुधरता है बिगड़ता नहीं। कितने शोक की बात है कि मूर्खता के कारण हमारे देश की भोली स्त्रियाँ दृष्ट, छली साधुओं, स्यानों, ओझाओं तथा अन्य कपटी मनुष्यों के फेर में अपना माल असबाब तथा सतीत्व नष्ट कर बैठती हैं।" इन सब की एक मात्र औषधि यही है कि स्त्रियों को विद्या पढ़ाई जाय।

वस्तुतः जब तक स्त्रियाँ धर्मात्मा और पढ़ी–लिखीं नहीं होंगी उस समय तक हमारे घर 'भूत के डेरे' रहेंगे। क्योंकि धर्मात्मा और शिक्षित स्त्रियाँ ही 'घर की देवियाँ' हैं। धर्म शास्त्रों में जहाँ लड़कों के लिए यज्ञोपवीत, शिक्षा तथा गायत्री मन्त्रोपदेश का विधान है वहाँ लड़कियों के लिए भी यज्ञोपवीत, शिक्षा तथा गायत्री उपदेश का विधान है। सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में लिखा है– "आठ वर्ष के हों तभी लड़कों को लड़कों की और लड़कियों को लड़कियों की पाठशाला में भेज देवें।"

कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणाम्।। मनु.7/152)

अर्थात् इसमें राजनियम और जाति नियम होना चाहिये कि पाचवें व आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रख सके। पाठशाला अवश्य भेंज देवें, जो न भेजें वह दण्डनीय हो। प्रथम लड़कों का यज्ञोपवीत घर में और दूसरा पाठशाला में आचार्य कुल में हो।"

उक्त बातें महर्षि दयानन्द की मान्यताओं और उनके द्वारा दी गई नारी उत्थान की प्रेरणाओं के सम्बन्ध में ध्यान आकृष्ट करती हैं।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के निर्माता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र महर्षि दयानन्द के योगदान, देश भक्ति और समाज सुधार के सम्बन्ध में ('मित्रविलास' लाहौर के 19 जून 1885 ई. के अंक में प्रकाशित।") लिखते हैं कि "इन दोनों (महर्षि दयानन्द और केशवचन्द्र सेन) पुरुषों ने प्रभु की मंगलमयी सृष्टि का कुछ भी विघ्न नहीं किया। ..... जन्मपत्री की विधि के अनुग्रह से जब तक स्त्री–पुरुष जियें एक तीरघाट एक मीरघाट रहें। बीच में वैमनस्य और असन्तोष के कारण स्त्री व्यभिचारिणी, पुरुष विषयी हो जाएँ। परस्पर नित्य कलह हो। शान्ति स्वप्न में भी न मिले। वंश न चले यह उपद्रव इन लोगों से नहीं सहे गए। विधवा गर्भ गिराए, पण्डितजी या बाबू साहब यह सह लेंगे वरंच चुपचाप उपाय भी करा देंगे। पाप को नित्य छिपावेंगे, अन्ततोगत्वा स्वधर्म से निकल ही जाएँ तो सन्तोष करेंगे, पर विधवा का विधि पूर्वक विवाह न हो। फूटी सहेंगे आँजी न सहेंगे। इस दोष को इन दोनों ने निःसन्देह दूर करना चाहा।"

महर्षि दयानन्द ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त ऋषियों मुनियों को ही प्रमाण मानते हैं। उन प्राचीन ऋषियों के अनेक ग्रन्थों के प्रमाण देकर वे नारी शिक्षा तथा उनके सामाजिक उत्थान के लिए हमें प्रेरित करते हैं। उनकी इसी भावना को महर्षि द्वारा काकड़वाड़ी मुम्बई में 1875 ई. में स्थापित आर्य समाज ने आगे बढ़ाया। आर्य समाज के जहाँ कहीं वार्षिकोत्सव या कार्यक्रम होते हैं उनमें 'महिला सम्मेलन' अवश्य होता है। कन्याओं के लिए अनेक गुरुकुलों के माध्यम से तथा शिक्षण संस्थाओं के माध्यम से स्त्रियों की उन्नति की है। शासन में भी जहाँ आर्य समाज का व्यक्ति होता है अपने सामर्थ्य से कार्य करता है। बालविवाह आदि के लिए शारदा एक्ट भी हरिविलास शारदा की देन है। जो महर्षि के अनुयायी रहे।

सुप्रसिद्ध उपन्यासकार आचार्य चतुरसेन लिखते हैं– केवल पण्डित ही नहीं बहुत से हिन्दू बुजुर्ग मुस्लिम संस्कृति और रीतियों को मानते थे। पंजाब केशरी लाला लाजपतराय के पिता मुंशी राधाकिशन नमाज पढ़ा करते और रोजा रखा करते थे। ऐसे ही वे दिन थे जब लाहौर में आर्य समाज की स्थापना हुई। सन् 1877 ई. में लाहौर में सर्वप्रथम आर्य समाज स्थापित हुआ।.....बाद में जब 1883 ई. में महर्षि दयानन्द की मृत्यु हुई तब लाहौर के आर्य

जनों ने उनकी स्मृति में "दयानन्द एंग्लोवैदिक कालेज" खोलने का आयोजन किया और महात्मा हंसराज ने अपनी सम्पूर्ण आकांक्षाएँ दमन करके अपना जीवन कालेज को प्रदान किया।

जालन्धर में कन्या महाविद्यालय की स्थापना सन् 1896 ई. में जब लाला देवराज ने की, तब पंजाब की स्त्री जाति की दशा अत्यन्त दीनहीन थी। स्त्रियों को पढ़ाना–लिखाना पाप समझा जाता था और आमतौर पर लोगों में यह विश्वास था कि पढ़ी–लिखीं लड़कियाँ जल्दी विधवा हो जाती हैं। उनके बिगड़ जाने का तो भय था ही। स्त्री शिक्षा होनी चाहिए या नहीं, इस विषय पर उन दिनों बड़े जोरशोर से शास्त्रार्थ हुआ करते थे। इन शास्त्रार्थों में स्त्री शिक्षा के हिमायतियों को बहुधा लाठियाँ खानी पड़ती थीं। गाली गुफता तो साधारण बात थी। ऐसे ही समय लाला देवराज ने साहस पूर्वक पुत्री–शिक्षा का यह भारी कार्य आरम्भ किया। सन् 1944 में टाण्डा(उ.प्र.) में बाबू मिश्रीलाल ने आर्य कन्या पाठशाला की स्थापना की तो वहाँ के मुसलिम बहुल आबादी के विरोध के बावजूद प्रशंसा करने वाले भी कम नहीं थे। आज यह विद्यालय देशभर में आदर्श माना जाता है। जहाँ चारों वेदों से नारी शिक्षा से सम्बन्धित मन्त्रों को अर्थ सहित संगमरमर की शिल्प पर उत्कीर्ण कराकर यशस्वी प्रबन्धक श्री आनन्द कुमार आर्य ने लगवाया है जो दर्शनीय और अनुकरणीय है। यहाँ कभी महात्मा गाँधी, नेहरू व सरोजनी नायडू भी पधारी थीं।

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला लिखते हैं– "देश की महिलाओं, पतितों तथा जात–पाँत के भेदभाव को मिटाने के लिए महर्षि दयानन्द तथा आर्य समाज से बढ़कर इस नवीन विचारों के युग में किसी भी समाज ने कार्य नहीं किया। आज जो जागरण भारत में दीख पड़ता है उसका प्रायः सम्पूर्ण श्रेय आर्य समाज को है।"

हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'मिश्र बन्धु विनोद' में ग्रन्थकर्ता मिश्र बन्धुओं ने लिखा है–"सत्ताइस वर्षों में आर्य समाज ने बहुत बड़ी उन्नति कर ली है और इस समय लाखों मनुष्य, पंजाब, संयुक्त प्रान्त, राजपुताना, मध्य प्रदेश आदि में आर्यसमाजी हैं। इस मत की विशेष उन्नति पंजाब में हैं। पंजाबियों ने थोड़े दिन हुए कांगड़ी में गुरुकुल स्थापित किया जिसमें प्राचीन प्रथा के अनुसार शिक्षा दी जाती है। दयानन्द एंग्लोवैदिक कालेज भी महर्षि जी के अनुयायिओं ने स्थापित किया हुआ बहुत ही उत्तमता से चल रहा है। उसमें बहुत बड़ी संख्या में विद्यार्थी अध्ययन कर रहे हैं, इसके अतिरिक्त बहुत से स्कूल, अनाथालय, कन्या पाठशाला, समाज द्वारा स्थापित और परिचालित हो रहे हैं।"

मुंशी प्रेमचन्द कहते हैं–"गुरुकुलाश्रम को नया जन्म देकर आर्य समाज ने शिक्षा को सम्पूर्ण बनाने का महान उद्योग किया है। शायद ही मुल्क में कोई ऐसी शिक्षा संस्था हो जिसने कौम की पुकार का इतने जवाँमर्दी से स्वागत् किया हो।"

स्त्री जाति राजनीति में कैसे भाग ले, इस विषय में महर्षि दयानन्द यजुर्वेद के दशवें अध्याय के कई मन्त्रों में स्पष्ट भाव दर्शाते हैं कि एक देश का राजा जिस प्रकार कीर्ति युक्त विद्या में प्रवीण धनुर्वेद तथा अथर्ववेद में पारंगत हो उसी प्रकार सत्य के अनुष्ठान विद्या न्याययुक्त व्यवहार की अपेक्षा की जाती है। वैसे ही सभापति व राजा की पत्नी से भी अपेक्षा है। राजा पत्नी का विशेष उत्तरदायित्व है कि वह समाज का नेतृत्व करे। साम्राज्ञी को ओजस्वी, राष्ट्रप्रेमी, सामर्थ्यवान तथा सूर्य के समान न्याय और विद्या का प्रकाश फैलाना चाहिए। स्त्रियों को वाद–विवाद में निपुण, विभिन्न विषयों में पारंगत युद्ध विद्या, समर संचालन में दक्ष होनी चाहिए। ऋग्वेद के पाँचवें मण्डल के 46वें सूक्त के 7 व 8 वें मन्त्र में स्पष्ट उल्लेख है कि रानी वर्ग को स्त्रियों का न्याय करने में वैसे ही कुशल होना चाहिए जैसे राजा पुरुषों का न्याय करता है। यजुर्वेद के दशवें अध्याय का 29वाँ मन्त्र साम्राज्ञी को मन्त्रणा व सहायता के लिए महिला परिषद् की स्थापना की व्यवस्था करता है और रानी से यह अपेक्षा करता है कि रानी वर्ग सूर्य, विद्युत तथा अग्नि के समान पक्षपात रहित होकर समस्त नारी वर्ग के जीवन के अन्धकार का नाश करता हुआ न्याय करे।

महर्षि दयानन्द ने स्त्री पुरुष को समान रूप से समस्त अधिकार दिए हैं। आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध दार्शनिक साहित्यकार एवं गवेषक पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय की जन्म शती पर आर्य समाज लखीमपुर(खीरी) उ.प्र. के 'स्मृति

लेखा' में जीवन–वृत्त में लिखा है–

"जुलाई सन् 1904 ई.में बिजनौर गवर्नमेन्ट स्कूल में अध्यापक पद पर नियुक्त हो गई और अपनी पूज्या माताजी के साथ आर्य समाज बिजनौर में रहकर अध्यापन कार्य करते रहे। सन् 1904 ई. में यहीं अपनी पत्नी श्रीमती कलादेवी का यज्ञोपवीत संस्कार आर्य समाज बिजनौर के उपप्रधान पं. चतुर्भुज जी के द्वारा सम्पन्न कराया। शायद यह प्रथम महिला थीं जिनका यज्ञोपवीत हुआ। आर्य समाज बिजनौर के प्रधान सरकारी अभियन्ता बाबू धरणीधर दास ने लाहौर से प्रकाशित अंग्रेजी पत्र 'आर्य पत्रिका' में इस विषय में लेख प्रकाशित कराया जिसका तात्पर्य था स्त्रियों को यज्ञोपवीत नहीं पहनना चाहिए। इसके उत्तर में उपाध्याय जी ने अपने लेख 'आर्य पत्रिका' में तथा जालन्धर से प्रकाशित महात्मा मुंशीराम के सम्पादकत्व में 'आर्य मुसाफिर' 'आर्य गजट' आदि में यज्ञोपवीत के पक्ष में हिन्दी, अंग्रेजी तथा उर्दू में लेख लिखे। स्मरणीय है कि यहीं आर्य समाज बिजनौर में ही आर्य जगत् के शिरोमणि संन्यासी, चारों वेदों के अंग्रेजी अनुवादक व वैज्ञानिक स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती का जन्म 24 अगस्त 1905 ई. को हुआ।

कन्याओं और महिलाओं को शिक्षा से किस प्रकार वंचित करने की परम्परा चल पड़ी थी इसका एक और मर्मस्पर्शी घटना का उल्लेख कर रहा हूँ। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में संस्कृत विभाग में प्रथम महिला कल्याणीदेवी (जो मौलवी महेश प्रसाद की बेटी थी) का प्रवेश एम. ए संस्कृत विषय में महामना मदन मोहन मालवीय जी के विशेष हस्तक्षेप पर हुआ था। अन्यथा काशी के पण्डित किसी महिला का संस्कृत पढ़ने का समर्थन कैसे कर सकते थे कि लड़की होकर कैसे संस्कृत और वेद पढ़ेंगी।

कालान्तर में आर्य समाजियों के अदम्य पुरुषार्थ से अनेकानेक कन्याओं के विद्यालय खुले, जहाँ से अनेक कन्यायें पण्डिता बनीं, जिनमें परम विदुषी प्रज्ञादेवी(वाराणसी) डॉ. सावित्रीदेवी(बरेली) एवं डॉ. शान्तिदेव बाला (लखनऊ) माधुरी रानी(सम्पादिका अवनी, वाराणसी) आदि अतिप्रसिद्ध हुईं। इनकी कई पुस्तकें भी प्रकाशित हुईं। इसी क्रम में सुश्री नन्दिता, सुश्री सूर्याजी(वाराणसी) आदि का नाम बड़े गौरव के साथ लिया जाना चाहिए।

आर्य समाज के प्रखर प्रचार–प्रसार के बाद भी पौराणिक जगत् आज भी नारी को यदाकदा अपमानित कर देता है । यह पुरानी रूढ़िवादिता का प्रदर्शन शीर्षस्थ पौराणिक संन्यासियों, मनीषियों द्वारा होता रहता है। सम्भवतः अप्रैल 1994 ई, की बात है, पुरी के शंकराचार्य ने सुप्रसिद्ध लेखिका अरुन्धती राय को सभा स्थल से बाहर जाने को कह दिया था, क्योंकि स्वतिवाचन(वेद मन्त्रों का पाठ) किया जाना था। जिस पर आर्य जगत् की विदुषी माता शन्नोदेवी(भुवनेश्वर) ने शास्त्रार्थ करने के लिए ललकारा और उस समय 'जी' चैनल तथा 'बीबीसी' टीवी चैनलों पर खूब दिखाया गया। माता जी द्वारा यज्ञ और संस्कार करते दिखाया तो शंकराचार्य को अन्ततः झुकना पड़ा था।

ऐसी ही एक घटना 1986 की है जब शंकराचार्य (ज्योतिपीठाधीश्वर) ने सती प्रथा को वैदिक बताते हुए समर्थन किया था। तब आर्य जगत् के प्रकाण्ड विद्वान डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री(स्वामी सत्यप्रकाश के शिष्य) ने शास्त्रार्थ के लिए ललकारा और शास्त्रार्थ मेरठ में होना तय हुआ। अन्ततः शंकराचार्य से शास्त्रार्थ तो नहीं हुआ किन्तु वैदिक प्रमाणों से परिपूर्ण डॉ. ज्वलन्तजी का शास्त्रार्थ हेतु तैयार लेख टैक्ट माला के रूप में 'सती प्रथा वेद विरुद्ध' नाम से आर्य प्रतिनिधि सभा उ.प्र. लखनऊ ने प्रकाशित किया जो खूब सराहा गया। इसी प्रकार 2 नवम्बर 2002 ई. को वाराणसी में पाणिनी कन्या महाविद्यालय में प्राचार्या मेधा बहनजी द्वारा काशी के विद्वत् परिषद् तथा पण्डित सभा की उपस्थिति में 'शास्त्रार्थ परिचर्चा' आयोजित की गई। जिसका विषय था 'नारी को वेद पढ़ने का अधिकार'। मुख्य वक्ता के रूप में मुझे (पं. दीनानाथ शास्त्री) तथा अध्यक्षता प्रो. धर्मवीर, मन्त्री परोपकारिणी सभा को

चुना गया। इस कार्यक्रम को 'आजतक' टीवी ने दिनभर दिखाया, जिसमें काशी की उक्त सभाओं के विद्वानों को मानना पड़ा कि वेद पढ़ने का अधिकार नारी तथा सभी को है। हम लोगों ने वेदों के प्रमाणों आदि के अतिरिक्त 'राम चरित मानस' की नवधा भक्ति के माध्यम से भी सिद्ध किया था कि 'शबरी' 'राम' से मिलने से पहले वेद पढ़ी थी जो कि शूद्रा और नारी भी थी, जिसे 'राम' ने स्वयं स्वीकृति दी।

प्रसिद्ध अन्तरिक्ष वैज्ञानिक कल्पना चावला, सुनीता विलियम्स आदि अनेकानेक नाम हैं, जो दयानन्द और आर्य समाज के आन्दोलन के कारण आगे आईं। आज स्त्रियाँ प्रत्येक क्षेत्र में आगे निकल रही हैं। इन सब की उन्नति में परोक्ष–अपरोक्ष रूप से आर्य समाज का योगदान है।

पूज्य स्वामी सत्यप्रकाश कृत अंग्रेजी वेद अनुवाद के प्रथम खण्ड में प्राचीन ऋषिकाओं के सविस्तार से नाम परिचय सहित विवरण मिलता है जिनमें यह भी दिया गया है ऋषियों की तरह ये ऋषिकाएँ भी मन्त्रद्रष्टा तथा कई ब्रह्मवादिनी ऋषिकाएँ हैं। यथा–लोपमुद्रा, रोमशा, विश्ववारा आंगिरसी, शश्वती, अपाला, यमी, श्रद्धा, वसुकपत्नी घोषा, सूर्या, इन्द्राणी, उर्वशी सरमा, जूहू, वागाम्भणी, पौलोमी, शची इत्यादि हुई हैं।

पूज्य स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती जी 'आर्य समाज सिद्धान्त और प्रगति' में लिखते हैं– "वैदिक काल की तीन देवियाँ प्रसिद्ध हैं।(तिस्रो देविः)– भारती, इला, और सरस्वती। ऋग्वेद के मन्त्र–आनो यज्ञ भारती (ऋग्वेद. 10/110/8) में जो 'भारती' शब्द है उस पर महर्षि यास्क निरुक्त में लिखते हैं–भरत आदित्यस्तस्य भाः अर्थात् भरत नाम सूर्य या आदित्य का है। जैसे चाँद की रोशनी चाँदनी(ज्योत्स्ना) होती है उसी प्रकार भरत की 'भा' या रोशनी भारती है। सूर्य का आलोक ही 'भारत' है इसकी ज्योति ही भारती है(यास्क निरुक्त 8/13) इसी दृष्टिकोण से हमारा देश भारत है। ज्ञान का आलोक, सूर्य का प्रकाश (किसी ऐतिहासिक पुरुष के नाम से नहीं) और हमारी संस्कृति भारती है।

शतपथ ब्राह्मण में लिखा है– स हैष सूर्यो भर्त्तः(4/6/7/21) अतः तस्य भा–ऋग्वेद के उक्त मन्त्र का अर्थ है–हमारे यज्ञ में 'भारती अर्थात् भरत की 'भा' (आदित्य की दीप्ति) शीघ्र आवे। 'इडा' और मनुष्य के समान संज्ञान रखती हुई तीनों देवियाँ इस सुखकारी अर्हि (कुशा) पर बैठें । उत्तम कर्म करने वाली 'सरस्वती' भी बैठे। यज्ञ में तीनों देवियों का स्वागत् है।"

सम्पर्क सूत्र : एच.ए.एल–63, कोरबा, मोती नगर, अमेठी,उ.प्र.
वायुदूत. 08004858413

मननशील प्राणी को (प्रभु प्राप्ति के) मार्ग में कोई अड़चन नहीं आती। परमात्मा का मनन करने से जीव प्रतिष्ठा सहित विराजते हैं, वे प्रकट में विश्वास करते हैं(पंथों के अभिमान या बाह्याडम्बर से दूर रहते हैं) मननशील व्यक्ति आनन्द और उल्लास में जीवन पथ तय करता है, इसका सम्बन्ध यथार्थ धर्म(सदाचार, परोपकार आदि सद्‌गुण) से होता है इसीलिए तो कहा है कि निरंजन परब्रह्म का नाम इतना महत्वपूर्ण है कि बस मननशील काम नही जानता है – श्री जपुजी साहिब

कृतित्व और व्यक्तित्व खण्ड

महाराष्ट्र के आर्य लेखकों की परम्परा में डॉ.लोखण्डे

डा. भवानीलाल भारतीय

महान् सृजनधर्मी डा. भवानीलाल भारतीय हिन्दी के प्रख्यात साहित्यकार, शिक्षाशास्त्री, आर्य जगत् के विश्व प्रसिद्ध गवेषक व इतिहासकार हैं।

पंजाब की भाँति महाराष्ट्र(तत्कालीन बम्बई प्रान्त) के प्रबुद्ध वर्ग भी महर्षि दयानन्द की प्रगतिशील शिक्षाओं से प्रभावित थे। न्यायाधीश महादेव गोविन्द रानाडे, गवर्नर की कौन्सिल के सदस्य गोपालराव हरिदेशमुख, महादेव मोरेश्वर कुण्टे तथा जगन्नाथ शंकर सेठ आदि ने महर्षि की शिक्षाओं को स्वीकार किया था। महर्षि दयानन्द के दिवंगत होने के पश्चात् गोपालराव हरिदेशमुख ने महर्षि के व्यक्तित्व एवं कार्यों पर एक प्रभावशाली शोध प्रबन्ध लिखा था। पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर की वेद विषयक ग्रन्थ रचना से सभी परिचित हैं। मैंने स्वरचित आर्य लेखक कोश में अनंत गणेश धारेश्वर नामक एक महाराष्ट्रीय लेखक का प्रथम बार परिचय दिया जो हैदराबाद में रहते थे। उन्होंने अंग्रेजी में उच्चकोटि के वैदिक साहित्य का प्रणयन किया था। वे 'आत्मा' के नाम से लिखते थे।

दयानन्द कालेज अजमेर के यशस्वी प्राचार्य दत्तात्रेय वाब्ले मूलतः महाराष्ट्र के निवासी थे। उन्होंने अनेक विचारोत्तेजक ग्रन्थ लिखे हैं। हरि सखाराम तुंगार ने सर्वप्रथम मराठी में ऋषि का जीवनचरित लिखा था। उनके पुत्र डॉ. देवदत्त तुंगार का लेखन भी महत्वपूर्ण है। चन्द्रभानु सोनवड़े वेदालंकार गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक थे। उन्होंने हिन्दी गद्य को आर्य समाज की देन पर पी.एच.डी की थी। यह लेखकों की परम्परा स्व.डॉ. कुशलदेव शास्त्री तथा हमारे बीच विद्यमान चन्द्रकान्त गर्जे तक चली आ रही है। इस प्रोज्ज्वल परम्परा में चमकते नक्षत्र की भाँति दीप्तिमान हैं प्रा. चन्द्रशेखर लोखण्डे ।

महाराष्ट्र के लातूर जिले के रेणापुर में जन्मे चन्द्रशेखर की सम्पूर्ण शिक्षा उत्तर भारत में हुई। गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर से विद्याभास्कर करने के पश्चात् उन्होंने वाराणसी से शास्त्री तथा मेरठ विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए किया। आयुर्वेद में उनकी रुचि रही तथा महाविद्यालय ज्वालापुर ने विद्यामार्तण्ड की मानद उपाधि प्रदान की। पेशे से शिक्षक रहे डॉ. लोखण्डे ने जहाँ एक ओर साहित्य सृजन में नूतन मापदण्ड स्थापित किये वहाँ सामाजिक कार्यों में भी पूरा योगदान दिया। अनेक सभा संस्थाओं में सक्रिय भाग लेने के साथ–साथ भूकम्प पीड़ितों की सहायता जैसे मानवीय सेवा कार्य करने में आगे रहे। राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार का कार्य उन्होंने मुम्बई हिन्दी विद्यापीठ के तत्वावधान में किया।

सक्रिय कार्यकर्ता होने के साथ–साथ वे सफल लेखक भी हैं। उनके स्फुट लेख तो विभिन्न प्रत्र पत्रिकाओं में निरन्तर प्रकाशित होते रहते हैं। वे मराठी तथा हिन्दी दोनों भाषाओं में अधिकार पूर्वक लिखते हैं। 'महर्षि दयानन्द संक्षिप्त चरित्र व विचार धन' उनकी मराठी रचना है जो ऋषि दयानन्द के जीवन तथा उनके विचारों का सटीक परिचय देती है। गद्य की भाँति काव्य रचना में भी उन्हें नैपुण्य प्राप्त है। 'मुट्ठी भर तूफान' उनकी ऐसी ही काव्यकृति है जो व्यंग्य तथा तीखी व्यंजनशैली में आधुनिक जीवन में आई विद्रूपता तथा विसंगतियों पर तीव्र प्रहार करती है।

तथापि उनकी कालजयी शोधकृति है–'हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास'। वह कालखण्ड भी कैसा था जब हैदराबाद के निजाम उस्मान अली ने स्वतन्त्र भारत की सर्वोच्च सत्ता को ललकारा और हिन्दू बहुमत वाले

अपने राज्य को स्वतन्त्र रखने की घोषणा की। यह तो सरदार पटेल जैसे मनस्वी राजनीतिज्ञ की नीतिमत्ता ही थी कि एक साधरण पुलिस एक्शन ने सत्ता के मद में मत्त मीर उस्मान अली का गर्व चूर्ण कर दिया और हैदराबाद के हवाई पत्तन पर वह सरदार की अगवानी करने के लिए हाथ जोड़ कर खड़ा रहा। इस रोमांचक इतिहास की अनेक जानी–अनजानी घटनाओं का लेखा जोखा यह ग्रन्थ प्रस्तुत करता है। हैदराबाद में तत्कालीन एजेन्ट जनरल श्री के.एम मुन्शी ने अपने संस्करणों में उन दिनों की हलचल का रोचक वृतांत दिया है।

वस्तुता हैदराबाद में क्रान्ति लाने का श्रेय आर्य समाज को है जिसने 1939 में प्रबल सत्याग्रह आन्दोलन के द्वारा निजाम के साम्प्रदायिक तथा अत्याचारपूर्ण शासन को खोखला कर दिया था।

डॉ. लोखण्डे की लेखनी ने अभी विश्राम नहीं लिया है। उनकी अनेक पाण्डुलिपियाँ प्रकाशन की प्रतीक्षा में हैं। वे दयानन्द सिद्धान्त एवं मंतव्य कोश नाम से अपूर्वकोश के सम्पादन में संलग्न हैं। जिसमें स्वामी जी के सिद्धान्त, विचार तथा मन्तव्य विवेचित होंगे। हम इस कर्मण्य पुरुष के शतायु होने की कामना करते हैं।

सम्पर्क सूत्र – 3/5 शंकर कालोनी, श्रीगंगानगर, राजस्थान

दूरभाष : 01542466299

धैर्य यस्य पिता क्षमा च जननी शान्तिश्चिरं गेहिनी,
सत्यं मित्रामिदं दया च भगिनी भ्राता मनः संयम्।
शय्या भूमितलं दिशोऽपि वसनं ज्ञानामृतं भोजनम्,
प्रेते यस्य कुटुम्बिनो वद सखे कस्माद् भयं योगिनः।।

धैर्य जिसका पिता है, क्षमा जिसकी माता है, लम्बे काल तक साथ देने वाली शान्ति जिसकी स्त्री है, सत्य जिसका मित्र है, दया जिसकी बहन है, मन का संयम जिसका भाई है, भूमि ही जिसकी शय्या है, दिशायें ही जिसके वस्त्र हैं और ज्ञान रूपी अमृत का पान करना ही जिसका भोजन है, हे मित्र! जिस योगी के ऐसे कुटुम्बीजन हैं, उसे संसार में किसी से भय नहीं होता है।

आ यो धर्माणि प्रथमः ससाद ततो वपूंषि कृणुषे पुरूणि।
धास्युर्योनिं प्रथमः आ विवेशा यो वाचमनुदितां चिकेत।।

जो मनुष्य पूर्वजन्म में धर्माचरण करता है, वह (अगले जन्म में भी) अनेक मानव शरीर धारण करने योग्य होता है। वह अपने कर्मानुसार पुनः गर्भ में प्रविष्ट होता है और वह उस वाणी से ज्ञान प्राप्त करता है, जो अभाषित होती है।

सब के मित्र डा. चन्द्र शेखर लोखण्डे

पं. आत्मानन्द शास्त्रीं

पं. आत्मानन्द शास्त्रीजी डॉ. चन्द्रशेखर जी के बालसखा हैं, आप आर्य जगत् के उच्चकोटि के विद्वान हैं। वेद प्रचार और सामाजिक कार्यों में गहरी रुचि है।

व्यक्ति के कर्म व्यक्ति.के व्यक्तित्व व कृतित्व को महनीयता के श्रेणी में खड़ा कर देते हैं। कोई नहीं जानता कि आज पैदा होने वाला बच्चा कल कितना महान बन सकता है। ईश्वर की कृपा, व्यक्ति के प्रयत्न, पूर्व जन्म के संस्कार, गुरुजनों की सदृइच्छा और माता–पिता का संकल्प तथा तप–त्याग इतने कारक जब समान दिशा में एक सरल रेखा पर आ जाते हैं तो व्यक्ति मानवीय उत्कृष्टता के उस उच्चतम शिखर पर पहुंचता है जिसकी संकल्पना न माता–पिता कर पाते हैं और न ही मित्रगण। ऐसे ही एक उदाहरण सरल, सहज और सजग व्यक्तित्व हैं डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे।

भारत वर्ष की स्वतन्त्रता के बाद सन् 1948 में माता त्रिवेणी बाई और पिता श्री स्वरूप लोखण्डे के घर में बालक चन्द्रशेखर का जन्म हुआ। आप का निवास स्थान रेणापूर, जिला लातूर था। बालक चन्द्रशेखर की प्रारम्भिक शिक्षा घटकेश्वर गुरुकुल में हुई। प्रारम्भिक शिक्षा के उपरान्त पिताजी ने पं. नरेन्द्र जी को पत्र लिखा– "मैं असमर्थ हूँ और बालक को गुरुकुल में पढ़ाना चाहता हूँ। आप महाविद्यालय ज्वालापुर में बच्चे की निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था कराइए।"

पं. नरेन्द्रजी ने त्वरित कार्रवाई की और पं. प्रकाशवीर शास्त्री जी को पत्र लिखकर इस बालक की निःशुल्क शिक्षा का प्रबन्ध गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में कराया। गुरुकुल से अनुमति मिलने के उपरान्त विमोह और व्यामोह से अलग पिताश्री रामस्वरूपजी ने अपने एक मित्र के साथ चन्द्रशेखर को गुरुकुल में भेज दिया।

अब पौध का आरोपण सही सजल क्षेत्र में हो गया था। अब इसके आरोहण में कोई बाधा नहीं थी। क्यों कि तत्कालीन गुरुकुल वह पुण्य भूमि होते थे जहाँ जाकर लौहतुल्य बालक गुरु की ज्ञानाग्नि में तपकर सुवर्ण ही नहीं कुन्दन बन जाया करते थे। इसी तपोमयी पुण्यभूमि पर 1960 में प्रविष्ट होकर गुरुवर्य आचार्य नन्दकिशोरजी की विशिष्ट छत्रछाया में रहकर बारह वर्षों में 1972 तक विद्याभास्कर, आयुर्वेद भास्कर तथा सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी की शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण की और बाद में मेरठ विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए परीक्षा पास की। इसके उपरान्त यशवन्तराव चौहाण महाराष्ट्र मुक्त विद्यापीठ जिला नासिक से बी.एड की उपाधि प्राप्त की। शिक्षा सुदीकार्ध तक चलने वाला ऐसा सत्रयाग है जो मृत्यु पर्यन्त समाप्त नहीं होता। चन्द्रशेखर जी की शिक्षा भी आमरण सत्रयाग है। उपाधियाँ इस याग की गरिमा के समक्ष तुक्ष्य प्रतीत होती हैं।

डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे ने शिक्षा के उपरान्त जहाँ लेखन, वेदों का प्रचार–प्रसार और आर्य समाज के क्षेत्र में आग्रणी भूमिका निभाई वहीं पर उन्होंने समाजसेवा के क्षेत्र में आगे बढ़कर ऐसे मानवता के कार्य किये जो आने वाली पीढ़ी के लिये प्रेरणा के स्रोत्र बन गये हैं। डॉ. लोखण्डे के द्वारा किये गए कतिपय प्रमुख कार्यों की चर्चा हम इस लेख में संक्षिप्त रूप में कर रहे हैं। लेकिन इसके पूर्व लातूर में आये भूकम्प में आर्य समाज कोलकाता के योगदान की चर्चा करना आवश्यक प्रतीत होता है।

भूकम्प में आर्य समाज कोलकाता का योगदान— 30 सितम्बर 1993 के प्रातः 4 बजे जनपद लातूर के किल्लारी और आस पास के 52 गाँवों में जबरदस्त भूकम्प आया। कुछ ही क्षणों में गाँव के गाँव खण्डहर में बदल गए। 32 हजार के करीब लोग इस प्रकृति के प्रकोप से मृत्यु के जबड़े में समा गए। हजारों नागरिक घायल हो गए। कई हजार लोगों को मलबे के नीचे से निकाला गया उन्हें उपचार हेतु अस्पतालों में भेजा गया। भूकम्प का समाचार जब आर्य समाज कलकत्ता वासियों ने सुनी तो शीघ्र ही मैंने अपने परम मित्र डॉ. चन्द्रशेखर से सम्पर्क किया। तब वे आर्य समाज रामनगर ,लातूर के मन्त्री थे,उनसे जब पता चला कि किल्लारी क्षेत्र में भूकम्प के कारण जानमाल का बेहिसाब नुकसान हुआ है तब हमारे कोलकाता आर्य समाज के मन्त्री राजेन्द्र जायसवाल ने एक बैठक बुलाकर सहायता के लिए पहले पत्र भेजकर जानकारी लेने का निश्चय किया। 3 अक्टूबर 1993 को हुई इस बैठक में सभी ने भूकम्प पीड़ितों की सहायता के लिए राशि इक्ट्ठा करने का निश्चय किया और यहाँ से पं. ओमप्रकाश विद्यावाचस्पति को किल्लारी भेजने का निश्चय हुआ । इस कार्य में श्रीराम आर्य की पहल से 15 हजार रुपये की राशि इक्ट्ठी की गई। यह राशि रामनगर के मन्त्री डॉ. लोखण्डे के नाम भूकम्प पीड़ितों के लिए भेजी गई।

कुछ दिन बाद पं. ओमप्रकाश विद्यावाचस्पति भी स्वयं लातूर गए। उन्होंने डॉ. लोखण्डेजी के साथ मिलकर भूकम्प पीड़ितों को नगद रकम, बर्तन, कम्बल, साड़ियाँ, कपड़े, श्वेटर आदि बांटने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

डॉ. लोखण्डे जी के 18/11/1993 के पत्र के अनुसार 15 हजार की सहायता भूकम्प पीड़ितों में बांटी गई। उन पीड़ितों की सूची कोलकाता आर्य समाज को प्राप्त हुई थी। उनमें विस्तार से आर्य समाज कोलकाता द्वारा भेजी गई सहायता का उल्लेख है। वे इस पत्र में लिखते हैं—

मन्त्री जी

आर्य समाज कोलकाता..

....अब तक किल्लारी मंगरूर, कवठा, हाडोली, नांदुर्गा, सास्तूर, नदीहत्त रणा, गुग्गल गाँव, मदनसुरी, कारला, मुदगड, लिम्बाका, हासलगन, पेटसांगवी, होली इत्यादि गाँवों में यज्ञ के साथ–साथ कपड़े, बर्तन, नगद राशि, अनाज, जूते, चप्पल, सब्जियाँ आदि बांटने का कार्य किया गया। आप के आर्य समाज ने जो सहायता की है उसके लिए शतशः धन्यवाद।

चन्द्रशेखर लोखण्डे

मन्त्री, आर्य समाज, रामनगर, लातूर(महा.)

जब महाराष्ट्र सरकार ने सहायता कार्य अपने हाथों में लिया तब डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डेजी ने एक अत्यन्त उपयोगी कार्य अपने हाथ में लिया। वह था— शान्ति यज्ञ अभियान का। उन्होंने और हमारे आर्य समाज के पुरोहित पं. ओमप्रकाश विद्यावाचस्पति के साथ मिलकर भूकम्प पीड़ित गाँवों में वहाँ के नर–नारियों के साथ शान्ति यज्ञ का आयोजन किया। अनाथ बच्चों के लिए भी कोलकाता आर्य समाज ने पं. चन्द्रशेखरजी को पत्र लिखकर कहा था कि इस भूकम्प में जो बच्चे अनाथ हो गए हों आर्य समाज कोलकाता उनके जीवन सवांरने की व्यवस्था करेगा।

श्रीमान मन्त्री, आर्यसमाज कोलकाता

8/10/1993

श्री डॉ. चन्द्रशेखरजी

आर्य समाज कलकत्ता का प्रस्ताव है कि अगर कुछ परिवार ऐसे हों जिनमें केवल अनाथ बच्चे–बच्चियाँ रह गए हों तो आर्य समाज कलकत्ता अपने खर्चे पर लगभग 10 बच्चे–बच्चियों के गुरुकुलों में रहने और पढ़ाई की पूरी व्यवस्था की जिम्मेदारी लेने को तैयार है। पत्रोत्तर अवश्य दें।

भवदीय

मन्त्री, आर्य समाज कलकत्ता

इस तरह आर्य समाज कोलकाता ने प. चन्द्रशेखर जी लोखण्डे के माध्यम से किल्लारी भूकम्प में यथाशक्ति सहायता करने का प्रयास किया है और वह सफल भी हुआ है। मेरे सहपाठी और परम मित्र चन्द्रशेखर ने इसमें बड़ा सहयोग दिया है। वे सैद्धान्तिक और क्रियाशीलता दोनों दृष्टियों से सफल कार्यकर्ता हैं। उन्होंने लगातार चार मास तक किल्लारी भूकम्प में देशभर से आने वाली सहायता का वितरण सुचारू रूप से किया। उनके साथ उनका पुत्र स्व. सुमन्त भी कन्धे से कन्धा मिलाकर सहायता कार्य करता रहा था।

अन्य कार्यक्षेत्र– अध्ययनान्तर उपलब्ध ज्ञान के वितरण का जो संकल्प उपनयन संस्कार में गुरुवर्य ने हस्तांजलि में जल डालकर हाथ पकड़कर पात्र में जल डलवाकर कराया था उसकी सिद्धि के लिए जय क्रान्ति महाविद्यालय लातूर में प्राध्यापक पद पर नियुक्त हुये और निरन्तर अपना कर्तव्य पालते हुये विद्यापिपासु छात्रगण को विद्यामृत का पान कराकर विद्या से आपीन करते रहे। कर्तव्य पालन की दृढ़ता से सारे विद्यालय में सदैव सब के प्रिय रहे। गुरुकुल में पढ़ते हुये आयुर्वेद भास्कर उपाधि का प्रयोग आप ने गाँव–गाँव में जाकर असहायों, निर्धनों की चिकित्सा सेवा निःशुल्क करते रहे। परोपकार ही वह पुण्यमय चन्दन है जो स्वयं को भी दूसरों को भी शीतलता व सुगन्धि प्रदान करता है। परोपकारमय चिकित्सा कार्य से आप ने अपनी यश काया में खूब विस्तार किया। प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा महाराष्ट्र में भी आपने वर्षों तक 'महोपदेशक' के रूप मे प्रचार कार्य करते हुये आर्य समाज, महर्षि दयानद, वेद माता और धरती माता की दुन्दुभि बजाते रहे हैं।

अध्ययन–अध्यापन, चिकित्सा के साथ–साथ आप लेखनी के माध्यम से भी वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार में संलग्न रहे हैं। आप की सशक्त लेखिनी से प्रसूत ग्रन्थरत्नों ने जहाँ हिन्दी साहित्य के कलेवर को गरिमा प्रदान की है वहीं वैदिक सिद्धान्त, आर्य समाज एवं राष्ट्रवाद को प्रखरता प्रदान की है। आप ने जिन महनीय ग्रन्थों की रचना की वे उपयोगी और प्रेरणाप्रद हैं। सभी ग्रन्थ महनीय, स्तुत्य, संग्रहणीय एवं स्वाध्याय योग्य हैं। इनमें विश्लेषणात्मक तथ्यों से परिपूर्ण सुपाठ्य सामग्री संग्रहीत है।

पठन, लेखन, प्रचार–प्रसार एवं अध्यापन का कार्य करते हुये आप ने अपने भगीरथ प्रयत्न से 1985 में महर्षि दयानन्द बलिदान शताब्दी, 1984 में हैदराबाद मुक्ति संग्राम स्वर्ण जयन्ती सम्मेलन तथा 2002 में वैदिक महासम्मेलन कराया। इन सभी कार्यक्रमों की सुव्यवस्था करके आप ने जहाँ अपनी प्रबन्ध योग्यता का परिचय दिया वहीं पर आर्य संस्कृति के प्रचार–प्रसार के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत किया। हम आप की कर्तव्यपरायणता, प्रबन्धन क्षमता, लेखन–कौशल, अध्यापक के गौरववर्धन का भूरिशः अभिनन्दन करते हैं और कामना करते हैं कि आप इसी प्रकार समाज की शताधिक वर्षों तक सेवा करते रहे और समाज आप के निर्देशन में उच्चतम बुलन्दियों को छुयें।

सम्पर्क सूत्र : आर्य समाज कोलकाता
19विधान सरणी, कोलकाता

गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते न महत्योऽपि सम्पदः ।
पूर्णेन्दु किं तथा कनष्कलंको यथा कृशः।।

अच्छे गुणों की सभी जगह पूजा होती है। गुणहीन मनुष्य के पास यदि धन के भण्डार भी हों तो भी उसे आदर–सम्मान नहीं प्राप्त होता। बहुत थोड़े से प्रकाश वाला, दाग–धब्बों से रहित दूज के चाँद को जिस प्रकार पूजा जाता है, क्या पूर्णिमा के चन्द्रमा को वैसा सम्मान प्राप्त होता है?

डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे : एक कृति

डा. सुरेन्द्र सिंह कादियाण

मुजफ्फरनगर उ.प्र. में जन्मे डा. कादियाण आर्य जगत् के प्रसिद्ध लेखक, सम्पादक और पत्रकार हैं। आर्य समाज के प्रति गहरी निष्ठा और आर्य समाज को एक नये दौर में ले जाने के लिए कटिबद्ध हैं।

डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे से मेरा व्यक्तिगत परिचय नहीं रहा। लेकिन उनके निकट सम्पर्क में रहने वाले उनके सहपाठियों, मित्रों व सहयोगियों ने अपने अनुभवों व संस्मरणों के आधार पर उनके बारे में जो लिखा है, उनका परिचय देने सम्बन्धी जो पत्रक तैयार किया गया है तथा जो साहित्य उन्होंने लिखा है उसका अध्ययन अवलोकन कर इस निष्कर्ष पर पहुँचना सहज सुगम है कि वस्तुतः वे एक कृति व्यक्तित्व हैं, एक कर्मयोगी हैं, एक विरल आदर्श हैं, एक श्रेष्ठ आर्यसमाजी हैं। उनकी कर्मठता, उनकी समर्पित भावना, उनकी एक निष्ठता, उनकी लगन और सक्रियता अनुकरणीय है। आर्य समाज में ऐसे व्यक्तियों का जब अभाव खल रहा हो तब नई पीढ़ी को ऐसे उदीयमान नेतृत्व का मिलना निश्चय ही आह्लादकारी है। उनकी पुस्तक 'हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास' मेरे संग्रह में है जिसे पढ़कर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि सरस्वती की साधना किस बुलन्दी पा जा कर उन्होंने की है। खोज पूर्वक तलस्पर्शी स्वाध्याय का परिणाम है यह पुस्तक। यद्यपि इस विषय पर पं. जगदेवजी, पं. नरेन्द्रजी, पं. क्षितीशजी आदि स्वनामधन्य लेखक अपनी लेखनी वर्षों पूर्व उठा चुके हैं लेकिन इस बासी विषय को शोध–पत्र के रूप में प्रस्तुत कर तरोताजा, आकर्षक और प्रभावशाली बनाना निश्चिय ही करिश्माई कार्य है। जिसके लिए वे साधुवाद के पात्र माने जा सकते हैं। इस पुस्तक के कारण आर्य जगत् में वे चर्चित ही नहीं हुये हैं बल्कि सुधी पाठकों की ढेर सारी बधाइयाँ भी उनकी झोली में अनायास पड़ी हैं। यह उनके लिए ही नहीं बल्कि आर्य जगत् के लिए गौरव की बात रही है।

आर्य समाज की वर्तमान स्थिति को लेकर मैं भले ही निराश नहीं रहा हूँ लेकिन अधिक उत्साही और आशावादी भी नहीं हूँ। ऐसी स्थिति में जब मैं उन लोगों को देखता हूँ जो अपनी व्यावसायिक गतिविधियों और व्यस्तताओं के कारण आर्य समाज के लिए दिन में दो चार घण्टे भी नहीं निकाल पाते। आर्य समाज को छोड़िये बल्कि प्रातः सायं की सन्ध्या के लिए भी एक–एक घण्टा निकालना दुश्वार है तो अपवाद रूप में उन्हीं लोगों के बीच में से, व्यस्तता का बहाना बनाकर, आर्य समाज के लिए जब कोई कमरकश के उठता है तो आशा की एक किरण टिमटिमाती दृष्टिगोचर होती है। पं.लेखराम जी ने आर्य समाज में वाणी और लेखनी से निरन्तर संघर्ष करने वाली जिस पीढ़ी का स्वप्न सजोया था, वह पीढ़ी कितनी तैयार हो पाई है? यदि यह पीढ़ी तैयार हो पाती तो एन्ड्रूज जैक्सन ने ज्ञान की जिस अग्नि के प्रसार की भविष्यवाणी एशिया, यूरोप, अफ्रीका, अमेरिका महाद्वीप के सन्दर्भ में की थी वह भविष्यवाणी झूठी न पड़ती, सत्य सिद्ध होती। इस अभाव की पीड़ा का एहसास अपने दिल में सजोकर जो गिनती के लोग आर्य समाज के लिए कार्य कर रहे हैं उनमें डॉ. लोखण्डे भी एक हैं। शिक्षा सेवा मे कार्यरत रहते हुये भी उन्होंने महाराष्ट्र, कर्नाटक व आन्ध्रप्रदेश के लगभग 500 गाँवों में आर्य समाज के माध्यम से समाज सुधार की अलख जगाई। धर्म के नाम पर पलने वाले अन्धविश्वास और पाखण्ड को मिटाने का प्रयास किया। भारतीय संस्कृति का प्रशस्तिगान किया, राष्ट्रीय एकता का पथ प्रशस्थ किया, अस्पृश्यता निवारण और जात–पाँत के अहम पर कुठाराघात किया तो इसी का अनुकरण अपने जीवन को वे लोग धन्य क्यों नहीं कर सकते जो अपने को ऋषि–भक्त मानते हैं अथवा आर्य कहलवाते हैं? ऋषिवर दयानन्द के ऋण से अनृण होने के लिए और अपने को आर्य सिद्ध करने के लिए केवल आर्य समाज का सदस्य बन जाना ही तो पर्याप्त नहीं है। ऋषि दयानन्द ने घर–परिवार छोड़ा और आर्य समाज ने एक लम्बी संघर्ष पूर्ण यात्रा करके अपना अस्तित्व बनाया। यश प्राप्त किया।

तो क्या बिना त्याग और संघर्ष का जीवन जी के हम एक सच्चा आर्यसमाजी होने का दावा कर सकते हैं? इसका सटीक उत्तर आप के पास नहीं डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के पास ही हो सकता है।

रामनगर की एक अनाम–सी आर्य समाज में मन्त्री पद पर रहकर डॉ. लोखण्डे ने भूकम्प पीड़ित क्षेत्रों में निरन्तर चार महीने तक राहत कार्य चलाया। किल्लारी(लातूर) में 1993 में भूकम्प आया तब भी आप ने घायल स्त्री–पुरुषों, बच्चों–बूढ़ों को अस्पताल पहुँचाने, मृतकों का दाह संस्कार कराने, देश–विदेश से प्राप्त दवाइयों, खाद्य सामग्री, कपड़ों का राहत पीड़ित लोगों में वितरण कराने में सराहनीय योगदान देकर आर्य समाज के उस इतिहास को ताजा कर दिखाया जब ऐसे अवसरों पर स्वामी श्रद्धानन्द जी और महात्मा देशराजजी अपने निवास से निकलकर राहत शिविरों में पहुँच जाया करते थे। भूकम्प ही क्या अपने दैनिक जीवन में हम अपने सामने पचासों समस्याओं को खड़ा पाते हैं जिनके विरुद्ध मोर्चा लगाने की जरूरत होती है, लेकिन हमारे आर्यसमाजों और उनके प्रधान तथा मन्त्री उन्हें देखकर मुँह फेर लेते हैं। कारण, न उनके पास समय है, न इच्छा शक्ति है, न आर्य समाज की गौरवशाली परम्पराओं का ज्ञान है, न ही अपने पदों की गरिमा का ध्यान है। अपात्र लोगों के कारण यह दुष्परिणाम निकल रहा है कि आर्य समाज अपने ही चारदीवारी में घिर कर मन्दिर और सम्प्रदाय तथा पुरोहितों के लिए रोजगार के केन्द्र मात्र बन गये हैं, सामाजिक सेवा धार्मिक–क्रान्ति के केन्द्र नहीं रह गये हैं। इसी कारण आर्य समाज अपनी विश्वसनीयता, लोकप्रियता, प्रभविष्णुता और कीर्ति पर खुद ही कुठाराघात कर निष्तेज, निष्क्रिय और निःप्रभावी होता जा रहा है। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जैसे कर्मठ, सक्रिय समर्पित लोग ढाल बनकर जब इस अधोगति को रोकने का प्रयास करते हैं तो सवाल उठता है कि दूसरे ऐसे मन्त्री ऐसा क्यों नहीं कर पाते?काम करने वालों को अवसर की तलाश नहीं रहती वे तो खुद ही काम करने के लिए अवसर पैदा कर उन्हें तराशने लगते हैं। आर्य समाज को ऐसे कर्मशूरों की आवश्यकता रही है और उन्हीं के बल पर आर्य समाज वास्तव में आर्यों का समाज बनता रहा है।

सन् 1985 में मराठवाड़ा स्तर पर महर्षि दयानन्द बलिदान शताब्दी का सफल आयोजन करके तथा सन् 2002 में लातूर महाराष्ट्र में वैदिक महासम्मेलन की धूम मचाकर डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे ने सिद्ध कर दिया कि इरादे मजबूत हों तो इंसान क्या कुछ नहीं कर सकता। कर्मठ, समर्पित, सक्रिय व्यक्ति कभी सन्धानों के अभाव में मैदान छोड़कर नहीं भागता। जिन क्षेत्रों में ये आयोजन सफल हुये उनमें आर्यसमाजियों की संख्या बहुत ही कम है। लेकिन मिशनरी भावना से जब यह वीड़ा उठता गया तो जंगल में मंगल अर्थात् एक चमत्कार हो गया। दस–दस हजार लोगों का इन क्षेत्रों में इन सम्मेलनों में भाग लेना वस्तुता एक अनोखा अनुभव रहा होगा। कोई भी जन–कल्याणकारी कार्य लोगों को अपनी ओर सहज ही आकर्षित कर लिया करता है। इन समाज सापेक्ष कार्यों की बदौलत ही आर्य समाज फर्श से अर्श पर पहुँचा। आज स्थिति यदि विपरीत दिखाई दे रही है तो वह आर्य समाज की वजह से नहीं है बल्कि इसका नेतृत्व संभालने वालों की नीति, नियत की वजह से है। जहाँ कर्मठता व सजगता, सक्रियता और समर्पण का अभाव होगा वहाँ सब कुछ उलट–पलट जाता है। सामाजिक संस्थायें साधनों की मोहताज होकर परिस्थितियों की बाट जोहकर कार्य क्षेत्र में नहीं उतरा करतीं बल्कि अपने आन्तरिक बल तेज गति, मति से उत्साहित होकर सक्रिय होती हैं तब संसाधन स्वतः जुट जाते हैं और परिस्थिति स्वतः मन के अनुकुल हो जाती है। इस शक्ति को पहचानने की क्षमता यदि नेतृत्व में न हो तो संस्थायें दम तोड़ने लगती हैं। संस्था यदि सक्रिय नहीं जड़ है अथवा मात्र औपचारिकताओं की गुलाम है तो उसका कोई अर्थ नहीं रह जाता। इकाई को दहाई और दहाई को सैकड़ा बनाने वालीं संस्थायें ही अपने अस्तित्व की अपने अस्मिता की रक्षा कर पाती हैं। किसी संस्था को इस रूप में ढालना जीवन्त गतिशील और अग्रणी बनाये रखना इसके प्राणवान सदस्यों पर निर्भर करता है। डॉ. लोखण्डे अपनी इच्छा और विचारों को यदि मूर्तिमन्त कर सकें तो इसकी पृष्ठभूमि उन्होंने इस क्षेत्र की आर्यसमाजों को सक्रिय करके और हजारों सदस्यों की ऋषि–भक्ति इच्छा शक्ति व कर्मठता को जगाकर तैयार की होगी। यही वह मूल मन्त्र है जिसके बल पर समूचे आर्य समाज का कायाकल्प सम्भव है। यही वह सूत्र है जिसे

अपना कर हम ऋषि–ऋण से मुक्त हो सकते हैं। डॉ. लोखण्डे को यदि इस रूप में हम स्मरण रखते हैं अथवा उन्हें सम्मानित करते हैं तो इसका अर्थ यह है कि जीवन में उनके आदर्शों को अपना कर खुद को लोखण्डे बनाकर यदि हम आर्य समाज की सेवा कर सकें, उसे सक्रिय और प्रभावी रख सकें तो एक सार्थक जीवन जीने का गौरव व सन्तोष हम प्राप्त कर सकेंगे।

एक व्यक्ति कोई कैसे डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे बन जाता है अथवा कैसे बन सकता है, इस पर भी यहाँ चर्चा करना अप्रासंगिक न होगा। डॉ. लोखण्डे के जीवन पर यदि हम विहंगम दृष्टिपात करें तो इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि संस्कार और साधना के बिना कोई व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में न बुलन्दी का स्पर्श कर सकता है, न किसी को प्रभावित कर सकता है, न कीर्ति अर्जित कर सकता है और न ही उस संगठन को आगे बढ़ा सकता है जिसके मंच पर खड़े होकर वह सक्रिय रहता है। संस्कार व्यक्ति को घर के बुर्जुगों से मिलते हैं, अपने समाज से मिलते हैं, अपने विद्यालय और गुरुजनों से मिलते हैं। सत्संग और शास्त्रों से मिलते हैं। लेकिन अमुक व्यक्ति कितना संस्कारी व कितनी जल्दी संस्कारी बन सकता है यह उसकी अपनी ग्रहणशीलता पर तथा पूर्व जन्मों के संस्कारों पर निर्भर करता है। गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर जहाँ से डॉ. लोखण्डे ने विद्याभास्कर और आयुर्वेद भास्कर आदि की उपाधियाँ प्राप्त कीं, अब तक हजारों छात्र पढ़कर निकल गए होंगे लेकिन उनमें से कितने डॉ. क्षेमचन्द्र 'सुमन', प्रकाशवीर शास्त्री, राजपाल शास्त्री या डॉ. चन्द्रशेखर बने होंगे, इस पर विचार करें। गुरुकुल ज्वालापुर जिसकी स्थापना स्वामी दर्शनानन्द महाराज जी ने की थी, एक ऐसी तपोभूमि रही है जहाँ के योग्य, मेधावी, तपोनिष्ट आचार्यों का सानिध्य लाभ उठाकर अनेक विद्यार्थियों ने समाजसेवा ,शिक्षा, राजनीति, साहित्य, वेद प्रचार आदि क्षेत्रों में कीर्तिमान स्थापित किये। डॉ. चन्द्रशेखर अपने विद्यार्थी काल में अपने गुरुओं के स्नेहभाजन रहे क्यों कि गुरुकुल की गतिविधियों में वे अग्रिम पंक्ति में खड़े दिखाई देते थे। यहाँ से प्राप्त संस्कारों ने ही उन्हें ऊर्जा, आत्मबल, निष्ठा, समर्पण, नीरक्षीर विवेक चुनौतियों का सामना करने का अदम्य साहस प्रदान किया। इन संस्कारों को निरन्तर तरासना ही साधना कहलाती है। गुरुकुलों में पढ़े अधिकांश छात्र यहीं आकर गचका खा जाते हैं। वे संस्कारित तो होते हैं लेकिन गुरुकुल छोड़ते ही पारिवारिक व्यावसायिक गतिविधियों में इतना उलझ जाते हैं कि उन संस्कारों को तराशना भूल जाते हैं। तब वे भी सामान्य व्यक्तियों की भीड़ का हिस्सा बनकर कहीं गुम हो जाते हैं। यह भूल, यह चूक डॉ. लोखण्डे से नहीं हुई इस लिए वे सैकड़ों व्यक्तियों के हृदय पटल पर अंकित हैं और इसी लिए आज उन्हें इस रूप में सम्मानित किया जा रहा है।

डॉ. लोखण्डे होने का एक अर्थ और भी है। कोई भी व्यक्ति सकारात्मक और सृजनात्मक दृष्टिकोण को अपनाकर जब समाजसापेक्ष गतिविधियों से अपने को जोड़ लेता है तब उसमें अनायास ही एक विशिष्टता, एक आकर्षण, एक प्रभाव नजर आने लगता है जो लोगों को मोह लेता है, अपना बना लेता है। आर्य समाज के प्रारम्भिक नेतृत्व में यह खूबी थी तभी आर्य समाज अल्पकाल में देश–विदेश में इतने प्रबल रूप से चर्चित हुआ और लाखों लोग उससे आ जुड़े। उस काल खण्ड में मसला चाहे नारी शिक्षा का रहा हो, स्वाधीनता का रहा हो, स्वदेशी और खादी का रहा हो, राष्ट्रीय एकता का और स्वाभिमान का रहा हो, विदेशी लूट और अराजकता का रहा हो, राष्ट्रभाषा का रहा हो, जात–पाँत और अस्पृश्यता का रहा हो, दुर्भिक्ष या बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र में राहत कार्य पहुँचाने का रहा हो, साम्प्रदायिकता का रहा हो, पाखण्ड और अन्धविश्वास का रहा हो, जीव हत्या और माँस भक्षण का रहा हो, बाल विवाह और सती प्रथा का रहा हो, मूर्तिपूजा और बहुदेववाद का रहा हो आर्य समाज के तत्कालीन नेतृत्व ने स्वयं को अग्रिम पंक्ति में खड़ा करके अपने विचार प्रकट किये, अपनी योजनायें बनाकर उन्हें क्रियान्वित किया और समाजसेवा के व्रत को पूरी निष्ठा और दृढ़ता से पूरा किया। आज आर्य समाज अपने समाज सापेक्ष दृष्टिकोण को छोड़ बैठा है और यही कारण है कि जिन ज्वलन्त समस्याओं जैसे साम्प्रदायिकता, जात–पाँत, भ्रष्टाचार, पाखण्ड, शोषण, नारी–उत्पीड़न, नशाखोरी, प्रदूषित पर्यावरण, मांसाहार, धर्मान्तरण, आंतकवाद, अपसंस्कृति आदि से राष्ट्र जूझ रहा है उन्हें लेकर आर्य समाज मुखर नहीं है, आन्दोलित नहीं है, वरंच अपनी चारदीवारी में सिमट कर रह गया

है। आर्य समाज को इस स्थिति से मुक्त कराते हुये डॉ. लोखण्डे ने प्रचलित जाति–व्यवस्था को तोड़कर गुण, कर्म व स्वभाव अनुसार न केवल अपना अन्तर्जातीय विवाह किया बल्कि अपने भाई, बहनों तथा अपनी पुत्री का विवाह भी जात पाँत के बन्धन तोड़कर किया। इसके अतिरिक्त नेत्ररोग चिकित्सा शिविर लगाकर, भूकम्प पीड़ित क्षेत्रों में राहत शिविर लगाकर, गुण, कर्म स्वभाव आधारित विवाह करने वाले दम्पतियों को सम्मानित करके, आतंकवाद विरोधी सम्मेलन आयोजित करके सैकड़ों छात्रों को मुम्बई हिन्दी पीठ से जोड़कर, राष्ट्रभाषा हिन्दी में शिक्षित–दीक्षित करके चेतना शिविरों का आयोजन कर सामाजिक, ज्ञान दान देकर तथा साहित्य सृजन करके अपने समाज सापेक्ष धर्म का पालन कर रहे हैं। इससे उनका नाम आर्य समाज में तथा आर्य समाज का नाम प्रान्त भर में गूँजा। इसी से कोई व्यक्ति अपने जीवन को तथा कोई भी संगठन अपने अस्तित्व को सार्थक बना पाता है। कोई भी संगठन चाहे उसका दर्शन, आचार, शासन, कार्यक्रम कितना ही आदर्श, श्रेष्ठ और कल्याणकारी क्यों न हो, एक कदम आगे नहीं उठा सकता यदि उससे जुड़े लोग उस दर्शन आचार, शास्त्र और कार्यक्रम को अपनाकर आत्मसात् करके समाज के समक्ष उसकी उपयोगिता सिद्ध नहीं करते। प्रारम्भिक आर्य समाजियों की एक छवि हुआ करती थी। ब्रिटिश अदालतें भी मानतीं थीं कि आर्यसमाजी झूठ नहीं बोलते और गवाही भी सच्ची देते हैं। दूसरी ओर ब्रिटिश शासक इंग्लैण्ड भेजी गई अपनी रिर्पोट में लिखते थे कि पंजाब का हर नेता आर्यसमाजी है, और जहाँ–जहाँ भी आर्य समाज का प्रभाव है वहाँ विद्रोह की स्थिति है। शिक्षा के क्षेत्र में भी आर्य समाज का बजट सरकारी बजट के बाद दूसरे पायदान पर रहता था। नारी शिक्षा का प्रादूर्भाव जालन्धर में आर्य कन्या पाठशाला खोलकर सर्वप्रथम आर्य समाज ने ही किया था। पर्दा प्रथा की पुरानी रस्म आर्य समाज ने ही तुड़वाई व खत्म कराई थी। सार्वजनिक कुंओं से हरिजनों को पानी निकालने की मुहिम में आर्य समाज की अग्रणी भूमिका रही थी। धर्मान्तरित मुसलमानों और ईसाइयों को पुनः वैदिक धर्म में लाने का शुद्धि आन्दोलन आर्य समाज ने सर्वप्रथम शुरू किया था जिसका पौराणिक जगत् ने घोर विरोध किया। गाँधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस ने अपने लोकसम्पर्क अभियान को सफल बनाने के लिए जो दीर्घ–सूत्रीय कार्यक्रम बनाया वह वास्तव में आर्य समाज का ही कार्यक्रम था जिसपर वह काम कर रहा था। स्वाधीनता के बाद उस कार्यक्रम को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने चुराकर उस पर काम करना प्रारम्भ कर दिया और आर्य समाज अपनी निष्क्रियता, आलस्य और निकम्मे नेतृत्व के कारण पृष्ठभूमि में विलुप्त होता चला गया। आर्य समाज और उससे जुड़े लोगों को इस भूल को सुधारना होगा तभी आर्य समाज पुनः राष्ट्र का नेतृत्व करने में सक्षम होगा। (डॉ. लोखण्डे यदि इस दिशा में अग्रसर हैं तो साधुवाद के पात्र हैं लेकिन इस साधुता को अन्य आर्यजन भी अपनायें तभी तो ईकाई की दहाई और दहाई का सैकड़ा बनेगा)

प्रारम्भिक काल के आर्य समाज में इस तरह के एक नहीं अनेक हीरो थे जिसकी तोड़ का एक भी हीरो आज दृष्टिगोचर नहीं होता है भले ही उनका नाम देश–विदेश में भी क्यों न गूँज रहा हो। आर्य समाज के पहले के हीरो व आज के हीरो में फर्क आ गया है कि पहले के हीरो आर्य समाज को मातृ संस्था मानकर काम करते थे लेकिन आज के हीरो दूध तो इसी माता का पीकर पलते–पुसते हैं लेकिन फिर इस माँ का सम्मान करने के बजाय निज स्वार्थों को सर्वोपरि मानकर आचरण करने लगते हैं, अर्थात् कृतघ्न बन जाते हैं।

चन्द्रशेखर लोखण्डे भले ही आर्य समाज के कोई बड़े नेता न माने जाते हों। यह भी स्वीकार किया जा सकता है कि उनको अपने प्रान्त के लोग जानते हों, दूसरे किसी प्रान्त में उनका नाम न गूँजा हो, लेकिन एक सामान्य व्यक्ति अपने जीवन में निजी स्तर पर अथवा सार्वजनिक स्तर पर कुछ करता है तो उसे कमतर आँकना गलत होगा क्योंकि उच्च किन्तु निष्क्रिय व निष्प्रभावी नेतृत्व की तुलना में उस सामान्य व्यक्ति की उपलब्धियाँ संस्था की नींव को ही सुदृढ़ नहीं करतीं बल्कि उसके कलश की चमक को भी बढ़ाती हैं। अंग्रेजी में एक कहावत है–समथिंग इज वैटर देन नाथिंग अर्थात् कुछ न करने से श्रेष्ठ है कुछ करना। इस श्रेष्ठता के अपने जीवन और आचरण में अधिष्ठित करते हुए डॉ. लोखण्डे यदि अग्रसर रहें हैं तो वे संस्था के उन सैकड़ों प्रधानों, मन्त्रियों और नेताओं से श्रेष्ठ हैं जो निष्क्रिय हैं अथवा सक्रियता के नाम पर पुत्रैषणा, लोकैषणा और वित्तैषणा पूर्ति के अपराधी बने

हुये हैं। यह श्रेष्ठता व्यक्ति के जीवन में तब आती है जब अच्छे संस्कार उसमें पाये जाते हों, सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय किया हो, संगठन के इतिहास और उसकी गरिमा को समझा हो, जीवन के साधना पक्ष को जिसने निरन्तर तराशा हो, और एषणाओं से मुक्त रहकर जिसने समाज–सेवा का पथ प्रशस्त किया हो। संस्था में रह कर व्यक्ति सार्थक काम करे और फिर भी उसे यश व सम्मान न मिले तो उससे कोई पहाड़ टूटने वाला नहीं है यदि उस काम से अमुक व्यक्ति की आत्मा उसे सन्तोष या सन्तुष्टि प्रदान करती है। कई काम ऐसे होते हैं जिन्हें करने के लिए सोचने का समय व्यक्ति के पास नहीं होता है लेकिन फिर भी कर्तव्य भावना के वशीभूत होकर व्यक्ति उस खतरे को नकारते हुये अपने जीवन की बाजी लगा देता है। ऐसे काम न तो यश के लिए किये जाते हैं और न ही धन के लिए। स्वामी श्रद्धानन्द के हत्यारे को पकड़ने में उनके भक्त धर्मसिंह ने अपनी जान की परवाह न करते हुये उसे पकड़ लिया और गोली खाकर भी तब तक नहीं छोड़ा जब तक भीमसेन जी ने उस हत्यारे को दबोचकर जमीन पर पटक कर काबू में नहीं कर लिया। इसी प्रकार श्री राजपाल जी ने पं. चमूपति जी को बचाने के खातिर स्वयं शहादत का जाम पी लिया क्योंकि रंगीला रसूल उन्होंने नहीं चमूपतिजी ने लिखी थी। आर्य समाज उन लोगों की बदौलत ही फूला–फला है जिन्होंने निष्काम भावना से, कर्तव्यबोध से प्रेरित होकर इसके लिए काम किया है। याद करें इस हकीकत को जब ऋषिवर दयानन्द का बलिदान हुआ उस समय लगभग 110 आर्यसमाजें ही देशभर में स्थापित हुई थीं। परोपकारिणी सभा, अजमेर का गठन हो चुका था लेकिन अनेक प्रान्तों में न कोई प्रतिनिधि सभा गठित हुई थी और न ही सार्वदेशिक सभा का गठन हुआ था। इस स्थिति के बावजूद आर्य समाज छलांगे भरते हुये आगे बढ़ा और इसका कीर्तिध्वज निरन्तर ऊँचा उठता चला गया। यह सब अनाम कार्य कर्ताओं की बदौल ही सम्भव हो पाया था जिन्होंने न यश की कामना की, न धन की अपेक्षा रखी। आर्य समाज के विरोधी केवल पौराणिक, कुरानिक और ईसाई ही नहीं थे, ब्रिटिश सरकार भी थी और सबसे बड़ा विरोधी तो आर्यसमाजी का अपना परिवार बनकर सामने आता था। अनेक ऐसे आर्यसमाजी थे जिनके माता–पिता ने अपनी जायदाद–सम्पति से उन्हें बेदखल कर दिया था, समाज व जाति से बहिष्कृत कर दिया था। तब आर्यसमाजी होने का अर्थ होता था अपने तथाकथित देवी–देवताओं को नकार देना। अपने पितरों का श्राद्ध न करना, मूर्ति पूजा का खण्डन करना, तीर्थ यात्रा को पाखण्ड मानना, भारत माता को दासता की श्रृखलाओं से मुक्त कराना। सत्यार्थप्रकाश की आवाज को घर–घर पहुँचाना, यज्ञ–हवन से वायुमण्डल को सुगन्धित रखना, यज्ञोपवीत और शिखा का एकाधिकार ब्राह्मण जाति से छीनकर शूद्र व नारी तक को दिलाना, गुरुकुलों के द्वार सबके लिए खोलकर शिक्षा प्रदान करना, पर्दाप्रथा को तिलांजलि देना, मांसाहार को छोड़ शाकाहार को अपनाना। ये बातें आज सामान्य लगती हैं तब असामान्य और क्रान्तिकारी हुआ करती थीं। चुनौतियों को स्वीकारना, जीवन को जानबूझकर जोखिम में डालना, व्यक्तिगत हितों को नकारकर निष्काम भावना से देश व समाज की सेवा करना, जिसे गलत समझा उसे जीवन से निकाल फेंकने की तत्परता–यही आर्यत्व की पहचान हुआ करती थी। इस पहचान के कारण ही आर्य समाज की एक अलग पहचान और छवि बन सकी और वह अपने युग का कायाकल्प कर सका। इस पहचान को फिर से पुनर्स्थापित करने की दिशा में डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जैसे सरीखे कृति व्यक्तित्व जुटे हुये हैं। ऐसे लोगों की सक्रियता आशा जगाती है कि आर्य समाज में फिर से पुराना दौर कभी लौटेगा।

आर्य समाज का पुराना दौर कैसे लौटेगा, इस पर थोड़ी चर्चा करके इस लेख को पूर्ण विराम देना चाहूँगा। ऐसा करना इस लिए भी आवश्यक है कि यदि पुराना दौर नहीं लौटा तो जो लोग तन, मन, धन से आज भी आर्य समाज के लिए काम कर रहे हैं उन अनाम लोगों का कर्तव्यबोध और सेवा–परायणता व्यर्थ चली जायेगी अथवा देश व समाज को उसका जितना लाभ मिलना चाहिए उतना नहीं मिल सकेगा। आर्य समाज के महासम्मेलनों में जितनी भारी भीड़ आर्य भाई–बहनों की होती है उस भीड़ से उत्साहित होकर ही आयोजक अपनी सफलता का आकलन करते हैं। आर्य समाज के प्रति आज भी लाखों लोगों में विश्वास, सम्मान और श्रद्धा की भावना है। इस अवसर पर

जितना साहित्य व प्रचार सामग्री निकली है उससे भी इस तथ्य और सत्य की पुष्टि होती है। लेकिन क्या कारण है यह विश्वास, सम्मान और श्रद्धा संस्था समाज व राष्ट्र के जितनी काम आनी चाहिए थी उतनी नहीं आ रही है?सन् 1966 के गोरक्षा आन्दोलन के बाद राष्ट्रीय स्तर पर कोई समाज सापेक्ष आन्दोलन केन्द्रीय नेतृत्व ने नहीं चलाया है। प्रान्तीय स्तर पर भले ही एकांगी प्रयास के रूप में शराबबन्दी आन्दोलन चला हो अथवा कन्या भ्रूणहत्या विरोधी पद–यात्रायें निकाली गईं हों। इसका कारण है केन्द्रीय स्तर पर तीन सार्वदेशिक समाजों का गठन और प्रान्तों में प्रतिस्पर्धी इकाइयों का गठन। यह स्थिति इस कारण बनी है कि आर्य समाज ने आत्मघाती चुनाव पद्धति को अपनाकर उन सभी अवगुणों को संस्था में स्थापित कर लिया है जो चुनाव पद्धति में स्वाभाविक रूप से पैदा हो जाते हैं। गुटबाजी, क्षेत्रीयता, भ्रष्ट रणनीति, धन की बर्बादी, दुष्प्रचार, चरित्र हनन, अपात्र लोगों को तरजीह, मुकदमेबाजी, भ्रष्टाचार, परिसम्पतियों का दोहन आदि अवगुण इस चुनाव प्रणाली को भ्रष्ट करते हैं। इस भ्रष्ट चुनाव प्रणाली के कारण ही आर्य समाज को अरसे से योग्य सक्षम, ईमानदार, प्रभावशाली नेतृत्व नहीं मिल रहा है। चूंकि इस चुनाव प्रणाली में सुधार सम्भव नहीं इस लिए ऐसा विकल्प आर्य समाज को बचाने के लिए ढूढना होगा जो चुनाव के झंझट से पूर्णतया निरापद हो। चरित्रवान, सक्रिय, तेजस्वी, कर्मठ, निष्कामसेवी लोगों के हाथ में ही जब तक आर्य समाज का नेतृत्व नहीं होगा तब तक आर्य समाज में पुराने दौर की वापसी सम्भव नहीं।

इस दिशा में जो लोग ईमानदारी से कदम नहीं उठाना चाहते हैं अथवा ऐसा कोई ठोस विकल्प सामने आने पर उस पर प्रतिक्रिया देने से हिचकते हैं अथवा उसमें दोष ढूढने लगते हैं उससे इस समस्या का समाधान सम्भव नहीं है। आर्य समाज की स्वतन्त्र पत्र पत्रिकायें जो किसी न किसी गुट पक्ष या सभा की कृपाकांक्षी होती हैं वे भी संगठन में ऐसे किसी ठोस परिवर्तन को हवा देने से बचती देखी गई हैं। आर्य समाज में गुटबाजी ने इतना जटिल विषम और खतरनाक स्वरूप ग्रहण कर लिया है कि स्वतन्त्र रूप से कोई व्यक्ति या संगठन अच्छा सुझाव या नसीहत दे तो उसे भी नकार दिया जाता है। ऐसा उन अराजक तत्त्वों के कारण होता है जिनका एक पाँव आर्य समाज में तो दूसरा राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, भारतीय जनता पार्टी, कांग्रेस, समाजवादी पार्टी, कम्युनिष्ट पार्टी में रहता है और जो अपने–अपने गुप्त एजेन्डे के तहत आर्य समाज के मंच का दुरुपयोग करते हैं, इसका दोहन करते हैं, इसे निष्क्रिय बनाये रखने में रुचि रखते हैं ताकि सामाजिक व राष्ट्रीय स्तर पर आर्य समाज उन्हें चुनौती देने की स्थिति में न रहे। आर्य समाज को इस दौर से जितना जल्दी उबार लिया जाय उतना ही अच्छा है अन्यथा आर्य समाज की दशा और दिशा उन पौराणिक मन्दिरों से भिन्न नहीं होगी जो केवल श्रद्धा, धर्नाजन और रोजगार के केन्द्र बने हुये हैं, जहाँ केवल पाखण्ड और अन्धविश्वास पसरा पड़ा है। जहाँ केवल औपचारिकताओं का साम्राज्य स्थापित है। जहाँ केवल शोर शराबा और प्रदर्शन है और जिनमें वक्त की चुनौतियों का सामना करने का साहस नहीं है, समाज सापेक्ष आन्दोलन चलाने की क्षमता नहीं है, युग–परिवर्तन करने की क्रान्तिकारी भावना नहीं है। क्या ऐसा ही आर्य समाज हमें स्वीकार होगा?यदि नहीं तो संगठन का पुनर्गठन करने की दिशा में हमें अनिवार्यता बढ़ना ही होगा। अन्यथा वक्त के हाथों आर्य समाज पिट जायेगा। कहीं का नहीं रहेगा। डॉ. लोखण्डे सरीखे लोगों से मेरी यही अपेक्षा रहेगी कि अपने जीवन व उपलब्धियों को और अधिक सार्थक उपयोगी और प्रभावी बनाने के निमित्त आर्य समाज के पुनर्गठन को प्राथमिकता दें।

सम्पर्क : सम्राट सदन, गली नम्बर–7,
निकट पम्प हाउस, शान्ति नगर, विस्तार, कुरुक्षेत्र
वायुदूत :09891110040

डा. लोखण्डे : एक अद्भुत व्यक्तित्त्व

डा. हरीसिंह पाल

डा. पाल हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार हैं और अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित आपकी गद्य,पद्य एवं चंपु विधाओं में अनेक चर्चित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

भारत की सस्य श्यामला वसुन्धरा पर समय–समय पर ऐसी विभूतियाँ जन्म लेती रहीं हैं जिनसे मानव कल्याण का उज्ज्वल पक्ष उजागर हुआ। ऐसी ही विभूतियों में एक नाम और जुड़ा है वह है डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का। श्री रामस्वरूप लोखण्डे के परिवार में 23 अक्टूबर 1948 को महाराष्ट्र के लातूर जनपद के रेणापूर में जन्म लेने वाले डॉ. लोखण्डे ने गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर(हरिद्वार) से 'विद्याभास्कर' तथा वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय से 'शास्त्री' तथा मेरठ विश्वविद्यालय से 'परास्नातक'(हिन्दी) यशवन्त चव्हाण मुक्त विद्यापीठ से बी.एड्. हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग(इलाहाबाद) से 'आयुर्वेद रत्न', गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर से 'आयुर्वेद भास्कर' उपाधियाँ प्राप्त कर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया।

लोखण्डे जी ने प्राध्यापकीय शिक्षा सेवा में कार्यरत रहते हुए महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आन्ध्रप्रदेश के लगभग 500 गाँवों में आर्य समाज के माध्यम से सामाजिक एवं धार्मिक सुधार तथा राष्ट्रीय एकता हेतु भारतीय आर्य संस्कृति का प्रचार–प्रसार तन, मन व धन से अनवरत् करते आ रहे हैं। भारतीय समाज की एक प्रखर बुराई जातीय अस्पृश्यता तथा ऊँच–नीच के भेदभाव को मिटाने के लिए अहिर्निश भाव से कार्य किया है और आज भी अनवरत् कर रहे हैं।

डॉ.लोखण्डे ने 1982 से 1987 तक महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा में उपदेशक के रूप में आर्य समाज का प्रचार–प्रसार किया । कई दूरस्थ गाँवों में जा–जा कर आर्य समाज की स्थापना की तथा अनेक नौजवानों को आर्य समाज में दीक्षित किया और उन्हें ऋषि दयानन्द के बताए मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया। आर्य समाज की लगन ऐसी लगी कि आप का सारा जीवन आर्य समाज के लिए समर्पित हो गया। गुरुकुल के विद्वान स्नातक होने के उपरान्त प्रोफेसर लोखण्डे वेद, उपनिषद् एवं गीता के सिद्धान्तों को समाज में प्रचारित–प्रसारित करने का व्रत लिया।

आर्य समाज, वेद और ऋषि दयानन्द के कार्यों को करना जहाँ चन्द्रशेखरजी का स्वभाव बन गया वहीं पर ऐसे ऐतिहासिक कार्यों को करने का भी समय–समय पर संकल्प लिया, जो आर्य समाज के इतिहास में एक मील के पत्थर की तरह है। इसी मध्य प्रोफेसर लोखण्डे ने 1985 में मराठवाड़ा क्षेत्र में 'महर्षि दयानन्द बलिदान शताब्दी' सम्मेलन के सफल संयोजक के रूप में अपनी कार्य कुशलता का परचम लहराया। इस महासम्मेलन में 10 हजार से अधिक लोगों ने अपनी सहभागिता निभाई। मराठवाड़ा क्षेत्र में इस तरह का व्यक्तिगत प्रयासों के द्वारा सम्पन्न कराया गया शायद पहला महासम्मेलन था। इस सम्मेलन में गायत्री महायज्ञ, नेत्र रोग चिकित्सा शिविर, ऋषि दयानन्द चित्रावली प्रदर्शनी तथा गुण, कर्म स्वभावानुसार विवाहित युगलों का सत्कार सम्मान जैसे आयोजन सफलता पूर्वक आयोजित किये गए। इसी सम्मेलन में अन्तर्जातीय विवाह भी सम्पन्न कराये गए। इस क्षेत्र के लिए यह एक प्रकार से अभिनव प्रयास ही था। निश्चित ही आर्य समाज और ऋषि के उद्देश्यों से इस सम्मेलन को गति प्राप्त हुई।

डॉ. साहब ने अपने चुने हुए वैदिक–पथ पर निरन्तर आगे बढ़ते हुए वे भी कार्य किए जो 'आपदा' के समय

किए जाने वाले विशेष कार्य कहे जाते हैं। ऐसी ही आपदा महाराष्ट्र के लातूर में 1993 में आई जिससे सैकड़ों मकान ध्वस्त हो गए। हजारों मवेशी मारे गए और हजारों लोगों को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा था। इस विनाशकारी भूकम्प से जितने अपार प्राणी, धन व सम्पत्ति की हानि हुई थी, इसे देखकर पत्थर दिल आदमी भी रो पड़ता। ऐसे कठिन समय में ही धर्मनिष्ठ व्यक्तियों की परीक्षा होती है। चन्द्रशेखर जी ऐसे कठिन समय में भला कहाँ पीछे रहने वाले थे। उन्होंने रामनगर की आर्य समाज के मन्त्री पद पर रहते हुए आर्य समाज के कार्य कर्ताओं के साथ अनवरत् चार माह तक भूकम्प पीड़ितों के लिए राहत के कार्य बड़े पैमाने पर किए। किल्लारी(लातूर) में भूकम्प प्रभावित स्त्री–पुरुषों और बच्चों को अस्पताल पहुँचाना, अचिन्हित लाशों का विधिवत् अन्तिम संस्कार करना तथा देश–विदेश से प्राप्त जीवनोपयोगी सामग्री की प्राप्ति और उनका समुचित वितरण जैसे कार्य इन्हीं के नेतृत्व में सुसम्पन्न हुए। आपदा के समय जब चारों ओर हाय–हाय मचा होता है, ऐसे में धैर्य पूर्वक बिना किसी अपेक्षा के जीव–मात्र के कल्याण के लिए आगे बढ़कर अपनी भूमिका का सम्यक् रूप से निर्वाहन करना एक प्रखर व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति के बूते की ही बात होती है। भूकम्प के समय अपने कार्यों के द्वारा आर्य समाज ने अपने जनहितकारी उद्देश्यों का ही पालन किया था जिसमें डॉ. चन्द्रशेखर जी अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे।

वर्ष 2002 में आपने लातूर में 'वैदिक महासम्मेलन–2002' का आयोजन का सफल संयोजन किया, जिसमें आतंकवाद विरोधी सम्मेलन, सामाजिक एकता सम्मेलन, निबन्ध एवं वादविवाद प्रतियोगिताओं का समायोजन प्रमुख था। इस सम्मेलन से विशेषकर नवयुवकों को जोड़ने में सफलता मिली। साथ ही साथ सम्मेलन से महाराष्ट्र में आर्य समाज का दूर–दूर तक प्रचार–प्रसार हुआ।

अध्यापन कार्य करते हुए प्रा. लोखण्डे ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार में अविस्मरणीय योगदान दिया। गैर–हिन्दी भाषा–भाषी व्यक्ति द्वारा हिन्दी का प्रचार–प्रसार का कार्य करना निश्चित ही हिन्दी के प्रति उसकी अन्यय निष्ठा ही कही जाएगी। विशेषकर उन राज्यों में जहाँ हिन्दी के नाम पर राजनीति की जाती हो और अंग्रेजी की आरती उतारी जाती हो। हिन्दी की सेवा का कार्य करते हुए आप ने मुम्बई हिन्दी विद्यापीठ के लातूर जिला प्रमुख पद पर रहते हुए सैकड़ों छात्र–छात्राओं को हिन्दी राष्ट्रभाषा से शिक्षित–प्रशिक्षित किया। पूरे जनपद में हिन्दी अध्यापन केन्द्र शुरू करवाए। जिसके आधीन सैकड़ों छात्र हिन्दी भाषा के स्नातक हुए। हिन्दी स्नातक होने के साथ–साथ उन्हें व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का प्रशिक्षण दिया गया। आप हिन्दी प्रचार–प्रसार का कार्य करते हुए छात्र–छात्राओं के लिए अभ्यास सत्र, चर्चा–सत्र, संगोष्ठी एवं हिन्दी पर्यटन स्थल आदि का आयोजन भी सफलता पूर्वक करते रहे हैं। आर्य समाज रामनगर, लातूर में डॉ. बालकृष्ण शर्मा ग्रन्थालय के संस्थापक अध्यक्ष पद पर रहते हुए आप सामाजिक ज्ञान–दान जैसा महत्त्वपूर्ण कार्य करते रहे हैं। वर्तमान में प्रध्यापक लोखण्डे 'संस्कृति शोध संस्थान' के माध्यम से समसामयिक विषयों पर व्याख्यान माला, पुस्तक प्रकाशन के साथ–साथ स्वतन्त्र्य चेतना शिविर आदि का आयोजन करने में व्यस्त रहते हैं। आप के द्वारा हिन्दी विद्यापीठ के माध्यम से सम्पूर्ण शिक्षा तथा अनवरत शिक्षा अभियान का आयोजन भी प्रतिवर्ष किया जाता है।

डॉ. चन्द्रशेखर का कृतित्व जैसा विशाल है उसी प्रकार से आप का व्यक्तित्व भी अद्‌भुत है। सत्य, प्रेम, सदाचार, सदाशयता, अहिंसा, न्याय और करुणा जैसे सद्‌गुण आप के व्यक्तित्व की विशेषताएँ हैं। आप एक व्यवहार कुशल, यथायोग्य व्यवहार के पालक, परहित के कार्यों के लिए प्राथमिकता, भारतीय भाषाओं के लिए संकल्पित रहना, धैर्य से न डिगना, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, यज्ञ, राष्ट्र वन्दना, मातृवन्दना, वेद वन्दना और आर्य समाज की वन्दना के बहु आयामी कार्य आप के व्यक्तित्व की विशेषताएँ रही हैं। आप जितना पारिवारिक दायित्वों के प्रति सजग रहते हैं उससे कही कम नहीं सामाजिक और सांस्कृतिक दायित्वों के प्रति सजग रहा करते हैं। वैदिक धर्म के मार्ग के अनुगामी डॉ. साहब का शारीरिक कद भले ही बहुत बड़ा न हो लेकिन सृजन और सुचिता का

कद काफी ऊँचा है। मुझे उनके कृतित्व और व्यक्तित्त्व के सम्बन्ध में जितनी भी जानकारी है, उसके आधार पर मैं कह सकता हूँ कि उनका बहुआयामी व्यक्तित्व और कृतित्व निश्चित ही देश, समाज, भाषा, संस्कृति और समाज सेवा के लिए प्रेरणादायक है। ऐसे बहुआयामी व्यक्तित्त्व के धनी व्यक्ति के प्रति हमें आदर और सम्मान का भाव अनवरत रखना ही चाहिए।

आर्य समाज के प्रखर चिन्तक के रूप में प्रा. लोखण्डे के आर्य समाज की प्रतिष्ठित पत्र पत्रिकाओं यथा आर्यजगत्, सार्वदेशिक, आर्य मर्यादा, राजधर्म, मधुरलोक, आर्य सन्देश, दक्षिण समाचार(हैदराबाद) सहित देश के अनेक पत्र पत्रिकाओं में उपयोगी लेख निरन्तर प्रकाशित होते रहते हैं। अब तक आप के सैकड़ों लेख उपरोक्त पत्रिकाओं में प्रकाशित होकर लोकप्रिय हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त आप वक्ता के रूप में आर्य समाज के माध्यम से वेद, आर्य समाज और महर्षि दयानन्द के उद्देश्यों को आगे बढाने के क्रम में कार्य करते आ रहे हैं। इसके अतिरिक्त आप का ग्रन्थ लेखन विविधताओं से भरा रहा है। आप के द्वारा लिखित पुस्तकों को आदर और सम्मान मिला है। डॉ. लोखण्डे द्वारा लिखित अब तक प्रकाशित पुस्तकों की सूची इस प्रकार है–अवतार सुनिर्णय, 2–नये युग की ओर आर्य समाज, 3–स्वामी दयानन्द संक्षिप्त चरित्र एवं विचारधन, 4–हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास(चार सौ पैसठ पृष्ठों में) 5.वेदों में पर्यावरण विज्ञान, 6–मुट्ठीभर तुफ़ान(काव्य) ये पुस्तकें क्रमशः अयन प्रकाशन दिल्ली, श्री घूडमल प्रहलाद कुमार आर्य धर्मार्थ ट्रस्ट राजस्थान, गोविन्द राम हासानन्द दिल्ली आदि प्रकाशन संस्थानों से प्रकाशित हुई हैं। आप की अप्रकाशित पुस्तकें इस प्रकार हैं–1–दयानन्दोक्त औषधि आरोग्य सूत्र, 2– जब काशी कांप उठी, 3–दयानन्द सिद्धान्त व मान्यता कोश, 4–हमने दीन ए इस्लाम क्यों छोड़ा?5–दयानन्द तर्क संग्रह, 6–सुमन्त्र सुविचार, 7–देशभक्ति एवं मानवतावादी शेर और मुक्तक, 8–निजाम रियासत का पहला बलिदानी आदि।

प्रा. लोखण्डे को उनके उल्लेखनीय सेवा एवं लेखनीय कार्यों के लिए समय–समय पर अनेकानेक संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया जा चुका है। कुछ प्राप्त सम्मान इस प्रकार हैं–'कार्य गौरव पुरस्कार(मराठवाड़ा अन्धश्रद्धा निर्मूलन समिति द्वारा राज्य स्तरीय) भटके विमुक्त आदिवासी मित्र पुरस्कार(मुम्बई द्वारा) मेघजी भाई आर्य साहित्य पुरस्कार(आर्य समाज सान्ताक्रुज मुम्बई द्वारा) भगवान धनवंतरि सद्भावना पुरस्कार, श्री जगन्नाथ स्मृति राजभाषा सम्मान, पुरस्कार तथा लोक साहित्य मंच और कर्नाटक हिन्दी प्रचार सभा गुलबर्गा में कर्नाटक के तत्कालीन राज्यपाल श्री टी.एन चतुर्वेदी द्वारा 'राष्ट्रभाषा हिन्दी सेवक' के रूप में सम्मानित किया जा चुका है।

डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे के व्यक्तित्व और कृतित्व को जब हम समीक्षा करते हैं तो पाते हैं कि डॉ. साहब ने अपने जीवन की धारा को समाज सेवा, लेखन और भारतीय भाषाओं के संरक्षण विशेषकर हिन्दी का गैर–हिन्दी भाषा–भाषी राज्यों में जाकर उसके प्रचार–प्रसार के लिए कार्य करते रहे हैं। संस्कृति रक्षा और समाज सुधार के कार्यों के लिए अपना जीवन समर्पित करने वाले डॉ. लोखण्डे के प्रति हम सम्मान और आदर का भाव रखते हुये उनके 65 वर्ष पूर्ण होने पर उनके शतायु की कामना करते हैं । आप का अनेक क्षेत्रों में गौरव पूर्ण कार्य रहा है इस लिए हम उनके महानता के प्रति नत्मस्तक हैं। लेकिन इससे बढ़कर डॉ. साहब एक बहुत अच्छे मानव हैं। एक श्रेष्ठ आर्य हैं और एक व्यवहार कुशल शिक्षक भी। नई पीढ़ी के लिए आप का कृतित्व और व्यक्तित्व प्रेरणा देने वाला है। अभिनन्दन ग्रन्थ के प्रकाशन और अभिनन्दन समारोह के लिए हमारी अनेकशः शुभकामनायें।

सम्पर्क सूत्र : 684 / 4 डी, इन्द्रापार्क,पालम, नई दिल्ली, वायुदूत : 09810981398

लौह लेखनी के युगचिन्तक : डा. लोखण्डे

प्रो. रंगनाथ तिवारी

प्रो. तिवारी हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकार एवं चिन्तक हैं। बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी तिवारी जी ने अपने पुरुषार्थ से हिन्दी साहित्य में एक अलग स्थान बनाया है।

प्रा.डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का मेरा परिचय उस समय हुआ जब प्रो. ओमप्रकाशजी होलीकर ने मुझे उनकी पुस्तक मुट्ठीभर तूफान के विमोचन के लिए आमन्त्रित किया। विमोचन से पूर्व उनकी यह काव्यमयी रचना देखी, मुझे बहुत अच्छा लगा कि एक मराठवाड़ा का व्यक्ति उत्तर हिन्दुस्तान के रचनाकारों की पंक्ति में जाकर खड़ा हो रहा है। उनकी ये समसामयिक पंक्तियाँ पढ़कर मुझे बहुत अच्छा लगा–

हम पहले यह गीत सुनते थे, नन्हें मुन्ने तेरी मुट्ठी में क्या है?
मुट्ठी में है तक्दीर हमारी।

जोश भरने वाली कविताओं के कारण ही लोखण्डे जी ने अपनी काव्यकृति का नाम 'मुट्ठीभर तूफान' रखा। उनका विचार शायद यह है कि 'मुट्ठी भर तूफान' भी सृष्टि में भूचाल ला सकता है।'

आर्य समाज जैसी राष्ट्रभक्त संस्था ने हिन्दी भाषा का सम्मान बढ़ाया है और हमारे चन्द्रशेखर लोखण्डे जी ने हिन्दी को माँ भारती के माथे पर की बिन्दी कहा है, और बन ठन कर हमारे ऊपर भाषाई राज्य करने वाली अंग्रेजी को होठों की लिपिस्टिक की उपमा दी है। वे कहते हैं–

भाषायें गले का हार हैं, चाहे तमिल हों या सिन्धी,
अंग्रेजी तो लिपिस्टिक होठों की।, हिन्दी तो माथे की बिन्दी।

उनका कहना है कि अंग्रेजी हमारे घर की नौकरानी बनकर आई और कुछ समय बाद हम पर ही राज्य करने लगी। अंग्रेजी ने हमें बौद्धिक रूप से गुलाम बनाया। इस त्रासदी से भारत कब उबरेगा? एक बड़ा प्रश्न है।

डॉ. चन्द्रशेखर एक जाने माने लेखक व इतिहासज्ञ होते हुये भी उन्होंने इस रचना के द्वारा काव्य में अच्छी गति प्राप्त की है। जब मैंने डॉ. चन्द्रशेखर की रचना को पूरी तरह से देखा तो उनके विचार केवल परिवार या किसी एक व्यक्ति या संस्था तक सीमित न होकर के सम्पूर्ण राष्ट्र और समाज की सोच के लिए पाया। राष्ट्र के प्रति उनके मन में बहुत दर्द है। राष्ट्रीयता उनके हृदय में कूट–कूटकर भरी हुई है। उनके दिलोदिमाग में हुब्बेवतन का ज़ज्बा दिखाई देता है। उनको कौन समझाये कि हुब्बे वतन क्या चीज है। देशभक्ति का अर्थ है हुब्बे वतन है। कुछ लोग धर्म और मजहब के नाम पर देश के साथ गद्दारी कर रहे हैं। मन्दिरों पर हमला करते हैं। निर्दोष लोगों को मौत के घट उतार रहे हैं। तुम देश भक्ति क्या जानो। मजहब उन्हें हवा, पानी व जमीन का सुकून नहीं देता। शान्ति और सुख तो देश की रक्षा से प्राप्त होता है। भारत माता के आशीर्वाद से मिलता है। इन्हीं सारी भावनाओं को चन्द्रशेखरजी ने इस रचना में अभिव्यक्त किया है। अपनी लौह लेखनी से लोखण्डे जी ने देश पर आघात करने वाले देशद्रोहियों पर अपनी कलम चलाई है। मेरा तो मानना है कि लौह पुरुष है लोखण्डेजी। किसने बनाया है उन्हें लौह पुरुष? आर्य समाज ने दयानन्द के विचारों ने। इस लिए वे एक जगह कहते हैं–

दयानन्द के देश में ये क्या हो रहा है, कुम्भकरण सजग है लक्ष्मण सो रहा है,
आतंक और मजहब गले मिल रहे हैं, लादेन हंस रहा है और गाँधी रो रहा है।

उनके काव्य की सबसे बड़ी विशेषता यह देखी है कि एक तो राष्ट्र के प्रति उनका प्रेम बहुत अधिक है।

उनकी चिन्ता इस बात को लेकर है कि समाज में अनेक बुराइयाँ फैली हुई हैं, देश पर चारों ओर से खतरे मडरा रहे हैं, इन खतरों से देश को कैसे मुक्त करोगे? दूसरी बात है, उनके दीवानगी की। उनमें समाज, राष्ट्र और मानवता के प्रति एक दीवानापन दिखाई देता है वही उनके काव्य में उभर कर आया है। मानवता मजहब और दकियानूसी विचारों से ऊपर है। गरीबी में मानव झुलस रहा है। अन्न का दाना खाने को नहीं मिलता और आप महजब की बातें करते हो, उसके पेट भरने के पहले व्यवस्था करो। वे एक जगह लिखिते हैं–

पेट भरने पर ही काव्य सूझता है, भिखारी दाने को मोती समझता है।
नायिका को चाँद की उपमा देने वालों, भूखा आदमी चाँद को रोटी समझता है।

पहले मानवता बढ़ाओ, दबे कुचले पिछड़े लोगों की जिन्दगी संवारों फिर अपने मजहब के घूँट पिलाओ। किसी ने ठीक ही कहा है–भूखे भजन न होत गोपाला, ले लो अपनी कण्ठी माला। भारत वर्ष का दुर्भाग्य रहा है कि यहाँ पर जब से विदेशी मतों ने प्रवेश किया तभी से धर्म को हथियार बनाकर राजनीति करने का सिलसिला शुरू हुआ है। प्राचीन भारत को देखें तो कहीं भी इस तरह धर्म के नाम पर सत्ता हथियाने का प्रयत्न नहीं हुआ। भले ही हिन्दू धर्म में अनेक मत मतान्तर हों लेकिन किसी भी मत पन्थ ने राजनीति में हस्तेक्षप करने का प्रयास नहीं किया। धर्म निरपेक्ष अथवा झूठा सेक्युलरवाद ये विदेशी मजहबों के आने के बाद शुरू हुआ और उसकी प्रतिक्रिया ही प्रचलित आतंकवाद है। कट्टरपन्थियों ने भले ही इस देश को धर्म के नाम पर अनेक सब्ज़बाग दिखाने की कोशिश की हो लेकिन यह कोशिश यहाँ के देशभक्त नौजवानों ने नाकाम कर दी। डॉ. लोखण्डे जी इस विषय में कहते हैं–

जनन्त के जलवे हमें और न दिखाओ , इस मुल्क को मुल्क रहने दो जहन्नुम न बनाओ।

काव्य केवल मनोविनोद का विषय न होकर लोक कल्याण की भावना को प्रस्तुत करता है। उन्होंने कपोल कल्पित कल्पनाओं और स्वप्न रंजित संकल्पनाओं को अपनी रचना का आधार न बनाकर वास्तविकता के धरातल पर आदर्शवाद को प्रस्तुत किया है। उनके अन्दर दिवानगी है, प्यार की भावना है, लेकिन व्यक्तिगत श्रृंगार से वे अलग दिखाई देते हैं। उन्होंने मानवता और आलौकिक तथा दिव्य शक्ति से प्रेम की भावना को व्यक्त किया है। मानव के प्रति उसकी उत्कट कल्याण भावना को प्रस्तुत करते हुये कहते हैं– "साहित्य में श्रृंगार ही सब कुछ नहीं है/ संगीत में मल्हार ही सब कुछ नहीं है। दूसरों के दर्द में आँसू बहाते चलो/ जिन्दगी में प्यार ही सब कुछ नहीं है। इस तरह डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी ने 'मुट्ठी भर तूफान' के माध्यम से समाज की सुप्त इकाइयों को झकझोरने का सफल प्रयास किया है। मैं उनको उनके उज्ज्वल भविष्य के लिए शुभकामनायें देता हूँ।

सम्पर्क सूत्र : अंबाजोगाई, जनपद : बीड(महाराष्ट्र)

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छनं गुप्तं धनं,
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः।
विद्या बंधुजनो विदेशगमने विद्या परा देवता,
विद्या राजसु पूज्यते न तू धनं विद्याविहीनः पशुः।।

विद्या मनुष्य की शोभा है। विद्या ही मनुष्य का अत्यन्त गुप्त धन है। विद्या भोग्य पदार्थ, यश और सुख देने वाली गुरुओं की भी गुरु है। विदेश यात्रा में विद्या कुटुम्बीजनों और मित्रों के समान सहायक होती है। विद्या ही सबसे बड़ी देवता है, हर स्थान पर विद्या की ही पूजा होती है न कि धन की। वास्तव में देखा जाय तो विद्याहीन मनुष्य पशु तुल्य है।

राष्ट्रधर्मी साहित्य–समाराधक : डॉ. लोखण्डे

डॉ. केशवप्रसाद उपाध्याय

डॉ.उपाध्याय गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, हरिद्वार के प्राचार्य हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी डाक्टर साहब समाजसेवा और संस्कृत साहित्य के प्रचार–प्रसार में रत रहते हैं।

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर(हरिद्वार) के यशस्वी स्नातक, महाराष्ट्र राज्य में प्राचीन भारतीय संस्कृति का प्रचार–प्रसार करने वाले, मानवीय गुणों की दिव्य आभा से प्रभाषित तथा आर्य समाज के सजग प्रहरी प्रा. डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे एक ऐसे स्वाध्यायशील विद्वान तथा अनेक ग्रन्थों के प्रणेता हैं, जिन्होंने शैक्षिक, साहित्यिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य किया है।

मैं डॉ. चन्द्रशेखर से उन दिनों से परिचित हूँ जब वे मेरे चाचा आदरणीय श्रीकृष्ण प्रसाद उपाध्याय के साथ गुरुकुल ज्वालापुर में अध्ययन किया करते थे। बात सन् 1966 ई. की है। मेरा प्रवेश गुरुकुल ज्वालापुर में मेरे चाचा ने कक्षा पाँच में कराया। उस समय मैं नेपाली भाषा ही जानता था, हिन्दी भी बोलने नहीं आती थी। गुरुकुल के नियमों के अनुसार आश्रम विभाग के द्वितीय आश्रम में अन्य साथियों के साथ रखा गया। मेरे चाचा देवाश्रम (जो गुरुकुल ज्वालापुर के कुलपति, आचार्य एवं संस्थापक सहयोगियों में अग्रगण्य श्री पण्डित नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ, मूलरूप से महाराष्ट्र राज्य के निवासी के अपने नाम से स्थापित) के तीसरे प्रकोष्ठ में रहा करते थे, उनके साथ आदरणीय प्राध्यापक चन्द्रशेखर लोखण्डे तथा डॉ. प्रतापसिंह भी रहते थे, जिस कारण मैं प्रायः देवाश्रम में आया जाया करता था। मैं देखता था कि जब मेरे चाचा कहीं कार्यवशात् बाहर होते थे तब भी श्री चन्द्रशेखर लोखण्डे एवं श्री प्रतापसिंह का व्यवहार मेरे प्रति अत्यन्त सहृदयता का ही होता था।

गुरुकुल ज्वालापुर के शताब्दी समारोह(सन्2007) में जब चन्द्रशेखर लोखण्डे का आगमन संस्था में हुआ तो उन्होंने श्रीकृष्ण प्रसाद उपाध्याय एवं श्री प्रतापसिंह के विषय में विस्तार से चर्चा की। इसी सन्दर्भ में जब विचार विनिमय हुआ तो यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि गुरुकुल ज्वालापुर के आचार्यों, स्नातकों के प्रति उनकी अगाध श्रद्धा है।

गुरुकुल ज्वालापुर के यशस्वी स्नातक डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे का स्पष्ट मानना है कि (मैं) आचार्य नन्दकिशोर शास्त्री, आचार्य लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी, (डॉ. नारायण मुनिश्चतुर्वेद) तथा आचार्य पण्डित हरिसिंह त्यागी साहित्याचार्य आदि गुरुजनों से प्रभावित रहा हूँ। मैंने लेखन, भाषण तथा काव्य सृजन की कला भी इन्हीं गुरुजनों से सीखी है तथा यही मेरे मार्गदर्शक रहे हैं। ऐसे सम्मानित गुरुजनों को मैं कभी विस्मृत नहीं कर सकता।" ज्ञातव्य है भ्राता डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे 1960–71 तक गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, हरिद्वार में पढ़े। इन्होंने वेद, दर्शन, संस्कृत, धर्मशिक्षा, संस्कृत व्याकरण, निरुक्तशास्त्र एवं आयुर्वेद का गहन अध्ययन करते हुए गुरुजनों के श्री चरणों में बैठकर तपस्चर्यापूर्वक अपने जीवन को सार्थक बनाने का पूर्ण प्रयास किया। डॉ. लाखण्डे वैदिक शिक्षा प्रणाली के प्रबल समर्थक हैं। गुरुकुलों की शिक्षा का मूलाधार आज भी वेद और वैदिक साहित्य से सम्बन्धित उपनिषद् आदि ग्रन्थ हैं। परोपकारपूर्ण–जीवन तथा स्वार्थरहित होकर समाज की सेवा करना डॉ. लोखण्डे का स्वाभाविक गुण है। डॉ. लोखण्डे का व्यक्तित्व सम्पूर्ण समाज व राष्ट्र को संवृद्ध, उन्नत एवं शक्तिशाली बनाने के लिए समर्पित है, क्योंकि इनके जीवन का उद्देश्य ही है– कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।

डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे प्राचीन शिक्षा पद्धति को स्मरण करते हुए कहते हैं–"प्राचीन काल में शिक्षा पद्धति के अन्तर्गत छात्र बहुत ही श्रद्धापूर्वक गुरुमुख से वैदिक ग्रन्थों का शुद्ध उच्चारण किया करते थे और गुरुजन भी

अपने छात्रों को मनोरंजक ढंग से पढ़ाते थे। छात्र एकान्त में पाठ्य पुस्तकों का मनन, निदिध्यासन(चिन्तन) स्वाध्याय एवं पुनरावृत्ति किया करते थे। आज प्रायः इसका अभाव दृष्टिगोचर होता है। जिसके कारण शिक्षा का स्तर सभी शिक्षण संस्थाओं में गिरता जा रहा है। यह एक समाज के सम्मुख विचारणीय एवं ज्वलन्त प्रश्न है।"

प्राचीनकाल में गुरु और शिष्य का परस्पर सम्बन्ध पितृ तुल्य होता था। गुरु को आजकल की भाँति टीचर मात्र नहीं बल्कि आचार्य या गुरुदेव आदि शब्दों से सम्बोधित किया जाता था। गुरु के गौरव का महत्त्व निम्नलिखित श्लोक द्वारा प्रतिपादित है –

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः। गुरुः साक्षात् परब्रह्म, तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

इस प्रकार गुरुजन छात्रों के लिए आदर्श तथा प्रेरणा–स्रोत होते थे। गुरुजनों द्वारा छात्रों में संध्योपासना, यज्ञ एवं प्रार्थना के साथ–साथ उनका चारित्रिक विकास करते हुए नैतिक शिक्षा के पालन पर विशेष बल दिया जाता था, जिससे छात्रों में राष्ट्रीय सामुदायिक सहयोग की भावना जागृत होती थी। यही भाव डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के जीवन के आदर्श हैं। ऐसा मैं मानता हूँ। उस समय गुरुकुल ज्वालापुर में छोटे छात्र बड़े छात्रों को 'भ्राताजी' शब्द से सम्बोधित किया करते थे। इस प्राचीन परम्परा का निर्वहन आज भी यथावत् हो रहा है। इस भावना से छात्रों में परस्पर सौहार्द की भावना पुष्ट होती है। एकता, अखण्डता, प्रेम तथा त्याग आदि गुणों का समावेश छात्रों में गुरुजनों द्वारा किया जाता है।

डॉ. लोखण्डे गुरुकुल ज्वालापुर के वरिष्ठ स्नातक तो हैं ही, मेरे गुरुकुल परिवार के ज्येष्ठ भ्राताश्री भी हैं। मैंने डॉ. लोखण्डे का जीवन अति निकट से देखा है। ये छात्रावस्था में कुशाग्रबुद्धि एवं प्रतिभा सम्पन्न छात्रों में अन्यतम् रहे हैं। गायन, भाषण, काव्यसृजन व लेखन में तो वे निपुण थे ही साथ ही फुटबाल, कबड्डी, बालीबाल आदि खेलों के भी अच्छे खिलाड़ी थे। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के बालसखा डॉ. अभयदेव शास्त्री (प्रसिद्ध चिकित्सक–बहादरपुर जट, हरिद्वार), पं. आत्मानन्द शास्त्री(महोपदेशक, कोलकाता), योगिराज डॉ.ब्र.विश्वपाल 'जयन्त'(आधुनिक भीम) श्री कृष्णप्रसाद उपाध्याय(त्रिभुवन विश्वविद्यालय, कीर्तिपुर नेपाल) डॉ. रामावतार शर्मा(अध्यक्ष–डीएवी कालेज, जालन्धर, पंजाब), श्री प्रेमनिधि उपाध्याय(मुख्याध्यापक माध्यमिक विद्यालय, काभ्रे नेपाल), डॉ. ओमपाल सिंह चौहान(प्रसिद्ध चिकित्सक महर्षि आश्रम, महर्षि नगर, नोएडा), विद्याभास्कर श्री नरदेव गुडे(महाराष्ट्र), श्री प्रतापसिंह(चिकित्सक) आदि सभी महानुभावों ने गुरुकुल ज्वालापुर का नाम गौरवान्वित् किया है। मैं उस समय छोटी कक्षा का विद्यार्थी था, किन्तु उक्त महापुरुषों से मैं अत्यन्त प्रभावित रहा हूँ।

आर्य किशोर परिषद् तथा तथा विद्वत्कला परिषद् (जो छात्रों को वक्तृत्वकला को निखारने में सहायक होती थी) में उक्त सभी महानुभाव अपनी कविता, भाषण आदि वक्तृत्वकला निखारते थे। वाद–विवाद प्रतियोगिता, श्लोकान्त्याक्षरी प्रतियोगिता तथा वेदपाठ आदि कार्यक्रम उस समय महाविद्यालय ज्वालापुर में निरन्तर चलते रहते थे। इन्हीं सभाओं के माध्यम से छात्रों में आगे बढ़ने की इच्छा भी बलवती होती जाती थी।

डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे की ही भाँति आज भी गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के यशस्वी स्नातक डॉ. माधवप्रसाद उपाध्याय, पं. युधिष्ठिर उप्रेती, आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी, डॉ. सुरेन्द्र कुमार, डॉ. प्रमोद योगार्थी, डॉ. सुशील कुमार त्यागी'अमित', डॉ. कुलदीप सिंह आर्य, डॉ.संजय कुमार त्यागी, डॉ. कर्मवीर आर्य, आचार्य. अजय कुमार त्यागी, श्री सतीश कुमार शास्त्री, आचार्य संदीप कुमार त्यागी 'दीप', डॉ. विजय कुमार त्यागी, डॉ. सामश्रवा आर्य आदि अनेक स्नातक हैं, जो शिक्षा, साहित्य तथा समाज की सेवा में उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं और अपनी मातृसंस्था गुरुकुल ज्वालापुर की यशः पताका को दिग्दिगन्त् में फहरा रहे हैं।

सन् 2007 में डॉ. लोखण्डे मातृसंस्था में पधारे थे, उस समय गुरुकुल ज्वालापुर में शताब्दी महोत्सव का आयोजन हो रहा था। 10 अप्रैल, 2007 को मेरे संयोजन में (आर्य सम्मेलन का आयोजन किया गया था) इस सम्मेलन में प्रभात आश्रम, मेरठ के स्वामी विवेकानन्द महाराज ने कहा था– 'संस्कृति, सभ्यता, परम्परा, भाषा व

इतिहास जिस भूखण्ड से जुड़ा होता है वह राष्ट्र कहलाता है।" इस अवसर पर डॉ. गणेश दत्त शर्मा ने कहा था–'महर्षि दयानन्द ने पाखण्ड का खण्डन किया और राष्ट्र उत्थान के लिए गुरु रक्षा का संकल्प पूरे राष्ट्र को दिया।' कार्यक्रम में वेदप्रकाश शास्त्री ने कहा था–'परमात्मा का पुत्र आर्य कहलाता है, वृति से आर्य बनो और इसके लिए गुरुकुलीय शिक्षा आवश्यक है।' आर्य महासम्मेलन' में डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे ने कहा था–'दक्षिण भारत के अत्याचारों को दूर करने में आर्य समाज का योगदान कभी भुलाया नहीं जा सकता।' ज्ञातव्य है हैदराबाद आर्य सत्याग्रह(1939 ई.) में आर्य समाज और गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के स्नातकों का योगदान विशेष रूप से सराहनीय रहा है।

डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे का शैक्षिक–जीवन पूर्णरूपेण सफल रहा है। इन्होंने जय क्रान्ति महाविद्यालय लातूर में हिन्दी, संस्कृत के प्राध्यापक के रूप में सेवा देकर शिक्षा के साथ हिन्दी एवं संस्कृत भाषा का गौरव बढ़ाया। मेरी दृष्टि में डॉ. लोखण्डे एक महान शिक्षाविद् हैं। सामाजिक–जीवन के अन्तर्गत आर्य समाज के माध्यम से धार्मिक तथा सामाजिक–सुधार हेतु अनेक व्याख्यान उन्होंने दिये। जात–पाँत के वर्गभेद को भुलाकर सैकड़ों अन्तर्जातीय विवाह भी इन्होंने करवाये। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे, 'डॉ. बालकृष्ण शर्मा ग्रन्थालय, लातूर(महा.) के संस्थापक अध्यक्ष पद पर सुशोभित हैं। महाराष्ट्रीय समाज के समाज सुधारक के रचनात्मक कार्यों में डॉ. लोखण्डे की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय है। डॉ. लोखण्डे के जीवन पर महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास के निम्नलिखित श्लोक पूर्णरूपेण चरितार्थ होता दिखाई दे रहा है–

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा, सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसार–दुःखदलनेन सुभूषिताः ये, धन्या नरा विहित कर्मपरोपकाराः।।

अर्थात् जिन पुरुषों का मन विद्या के विलास में तत्पर रहता, सुन्दर शील स्वभाव युक्त, सत्य भाषणादि नियम पालनयुक्त और जो अभिमान, अपवित्रता से रहित, अन्य की मलिनता के नाशक, सत्योपदेश, विद्यादान से संसारी जनों के दुखों के दूर करने से सुभूषित, वेद विहित कर्मों से परोपकार करने में रत रहते हैं, वे नर–नारी धन्य हैं। इस प्रकार डॉ. लोखण्डे का जीवन परोपकार से युक्त है, जो समाज में वेदविहित कर्मों से अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।

प्रो. चन्द्रशेखर लोखण्डे अभिनन्दन ग्रन्थ समिति के सम्पादन मण्डल में उत्तराखण्ड से मेरा नाम सहयोगी के रूप में सम्मिलित किया गया हैं जो मेरे लिए सौभाग्य की बात है। क्योंकि मैं भ्राता श्री डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के जीवन एवं कार्यों से भली भाँति परिचित हूँ। मुझे विश्व प्रसिद्ध दर्शनाचार्य स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती के द्वारा स्थापित आर्य शिक्षण संस्था गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, हरिद्वार में जहाँ अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ वहीं संस्था में अध्यापक, प्राध्यापक के रूप में, और अब प्राचार्य के रूप में संस्था की सेवा करने का भी सौभाग्य मिल रहा है। यह मेरे लिए परम प्रसन्नता की बात है। मेरी हार्दिक भावना तो यही है कि डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जैसे आर्य विद्वान गुरुकुल ज्वालापुर से आज भी यशस्वी स्नातक होकर निकलें तथा अपना जीवन समाज व राष्ट्र की सेवा में समर्पित करें।

मैं परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे शिक्षा, साहित्य तथा समाजसेवा के कार्यों में संलग्न रहकर अपनी मातृसंस्था का नाम उज्ज्वल करें तथा अपने आर्य–विचारों से भावी पीढ़ी को मार्गदर्शन देने के साथ ही साथ प्रेरणा भी देते रहें।

मैं भ्राताश्री डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जैसे विद्वान व्यक्तित्व का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ। आप स्वस्थ एवं प्रसन्न रहते हुए वेद, संस्कृत का प्रचार–प्रसार आजीवन करते रहें यही मेरी अभिलाषा है।

सम्पर्क सूत्र : गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर, हरिद्वार

डा. चन्द्रशेखर : एक बहुमुखी शख्सियत

सैयद अब्दुल हादी

सैयद अब्दुल हादीजी कई मुसलिम संगठनों से जुड़े हुए एक उदारमना व्यक्ति हैं। इसके अतिरिक्त आर्य समाज के सिद्धान्तों और वेदों के प्रति सद्भावना रखते हैं।

मैं डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी से करीब 1987 से वाकिफ हूँ। उस समय उनकी और उनके परिवार की माली हालत बहुत खराब थी। घर परिवार बिखरा हुआ था। उनकी पत्नी कहीं टींचर ट्रेंनिंग कर रही थीं और डॉ. साहब धनेगाँव जैसे निहायत छोटे से गाँव में बच्चों को साथ लेकर उनकी परवरिश कर रहे थे। वे सबेरे जल्दी ही अपना वैद्यकीय व्यवसाय के लिए निकल जाया करते और सुमन्त्र, साधना और शैलेश स्कूल में चले जाते थे। कुछ दिन बाद वे वलांडी जैसे छोटे से गाँव में आकर रहने लगे। पुश्तैनी घर रेणापूर में, बीबी औराद जैसे गाँव में दवाखाना वलांडी में और उन्हें दिनभर एक गाँव से दूसरे गाँव वैद्यकीय व्यवसाय करने के लिए भटकना पड़ता था। उस समय मैंने नजदीक से उन्हें देखा तो उनका जीवन बड़ा संघर्षमय दिखाई दिया। उन्हें अपनी जिंदगी में बड़ी जद्दोजहद करनी पड़ी और बेइंतिहा दुश्वारियाँ झेलनी पड़ी। उसी समय वलांडी गाँव में उनसे मेरा परिचय हुआ। उनकी हिन्दी जुबान से मैं बड़ा बाअसर हुआ। मैं उदगीर से वलांडी आया जाया करता था। उनकी हिन्दी–उर्दू मिश्रित होने से उनके और मेरे दरम्यान नजदीकियाँ बढ़ने लगीं। मैं भी हर जुमे कि नमाज में शिरकत किया करता था और उसी के कारण मुझे उर्दू से बड़ा लगाव था। किसी महाराष्ट्रीयन की जुबान से इस तरह के अलफाज निकलना बड़ा मुश्किल रहता है। लेकिन बाद में पता चलाकि डॉ. लोखण्डे जी की पढ़ाई उत्तर प्रदेश के तत्कालीन सहारनपुर जिले के गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में हुई है।

मैं सियासी और समाजी तंजीमों(संस्था) से जुड़ा हुआ हूँ । मजहबी खयालात होते हुए भी मैं दकियानूसी खयालों से परहेज करता हूँ। हमारे बीच व्यावसायिक सम्बन्ध होने से हमारी नजदीकियाँ और भी मतबूत होती चली गईं। जब कभी हम एक जगह बैठते तो हमारे बीच में ऊँचे खयालात की ही बातें होतीं। मैं एक मुसलमान और वे एक हिन्दू हैं। एक बार उनका भाषण वलांडी के एक बिट्ठल मन्दिर में हुआ। वहाँ उनका भाषण कइयों ने सुना और दूसरे दिन कुछ लोग आकर मुझसे कहने लगे ....हादी साब अरे भाई! डॉ. लोखण्डे तो आर्यसमाजी हैं और तकरीर भी अच्छी करता है। आप का और उनका मिजाज कैसे जुड़ता होगा। आप की दोस्ती इतनी कैसे परवान चढ़ गई है। तब उन मुसलमान भाइयों से मैंने कहा–'आर्य समाजी हुआ तो क्या हुआ, क्या आर्यसमाजी के सींग होते हैं?अच्छा एक बात बताओ, क्या कभी उन्होंने किसी मजहब की निन्दा की या कुछ बुरा भला कहा?उन लोगों ने कहा–नहीं तो। फिर उनके बारे में आप ऐसा क्यों सोचते हो कि वो फिरकापरस्त हैं। उनके विचार उनके पास हैं। मेरे विचार मेरे पास हैं। फिर भी हम सोच रहे थे कि एक मुस्लिम और आर्यसमाजी की पटती कैसी होगी?फिर मैंने उनसे कहा,– 'देखो भाई! हम जब आपस में बैठते हैं या बात करते हैं तो मजहब की बातें कभी नहीं करते, हम एक–दूसरे के सुखदुख की, हालोहवाल की अथवा एक दूसरे की तरक्की की बातें करते हैं। हम मजहब और उसके वसूलों को बीच में आने नहीं देते । लगभग 27 साल हो गए हैं, हम एक दूसरे के घर आते जाते हैं। वे मुझे दीवाली पर बुलाते हैं मैं उन्हें ईद पर बुलाता हूँ, कल परसो उन्होंने मुझे दीवाली पर बुलाया था। जब कभी मैं लातूर जाता हूँ तो थोड़ी देर के लिए क्यों न हो मैं डॉ. लोखण्डेजी के घर पर मिलने जरूर जाता हूँ। कई मसलों पर हमारी चर्चा चलती है। जिस चीज में मतभेद हैं वे हम सामने आने ही नहीं देते। फिर क्या समस्या है?उन्होंने एक बार अपना शेर

सुनाया था वह अब तक याद है......

ऐ मौलवी ! तू गीता को थाम ले, और मुझको कुरान दे दे , फिर ये लड़ाई कैसी फिर ये फसाद कैसा?

वलांडी में उस समय हिन्दुओं के 3–4 मेडिकल स्टोर थे पर डॉ. लोखण्डेजी सिर्फ मेरे पास आकर बैठते थे। वे उस समय मुसलिम बहुल इलाके में ही रहते थे। और सभी मुसलिम भाई उनसे अपनापन रखते थे। कई बार मेरे यहाँ उन्होंने शिरखुंबा का स्वाद चखा है। दोस्ती और भाईचारे के लिए दोनों के खयालात आपस में मिलना बहुत जरूरी होते हैं। हम दोनों की मित्रता का यही राज है। डॉ. लोखण्डे जी में एक सबसे बड़ी खूबी यह है कि तकरार की बातें भी करते हैं तो बड़े प्यार से करते हैं। वे अपने विचारों को जबरदस्ती किसी पर थोपते नहीं हैं। मैं जानता हूँ कि आर्यसमाजी अपने मजहब(सिद्धान्त) में काबिलियत रखने वाले लोग होते हैं। उनके तर्क बड़े मजबूत और सोचने के लिए मजबूर करने वाले होते हैं। डॉ. साहब ने उन तर्कों और सिद्धान्तों के द्वारा हमें कभी चुप कराने की कोशिश नहीं की, वे अपनी बात कहने के बजाय दूसरों की बातों को सुनना अधिक पसन्द करते हैं, यही उनकी विशेषता है। मुझे बाद में मालुम हुआ कि वे इससे पूर्व आर्यसमाज के बडे मोअल्लिम(उपदेशक) रहे हैं, फिर भी उन्होंने इन 27 सालों में कभी दूसरों को इलमियत(विद्वता) दिखाने की कोशिश नहीं की।

उनको एक बार जमात–ए–इस्लामी–ए हिन्द ने लातूर में तकरीर के लिए बुलाया था। उन्होंने वहाँ 'कुरान में वेदों का असर' इस विषय पर भाषण दिया था और बड़ी पुख्ता दलीलों से यह सोचने के लिए मजबूर कर दिया था कि सचमुच वेदों की बातों का कुरान मदीज पर असर पड़ा है। उसमें तौहीद(एकेश्वरवाद) गैरमुजस्सम(निराकार) और बुतपरस्ती की मुखाल्फत खास थी। उन्होंने कई आयातों और वेद मन्त्रों का हवाला देकर यह सिद्ध करने की कोशिश की थी कि जरूर बाद की किताबों पर वेदों का असर होने की गुंजाइश है। इन बातों को उन्होंने बड़े प्यार और सराफत से लोगों के सामने रखी थी। इस मजमे में पाँच–छः सौ मुल्ला मौलवी और इस्लाम के जानकारों ने शिरकत की थी।

डॉ.चन्द्रशेखरजी ने (हैदाराबाद मुक्तिसंग्राम का इतिहास) यह किताब लिखकर उत्तर हिन्दुतान के लोगों तक इस तवारिख (इतिहास) को पहुँचाने का बड़ा महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। उन्होंने इस इतिहास को बड़े उमदा ढंग से जिसे कई लोगों ने हिन्दू मुसलमानों का संघर्ष कहकर बदनाम किया था, उन तक पहुँचाने की कोशिश की है जो कामयाब हुई है। डॉ. लोखण्डेजी का मैं एक ही नहीं कई ऐसे कई मुसलिम शख्स हैं जो उनके साथ जुड़े हुये हैं। उनके साथ वे चर्चा करते हैं उनके साथ उठते बैठते हैं। मैं जहाँ तक सोचता हूँ डॉ. लोखण्डेजी जहाँ एक काबिल शख्सियत हैं वहीं वे एक विद्वान, वक्ता, लेखक, शिक्षक और समाजसेवक हैं। उनके ग्रन्थालय को देकर मुझे ताजुब हुआ कि वहाँ सभी तरह की किताबें मौजूद हैं। कुरान, बायबल और वेद एक जगह रखे हुये देखकर मुझे बड़ी खुशी हुई कि क्या इंसान भी एक जगह मिलजुल कर नहीं रह सकता?उनके परिवार और उनकी हर तरक्की को देखकर मै हैरान रह गया। उन्होंने जिंदगी के हर क्षेत्र में तरक्की की है। एक जमाना था जब डॉ. लोखण्डे एक बैग लेकर सायकल पर घूमा करते थे और कभी किसी डॉक्टर के हाथ के नीचे 250 रुपये महीने की कम्पाउंडरी करते थे, आज एक वक्त है जब डॉ. लोखण्डे आर्थिक, शैक्षणिक और सामाजिक क्षेत्र में बहुत आगे निकल चुके हैं। वे आज भी अपना ज्यादा से ज्यादा वक्त मुल्क और समाज की प्रगति के लिए खर्च कर रहे हैं।

उनके द्वारा समाज और मुल्क की इसी तरह खिदमत होती रहे, इन्हीं कुछ लफ्जों के साथ मैं उनकी तरक्की के लिए खुदा से दुआ करता हूँ।

सम्पर्क सूत्र–उद्‌गीर, महाराष्ट्र

सरस–सरल–शेखर

डा.अभयदेव शास्त्री

डा. अभयदेव शास्त्री जी संस्कृत व विज्ञान विषय के विद्वान हैं। चिकित्सा क्षेत्र में रुचि है। आर्य समाज सुधार कार्यों में लगे रहते हैं।
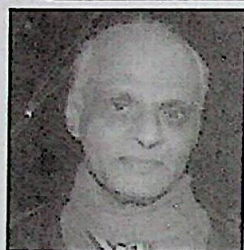
"क्या भूलूं क्या याद करूं" महाकवि हरिवंशराय 'बच्चन' की आत्मकथा का ये शीर्षक आज के सन्दर्भ में मुझे सचमुच बड़ा अच्छा लगा। इसी आधार पर अपनी विस्मृत हुई स्मृति को जगाते हुये मैं पहुंचता हूँ गुरुकुल महाविद्यालय की पुण्यभूमि पर। जहाँ की दिनचर्या वेदमन्त्रों से प्रारम्भ होकर वेद मन्त्रों पर ही समाप्त होती थी।

प्रातःकाल लगभग चार बजे उठने पर प्रातःकालीन मन्त्रों से हमारा जागरण होता था फिर शौच स्नाादि से निवृत हो जब यज्ञ होता था तो जहाँ मन्त्रों के उच्चारण से मन पवित्र होता था वहीं हवन में डाली गई सामग्री व शुद्ध घृत से न केवल वातावरण पवित्र होता था अपितु वह शुद्ध वायु हमारे स्वास प्रश्वास को सचमुच एक आजीब तरह की सुगन्ध से सुगन्धित करती थी। तदुपरान्त प्रातःराश का पानकर जब हम सभी सफेद कुर्ता व धोती पहनकर विद्यालय में पढ़ने जाते थे तब लगता था मानो बगुले कहीं ध्यान लगाने के लिए इकट्ठे हुये हैं।

हमारे समय में पण्डित नरदेव शास्त्री 'वेदतीर्थ' कुलपति थे जो आर्य समाज के लिए सचमुच वेद के तीर्थ थे। उनके पास तत्कालीन विद्वान भी आचार–विचार पर वेदानुकूल विचार हेतु उनके पास आते थे। आचार्य नन्दकिशोर शास्त्री दर्शनाचार्य दर्शन जैसे दुरूह विषय को ऐसे सरल व सरस शैली में समझाते थे कि विद्यार्थियों को शायद ही कभी दर्शनों की समस्या को पुनः समझने की आवश्यकता होती थी। श्री लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी साहित्याचार्य वैदिक साहित्य के मर्मज्ञ। किसी विषय को यदि विस्तार से समझना हो तो वे उस विषय की बाल की खाल निकालने में निष्णात थे।

पण्डित हरिसिंह त्यागी सचमुच ही त्याग की मूर्ति थे। उनके सानिध्य में विद्यार्थी अपने को साहित्य व गुरुकुल महाविद्यालय से जुड़ाव ही नहीं रखते थे अपितु साप्ताहिक सभा में उनकी कविताओं का आनन्द भी लेते थे। ऐसे अन्य गुरुवृदों में भगीरथ जी शास्त्री व्याकरण के महान ज्ञाता, पण्डित छेदीप्रसाद जी व्याकरणाचार्य आदि को मैं अब भी विस्मृत नहीं कर पा रहा हूँ। ऐसे विद्वत जनों से मेरे साथ ही डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे ने गुरुकुलीय नियमों में रहकर शिक्षा प्राप्त की।

अपने कुछ विशिष्ट गुणों के कारण ही लोखण्डे अपने गुरुजनों व अपने अग्रजों के भी स्नेही बने। डॉ. सुभाषपाल राठी मेरठ वासी व मुझे लोखण्डे से विशेष स्नेह था। इसी स्नेह के कारण मैं उन्हें विद्यार्थी काल में ही अपने बड़े भाई के विवाहोत्सव में बिजनौर ले गया। वहाँ भी अपने स्नेही स्वभाव व गुरुकुलीय शिक्षा की कुछ विशेषताओं के कारण हमारे परिवार के भी स्नेही बने, विद्याभास्कर, आयुर्वेद भास्कर के बाद कुड समय आयुर्वेदीय चिकित्सा की दृष्टि से मेरे पास रहे। तब मेरा विवाह हो चुका था तथा मैं एक बेटी का पिता भी बन गया था। चिकित्सा कार्य सीखते हुये मेरी बेटी को गोद में खिलाते हुये शेखर जब धीरे–धीरे लोरियां गा कर उसे सुलाते तब वह ऐसे सो जाती। शायद वह मेरी गोद में भी न सोई हो।

एक घटना मैं अब भी नहीं भूल पाता जिसे याद कर मैं अब भी मुस्कुरा उठता हूँ। शेखर को अपने एक मित्र के विवाहोत्सव में ले गया। संयोगवश उस विवाह में बिन मौसम ऐसी बरसात हुई कि हम सभी बाराती बचते हुये भी कुछ–कुछ भीग ही गये। अन्य रस्मों के बाद जब विवाह संस्कार प्रारम्भ हुआ तो संस्कार कराने वाला पण्डित कन्या पक्ष से था। वर्षा के कारण अथवा कहीं और संस्कार कराने के चक्कर में सनातनी संस्कार के मन्त्र अशुद्ध व शीघ्रतापूर्वक पढ़ने लगा। पण्डितजी कौन सा मन्त्र बोल रहे हैं मुझे भी समझ में नहीं आ रहा था। एकाएक चन्द्रशेखर बोल पड़े–"पण्डित जी जरा मन्त्रों को ठीक से तो बोलिये। पण्डित जी बोले–"तुम कोई पण्डित हो जो मन्त्रों के विषय में पूछ रहे हो।" शेखर ने कहा–पण्डितजी, संस्काराद्विजोच्यते' में क्या कहा है। पण्डितजी बोले–'ये कौन, सा मन्त्र है। यह सुनकर मुझे व चन्द्रशेखर को हंसी आ गई। शेखर ने कहा–"मैं तो आप के पण्डित वाले प्रश्न का उत्तर दिया है। आप कुछ समझे। कुछ वर्षा के कारण कुछ समयाभाववश फिर शेखर ने कहा–पण्डितजी, मन्त्र ठीक बोलें, बस यही कहना है।

कुछ वर्षोपरान्त शेखर अपने गांव रेणापूर (महाराष्ट्र) में कार्यरत हो गये। यदा–कदा पत्रों का आदान–प्रदान चलता रहा। फिर कुछ वर्ष पश्चात् मुझे डाक से 'वेदों में पर्यावरण विज्ञान' पुस्तक मिली, जो शेखर द्वारा लिखी एक अनुसन्धान परक रचना है। पुस्तक पढ़कर मुझे जो प्रसन्नता हुई, उसे केवल मैं ही जान सकता हूँ।

शेखर का यह स्नेह ही है कि जब भी उनकी कोई पुस्तक प्रकाशित होती तो एक प्रति मुझे अवश्य भेजते हैं। विद्यार्थीकाल में मुझे भी तुकबन्दी करने का शौक था। साप्ताहिक सभाओं में यदा–कदा कुछ कविता सुनाकर साथियों का मनोरंजन कर लेता था।

एक बार विद्वत्कला परिषद् द्वारा जयशंकर प्रसाद लिखित नाटक 'चन्द्रगुप्त' का दर्शनानन्द जयन्ती पर मंचन किया गया। जिसमें मुझे चाणक्य का अभिनय करना था, सर्दियों में मंचन हेतु सन्ध्या के समय मेरे सिर पर उस्तरा फिरवा दिया गया। रात्रि में जब नाटक प्रारम्भ हुआ व महानन्द ने प्रतिहारी से चाणक्य की शिखा पकड़कर बाहर करने के लिए कहा उसने तेजी से शिखा खींचने का अभिनय किया तो बेचारी शिखा उसके हाथ में आ गई। दरअसल, शिखा को लम्बी दिखाने के लिए महिलाओं की शिखा मेरी शिखा में बाँध दी गई थी। शिखा के टूटने पर सभी दर्शक हँस पड़े। हँसी तो मुझे भी आई। लेकिन मेरा अगला संवाद क्रोध में था अतः बड़ी कठिनाई से मैंने अपनी हँसी को वश में किया। दर्शक जब शान्त हुये, तो मैंने क्रोध में संवाद बोलना प्रारम्भ किया "खींचले–खींचले ब्राह्मण की शिखा"इतना ही बोल पाया था कि दर्शक फिर हँस पड़े, मेरे कानों में आवाज आई–"चोटी टूट तो गई, ये अभी और खींचने को कह रहा है।" दर्शकों की शान्ति के बाद वह संवाद मैं पूरा कर पीछे आ गया। फिर हमारी नाटक मण्डली का प्रहसन तब तक चलता रहा, जब तक अगले दृश्य का समय हुआ। शायद इस नाटक के बाद ही शेखर और मैं अग्रज और अनुज से मित्र बनें।"

एक दिन डाक से 'मुट्ठीभर तूफान' प्राप्त हुआ तो देखा यह तो कविता संग्रह है। मुझे शेखर की इस प्रतिभा का तो पता ही नहीं था। मैंने जब उसे पढ़ना प्रारम्भ किया तो कुछ मुक्तक मुझे बहुत प्रसन्द आये जैसे–

प्रतिकूलता को चुनौती देती ये पंक्तियाँ देखिये।

किसके रोके रुकते हैं आगे बढ़ने वाले।
किसके आगे झुकते हैं ऊँचे उठने वाले।।
तूफां में भी नौका पार हुआ करती है
लाशें तो लहरों के साथ बहा करती हैं। ।

काफी अन्तराल के बाद गुरुकुल काँगड़ी का शताब्दी समारोह होने वाला था कि एक दिन बिना पूर्व सूचना

के शेखर गुरुकुल महाविद्यालय के किसी प्राध्यापक को लेकर मेरे यहाँ आ गये। मैं सुखद आश्चर्य में पड़ गया। बोला, अरे भाई–पत्र तो लिख दिया होता। शेखर ने कहा–"पत्र तो लिखा था शायद आप को मिला नहीं। हमारी डाक व्यवस्था तो आप जानते ही हैं। फिर हम कुछ जलपान कर हम गुरुकुल कांगड़ी पहुँचे। वहाँ लगे पुस्तकों के स्टाल वालों ने उन्हें घेर–सा लिया। काफी बतियाने के बाद जब पण्डाल में पहुँचे तो वहाँ अपने और कुछ साथियों से मिलकर अपार हर्ष हुआ। समय अपनी गति से चलता रहा। हम भी अपने–अपने कार्यों में व्यस्त रहे।

कुछ वर्षों के बाद गुरुकुल महाविद्यालया शताब्दी समारोह होना निश्चित हुआ। लेकिन वहाँ की सम्पूर्ण व्यवस्था बदल चुकी थी। शेखर, मैं व हमारे कुछ अग्रजों का वहाँ मिलन हुआ। जब हम अध्ययनरत थे तब सोचते थे कि हमसे पहले यहाँ कितना अच्छा रहा होगा। लेकिन जब शताब्दी समारोह देखा तो बड़ा आश्चर्य हुआ। हमारे समय स्वर्ण जयन्ती पर जितनी भी भीड़ स्टेच पर थी अब पूरे पण्डाल में भी इससे कम भीड़ थी। वक्ताओं के भाषणों में भी विद्वता कम ही दिखी। हरिद्वार के प्रसिद्ध मन्दिरों, आश्रमों के सनातनियों को देखकर बड़ा दुख हुआ। आर्य विद्वान कम ही थे। तब से मेरा मन बड़ा खिन्न हो गया और मैंने महाविद्यालय के उत्सवों पर न जाने का निर्णय किया। लेकिन पण्डित हरिसिंहजी के पौत्र डॉ. सुशील कुमार त्यागी व अपने सहपाठी सत्यदेव गुप्ता, आगरा निवासी के आग्रह पर पुनः जाना हुआ।

दिल्ली के आर्य समाज के महासम्मेलन में जाने के पूर्व शेखर का फोन आया कि मैं रात्रि में महाविद्यालय सपत्नीक पहुँच रहा हूँ। समयाभाववश गाँव नहीं आ पाऊँगा अतः आप भाभी जी सहित महाविद्यालय में आ जायें। हम दोनों प्रातः महाविद्यालय पहुँच गये। वहाँ डॉ. सुशील कुमार त्यागी व प्राचार्य डॉ. केशव प्रसाद उपाध्याय से भी भेंट हुई। शेखर के लाये महाराष्ट्रीय खादान्न का स्वाद लेते हुये लगभग एक घण्टा विविध विषयों पर वार्तालाभ हुआ। तभी शेखर अपनी भावी योजनाओं के विषय में जानकारी दी। प्रसन्नता हुई कि मेरा यह अनुज राष्ट्रीय स्तर का लेखक, सामाजिक कार्यकर्ता व आर्य समाज के प्रचार–प्रसार में अपने जीवन को समर्पित कर रहा है।

दुर्जनों को ईर्ष्या होती है जब अपना कोई अनुज अपने से आगे बढ़ जाता है। लेकिन अच्छा व्यक्ति वही है जो अनुजों की उन्नति से प्रसन्न होता है। शेखर अपने सत्कार्य को करते हुये नित्य नये उन्नति के सोपानों पर चढ़ते हुये अपने उद्‌देश्य के शिखर को चूमे–यही कामना है।

"शत शत शरद ऋतु तुम पाओ।"

सम्पर्क सूत्र–सहजादपुर, रावली,
बिजनौर(उ.प्र.)
चल.–09719593740

जिस प्रकार तैरती नाव को प्रचण्ड हवा दूर बहा ले जाती है
उसी प्रकार विचरणशील इन्द्रियों में ये कोई एक
जिसपर मन निरन्तर लगा रहता है, मनुष्य की बुद्धि को हर लेती है।

कवि, लेखक और समाजसेवी डॉ. लोखण्डे

डॉ. सुशील कुमार त्यागी 'अमित'

डॉ.सुशील कुमार त्यागी जी एक यशस्वी लेखक, गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, हरिद्वार के स्नातक, अध्यापक, सृजनधर्मी और विद्वान हैं

कवि एवं लेखक और शिक्षाविद्, समाजसेवी, वेदानुरागी, संस्कृतानुरागी, हिन्दीसेवी, सरल और सहज प्राध्यापक डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, हरिद्वार के यशस्वी स्नातक तथा आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध विद्वान हैं। डॉ. लोखण्डे पूर्णरूपेण ऋषि दयानन्द के भक्त, आर्य समाज तथा गुरुकुल शिक्षा पद्धति के प्रबल पक्षपाती हैं। डॉ. लोखण्डे का कहना है, "गुरुकुल की प्राचीन शिक्षा पद्धति, यज्ञ-याग, मान-मर्यादाएँ आज के समाज को नई दिशा देने में सक्षम हैं। अब जब कि पाश्चात्य शिक्षा हावी होती जा रही है ऐसे में अपनी भारतीय संस्कृति पुरातन गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली से समाज पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव से बचाया जा सकता है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि डॉ. लोखण्डे जैसे व्यक्तित्व गुरुकुलीय-सेवा में समर्पित हैं और हमारे पूज्य गुरुवर आचार्य पं. हरिसिंह त्यागी की परम्परा को आगे बढ़ा रहे हैं।

डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे की शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में हुई। यह उत्तर भारत की एक मात्र निःशुल्क शिक्षण संस्था है। इस संस्था के संस्थापक आर्य संन्यासी, दार्शनिक, तर्क-शिरोमणि, वीतराग स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती थे। इस संस्था ने देश को पं. प्रकाशवीर शास्त्री, पद्मश्री क्षेमचन्द्र'सुमन',डॉ. चन्द्रभान(अंकिचन) तथा पद्मश्री डॉ. कपिलदेव द्विवेदी जैसे सहस्राधिक विद्वान, राजनेता, कवि, लेखक तथा स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी दिये। गुरुकुल ज्वालापुर के उक्त स्नातकों ने आचार्य शुद्धबोध तीर्थ, पं. नरदेव शास्त्री 'वेदतीर्थ'(रावजी), पं. भीमसेन शर्मा, (आगरा वाले) पं. पद्मसिंह शर्मा जैसे लब्धप्रतिष्ठित विद्वानों के श्री चरणों में बैठकर शिक्षा प्राप्त की और आर्य समाज के साथ-साथ गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का नाम भी गौरवान्वित किया। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे उक्त सभी विद्वानों से प्रभावित रहे हैं। आचार्य पं. नरदेव शास्त्री 'वेदतीर्थ'(रावजी) जो महाराष्ट्र के निवासी थे के प्रति श्रद्धावनत् डॉ. लोखण्डे का कहना है कि "मराठी होते हुये भी रावजी ने वेद तथा संस्कृत का प्रचार-प्रसार किया तथा हिन्दी की गरिमा बढ़ाई और ऋषि दयानन्द के मिशन को भी आगे बढ़ाया। फिर क्यों न, मैं भी आर्य समाज में 'रावजी' की ही भाँति सामाजिक सुधारों में अपनी सक्रिय भूमिका निभाऊँ जिससे समाज में मानव मूल्यों की रक्षा हो सके।" इस प्रकार डॉ. लोखण्डे को 'रावजी' की कार्य कुशलता पर पूर्ण गर्व रहा है। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे ने जिन गुरुजनों से शिक्षा प्राप्त की उनमें सर्वश्री आचार्य पण्डित नन्दकिशोर शास्त्री, आचार्य भगीरथ शास्त्री, आचार्य लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी(डॉ. नारायण मुनिश्चतुर्वेदः) पं. सत्यव्रत शास्त्री(धामपुर निवासी) आचार्य पं. हरिसिंह त्यागी व श्री केवल दीवान आदि को ये आज भी भुलाये नहीं भूलते। डॉ. लोखण्डे का मानना है-आज भी गुरुकुल के श्रेष्ठ तथा आदर्श उन अनेक गुरुओं के प्रति मेरे हृदय में अगाध श्रद्धा तथा आदर है जिन्होंने अपने आशीर्वाद एवं स्नेह से मुझे पढ़ाया ही नहीं वरन् आगे भी बढ़ाया है। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे आर्य नेता पं. प्रकाशवीर शास्त्री के प्रति भी कृतज्ञ हैं। इन्होंने अपनी काव्यकृति सन् 2007 में प्रकाशित 'मुट्ठी भर तूफान' का समर्पण 'शास्त्रीजी' को ही किया है। क्योंकि इनके छात्र-जीवन में पूरी शिक्षा-दीक्षा की समुचित व्यवस्था शास्त्रीजी ने ही की थी।

सन् 2007 में गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के 'सौ वर्ष' पूर्ण होने पर 'शताब्दी महोत्सव' बड़ी धूमधाम से मनाया जा रहा था। इस अवसर पर देश के कोने–कोने से अपनी मातृसंस्था की माटी को नमन् करने के लिए प्राचीन स्नातक ही नहीं नवीन स्नातक भी पधारे हुए थे। इस अवसर पर महाराष्ट्र से पधारे पूर्व स्नातक डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे तथा इनके साथ ही आर्य जगत् के सुलेखक एवं गवेषक डॉ. कुशलदेव शास्त्री भी थे। गुरुकुल ज्वालापुर में आकर डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे ने अपने विद्या गुरु आचार्य पं. हरिसिंह त्यागी के 'शुभ–दर्शन' किये और चरण–स्पर्श कर अपने गुरुदेव का आशीर्वाद प्राप्त किया। इसी प्रकार आचार्य जी भी अकस्मात् सुदूरवर्ती शिष्य को देखकर फूले नहीं समाये। आचार्यजी का मानना था कि 'मातृ–संस्था के सौ वर्ष पूर्ण होने पर अपने यशस्वी प्राचीन तथा अर्वाचीन स्नातकों के दर्शन हो गए। मेरा भी गाँव सिसौना, बिजनौर से आना सार्थक हो गया।" डॉ. लोखण्डे ने तत्क्षण कहा था–"गुरुदेव ,हमारा आना भी सफल हो गया जो आप जैसे महापुरुष के दर्शन हो गए और जीवन धन्य हो गया। इस प्रकार आचार्य पं. हरिसिंह त्यागी डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे, डॉ. अभयदेव शास्त्री, डॉ. ओमपालसिंह चौहान ने परस्पर पुरानी यादों को ताजा करते हुये हास–परिहास, कुशलक्षेम के साथ ही साथ पारिवारिक चर्चायें भी कीं।

मैंने डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे का दर्शन जब किया था तब उन्होंने मुस्कराते हुये कहा था,– "ये आप का ही नहीं वरन् हम सब छात्रों का सौभाग्य रहा है कि गुरुवर आचार्यश्री ने समर्पित भाव से सभी छात्रों का अहर्निश जीवन–निर्माण तो किया ही, वेदानुकूल मार्ग पर भी अग्रसर होने के लिए प्रेरित किया। गुरुवर पं. हरिसिंहजी त्यागी हमारे सच्चे मार्गदर्शक रहे हैं।" इस प्रकार डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के हृदय के उद्‌गार पूज्य पितामह आचार्य पं. हरिसिंह त्यागी के प्रति प्रकट हुए। डॉ. साहब के इस कथन से मेरा मन पुलकित और प्रफुल्लित हो उठा।

"मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के प्रति मनुष्य को संवदेनशील होना ही चाहिए।" इसी भावना से डॉ. लोखण्डे ने 30 सितम्बर 1993 में किल्लारी(लातूर) में आये विनाशकारी भूकम्प में 200 कार्य कर्ताओं को साथ लेकर चार मास तक भूकम्प ग्रस्त 52 गाँवों में राहत के कार्य किये। मेरी दृष्टि में संसार में 'परोपकार' से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। किन्तु डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे परोपकार की कसौटी पर भी खरे उतरते हैं। महाकवि तुलसीदास ने कहा है– परहित सरिस धरम नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई। परोपकार की भावना मनुष्य में ही नहीं अपितु पशु–पक्षियों, वृक्ष तथा नदियों तक में पाई जाती है। रहीम कवि का कथन है–तरुवर फल नहिं खात हैं, सरवर पियहि न पान। कहि रहीम परकाज–हित, सम्पति संचहि सुजान।। इस प्रकार परोपकार की भावना डॉ. लोखण्डे के जीवन में पूर्णरूपेण चरितार्थ होती है। तन, मन, धन से समाज की सेवा में लगकर राहत कार्यों में विशेष योगदान करना डॉ.लोखण्डे का एक स्वाभाविक–गुण है। श्री चन्द्रशेखर दया, सहिष्णुता, प्रेम तथा त्याग की प्रतिमूर्ति हैं। समाज में रहकर जो मनुष्य दूसरों के लिए जीता है वही मनुष्य आदर के योग्य होता है। डॉ. लोखण्डे सरीखे महापुरुष इस समाज में समादृत भाव से देखें जाते हैं।

डॉ. चन्द्रशेखर ने महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश तथा कर्नाटक के कई स्थानों में जाकर आर्य समाज के मंच से अपने व्याख्यानों द्वारा सामाजिक–सुधार के साथ ही धार्मिक सुधार पर बल दिया। राष्ट्र रक्षा सम्मेलन, युवा सम्मेलन, संस्कृत रक्षा सम्मेलन, महिला सम्मेलन आदि सम्मेलनों का समय–समय पर आयोजन कर समाज में जागृति लाने का कार्य भी किया। अपने उपदेशों से युवा पीढ़ी में देश–प्रेम की भावना को जगाने में जो योगदान दिया, उसे भुलाया नहीं जा सकता है।

महाराष्ट्रवासी डॉ. लोखण्डे जितना सम्मान अपनी मातृभाषा मराठी को देते हैं उससे कम नहीं हिन्दी भाषा

को देते हैं। राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रचार–प्रसार में 22 वर्षों से हिन्दीसेवी डॉ. चन्द्रशेखर ने विशेष भूमिका निभाई है।

मुम्बई हिन्दी विद्यापीठ लातूर के प्रमुख के पद पर रहकर सैकड़ों छात्रों को शिक्षित ही नहीं किया अपितु पूर्ण दीक्षित भी किया। हिन्दी भाषा के प्रति अगाध–प्रेम इनमें दृष्टिगोचर होता है। हिन्दी गरिमा को बढ़ाने में डॉ. साहब आज भी कटिबद्ध हैं।

डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे वेद, उपनिषद् तथा गीता के सिद्धान्तों को मानने वाले एक ऐसे व्यक्ति हैं जो हम सब के लिए प्रेरणा के स्रोत हैं। आर्य सिद्धान्तों का पालन करना इनके जीवन का परम धर्म है। गुरुकुलीय–प्रेम के वशीभूत होकर डॉ. चन्द्रशेखर जी सपत्नीक 22 अक्टूबर 2012 को अपनी मातृसंस्था ज्वालापुर को दर्शनार्थ पधारे थे। अतिथि देवोभव की भावना का पालन करते हुए मैंने रात्रि विश्राम के लिए इनकी समुचित व्यवस्था गुरुकुल के एक अतिथि भवन में की। अतिथि–रूप में आये डॉ. लोखण्डे मेरे आतिथ्य को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुये। प्रातःकाल पास ही के गाँव बहादुरपुर जट के निवासी तथा गुरुकुल ज्वालापुर के पूर्व स्नातक डॉ. अभयदेव शास्त्री सपत्नीक पधारे। परस्पर कुशलक्षेम पूछी गई। डॉ. लोखण्डे ने महाराष्ट्र का प्रसाद खाने के लिए हम सभी को दिया, उस प्रसाद में प्रेम तथा अपनत्व की जो भावना समाहित थी, उसे मैं शब्दों में नहीं कह सकता । इसी बीच गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के प्राचार्य तथा संस्कृत के विशिष्ट विद्वान डॉ. केशवप्रसाद उपाध्याय का भी आगमन हुआ। फिर क्या था, इन यशस्वी स्नातकों ने साहित्यिक–चर्चाओं के साथ ही प्राचीन गुरुकुलीय इतिहास दुहराना प्रारम्भ कर दिया तथा अपने उन आदर्श गुरुजनों को भी स्मरण किया जो वास्तव में गुरुकुल–सेवा में महान समर्पित व्यक्तित्व थे। उन गुरुओं की गम्भीरता, गहनता तथा महनीयता का अनुभव आज भी इन स्नातकों के हृदय में समाया हुआ है। गुरुकुलीय शिक्षा–पद्धति, यज्ञ तथा अध्ययन–अध्यापन पर परस्पर विस्तृत चर्चा भी हुई। डॉ. लोखण्डे का कहना था, 'जब तक गुरुकुल में समर्पित, त्यागी, छल–कपट रहित, सत्यवादी तथा सदाचारी व्यक्तित्व रहेंगे तब तक गुरुकुल की दशा और दिशा ठीक रहेगी।'

डॉ. चन्द्रशेखर समाजधर्मी ही नहीं अपितु कवि एवं लेखक भी हैं। डॉ. लोखण्डे की मराठी तथा हिन्दी में अनेक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं जिनमें प्रमुख हैं–हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास(घूडमल प्रहलाद कुमार प्रकाशन हिण्डौनसिटी,राज.) नये युग की ओर आर्य समाज(हासानन्द प्रकाशन), अवतार सुनिर्णय(हिन्दी) तथा मराठी में लिखित अवतार निर्णय(हिण्डौनसिटी व महाराष्ट्र से प्रकाशित) स्वामी दयानन्द : संक्षिप्त जीवन चरित्र एवं विचारधन, वेदों में पर्यावरण विज्ञान तथा मुट्ठीभर तूफान(काव्य संग्रह) प्रमुख हैं। रचनाकार डॉ. लोखण्डे के लेख देश की विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में निरन्तर प्रकाशित होते रहे हैं जिनमें वैदिक–पथ(हिण्डौनसिटी, राज.) आर्यजगत्(दिल्ली), आर्यमित्र(उ.प्र.) राजधर्म, वैदिक गर्जना, संचार, एकमत, दक्षिण समाचार, लातूर समाचार व वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक आदि प्रमुख हैं।

अन्त में मैं डॉ. लोखण्डे के 65 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर प्रकाशित होने वाले अभिनन्दन ग्रन्थ और आयोजित होने वाले अभिनन्दन समारोह के लिए अपनी अनेकशः शुभकामनायें व्यक्त करता हूँ।

सम्पर्क सूत्र : गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर,
पत्रालय–गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।
वायुदूत : 09456069271

डॉ. शेखर : एक प्रेरक व्यक्तित्त्व

डा. यज्ञमित्र आयंगर

डा.आयंगर गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के स्नातक और आर्य विद्वान हैं। साऊथल, यू.के.में रहते हैं।

व्यक्ति वह होता है जो स्वाभाविक भावना को निःसंकोच व्यक्त करे और उसकी यही प्रकृति व्यक्तित्व है, जो मेरे परम मित्र डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के लिए सार्थक पर्यायवाची है। मेरी और डॉ. शेखर की मित्रता बालपन (किशोरावस्था) से ही रही है, जब हम दोनों गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में अध्ययन करते थे। उसी समय मैं उनके भावी जीवन के बारे में विचार करता था कि ये काफी कर्मठ, सहनशील, परोपकारी, आत्म–समर्पित व्यक्तित्व के धनी होंगे। यद्यपि कभी बालसुलभ विचारों के होते हुये, यह बात स्पष्ट नहीं किया किन्तु मेरा मन एकरूप से आश्वस्त था।

मुझे गर्व है ऐसे मित्र पर, जिसने वैदिक धर्म, संस्कृति के प्रचार एवं समाज के उत्थान के लिए न केवल स्वयं को अपितु अपने परिवार को भी समर्पित कर दिया ऐसे मनीषी की भला कौन प्रशंसा नहीं करना चाहेगा। जब हम उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अवलोकन करते हैं तो पाते हैं कि वे एक सुलझे हुये शालीन और सुसभ्य व्यक्ति हैं। उनका व्यक्तित्व प्रेरक और जीवन्त है तथा उसी प्रकार उनका कृतित्व भी बहुआयामी है। वे एक विचारक, लेखक और समाजसेवक हैं। धार्मिक, राष्ट्रीय, सामाजिक, साहित्यिक क्षितिज पर उनका अवदान द्वेषियों के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकता है। महाराष्ट्र विशेषकर मराठवाड़ा और अन्य राज्यों में उन्होंने जिस प्रकार विविध प्रकार की रचनात्मक और धार्मिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियाँ चलाईं, उससे यह तो कहा ही जा सकता है कि वे साधारण से एक असाधारण व्यक्तित्व हैं। इनके व्यक्तित्व का सबसे मजबूत पक्ष यह रहा है कि उन्होंने सिद्धान्तों का पालन करते हुये ही अपने सारे कर्म किये।

मैं चन्द्रशेखर के साथ 11वीं से विद्याभास्कर (गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर की स्नातक परीक्षा) का सहपाठी हूँ। मेरी और शेखर की घनिष्ठ मित्रता थी। उसमें यह भी कारण हो सकता है, हम दोनों दक्षिण भारत से थे। हमारा दोनों का साथ हमेशा रहता था। मेरे विचार से उनका कोई अमित्र या शत्रु नहीं था। वे सभी के साथ मित्रता का व्यवहार रखते थे। उनमें एक विशेषता यह थी कि छोटों से लेकर बड़ों तक सभी के साथ उनके अपनत्व के सम्बन्ध थे। उन्हें कभी किसी से लड़ते–झगड़ते नहीं देखा। जिन विद्यार्थियों के साथ उनकी घनिष्ठ मित्रता थी उनमें से एक मैं भी था।

डॉ. चन्द्रशेखर में अनेक कलाओं की खूबियाँ थीं। संगीत, व्याख्यान, अन्त्याक्षरी आदि में वे प्रवीण थे। प्रत्येक शनिवार को भाषण प्रतियोगिता होती थी। वे उसमें बहुत उत्साह से भाग लिया करते थे। श्रेष्ठ वक्ता बनने में अवश्य ही इसका योगदान रहा है। संगीत, कला में हमारे सहपाठियों में वे सबसे आगे थे। हम उनके भजन, गीत बड़े चाव से सुनते थे। उनका स्नेहपूर्ण व्यवहार सभी को अपनी ओर आकर्षित करता था । उनके जीवन पर सबसे अधिक प्रभाव आचार्य नन्दकिशोर जी शास्त्री, पं. प्रकाशवीर शास्त्री तथा कुँवर सुखलाल शास्त्री आर्य मुसाफिर के भाषणों का पड़ा। विद्यार्थीकाल में मुझे इतना महसूस हुआ कि उनके साथ हर कोई विद्यार्थी मित्रता करने के लिए उत्सुक रहता था।

उनके 65 वें वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में एक अभिनन्दन ग्रन्थ का विमोचन वस्तुतः प्रशंसनीय है, जो कृतज्ञता को व्यक्त करने का एक मात्र साधन है। ऐसे मनीषी का अभिनन्दन होना हमारे लिए ही नहीं प्रत्येक कर्मवीर मानव के लिए गौरव की बात है। मैं उनके शतायु और कर्मव्रती जीवन के स्वास्थ्य और अहिर्निश कर्मधर्मिता की कामना करता हूँ।

सम्पर्क सूत्र : 28 नार्थ रोड, साउथल, यू.के.

वैदिक महासम्मेलन के सफल संयोजक

आचार्य अखिलेश शर्मा

आचार्य अखिलेश शर्मा जी आर्य विद्वान एवं संस्कृत के प्रवक्ता हैं। समाजसेवा और संस्कृत साहित्य की सेवा में आप की गहरी रुचि है।

संसार में हर व्यक्ति की प्राथमिकता बाल–बच्चों का पालन–पोषण और उनके आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए हर सम्भव सहायता करना होती है। देश, धर्म, समाज और संस्कृति की रक्षा और विकास के लिए अपवाद स्वरूप ही कोई अपना जीवन समर्पित करता है। ऐसे ही एक महामना स्वनाम धन्य व्यक्तित्व हैं लातूर निवासी डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे। डॉ. लोखण्डे एक ऐसे परिवार के मुखिया ही नहीं बल्कि सारे परिवार को देश, समाज और संस्कृति के संरक्षण देने वाले महामना भी हैं। एक सशक्त लेखक के रूप में– डॉ. चन्द्रशेखर आर्य जगत् के एक सशक्त लेखक के रूप में प्रतिष्ठित तो हैं ही एक गवेषक के रूप में भी आप की प्रतिष्ठा है। आप की लिखी अनेक पुस्तकें इसका प्रमाण हैं। इन पुस्तकों में जहाँ साहित्य से सम्बन्धित हैं तो वहीं पर अनुसंधानपूर्ण इतिहास की भी पुस्तकें हैं। वेदों पर आधारित हैं तो आर्य समाज से सम्बन्धित भी हैं। पुस्तक लेखन के अतिरिक्त आप के लेख आर्य समाज की विभिन्न हिन्दी और मराठी पत्र पत्रिकाओं में निरन्तर प्रकाशित होते रहते हैं। पुस्तक 'आर्य समाज नये युग की ओर' आर्य समाज के कार्य, प्रगति और विश्वपटल पर नये सिरे से स्थापित होने की लेखक की सद्भावना पूरी तरह से द्रष्टव्य होती है। पुस्तक में आर्य समाज की प्रगति व वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए अत्यन्त उपयोगी सुझाव दिये गये हैं । यह पुस्तक आर्य समाज के कार्यकर्ताओं, सदस्यों और उपदेशकों के लिए जहाँ उपयोगी है वहीं पर आर्य समाज से इतर आर्य समाज के सम्बन्ध में जानने और उसके कार्यों को समझने वालों के लिए भी अत्यन्त उपयोगी है।

एक प्रखर समाजसेवी – डॉ. लोखण्डे जी का जीवन एक प्रखर समाजसेवी के रूप में रहा है। भूकम्प पीड़ितों की सेवा हो या दीनहीनों की सहायता, धर्म की रक्षा हो या आर्य समाज के माध्यम से सामाजिक उत्थान सभी क्षेत्रों में डॉ. साहब ने आगे बढ़कर कार्य किये। आप के अनेक कार्यों के लिए देश की अनेक संस्थाओं ने समय–समय पर इन्हें पुरस्कृत किया और अपना सम्मान बढ़ाया। 'बहुजन हिताय व बहुजन सुखाय' के राही डॉ. साहब ने मराठवाड़ा ही नहीं अन्य क्षेत्रों में भी अन्धविश्वास, पाखण्ड और सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए अनथक प्रयास किये। इससे जहाँ समाज में अबोध लोगों को स्वधर्म, स्वभाषा और स्वसंस्कृति के प्रति 'बोध' प्राप्त हुआ वहीं पर नवचेतना का संचार भी हुआ। ऐसे महामना के प्रति भला कौन नहीं नतमस्तक होना चाहेगा। आर्य महासम्मेलन लातूर – महाराष्ट्र में लातूर शहर आर्य समाज का एक सशक्त गढ़ माना जाता रहा है। स्वतन्त्रता के पूर्व ही यहाँ आर्य समाज के विद्वानों और भजनोपदेशकों ने आर्य समाज और वैदिक धर्म का डण्का बजाना प्रारम्भ कर दिया था। 1934 से लेकर अब तक अनेक कार्यक्रम होते आये हैं ।

लेकिन ऐतिहासिक कार्यक्रमों के आयोजन से समाज पर जो प्रभाव पड़ता है वह वर्षों–वर्षों तक बना रहता है। ऐसा ही एक ऐतिहासिक कार्यक्रम का आयोजन डॉ. चन्द्रशेखरजी के संयोजकत्व में लातूर शहर में आयोजित किया गया। यह ऐतिहासिक आयोजन था– आर्य महासम्मेलन का। सन् 2002 में आयोजित होने वाले इस महासम्मेलन की चर्चा आज भी होती है। ऐसा आर्य महासम्मेलन व्यक्तिगत रूप से महाराष्ट्र में प्रथम बार आयोजित किया गया था। जिसने भी इस आर्य महासम्मेलन में भागीदारी की सभी ने इसकी मुक्त–कंठ से प्रशंसा की। वास्तव में एक अत्रुटिपूर्ण वैदिक महोत्सव के ऐसे आयोजन के लिए एक महामना व्यक्तित्व की ही आवश्यकता होती है। यदि आयोजक कर्तव्यनिष्ठ, जिम्मेदार और धर्म परायण है तो आयोजन अपना एक इतिहास बना देता है नहीं तो महज कोटापूर्ति के अतिरिक्त कुछ भी हासिल नहीं होता। प्रा. चन्द्रशेखर एक ऐसी मनस्वी आयोजक थे जिन्होंने इस महासम्मेलन को एक नया आयाम ही नहीं दिया बल्कि इसकी सार्थकता भी प्रमाणित की। ऐसे आयोजक के लिए ही संस्कृत में योजकस्तत्त दुर्लभं कहकर प्रतिष्ठा दी गई है। चन्द्रशेखरजी के योजकत्व का ही कमाल था कि महासम्मेलन में भाग लेने आये 90 हजार नर–नारियों की एक दुरुस्त व्यवस्था हो सकी।

लातूर में आयोजित 2002 का यह आर्य महासम्मेलन 16 जनवरी से 20 जनवरी तक आयोजित किया गया था। यह सारा आयोजन आर्य समाज रामनगर(लातूर) के तत्वावधान और डॉ. चन्द्रशेखरजी के संयोजकत्व में आयोजित किया गया था। ज्ञातव्य है इसके पूर्व 1975 ई. में डॉ. लोखण्डेजी के नेतृत्व में ग्राम रेणापूर में दयानन्द बलिदान शताब्दी का आयोजन बड़े स्तर पर किया गया था । यह भी एक सफल आयोजन था। इससे डॉ. साहब की प्रतिभा, योग्यता और कर्तव्यनिष्ठा का पता चल गया था। सन् 2002 के महासम्मेलन में जिन विशिष्ठ आर्य विद्वानों, संन्यासियों, भजनोपदेशकों और समाजसेवियों ने भाग लिया था, उनमें प्रमुख हैं– स्वामी श्रद्धानन्द(गुरुजी,महा.) स्वामी अग्निवेश (दिल्ली), आचार्य अमृतलालजी (मध्यप्रदेश), स्वामी देवव्रतजी (दिल्ली), श्री वेदप्रकाश श्रोत्रिय (दिल्ली), आचार्य भगवानदेव चैतन्य (हि.प्र.), आचार्य सत्यवीर शास्त्री (अमरावती), स्वामी संकल्पानन्दजी, आर्य नरेश, पुष्पादेवी, डॉ. जनार्दनराव बाघमारे (सांसद–लातूर) आचार्य अखिलेश शर्माजी, आचार्य सुभाषजी (ओडशी), व पं. सुधाकर शास्त्री(निलंगा) प्रमुख थे। इस महासम्मेलन में आर्य युवा कार्यकर्ता सम्मेलन, महिला सशक्तिकरण सम्मेलन, आर्य युवा–युवती परिचय सम्मेलन, धार्मिक एकता सम्मेलन, आतंकवाद विरोधी सम्मेलन व निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस विशाल सम्मेलन के सफलतापूर्वक सम्पन्न हो जाने और वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार की दृष्टि से इसे मील का पत्थर कहा गया। इस सम्मेलन से निर्विवाद यह कहा जाने लगा कि डॉ. चन्द्रशेखर जी आर्य जगत् के एक महान मिशनरी हैं। डॉ. साहब का सारा जीवन निश्चित ही प्रेरणा का स्रोत है। ऐसे मनस्वी को हमारा शत्...शत् प्रणाम।

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के इस ब्रह्मचारी ने विदेशों में न सही लेकिन महाराष्ट्र और देश के अन्य क्षेत्रों में अपने महान कृतित्व एवं व्यक्तित्व से जनमानस को प्रभावित तो किया ही है। मुझे जैसे पता चला कि हमारे अग्रज डॉ. लोखण्डेजी के 65वें वर्ष के पूर्ण होने के उपलक्ष्य में एक अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन होने जा रहा है तो मुझे बहुत खुशी हुई। खुशी इस लिए हुई की वे इसके हकदार हैं। उनका अभिनन्दन तो किया ही जाना चाहिए। वे ऐसे पवित्र–आत्मा हैं जो कहते नहीं कर के दिखाने वाले हैं। वे सभी के प्रेरणा स्रोत हैं। अभिनन्दन ग्रन्थ से निश्चित ही लोगों को 'श्रेष्ठ' कर्म करने की प्रेरणा मिलेगी। हमारी कामना है, डॉ. लोखण्डे जी अपने शेष जीवन में किये सभी सकल्पों को पूर्ण करने में सफल हों। मैं आप के उज्ज्वल भविष्य के साथ आप के शतायु हेने की कामना करता हूं।

सम्पर्क सूत्र–राजर्षि शाहू महाविद्यालय संस्कृत विभाग,
लातूर (महाराष्ट्र)

डॉ. लोखण्डे सृजित मुक्तक एवं शेरां की बगिया 'मुट्ठीमर तूफान'

श्री एल.के. दीवान

श्री दीवान अनेक संस्थाओं के संस्थापक, सृजनधर्मी, शिक्षक और समाजकर्मी हैं। आप की साहित्य में विशेष रुचि एवं सहभागिता है।

मुक्तक एवं शेरां की बगिया–'मुट्ठीभर तूफान' के रचनाकार हैं चन्द्रशेखर लोखण्डे। आप आर्य समाज के कर्मठ और पूर्ण समर्पित व्यक्तित्व हैं। डॉ लोखण्डे समाज सुधार के लिए कोरी बातें नहीं करते बल्कि समाज सुधार का कार्य भी करते हैं। आप ने गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर से विद्याभास्कर तक की शिक्षा पाई है। वहाँ के सात्विक वातावरण का प्रभाव आप के जीवन पर बहुत गहरा दिखाई पड़ता है। आप के कवि मन पर भी आप के कार्य का प्रभाव स्पष्ट दिखाई पड़ता है। यह एक सुखद संयोग ही है कि जिस समय डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के छात्र थे तब मैं वहाँ दो वर्ष आंग्ल–भाषा का अध्यापक रहा। अचानक ही एक दिन मेरे पास कवि डॉ. सुशील कुमार त्यागी 'अमित' का फोन आया।....आप का एक पुराना छात्र आप को याद कर रहा था। उसका नाम चन्द्रशेखर लोखण्डे है। मातृभाषा मराठी है। हिन्दी और संस्कृत का प्रचार–प्रसार कर रहा है। वेद, उपनिषद् के उपदेशों के अनुसार चलने वाला है। उनकी पुस्तक 'मुट्ठीभर तूफान' प्रकाशित हुई है। उसकी एक प्रति लोखण्डे ने आप के लिए भेजी है। इसमें उनके मुक्तक एवं शेर हैं। पुस्तक शीघ्र ही आप के पास पहुँचाऊँगा आदि....आदि।"

सुशील 'मुट्ठीभर तूफान' मुझे दे जाता है। उस पर लिखा है– वरिष्ठ साहित्यकार श्री के.एल. दीवान को रचयिता की ओर से सादर भेंट।' मैंने उसे दो बार पढ़ा।

डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे का मुक्तक एवं शेर संग्रह 'मुट्ठीभर तूफान' तरह–तरह के फूलों की एक बगिया है। रंग–विरंगें फूल अपने–अपने खुशबू वाले, मन की गहराई तक छू लेने वाली सुगन्ध से युक्त। पुस्तक में पिरोये मुक्तक पाठक के मन पर एक गहरा प्रभाव छोड़ जाते हैं। इसके साथ ही वे पाठकों को कवि के मचलने, करवटे लेने व उथल–पुथल से भी रू–ब–रू कराते हैं। इस बात से कौन इन्कार कर सकता है कि मनुष्य के जीवन में कुछ गम ऐसे भी आते हैं जो उसे प्यारे लगने लगते हैं तभी तो लोखण्डे कह उठते हैं–

उजालों के पीछे न भागों दोस्तों / गम के अंधेरों से भी हमें अपनत्व है।(मुक्तक अंश पृ.14) और गम एक गीत है गा लेते हैं / हार को भी जीत मान लेते हैं।(मुक्तक अंश पृ.46)

लगता है लोखण्डे समझते हैं, गिरते हैं शाह सवार ही मैदाने जंग में। जीवन में हार जीत तो लगी रहती है। वास्तविक जीत है, दिल का न हारना हौसले के साथ, सच्चे मन से ईमानदारी से हालात का सामना करना। हिम्मत से सामना करना। मुझे तो लगता है उपरोक्त पंक्तियाँ कुछ ऐसा ही कह रही हैं।

डॉ. लोखण्डे का मन राष्ट्र की सेवा के लिए उद्दत है। उनकी चाहत है कि आज युवक अपने देश के प्रति अपने कर्तव्य को पहचाने। उसका पालन करें और देश पर मडराते संकट से उसे बचा लें–

नौजावनो! उठो कुछ सोचो विचारो संकट की घड़ी में देश को उबारो,

भौंरों ने उजाड़ा है बहारे चमन, खूने जिगर से तुम इस गुलशन को संवारो (पृष्ठ 49)

आज मैं 1945 में लौट गया हूँ। तब मैं छात्र था। एक बुजुर्ग उस्ताद कहा करते थे–"जब भी भोजन करने बैठो, तब मालुम कर लो तुम्हारे आस पास कोई भूखा तो नहीं। अगर जंगल में भी हो तो आवाज लगाओ–मैं भोजन करने वाला हूँ कोई साथ देना चाहे तो उसका स्वागत है।" कवि के मन की पुकार है–

जो औरों को खिलाकर खाते हैं शेखर/वे इंसां नहीं देवता समान होते हैं।"

धन्य है इन पंक्तियों का लेखक और इन पंक्तियों में छुपा संदेश भी। कहा गया है, हम प्रभु का धन्यवाद तो करें कि उसने हमें इंसान बनाया, हमें तरह–तरह के तोफे दिये, परन्तु उससे कुछ माँगे नहीं। वह हमारी जरूरतें पूरी करता है। कुछ ऐसी ही बात कह उठते हैं, लोखण्डे एक शेर में–

जन्नत के इरादे से खुदा को खुश करे कोई,
क्या फर्क है 'शेखर' इबादत और घूसखोरी में।(पृ.136)

इंसान अगर नेक इरादे रखे, हिम्मत से काम ले तो कामयाबियाँ उसके कदम चूमती हैं। तभी तो लोखण्डे एक शेर में कह उठते हैं– यह कहना है गलत कि इंसा कुछ कर नहीं सकता/हो इरादा बुलन्द तो वह क्या कर नहीं सकता। और भरोसा है जिसे अपनी मेहनत और सच्चाई का/ वह नातवॉं नहीं है किसी के रहनुमाई का।(पृ. 137) सागर से गोताखोर कितने ही मोती निकाल लाए, सागर का खज़ाना कहां खाली होता है। जिस बगिया में सैकड़ों फूल हों, हर फूल की अपनी खुशबू हो, ऐसे में हर फूल से, हर खुशबू मेरे जैसे साधारण आदमी कहाँ इंसाफ कर पायेगा। पाठक खुद पढ़े इंसाफ करें। मैं तो डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के लिए दुआ ही कर सकता हूं, खूब लिखें। अच्छा लिखें।

शुभकामनाओं के साथ

एल.के.दीवान
सम्पर्क सूत्र : लिटिल एंजिल प्रीपरेटी स्कूल
380,गोविन्दपुरी, हरिद्वार
वायुदूत : 09756258731

शुम्भनी द्यावा पृथ्वी अन्ति सुम्ने महिव्रते।
आपः सप्त सुस्त्रुवुर्देवीस्ता नो मुंचन्त्वंहसः।।

जैसे सूर्य और पृथ्वी लोक ईश्वर के नियमों के आधीन होकर अपनी–अपनी गति पर चलकर जल वृष्टि, अन्न, फल आदि से प्राणी मात्र का उपकार कर रहे हैं वैसे ही सब मनुष्य इन्द्रियों का निग्रह कर, अच्छा आचार विचार रखकर कष्ट व अपराधों से बचें।

दयानन्द बलिदान शताब्दी के सफल संयोजक

श्री मल्लिकार्जुन आप्पा हालकुड़े

श्री हालकुडे जी की प्राथमिक शिक्षा डा. लोखण्डे जी के साथ हुई है। आप 1989 से 1905 तक रेणापुर के सरपंच व कृषि उत्पन्न बाजार समिति लातूर के संचालक रहे हैं।

महर्षि दयानन्द के मानवता को दिए गए अनगित अवदानों को जब हम स्मरण करते हैं तो हृदय गर्व से भर उठता है। लेकिन इतिहासकारों ने दुराग्रह या अज्ञानता वश उनके अवदानों को उस प्रकार से विश्व समाज के सम्मुख नहीं प्रस्तुत किया, जिसके वे अधिकारी थे। इससे महर्षि के अद्वितीय अवदानों की महत्ता कम नहीं हो जाती बल्कि उन इतिहासकारों की इतिहास–दृष्टि पर प्रश्न उठता है जिन्होंने ऐसा अपराध किया। किसी कालजयी व्यक्ति के कार्यों, जीवन दर्शन, उज्ज्वल चरित्र और विशेषताओं की उपेक्षा या दुराग्रह वश विश्व समाज के सम्मुख लाने में पक्षपात पूर्ण रवैया अपनाया जाय, तो इसे अपराध नहीं तो क्या कहा जायेगा। एक बड़ी भूल महर्षि दयानन्द के उन उत्तराधिकारियों की भी है जो स्वयं को तो महर्षि दयानन्द के सच्चे अनुयायी और अनुगामी तथा प्रचारक कहते रहे लेकिन महर्षि के महतोमहान अवदानों को समग्र रूप में विश्व समाज के सामने उस रूप में प्रस्तुत नहीं कर सके, जैसा प्रस्तुत करना चाहिए था। यदि महर्षि के ये भक्त या अनुगामी महर्षि के उद्देश्यों को संसार में पूरे मनोवेग और संकल्प के साथ प्रचारित–प्रसारित किये होते तो आज सारे संसार की स्थिति आतंककारी और भ्रमपूर्ण न होती।

स्वतन्त्रता के उपरान्त आर्य समाज के शैक्षिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों को स्वतन्त्र भारत के सरकारों ने अपने हाथ में ले लिया, यह देखने में तो ऐसा लगता है लेकिन महर्षि दयानन्द जिस प्रकार की शिक्षा व्यक्ति, परिवार एवं समाज के लिए चाहते थे, वैसा सरकार ने नहीं अपनाया। इसका प्रमाण यह है कि सरकार की शिक्षा से आज व्यक्ति सच्चे अर्थों में मानव न बनकर 'यन्त्र' बनता जा रहा है। इस लिए पढ़ाई–लिखाई के उपरान्त भी व्यक्ति का चरित्र, व्यवहार और कार्य एक श्रेष्ठ मानव जैसे नहीं होते। शिक्षा और विद्या प्रचार–प्रसार का यह कार्य आर्य समाज और महर्षि के सच्चे संकल्पधर्मी योद्धा ही कर सकते हैं। संकल्प से व्यक्ति क्या कुछ नहीं कर सकता है। संकल्प के कारण ही आर्य समाज के युगधर्मी योद्धाओं ने अपनी क्षमता से लोगों को आर्य समाज के युगधर्मी कार्यों को समझाने और करने के लिए प्रेरित भी किया। इन्हीं संकल्पधर्मी योद्धाओं में रेणापूर(लातूर) में जन्मे प्रा. चन्द्रशेखर लोखण्डे भी रहे हैं। उनके संकल्प का प्रतिफल है कि महाराष्ट्र ही नहीं दक्षिण के अनेक राज्यों में वैदिक धर्म, हिन्दी भाषा और वैदिक संस्कृति का प्रचार–प्रसार हुआ।

जिस रेणापूर ग्राम की हम यहाँ चर्चा कर रहे हैं, वह उस अभिनन्दनीय व्यक्ति का जन्म स्थान है जिसके महनीय कृतित्व और व्यक्तित्व के अभिनन्दन हेतु अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित करने का लोगों और संस्थाओं ने निश्चय किया। रेणापूर ग्राम का इतिहास अन्य गाँवों से कुछ अलग प्रकार का रहा है। या यूँ कहें, यह ऐसा गाँव है जो हमेशा सामाजिक सुधार का समर्थक रहा है। हैदराबाद निजाम के मुस्लिम परस्त शासन–व्यवस्था के कारण हिन्दुओं पर निजाम की ओर से दिल दहला देने वाले अत्याचार किये गए। इस अत्याचार के विरुद्ध रेणापूर के युवकों ने 1937 में आर्य समाज रेणापूर के वरिष्ठ पदाधिकारियों के नेतृत्व में निजाम की खिलाफत वाले आन्दोलन

में भाग लिया। इनमें रेणापुर और अन्य स्थानों के आन्दोलनकारी भी सम्मिलित हुये। ये थे–वैद्य कर्मवीर जी कंधारकर (उदगीर), डी.आर.दासजी (लातूर) भाई बंशीलालजी वकील (हैदराबाद) के अतिरिक्त स्थानीय अंबादास गवली, रंगनाथ खताल, मुर्गाप्पा खुमसे, गोबिन्द जाधव, हरिंभाऊ जाधव, विश्वनाथ कातले आदि प्रमुख थे।

चन्द्रशेखरजी के पिता स्व. रामस्वरूपजी उस समय मात्र दस वर्ष के थे, लेकिन आर्य वीरदल के साथ जुड़े हुये और आर्य समाज के प्रचार–प्रसार में योगदान दिया करते थे। वे सुधारवादी विचारों के पोषक थे। अस्पृश्यता निवारण, दलितों के साथ सहभोज के आयोजन, शिक्षा का प्रचार और अन्तर्जातीय विवाह जैसे समाज सुधार के कार्यों को करने में रुचि रखते थे। इसके लिए उन्हें दो बार महाराष्ट्र सरकार से 'अस्पृश्यता निर्मूलन' पुरस्कार भी प्राप्त हुये। स्पष्ट है डॉ. चन्द्रशेखर को इस प्रकार के कार्य करने की प्रेरणा अपने पिता से ही प्रारम्भ में मिली।

रेणापूर के क्रान्तिकारियों में राष्ट्र और राष्ट्रभाषा के प्रति अत्यन्त लगाव था। 1957 में यहाँ के 10–12 युवकों ने पंजाब हिन्दी सत्याग्रह में भी भाग लिया था और छः माह तक कारागार में भी बन्द रहे। ब्रिटिश शासकों के अत्याचार हों या मुस्लिम आततताइयों के अत्याचार रेणापूर के क्रान्तिवीर आर्य समाज के झण्डे तले विरोध के लिए सदा आगे आये। 1938 में रेणापूर के आर्य सत्याग्रहियों ने अत्याचार के विरोध में सत्याग्रह किये और कारागार की सजा काटी। सन् 1948 में हैदराबाद मुक्ति संग्राम जोरों पर था। उस समय रजाकारों का प्रतिकार यहाँ के स्वतन्त्रता सेनानियों ने डट कर किया। 13 सितम्बर 1848 को सरदार बल्लभभाई पटेल ने हैदराबाद में सेना लगा दी। तब नलदुर्ग के रास्ते हिन्दुस्तानी सेना लातूर आई। जब यहाँ के स्वतन्त्रता सेनानियों को ज्ञात हुआ तो श्री रामस्वरूप जी को लातूर भेजा। 18 किमी पैदल चलकर वे लातूर आये और सेना के अधिकारियों से मिलकर उनसे रेणापूर चलने के लिए निवेदन किया और अधिकारियों को रजाकारों द्वारा महिलाओं, बच्चों और वृद्धों पर किये जा रहे अत्याचार को विस्तार से बताया। अत्याचार का सारा किस्सा सुनकर सेना के अधिकारी रेणापूर आये और रातोरात रजाकारों का सफाया कर दिया। इससे रेणापूर को रजाकारों के अत्याचार से बचाया जा सका।

श्री रामस्वरूपजी (श्री चन्द्रशेखरजी के जनक) स्वतन्त्रता के बाद समाज सुधार के अनेक कार्य किये। 70 के दशक में उन्होंने 'मराठवाड़ा विद्यापीठ औरंगाबाद' के अन्तर्गत समाज प्रबोधन हेतु व्याख्यान माला की शुरूआत की। इसके बाद उन्होंने देवदत्त तुंगार, सांबप्पा राऊत तथा माणिक राव भोषले के साथ मिलकर 'अन्तर्जातीय विवाह मण्डल रेणापूर' का गठन किया। अब तक इस मण्डल द्वारा 300 से अधिक विवाह सम्पन्न कराये जा चुके हैं। इस प्रकार डॉ. लोखण्डे को विरासत में समाज सुधार के संस्कार मिले।

सन् 1971 में चन्द्रशेखर लोखण्डेजी गुरुकुल महाविद्यालय से स्नातक की शिक्षा पूरी करके रेणापूर आ गए। अब उन्होंने चिकित्सा व्यवसाय को अपनाने का निश्चय किया। साथ ही पिता के सेवा कार्यों में भी हाथ बटाने लगे। लोखण्डेजी की माता श्रीमती त्रिवेणीबाई आटे की चक्की के द्वारा छोटा सा व्यवसाय करतीं इससे घर का काम काज चलता। घर में चन्द्रशेखरजी के माता–पिता के अतिरिक्त ये सात भाई बहन थे। घर की हालत अच्छी न होने के कारण सभी को परेशानियों का सामना करना पड़ता। लेकिन पिता पर इसका प्रभाव हृदय रोग के रूप में सामने आया। चिकित्सा कराने के बावजूद भी वे स्वस्थ न हो सके और 1980 में, 52 वर्ष की अवस्था में इस दुनिया से चल बसे। अब तो घर का सारा भार डॉ. चन्द्रशेखर पर आ पड़ा। घर की हालात अच्छी नहीं होने पर भी लोखण्डेजी कभी हताश नहीं हुये। अब उन्होंने जीविका के व्यवसाय के रूप में 1981 में महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा में उपदेशक के रूप में कार्य करना प्रारम्भ किया। लेकिन ठौर ठिकाना रेणापूर को ही बनाया। पिता की मृत्यु के उपरान्त सम्पत्ति का बँटवारा हुआ। भाइयों को सारी सम्पत्ति बाँटकर अपने लिया केवल पैतृक मकान ही लेने का फैसला लिया। इस तरह त्याग का परिचय देते हुये डॉ. लोखण्डे ने समाज के सामने, एक आदर्श रखा। प्रतिनिधि

सभा से जो वेतन मिलता, उससे ही वे गुजारा करते, घर में भले ही तंगी रहती। इनकी पत्नी ने घर की हालात को सुधारने के लिए सरकारी दवाखाने में मात्र 80 रुपये वेतन पर परिचारिका की नौकरी कर ली। लेकिन डॉ. साहब तो और ही धातु के बने थे। उन्हें तो दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने की धुन सवार थी। उनके मन में तो कुछ विशेष करने का चिन्तन चल रहा था।

1983 में अजमेर में महर्षि दयानन्द की जन्म शताब्दी मनाई गई। यह देखकर चन्द्रशेखर जी को भी लातूर में दयानन्द बलिदान शताब्दी मनाने का जुजून शुरू हो गया। एक दिन उन्होंने रेणापूर के संभ्रान्त लोगों के सामने महर्षि दयानन्द बलिदान शताब्दी मनाने की चर्चा की। लोगों ने लोखण्डेजी का प्रस्ताव पसन्द आया और सभी इस विशाल आयोजन को सफल बनाने में जुट गए। तत्कालीन सरपंच श्री मल्लिकार्जुनप्पा हालवुडे, ग्राम पंचायत के सदस्य और आर्य समाज के सदस्य सभी मिलकर (सभी तरह के मतभेदों को भुलाते हुये) दयानन्द बलिदान शताब्दी मनाने के लिए अपनी जिम्मेदारी के अनुसार कार्य करने लगे। शताब्दी समारोह के संयोजक के रूप में डॉ. चन्द्रशेखर जी के नाम का प्रस्ताव किया और प्रत्येक कार्य के बटवारे के लिए अलग–अलग प्रकार की समितियों का गठन किया गया। बलिदान शताब्दी की तिथि 2, 3, 4 फरवरी 1985 निश्चित की गई। समारोह की मुख्य समिति इस प्रकार की थी। अध्यक्ष, हरिश्चन्द्र(गुरूजी), अर्थ समिति के अध्यक्ष श्री गोपालराव आकिनगिरे, सांबप्पाराऊत, संयोजक व कोषाध्यक्ष के रूप में डॉ. चन्द्रशेखरजी और सहसंयोजक थे ॲड कृष्णाथराव आकिनगिरे। आयोजन को सफल बनाने में गाँव, कस्बा, शहर व नगर के नौकरी पेशा करने वाले, कृषक, खेतिहर श्रमिक, पानपट्टी और रिक्सा चलाने वालों तक ने अपनी क्षमता के अनुसार अपना योगदान तन, मन व धन से दिया। इतना ही नहीं मुस्लिम, पौराणिक भाई और दलित वर्ग के लोग भी योगदान देने में पीछे नहीं रहे।

मराठवाड़ा के इस क्षेत्र में प्रथम बार ऐसा हुआ जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों की भागीदारी सबसे अधिक रही। इस समारोह में युवक सम्मेलन, कार्य कर्ता सम्मेलन, पंजाब बचाओ सम्मेलन, अन्तर्जातीय विवाह सम्मेलन, दहेज विरोधी सम्मेलन,धर्म रक्षा सम्मेलन और महर्षि दयानन्द श्रद्धांजलि कार्यक्रम आयोजित किये गये। गाँव से बाहर इस समारोह का आयोजन किया गया था जहाँ हजारों लोगों की संख्या में बैठने की व्यवस्था थी। इस विशाल पण्डाल में एक साथ दस हजार से अधिक लोग बैठ सकते थे। सभी के लिए गाँव की तरफ से भोजन की व्यवस्था की गई थी।

गाँव वालों के सहयोग से किस प्रकार से एक सफल आयोजन किया जा सकता है, उक्त समारोह इसका जीता जागता प्रमाण है। इस समारोह में आर्य जगत् के अनेक प्रसिद्ध विद्वानों और यतियों ने भाग लिया था। जिसमें हिन्दी और महाराष्ट्रीयन दोनों प्रकार के सहभागी थे। इस समय स्वामी अग्निवेश और स्वामी इन्द्रवेश की जोड़ी आर्य जगत् में प्रसिद्धी के उच्च पायदान पर थी। इस जोड़ी के अलावा वक्ता के रूप में महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रमुख श्री हरिश्चन्द्र (गुरूजी) स्व. कै.देवरत्न आर्य, कु. नसीमा पठान, आचार्य तानाजी, प्रा. कुशलदेवजी, पं. नरदेव स्नेहीजी, प्रा. चन्द्रकान्त शास्त्रीजी(अजमेर) श्री गोपीनाथजी मुण्डे, प्राचार्य देवदत्त तुंगार, प्रा. हरिश्चन्द्रजी रेणापुरकर, आचार्य सुभाषजी (गुरुकुल येडशी, महा.) डॉ. बी.एन. मदनसुरे, सौ. वसुधा पाटिल प्राचार्या, श्री दिनकर राव मोरे, प्रा. नरदेव गुडे, प्रा. विजय कुमार शिंदे, श्री पांडुरंग राव तरकर, प्रा. सत्यकाम पाठक आदि प्रमुख उपस्थित थे। शताब्दी बलिदान समारोह में रचनात्मक और जीवन–संवर्धक कार्यक्रम भी अनेक हुये, जिसमें सर्वरोग निदान चिकित्सा शिविर, अन्तर्जातीय वधू वर परिचय सम्मेलन तथा मंहगाई के विरुद्ध रास्ता रोको आन्दोलन किया गया।

महर्षि दयानन्द बलिदान शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित होने वाला यह विशेष समारोह हर प्रकार से सफल बताया गया। और इसका सारा श्रेय इसके संयोजक डॉ. चन्द्रशेखर जी को दिया गया। लेकिन गाँव के

लोगों ने आवास, भोजन और दूसरे प्रकार की मुकम्मल व्यवस्था की। गाँव में स्थित पाठशाला, अतिथिगृह और ग्राम पंचायत के कमरों का इस समारोह के लिए उपयोग किया गया। समारोह में शोभा यात्रा का दृश्य बहुत ही मनोरम था। विशाल शोभा यात्रा में घोड़े पर सवार आर्य वीरदल के आर्यवीरों का अनुशासन देखने लायक था। यज्ञ का वृहद आयोजन समारोह का आधार था। इसका संचालन गुरुकुल येडशी के प्राचार्य आचार्य सुभाष जी के द्वारा बहुत ही सफलता पूर्वक किया गया।

ग्राम रेणापूर में आयोजित होने वाले इस समारोह ने जिस इतिहास का सृजन किया उससे आर्य समाज के इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ा। इतिहास इस लिए भी कि शायद यह पहला इतना विशाल आयोजन था जिसकी सारी व्यवस्था ग्रामीण जनों ने सारे मतभेद और आग्रह–दुराग्रह भुलाकर किये। लोगों की दृष्टि में इस समारोह की सबसे बड़ी उपलब्धि– गाँव में एकता और भाईचारा का वातावरण नये–रूप में तैयार हुआ। जो गाँव राजनीतिक पार्टियों और मत मतान्तरों में विभक्त हो गया था वह समारोह के कारण इक्ट्ठा हो गया। इतना ही नहीं एक और उपलब्धि इस गाँव को प्राप्त हुई। वह थी, आने वाले ग्राम पंचायत के चुनाव में सभी वर्गों, जातियों और मजहबों के लोगों ने मिलकर फैसला किया कि उनके गाँव के मुखिया का चुनाव इस बार निर्विरोध होगा। और 1985 में हुये ग्राम पंचायत के चुनाव में सभी ने मिलकर निर्विरोध सरपंच सहित सारे पदों पर अपने प्रतिनिधियों का चुनाव किया। इस चुनाव का विशेष अर्थ इस लिए भी माना गया क्योंकि 30 हजार जनसंख्या वाले इस ग्राम में निर्विरोध चुनाव होना किसी बड़ी उपलब्धि से कम नहीं कही जा सकती है। एकता और प्रेम (भाईचारा) का यह सन्देश आर्य समाज के द्वारा दिया गया था, इस लिए आर्य समाज के प्रति लोगों में पहले से कहीं अधिक सद्‌भावना बढ़ी। इस समारोह को सफल बनाने के लिए जो अथक परिश्रम किया गया, उसका ही प्रतिफल सद्‌भावना और एकता के रूप में द्रष्टव्य हुआ। जिन प्रमुख लोगों ने इस ऐतिहासिक समारोह में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, उनमें जहाँ संयोजक के रूप में डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे थे वहीं पर सर्वश्री गोपाल राव आकिनगिरे, विट्ठलराव खण्डाडेजी, बाबुराव बस्तापुरजी, देसाई मालकजी, विठोबा गडगलेजी, मल्लिकार्जुनअप्पाजी, निलकंठराव राजेजी, रविकान्त औसेकरजी, सांबप्पा राऊतजी, बैजनाथ राव बंडेजी, अनुरथ बस्तापुरेजी, नामदेव साबदेजी, विजय खन्दाडेजी, सोपानराव कासलेजी, भारत तेरकर, शिवमंगल लोखण्डेजी, ॲड. कृष्णा थरावजी आकिनगिरेजी, रंगनाथ कातळेजी, दत्तेराव आपसिंगेकरजी व माधवराव भातीकिरेजी व अन्य अनेक समाजसेवी जनों ने अपना बहुमूल्य योगदान दिया।

प्रस्तुति : श्री बाबुराव बस्तापुरे,
श्री सांबप्पा राऊतजी,
श्री बैजनाथ बंडे

जिस देश के बुद्धिजीवी लोग अपनी बुद्धि का प्रयोग ईमानदारी के साथ करना छोड़ देते हैं,
वह देश सब प्रकार से दीन–हीन और नष्ट–भ्रष्ट हो जाता है।
– महर्षि दयानन्द सरस्वती

मेरे बाल सखा डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे

डा. रामअवतार शर्मा

श्री राम अवतार शर्मा जी संस्कृत के विद्वान, समाजसेवक और चिन्तक हैं। वेद, दयानन्द और आर्य के प्रति गहरी निष्ठा और श्रद्धा है। गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति के प्रति समर्पित हैं।

एक जमाना था जब यह गुरुकुल प्राचीन शिक्षा प्राणाली के क्षेत्र में अपनी अप्रतिम विशेषताओं के कारण सुविख्यात था। यह प्रकृति के अनुपम रमणीय वातावरण में वसा हुआ था। इसकी पावन स्थली उन विभूतियों की पदरज से पवित्र रही है जिन्होंने त्याग, तप एवं वैदुष्य की त्रिवेणी में अवगाहन कर अपने जीवन को कृतार्थ किया। त्याग, तप व ज्ञान की मूर्ति आचार नरदेव शास्त्री गुरुकुल के कुलपति थे, वह गुरुकुल का स्वर्णिम काल था।

ऐसे मानव के सर्वांगीण पहलू को विकसित करने में तत्पर गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में डॉ. चन्द्रशेखर के व्यक्तित्व का निर्माण उसी सात्विक वातावरण में हुआ। गुरुकुल में स्नातक बनने के बाद 12 वर्ष पश्चात् अजमेर में ऋषि निर्माण शताब्दी के अवसर पर सन् 1983 में भाई चन्द्रशेखर से भेंट हुई । वर्षों के अन्तराल के बाद भी उनका स्वभाव वैसा ही जो तथा आर्य समाज तथा महर्षि दयानन्द के प्रति उनके विद्यार्थीकाल में था इससे मन प्रसन्नता से भर गया। इस अवसर पर उनके नेतृत्व में महाराष्ट्र की जो आर्य टोली(महर्षि निर्माण शताब्दी) के जूलुस में चल रही थी जो जब वह अजमेर शरीफ की दरगाह के समीप वाले रास्ते को पार कर रही थी तो टोली के चलने वालों के रक्त में एक उबाल आया, उनमें वीर शिवाजी का जोश हिलोर मारने लगा, उनके राष्ट्रवादी नारे जैसे "वन्देमातरम् कहना होगा आदि ने केवल औरंगजेबी इस्लामिक सत्ता को ललकारने वाले व राष्ट्रद्रोही मुसलमानों को झकझोरने वाला दृश्य पैदा किया, अपितु एक बार सड़क के किनारे खड़े दर्शकों को अपनी ओर आकृष्ट भी किया।

अध्ययनकाल से ही भाई चन्द्रशेखर अपने गुणों व कार्यों से गुरुजनों व अपने साथियों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लिया करते थे। उनमें यह क्षमता रही है। गायन की योग्यता उनके पास प्रकृति प्रदत्त है। भाषण की योग्यता भी उन्हें बचपन से ही अर्जित की है। अपेन कठोर अध्यावसाय के बलपर ही इन्होंने गुरुकुल की विद्याभाष्कर की स्नातक उपाधि"बीएएमएस" बनारस विश्वविद्यालय की शास्त्रीय तथा मेरठ विश्वविद्यालय के एमए हिन्दी की स्नातकोत्तकर उपाधियाँ प्राप्त कीं। खेल के मैदान में भाई चन्द्रशेखर अपनी खेल प्रतिभा का जौहर दिखाने में दक्ष रहे हैं। बालीबाल व फूटबाल तथा बैडमिन्टन उनके प्रिय खेल हुआ करते थे। वे विशेषकर फूटबाल के खेल की अग्रिम पंक्ति में अग्रगण्य खिलाड़ियों के साथ खेला करते थे। अनेक बार टूर्नामेंट में कप्तान का पद भी घोषित किया है।

आर्य समाज व महर्षि दयानन्द के मन्तव्यों के प्रति उनकी गहरी निष्ठा उनके गुरुकुलीय जीवन काल से ही रही है। मेरे और चन्द्रशेखर जी के वैदिक सिद्धान्तों पर चर्चा हुआ करती थी। उस चर्चा में मैं उनके वाक् शक्ति और तर्कशक्ति को देखकर विमुग्ध हो जाया करता था। वे खण्डन भी करते थे तो कोमल शब्दों में करते थे। उनकी वाणी में विनम्रता और मधुरता थी। वे आर्य समाज और महर्षि दयानन्द का पक्ष बड़ी प्रबलता के साथ रखते थे। आज जब मैं पीछे मुड़कर देखता हूँ तो मुझे लगता है कि भाई चन्द्रशेखरजी ने सार्वभौमिक आध्यात्मिक सत्य को इतनी छोटी उम्र में ही जान लिया था। गुरुकुल में वे सभी गुरुजनों के स्नेहपात्र थे। उनकी वाणी में मधुरता और स्पष्टता दोनों ही थी। उनके जीवन में इन्हीं दो कारणों से और साथ में गायन की वजह से 'स्टेज करेज' आ गया था, जो आगे चलकर 'वक्ता' बनने में बड़ा सहायक रहा।

चन्द्रशेखर जी का विद्यार्थी जीवन आर्थिक कठिनाइयों से गुजरा। वे निर्धनता की हालात में

गुरुकुल की पढ़ाई करते रहे। उस समय गुरुकुल कांगड़ी का भोजन और आवास का मासिक शुल्क 250 रुपये था और गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर का मासिक शुल्क 70 रुपये था। पं. प्रकाशवीर शास्त्री और पं. नरेन्द्र जी (मंत्री, आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यदक्षिण हैदराबाद) की कृपा से 11 वर्ष तक निःशुल्क पढ़ाई की। अधिकांश ब्रह्मचारियों के लिए उनके घर से पैसे आ जाया करते थे लेकिन चन्द्रशेखर जी के घर से सालोंसाल कोई आर्थिक मदद आते हुये मैंने नहीं देखा। उनकी इस हालात को देखकर गुरुकुल के मुख्य अधिष्ठाता आचार्य नन्दकिशोरजी शास्त्री ने सोचा कि इस होनहार बालक को आवश्यक स्टेशनरी खर्च के लिए पैसे उपलब्ध नहीं हैं। इसे कुछ तो कहीं से मदद अवश्य करनी चाहिए। यह सोचकर उन्होंने दिल्ली के किसी व्यापारी से मासिक 5 रुपये की शिष्य–वृति दिलवाई, जिससे उनका छोटा मोटा खर्चा निकल जाता। इस तरह सन् 1979 तक अर्थात् कुरुकुलीय स्नातक बनने तक वे अपना मर्यादित खार्चा चलाते रहे। आगे चलकर उन्होंने जितनी भी पुस्तकें लिखीं वे उन उन उपकार कर्ताओं को समर्पित की जिन्होंने उनके जीवन को सहारा देने का प्रयास किया। उन्होंने अपने जीवन में चाहे वह सामाजिक हो अथवा राष्ट्रीय जीवन हो उनकी कृतज्ञता को नहीं भुलाया। डॉ. चन्द्रशेखर जी में वे विशेषतायें हैं जो एक सफल सामाजिक नेतृत्व के लिए अपेक्षित हैं। ये स्वाभाव से सरल सहज एवं मृदु हैं। अलध्यअलध्य विंध्याचल नहीं हैं। सामाजिक कार्यों के प्रति निष्ठावान हैं। जाति प्रथा नष्ट करने हेतु इन्होंने लगभग 25 के करीब अन्तर्जातीय विवाह करवाये हैं। अनेक युवातियों को धर्मांतरित होने से बचाया है। कई निर्धन छात्रों की पढ़ाई पूरी करवाने में सक्रिय मदद की है। वे सामाजिक कार्यों के प्रति निष्ठावान हैं, ध्येय को निश्चित करने की दृष्टि एवं उसे प्राप्त करने की दृढ़ता उनमें है। देव दयानन्द के मिशन को आगे ले जाने की स्वाभाविक ललक है। समाज सेवा में सहायक चिकित्सकीय ज्ञान के साथ शास्त्रीय ज्ञान गुरुकुलीय वातावरण के सात्विक संस्कार, सामाजिक व राष्ट्रीय कार्यों के प्रति इन्हें निरन्तर प्रेरित व उत्साहित करते रहे हैं। इन सब विशेषताओं एवं गुणों ने भाई चन्द्रशेखर को पण्डित उपदेशक, गायक, डॉक्टर, प्राध्यापक, लेखक, वक्ता आदि बनाया है। महाराष्ट्र के लातूर सहित अनेक जिलों कस्बों आदि में आर्य समाज का व्यापक कार्य इनके द्वारा हुआ है। अब वे 'संस्कृति रक्षक मंच' के माध्यम से भारतीय प्राचीन संस्कृति की रक्षा हेतु कार्य कर रहे हैं। यह कार्य विविध मुखी है। वे महाराष्ट्र से बाहर आन्ध्र, कर्नाटक आदि प्रान्तों में भी प्राचीन वैदिक संस्कृति की दुदुंभि बजा रहे हैं।वे आज उत्तर भारत के अनेक प्राप्तों में लेखक और वक्ता के रूप में जाने जाते हैं। उनके 65वें जन्म दिवस पर अभिनन्दन ग्रन्थ के लेखक के रूप में मैंने एक पुष्प पिरोया है मैं उनके भावी सुखी जीवन की मनोकामना करते हुये उनके प्रति सम्मान प्रकट करता हूँ।

सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ता प्रियालापिनी
इच्छापूर्ति धनं स्वयोषिति रतिः स्वाऽऽज्ञापराः सेवकाः।
आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे
साधोः संगमुपासते च सततं धन्यो गृहस्थाऽऽश्रमः।।

जो घर आनन्द से परिपूर्ण हो, जिसकी संतान बुद्धिमान हों, जिसकी पत्नी मृदुभाषिणी हो, इच्छापूर्ति योग्य धन हो, अपनी पत्नी के प्रति प्रेम हो, नौकर आज्ञा पालन करने वाले हों। जहां अतिथियों का आदर–सम्मान होता हो, परमेश्वर की उपासना होती हो, प्रतिदिन मीठे भोजन और मधुर पेयों की व्यवस्था हो, जिस गृहस्थी को सदा सत्संगति करने का अवसर मिलता हो, ऐसा गृहस्थ आश्रम धन्य है।

डा. लोखण्डे : साहित्य कालखण्ड की धरोहर

(बोध और विवेक का एक अद्भुत संगम)

डॉ. ओमपाल सिंह चौहान

डॉ. चौहान गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के स्नातक, आर्य विद्वान और समाजसेवी हैं। हिन्दी और संस्कृत साहित्य में गहरी रुचि है। आर्य समाज और वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में अनवरत रत हैं।

मेरा सौभाग्य रहा है, मेरा सम्बन्ध चार भाषाओं के प्रखर विद्वान डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में छात्र जीवन से ही रहा है। छात्र जीवन में सभी सहपाठियों के मध्य में लोखण्डे का व्यक्तित्व अद्भुत एवं विलक्षण था। छात्र जीवन में ही इन्होंने हिन्दी भाषा, साहित्य, कविता, लेखन एवं समीक्षा अनुवाद के क्षेत्र में प्रवेश कर लिया था। डॉ. लोखण्डे पूर्व जन्मों के संस्कारों के बोध एवं विवेक के धनी हैं। आप की साहित्य साधना चार भाषाओं(हिन्दी संस्कृत, मराठी व अंग्रेजी) में की है जो कालखण्ड की अमूल्य धरोहर हैं। छात्र जीवन में ही लोखण्डे जी को राष्ट्र कवि दिनकर जी ने कविता सांत्वना पुरस्कार से 1964 में सम्मानित किया। आप ने ग्रामीण क्षेत्रों में पं. आत्मानन्द शास्त्री जी के साथ-साथ ग्राम सलेमपुर बिजनौर व ग्राम महराजपुर(सहारनपुर, उ.प्र.) में आकर वैदिक पद्धति से अनेक विवाह सम्पन्न कराये। जो दक्षिणा मिली वह गुरुकुल को दान कर दी। छात्र जीवन में मुझे भी आप ने व्याकरण साहित्य पढ़ाया, गलतियाँ होने पर आप ने ताड़ना स्वरूप 'कॉणमरेडिते' (कान मरोड़ना) व्याकरण सूत्र का प्रयोग किया। डॉ. साहब छात्र जीवन में सदैव बालीबाल, फूटबाल, कबड्डी, तैराकी, धनुर्विद्या में प्रथम रहा करते थे। आर्य किशोर सभा में आप कविता, भाषण, प्रहसन, नाटक, अन्त्याक्षरी व वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में प्रथम आया करते थे। इसी विलक्षणता के कारण आप सभी गुरुजनों के प्रिय शिष्य थे। आप बाल्यकाल में सुन्दर कृष्ण वर्ण सुडौल स्वस्थ शरीर , घुँघराले बाल एवं चेहरे पर हमेशा मुस्कराहट बनी रहती थी। प्रो. चन्द्रशेखर लोखण्डे अभिनन्दन ग्रन्थ में लेख लिखना मेरा परम सौभाग्य है। आप ने संस्कृति रक्षक मंच एवं संस्कृति शोध संस्थान की स्थापना करके आर्य समाज, वैदिक धर्म प्रचार, साहित्य सेवा तथा वैदिक संस्कृति का प्रचार किया। दक्षिण के प्रान्त कर्नाटक, आन्ध्र, महाराष्ट्र एवं तमिलनाडुादि प्रदेशों में आर्य समाज एवं वैदिक धर्म का सन्देश पहुँचाने के लिए यात्रायें कीं। सामाजिक सुधार के साथ ही साथ नौजवानों को आर्य समाज में दीक्षित किया। गायत्री महायज्ञों का आयोजन, नेत्र चिकित्सा शिविर, दयानन्द चित्रावली प्रदर्शनी, अन्तर्जातीय विवाह का आयोजन, लातूर भूकम्प पीड़ितों की सेवा, वैदिक महासम्मेलन जैसे अनेक परोपकार के कार्य किये और आज भी कर रहे हैं। आप की नये 'युग की ओर आर्य समाज' एवं 'हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास' जैसी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इनके अतिरिक्त डॉ. साहब द्वारा समाज, साहित्य, धर्म और जीवन दर्शन सम्बन्धी अनेक कार्य निरन्तर चलते रहते हैं। शिक्षा और संस्कार के अनेक उपयोगी कार्य भी डॉ. लोखण्डे जी द्वारा निरन्तर किये जा रहे हैं, वे निम्न प्रकार हैं –

– आगामी योजना में पुस्तकालय(ग्रन्थालय)

– संस्कार विज्ञान परीक्षाओं का आयोजन

– सत्यार्थ प्रकाश परीक्षाओं का आयोजन

– भाषण-कौशल्य शिविर

– भारतीय संस्कृति के विविध पक्षों का उपयोगी शोध कार्य।

डॉ. चन्द्रशेखर जी के कृतित्व और व्यक्तित्व पर हमें गर्व की जो अनुभूति होती है, उसे यदि कविता में कहूँ तो

इस प्रकार की पंक्तियाँ फूट पड़ती हैं–

प्रज्ञा, पौरुष, अभिव्यक्ति गुण, मानुष हैं ये नेक। तप, त्याग, प्रतिमूर्ति के विरलों में हैं एक।
अंधियारों पर तुम सूरज का कमल खिलाते जाना। हर मुश्किल को दूर हटाकर, सहज राह बनाते जाना।।
गर्मी, सर्दी औ तूफां में निरन्तर कदम बढ़ाने वाले। चरैवैति...के मन्त्र को जीवन का ध्येय बनाने वाले।।

मेरा और कुछ सन्देश भी इन पंक्तियों द्वारा–

रहो तनहा अंधेरे में उजाला गैर को दे दो। सहो खुद गम, लेकिन मुहब्बत और को दे दो।।
करो विषपान युग–युग में कहेगा जगत् तुम्हें शंकर(मूल)दधीचि की तरह परोपकार में निज अस्थियाँ दे दो।।

एक सच्चे राष्ट्रभक्त, राष्ट्रभाषा सेवी डॉ. लोखण्डे जी का इन पंक्तियों के माध्यम से शत् शत् अभिनन्दन करता हूँ– और वे हृदय के उद्‌गार जो मैं नहीं रोक पा रहा हूँ – तुम्हें नमन्...तुम्हें नमन्..तुम्हें नमन्। भाषा–अमृत पिलाने वाले तुम्हें नमन्। चार वेद चार भाषायें/चारों दिशाओं में फैलाने वाले, तुम्हारा सदैव अभिनन्दन। उत्तर की नील गंगा को मिलाने वाले तुम्हारा सदैव बन्दन। साहित्य संस्कृति के संवाहक तुम्हें नमन्। पुनः नमन्, पुनः नमन्, पुनः नमन्।.

प्रो. लोखण्डे जी के जीवन की प्रेरक घटनायें

डॉ. ओमपाल सिंह चौहान

एक बार गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर में आश्रम व्यवस्था, भोजन एवं शिक्षा व्यवस्था की अनियमितताओं के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द(संन्यासी) एवं बड़े भ्राताओं के निर्देशन में सभी छात्र गुरुकुल महाविद्यालय छोड़कर भूपत वाला आश्रम ट्रकों व बस में भरकर पहुँच गये। वहाँ डॉ. लोखण्डे ने ब्रह्मचारियों का शिक्षा विभाग एवं क्रीड़ा विभाग सम्भाला। श्री विश्वपाल जयन्त(आधुनिक भीम) ने भोजन भण्डार लकड़ी आदि व्यवस्था को सम्भाला। श्री प्रो. यज्ञमित्र आंयगार ने आश्रम दिनचर्या, यज्ञ–हवन की व्यवस्था को संभाला। श्री वेदप्रिय शास्त्री, विजयपाल शास्त्री, श्री आत्मानन्द शास्त्री, श्री रामप्रकाश, डॉ. अभयदेव, श्री राम औतार शास्त्री, श्री सत्यचन्द्र, श्री राम कुमार शास्त्री, डॉ. प्रतापसिंह सभी भ्राताओं ने अपना–अपना विभाग संभाला। सभी कार्य गुरुकुल आश्रम से बहुत ही अच्छा रहा। लगभग 15 दिनों तक एक हजार छात्र गुरुकुल महाविद्यालय खालीकर नई जगह बहुत खुश थे। गुरुकुल के सभी छात्रों को मनाने के लिए श्री क्षेमचन्द्र सुमन, श्री आचार्य नन्द किशोर शास्त्री, पं. हरिसिंह त्यागी, श्री लक्ष्मीनारायण, व्याकरणाचार्य, श्री सत्यव्रत शास्त्री, श्री रामदत्त शास्त्री, श्री हरिदत्त शास्त्री 'सांख्यतीर्थ', श्री प्रकाशवीर शास्त्री आदि सभी लोग भूपतवाला आश्रम में गये। वहाँ सभी मागों को स्वीकार किया गया। सभी छात्र गुरुकुल महाविद्यालय लाये गए। पुनः गुरुकुल व्यवस्था सुचारू एवं अच्छी प्रकार चलने लगी। डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे का शिक्षा विभाग एवं क्रीड़ा विभाग, सभी छात्रों के लिए प्रेरणादायक रहा। क्योंकि आप के द्वारा नियमित समय में कक्षा में कठोरता, प्यार, स्नेहता से सभी छात्र गदगद थे। स्वयं मैं आठवीं का छात्र था। यह सन् 1967–68 की घटना है। सायंकाल खेलते समय वे फूटबाल, बालीबाल, कुश्ती, कबड्‌डी आदि का गुरु सिखाते रहते थे।

0 ब्रह्मचर्य आश्रम द्वितीय–तृतीय आश्रम के पास एक आम का विशाल वृक्ष था। बीच में यज्ञशाला, दूसरी ओर राम–भीम आश्रम के पास भी आम का उससे कुछ छोटा वृक्ष था। अचानक रात्रि में सोते समय आंधी तूफान से

द्वितीय–तृतीय आश्रम के पास वाला पुराना विशाल पेड़ टूटकर आधा पेड़ जमीन पर जोर की आवाज के साथ गिरा। जिसमें खूब आम लगे थे। रात्रि होने के कारण सभी छात्र बाल–बाल बच गये। यज्ञशाला भी सुरक्षित रही। इस बीच डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी के तत्परता एवं सुझाव से पं. हरिसिंह त्यागीजी ने सभी आमों को तोड़कर पकाकर भोजनालय में भोजन करते समय सभी छात्रों में बटवा दिया। सभी छात्रों एवं अध्यापकों ने इन होनहार 'ज्येष्ठ भ्राताश्री' की मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

0 गुरुकुल के खेल परिसर में जामुन के चार बड़े–बड़े वृक्ष थे। उन पर पकी–पकी और बड़ी–बड़ी जामुन लगी थीं। कुछ छात्र सायंकाल पत्थर द्वारा जामुन तोड़ रहे थे। अचानक किसी छात्र का पत्थर जामुन में न लगकर कार्यालय परिसर में आम के पेड़ पर लगे विशाल मधुमक्खी के छत्ते पर लग गया। फिर क्या था जो उत्पात मधुमक्खियों ने मचाया उससे राहगीरों और खेलने वालों को डंक के विष से जो पीड़ा हुई, उसका शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता। बहुत पीड़ादायक दृश्य था। ऐसे समय में डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी ने डॉ. प्रतापसिंह, जगमोहन लाल, सूर्यदेव व सुशील जी को खेल परिसर से तुरन्त गौशाला भेजकर गाय का गोबर मगवाया और सभी छात्रों और राहगीरों को दवा के रूप में लेप किया गया। फिर ट्यूबबेल पर सभी ने स्नान किया तब जाकर सभी को शान्ति मिली। सभी ने डॉ. लोखण्डेजी की बुद्धिमत्ता की प्रशंसा की।

0 एक बार अलखनन्दा की बाढ़ ने बहुत भीषण और भयावह रूप धारण कर लिया। गुरुकुल के पास पूरी गंग नहर व गड्ढे बालू कीचड़ से भर गये। अनेक व्यक्ति, औरतें, बच्चे बाढ़ में बहकर गड्ढों व झाड़ियों में फंसकर मर चुके थे। उन्हें लाने ले जाने वाला कोई नहीं था। कुछ को बालू में दबा दिया गया था। उस समय आयुर्वेद विभाग में शवच्छेदन भवन में कोई मुर्दा भी सेवा समिति हरिद्वार में नहीं मिल रहा था ऐसे समय में डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी ने आयुर्वेद विभाग के प्रधानाचार्य को सुझाव दे दिया क्यों न हम इन मुर्दो को उठाकर शवच्छेदन भवन में लाकर प्रथम एवं द्वितीय वर्ष के शरीर विज्ञान के छात्रों को चीरफाड़ के लिए दे दिया जाय। उन्हें इसकी बहुत जरूरत है। प्रधानाचार्य जी ने अन्य विभागों से स्वीकृति लेकर कुछ शवों को मंगवाया। इन शवों को चीर–फाड़ के लिए सभी आयुर्वेद पढ़ने वालों ने लाभ उठाया।

चन्द्रशेखर जी के स्वभाव में एक ओर करुणा–दृश्य एवं दूसरी ओर छात्रों की शिक्षा ज्ञान, दोनों में शिक्षा ज्ञान को प्राथमिकता मिली थी। ऐसे थे डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी। ये घटनायें तब की है जब वे तृतीय वर्ष के छात्र थे और मैं प्रथम वर्ष का छात्र था। सभी प्रथम एवं द्वितीय वर्ष के छात्रों ने शेखरजी के अदम्य साहस की प्रशंसा की। परोपकार एवं शिक्षा के इस महान् कार्य में डॉ. विश्वपाल जयन्त जी का शारीरिक सहयोग भी महत्त्वपूर्ण था।

सम्पर्क सूत्र – ग्राम : शहजादपुर, जनपद : बिजनौर , उ.प्र.

"जहा सच्चा ज्ञान होता है वहाँ सदैव आनन्द का अस्तित्व रहता है तथा दुख नाम की किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं रहता है। मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य सत्य की प्राप्ति करना है।"

–महात्मा गाँधी

सुहृद भातृसखा चन्द्रशेखर

श्री इंगले मधुप कुमार महादेव राव

श्री इंगले महादेव रावजी एक प्रखर विद्वान और समाजसेवी हैं। वैदिक साहित्य और संस्कृति के प्रति अन्यय श्रद्धा रखते हैं। वैदिक धर्म और आर्य समाज के प्रति समर्पित हैं।

गूंगा केरी शर्करा बरनन करि न पाय।
जिह्वा कछु न करि सके मुँह माहि मुस्काय।।

डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे परिचय के मुँहताज नहीं हैं तथापि कुछ शब्दों में उनके कृतित्व एवं व्यक्तित्व को व्यक्त करना अपना कर्तव्य समझता हूँ। डा. लोखण्डे मेरे अभिन्न सखा, भ्राता समान रहे हैं और हैं भी। गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर(हरि.) का मैं भी स्नातक हूँ, इसका मुझे गर्व है। आर्य समाज हैदराबाद के मुक्ति संग्राम के सेनानी आर्य जगत् के धुरन्धर श्री नरेन्द्र जी के प्रयास से डॉ. चन्द्रशेखर गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर(हरि.) विद्याध्ययन हेतु आये थे। बाल चन्द्रशेखर का परिचय गुरुकुल की साप्ताहिक सम्भाषण सभा में मराठीगीत – दगडा चा देव केला, वडार त्याचा बाप छाला।' तुकडोजी महराज के इस गीत के अवसर पर हुआ था। मैं (मधुप कुमार) विदर्भ अकोला, ग्राम सिरसोली का निवासी हूँ। आर्य संस्था, आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल इन शब्दों से भी अपरिचित। यह वह समय था जब मैं गुरुकुल में चौथी उत्तीर्ण होने के उपरान्त पाँचवीं में प्रवेश पा चुका था।

बाल चन्द्रशेखर से उपर्युक्त गीत सुना तो मन में एक सन्तुष्टि का भाव आया– चलो एक महाराष्ट्रीयन साथी मिला। कालान्तर में प्राध्यापक नरदेव जी गुडे, प्रा. विजय कुमार, पं.कुशलदेव शास्त्री(महान गवेषक एवं लेखक) आदि का छात्र–जीवन में गुरुकुल में मेरा साथ रहा।

वाक् भूषणं भूषणम् वाणी ही जिसकी(शोभा) भूषण हो, उसको अन्य भूषणों(अलंकार) की आवश्यकता नहीं होती। तद्वत श्री चन्द्रशेखर की वाणी–गीत शैली व भाषण शैली श्रोता को आनन्ददायी व सुखद लगती है। जिस प्रकार से चन्द्रकिरण, शक्तिप्रभा से जन, मन, बाल, बृद्ध सभी आह्लादित होते हैं उसी तरह आर्य श्रोताजन, छात्रगण उनके व्याख्यान, भजन, कथा सुनकर आन्दित होते हैं।

शशि (चन्द्र) गगन मण्डल में रहकर समस्त चराचर को प्रकाशित करती, आह्लादित करता है उसी तरह आर्य–जगताकाश में डॉ. चन्द्रशेखर अपनी शीतल आह्लादित वाणी(वाक्भूषण) द्वारा आर्य–विचारों को प्रकाशमान करते रहे हैं।

डॉ.चन्द्रशेखर जी ने वैदिक प्रचार का कार्य पूरे मनोवेग से (जनवृति) किया है। दूसरी ओर चिकित्सा–व्यवसाय में नाड़ी परीक्षण कर रोगी को स्वस्थ बनाने का कार्य भी किया है। अब युग की नाड़ी पहचान कर महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों का लेखन प्रकाशन का कार्य कर रहे हैं। महर्षि दयानन्द के विचारों का वक्ता, व्याख्याता, उपदेशक, गायक, पौरोहित्य के रूप में प्रचार–प्रसार तो किया ही है।

अधुना वे महर्षि जी के दुर्लभ ग्रन्थों से सिद्धान्त एवं मन्तव्य संकलन कर रहे हैं। आप निरन्तर आर्य विचारों के अनुपलब्ध ग्रन्थों का शोधन करते रहते हैं। विशाल आर्य जगत् के ग्रन्थालयों में भी सन्दर्भ ग्रन्थ नहीं होंगे, ऐसे संग्रहणीय ग्रन्थ आपके निजी पुस्तकालय में आज प्राप्त हैं। आर्य–विचार–शोधक, अन्वेषक, छात्र या प्रचारक आर्य–विचार लोभी या प्रचारक उक्त ग्रन्थों से लाभ उठा सकते हैं तथा मान्य श्री लोखण्डे जी से 'मार्गदर्शन' भी ले सकते हैं। आप की पाठन–शैली और उपदेश–शैली ही आपकी एक परिचय बन जाती है। ये पंक्तियाँ इसी ओर इंगित करती हैं–

फूलों से तुम हँसना सीखो, भौंरों से तुम गाना। सूरज की किरणों से सीखो,जगाना और जगाना।
पतझड़ में पेड़ों से सीखो, दुःख में धीर बधाना। सूई धागे से सीखो, विछुड़ों को गले लगाना।

विस्मृत प्रायः वैदिक विचार–धनी, वेदानुकूल वैदिक ज्ञान के प्रचारक महर्षि प्रचारित वेदानुकूल परिशीलन एवं शोधन, महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थों का तथा तद्गत विचारों का गुंफन करना, वैदिक मानवरों के लिए ही नहीं अपितु जनसामान्य तक पहुँचाना, अदृष्ट, अपरिचित शेष काल एक पुनीत कार्य मान स्वख्याति विमुक्त हो अविरत प्रयासशील रहना, शीतल सुस्वभाव, शशी की तरह अज्ञान तिमिर को तिरोहित करना कर्तव्य मान जो लेखन डॉ. चन्द्रशेखर जी ने किया है वह अपने नाम को सार्थक ही बनाता है। मुझे महत् आनन्द है कि आप के लेखन कार्य शोधन, परिशीलन समस्त आर्य विचार मन्थन अभिनन्दन ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित होने जा रहा है।

मैं विषय–विस्तार में न उलझकर उपर्युक्त भावनाओं के साथ आप का व आप के परिवार–सुत चि.श्री शैलेष, कु. चि.नप्तृ स्नुषा चि. सौ अनिता लोखण्डे तथा सहचारिणी सौ.सन्ध्या लोखण्डे का हृदय से अभिनन्दन करता हूँ जो ऐसे सच्चरित विद्वान मनीषी की वंशवेल हैं।

अन्त मे प्रार्थना है मेरी भावनाओं का आदरकर सदा के लिए हृदय में सजोये रखें।

सम्पर्क : ग्राम – सिरसोली,जनपद – अकोला (महाराष्ट्र)

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थान्परित्यज्य ये,
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये।
तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये,
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के च जानीमहे।।

संसार में वे मनुष्य 'सत्पुरुष' हैं, जो अपने स्वार्थ को छोड़कर दूसरों की भलाई के लिए अपने तन–मन–धन को लगा देते हैं। दूसरे प्रकार के मनुष्य 'सामान्य' कहलाते हैं जो अपने काम न बिगाड़ते हुए दूसरों की भी भलाई करते हैं। तीसरे प्रकार के मनुष्य 'राक्षस' कहलाते हैं जो अपने स्वार्थ को सिद्ध करने के लिए दूसरों के बने बनाए काम को बिगाड़ देते हैं। परन्तु जो लोग बिना किसी स्वार्थ के (–अपने लाभ के बिना ही)व्यर्थ ही दूसरों की हानि करते हैं, ऐसे चौथे प्रकार के मनुष्य को किस नाम से पुकारा जाय हम नहीं जानते, आप स्वयं ही सोचें।

भूकम्प पीड़ितों के मसीहा : डॉ. लोखण्डे

आचार्य संदीप कुमार त्यागी 'दीप'

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के स्नातक आचार्य संदीप कुमार त्यागी एक प्रखर जनशिक्षक, आर्य विद्वान और लेखक हैं। वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार में गहरी रुचि रखते हैं।

किसी के काम जो आये उसे इंसान कहते हैं।
पराया दर्द अपनाये उसे इंसान कहते हैं।

उक्त पंक्तियाँ समाजसेवी डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के जीवन पर पूर्णरूपेण चरितार्थ होती हैं। डॉ. लोखण्डे एक ऐसे विलक्षण व्यक्तित्व हैं जो किसी परिचय के मोहताज नहीं। ऐसे महापुरुषों के महान कार्यों से ही समाज में उनकी विशिष्ट पहचान होती है। अपने लिए तो सभी जीते हैं किन्तु समाज के लिए जो मनुष्य जीता है वही मनुष्य समाज में समादृत भाव से देखा जाता है और भावी पीढ़ी के लिए भी प्रेरणा का स्रोत बन जाता है। संसार में परोपकार से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। जो मनुष्य दूसरों की भलाई में अपने को न्योछावर कर देता है वही सच्चे अर्थों में परोपकारी महापुरुष होता है। निःस्वार्थ भाव से सेवा करना मनुष्य का परम कर्तव्य होना चाहिए।

भूखों को अन्न देना, वस्त्रहीन को वस्त्र देना, प्यासे को पानी पिलाना, दीनों को धन देना तथा पीड़ितों और रोगियों की सेवा करना मानव का परमधर्म है। इस धर्म का पालन करने वाला सच्चा मानव होता है। संसार में उन्हीं का नाम रौशन होता है, जो देशहित, समाजहित तथा मानवहित के लिए मरते और जीवित रहते हैं। राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त ने ठीक ही कहा है–वही मनुष्य है की जो मनुष्य के लिए मरे। वसुधैव कुटुम्बकम् की भव्य भावना को आत्मसात् करने वाले कविवर डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे महाराष्ट्र प्रान्त के ही नहीं अपितु समूचे भारत वर्ष के अभिनन्दनीय व्यक्तित्व हैं। प्रा.डॉ. चन्द्रशेखर के नेतृत्व में भूकम्प ग्रस्त गाँवों में किये गये राहत कार्य, आज भी उनके सत्साहस, शक्ति एवं सामर्थ्य की विपुल कहानी कहते हैं। यह कहानी ऐसे प्रेरक व्यक्तित्व की है जिसने समाज में निःस्वार्थ सेवा की मिशाल प्रस्तुत की।

आर्य समाज रामनगर के मन्त्री पद पर रहते हुये डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे ने सन् 1993 में आये भूकम्प में आर्य समाज रामनगर, सीताराम नगर, नारायण नगर के युवा कार्य कर्ताओं को साथ लेकर 30 सितम्बर 1993 के दिन प्रातः एक घण्टे के अन्दर घटना स्थल किल्लारी गाँव पहुँच गये। वहाँ डॉ. लोखण्डे ने मलवे के नीचे दबे हुये 500 लोगों को निकालकर उन पर मरहम पट्टी, टूटी हुई हड्डियों को जोड़ने का काम, चिकित्सा शिविरों में ले जाकर उनका तुरन्त उपचार का कार्य जिस सक्रियता के साथ किया, वह इनके परोपकार और सत्साहस अर्थात् सद्गुण के ही प्रतीक हैं। इतना ही नहीं, सैकड़ों मृत व्यक्तियों के शवों को मलबे से निकालकर उनका दाह संस्कार करने के लिए भेजा। सैकड़ों घायलों को टैम्पों और ट्रकों द्वारा लातूर के विभिन्न अस्पतालों में भेजने का कार्य भी किया। डॉ. लोखण्डे ने अनेक गाँवों में पहुँचकर दबे हुये लोगों को मिट्टी और पत्थरों के नीचे से निकालकर उनकी यथायोग्य सहायता जिस तत्परता के साथ की, उसकी जितनी भी प्रशंसा की जाय कम है। डॉ. लोखण्डे ही थे कि जिन्होंने आर्य कार्यकर्ताओं के साथ घायल पीड़ितों में भोजन के पैकेट भी बाँटने में तत्परता का उदाहरण प्रस्तुत किया। वरना भूकम्प में अतिशय घायल 400 सौ व्यक्तियों का किल्लारी में उपचार कराना कोई मामूली कार्य नहीं था। इतना ही नहीं, किल्लारी के पुलिस सब इंस्पेक्टर के आदेश से तहसील की गाड़ी लेकर जोगन चिंचोली, सिरसाल,

किल्लारीवाड़ी, सिरसावाड़ी और लमानी ताड़ों में जाकर वहाँ के घायल लोगों का प्रथमोचार करवाया। इस कार्य में डॉ. हाजगुड़ेजी का बहुत बड़ा योगदान रहा है, जिसे कभी भुलाया नहीं जा सकता। भूकम्प पीड़ित गाँव किल्लारी में चार लोगों को मलबे के नीचे से जीवित निकालकर अस्पाल में भेजने की व्यवस्था तथा 20 शवों को मलबे के नीचे से निकालकर पुलिस को सौंपने का कार्य भी डॉ. साहब साथ–साथ करते रहे। जो लोग बच गये थे उनको भोजन के पैकेट, कपड़े बाँटने के कार्य से लेकर अन्य आवश्यक कार्य भी आगे बढ़कर करते गए। डॉ. लोखण्डे के नेतृत्व में अनेक भूकम्प पीड़ित गावों में जाकर के दो हजार भूकम्प–ग्रस्तों में भोजन के पैकेट भी बांटने के लिए भोजन का प्रबन्ध करना, उनकी क्षमता को ही दर्शाता है। इस प्रकार डॉ चन्द्रशेखर के नेतृत्व में 40 कार्यकर्ता, जिनमें महिलायें भी थीं, लातूर के गली–मुहल्लों में फेरी निकालकर अन्न, वस्त्र, अनाज, कम्बल आदि इक्ट्ठा कर उसको भूकम्प पीड़ितों में बाँटने का महत्त्वपूर्ण कार्य भी किया गया। दो दिन के बाद अर्थात् 2 अक्टूबर को किल्लारी और आस पास के गाँवों को सेना और पुलिस द्वारा अपने हाथों में लेने के कारण कार्यकर्ताओं को लेकर के लातूर में ही राहत सामग्री इक्ट्ठा करने के लिए सहायता–फेरियाँ निकाली गईं। लगभग तीन मास तक यह कार्य अविरल चलता रहा और लगभग 10 हजार भूकम्प पीड़ितों में राहत सामग्री भी बाँटी गई। जिनमें कुछ विशेष गाँव विशेष–रूप से उल्लेखनीय हैं। वे हैं– किल्लारी, पेठसांगवी, नांगराल, होली, सास्तुर, काजले, चिंचोली, कारला, सिरसल, मोगरगा, हिजरगा, मालुंब्रा, नांदुर्गा, लिंवाला(दाऊ)बोरफल, चिंचोली(रेंवे) मुदगुड, हासलगन, मदनसुरी, हरेगाँव, बेलकुंड, मगरूल, सांगवी, हाडोली, गुग्गलगाँव, कुबठा, टाका आदि हैं। इन गाँवों में डॉ. लोखण्डे के साथ कन्धे से कन्धे मिलाकर आर्य कार्य कर्ताओं ने भूकम्प पीड़ितों के उपचार में सहयोग दिया।

आज मैं गुरुकुलावतंश, सौम्य एवं समाजसेवी डॉ. चन्द्रशेखर के जीवन को धन्य मानता हूँ, जिन्होंने शिक्षण एवं लेखन के अलावा भूकम्प पीडितों की जो तन, मन व धन से सहायता की है वह वास्तव में सराहनीय है। मैं तो देश के युवा वर्ग से यही कहूँगा कि डॉ. लोखण्डे की भाँति हमें प्राकृतिक आपदाओं के समय हर सम्भव तैयार रहना चाहिए। जातीय अस्पृश्यता एवं ऊँच–नीच से ऊपर उठकर सामाजिक समरसता का वातावरण स्थापित करना चाहिए। जब ऐसा संकट पैदा हो देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य बन जाता है कि वह मानवता की सच्ची सेवा के तैयार रहे। भूकम्प की त्रासदी के समय यथा सामर्थ्य जन–कल्याण के लिए आवश्यक सामग्री भी उपलब्ध कराने में कटिबद्ध रहना चाहिए। मेरी दृष्टि में 500 लोखण्डे इस भारत–भूमि के वरद पुत्र हैं। जो अपनी इस भारत माता की सेवा किसी न किसी रूप में करते रहते हैं। मैं ऐसे महान समाजसेवी, शिक्षाविद् एवं भूकम्प–पीड़ितों के मसीहा डॉ. लाखण्डे के प्रति श्रद्धावनत् हूँ जिन्होंने अहिर्निश सेवामहे का व्रत लेकर भूकम्प में जो सेवा जनता जर्नादन की है, उसका वर्णन तो अपनी वाणी व लेखनी के माध्यम से भी नहीं कर सकता। कविवर रहीम ने परोपकार की महिमा का बखान करते हुये कहा है कि–

रहिमन यो सुख होत है, उपकारी के अंग। बाटनवारे को लगे जो मेहदी कौ रंग।।

परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे स्वस्थ एवं प्रसन्न रहें और मानवता की सेवा में तत्पर रहें तथा समाज का उपकार करते रहें। मैं उनके अभिनन्दन पर हार्दिक शुभकामनायें प्रेषित करता हूँ।

सम्पर्क सूत्र : अध्यक्ष, फ्रीडम योगा गुरुकुल टोरंटो
जार्जिया कालेज, औरेंविल, टोरंटो–कनाडा

मराठी खण्ड

साहित्य व समाजसेवेचा अद्भूत संगम डॉ.लोखंडे

– प्रा.राजेश कारंजकर

प्रा. राजेश कारंजकर यांचे शिक्षण एम.ए. एम.पी.एड, एम.फिल. अमरावती युनिवर्सिटी येथून झाले आहे. सध्या ते जयक्रांती वरिष्ठ महाविद्यालय लातुर येथे क्रीडा संचालक पदावर कार्यरत आहेत.

विद्यार्थी प्रिय, उच्चविद्याविभूषित, धार्मिक व समाज सुधारांच्या विचारांची पताका घेऊन निघालेला सच्चा अनुयायी आमचे स्नेही प्रा. डॉ. चंद्रषेखर लोखंडे,समवयस्का सोबतच मोठा तरुण मित्र परिवार जमाविलेला हा माणूस आहे. समाजसेवा ज्यांचा पिंड आहे. धार्मिक अंधश्रद्धांचे उच्चाटन, व्यसनमुक्ती, परंपरेचे जोखड तोडण्याची हिंमत, जुनाट बुरसटलेल्या संकुचित विचारांची आहुती देणारा एक मनस्वी, तळमळीचा कार्यकर्ता म्हणजे प्रा.डॉ. चंद्रषेखर लोखंडे होय. यांचा जन्म २३ ऑक्टोबर १९४६ ला रेणापूर ता.जिल्हा लातूर येथे झाला. त्यांचे पदवीचे षिक्षण ज्वालापूर, हरिद्वार (उत्तरप्रदेष) येथून विद्याभास्कर (बी.ए.) झाले. तसेच त्यानंतर बनारस संस्कृत विद्यापीठातून त्यांनी संस्कृतीमध्ये शास्त्री ही पदवी संपादन केली. आयुर्वेदामध्ये बी.ए.एम.एस. व बी.एड. एम. ए. (हिंदी) आदि पदव्या त्यांनी संपादन केल्या. उत्तर भारतातील गुरुकूल प्राचीन शिक्षण प्रणालीच्या माध्यमातून निसर्गाच्या रमणीय वातावरणात त्यांचा पिंड घडला आहे.

अध्यापनासोबत राष्ट्रभाषा हिंदीचा प्रचार प्रसारात त्यांचे योगदान मोलाचे आहे. यासाठी त्यांनी मुंबई हिंदी विद्यापीठाचे केंद्र लातूर जिल्हयात आणले. गेल्या २२ वर्षात या केंद्रातून शेकडो विद्यार्थी हिंदी विषयात पदवी प्राप्त करून राज्य, केंद्र शासनाच्या कार्यालयात नोकरीस लागले आहेत. प्रा. लोखंडे आयुष्यभर विद्यार्थी म्हणून कार्यरत राहणारे प्राध्यापक आहेत. नव-नविन साहित्य, वेद, उपनिषद, पुराणग्रंथ, आत्मचरित्र, कथा, कविता याचं सतत वाचन करणे, हे सरांचे व्यसन आहे. नेहमी लेखन, चिंतन, मनन करण्यात रमणारी ही व्यक्ती आहे. वाचनाच्या व्यसनापायी त्यांनी जमविलेली ग्रंथसंपदा जवळपास ३५०० ते ३६०० एवढी आहे. त्यात बऱ्याच दुर्मिळ ग्रंथाचा समावेश आहे. त्यांचे लेखन कार्यही बरेच आहे. पाच वर्षाच्या कठोर परिश्रमानंतर त्यांनी २००४ मध्ये 'हैद्राबाद मुक्तिसंग्राम हा इतिहास' हा ४७५ पृष्ठांचा मौलिक ग्रंथ लिहून, लुप्त होत चाललेला इतिहास या पुस्तकारुपाने पुन्हा समाजासमोर ठेवला. सरांचे एकेकाळचे वर्गमित्र असलेले व सध्या साऊथ मिडीलसेक्स, ग्रेटब्रिटन येथे प्राध्यापक असलेले डॉ. वाय मित्रा अय्यंगार हे या पुस्तका विषयी व सरांविषयी मत व्यक्त करताना म्हणतात की, डॉ. लोखंडे हे एक विचारक, लोक आणि समाजसुधारक आहेत. ते धार्मिक, राष्ट्रीय आणि सामाजिक विचारांना जन आंदोलनाच्या रुपात पाहणाऱ्या महान कार्यकर्त्यापैकी एक आहेत. हे पुस्तक लुप्तप्राप्त होत चाललेल्या विषयावर संशोधन दृष्टीने लेखणी चालवून मराठवाडा आणि दक्षिण भारतातील युवा पिढीसमोर बलिदानांचा इतिहास उद्घटीत करण्याचा यशस्वी प्रयत्न केला आहे. खरेच या पुस्तकाने मराठवाडयातील जनतेत नवीन उर्जेचा संचार व स्वाभिमान जागृत केला आहे. या कार्याची पावती म्हणून या हस्तलिखीताचे गुलबर्गा येथे कर्नाटकचे राज्यपाल श्री.टी.एन. चतुर्वेदी यांच्या हस्ते विमोचन झाले. तर जयक्रांती महाविद्यालयाच्या प्रांगणात मुख्यमंत्री विलासराव देशमुख यांच्या हस्ते स्वामी दयानंद चरित्र व विचारधन या पुस्तकाचे

प्रकाशन करण्यात आले. या शिवाय 'नये युग की ओर आर्यसमाज', 'अवतार निर्णय', 'कुछ गीत कुछ संगीत', 'संत तुकाराम व स्वामी दयानंदाचा सुधारवाद', 'वेदो में पर्यावरण विज्ञान' (हिंदी, मराठी, इंग्रजी आवृत्ती) मुठीभर तुफान इत्यादी पुस्तके प्रकाशित होऊन अनेक हस्तलिखिते प्रकाशनाच्या मार्गावर आहेत. भारतातील अनेक मराठी, हिंदी नियतकालिकांमध्ये त्यांचे लेख प्रसिध्द झालेले आहेत. त्यात सार्वदेशिक, मधूरलोक, आर्यजगत्, राजधर्म, वैदिक गर्जना, लोकमत संचार, एकमत,आर्यसेवक, दक्षिण समाचार इत्यादी आहेत. अनेक पुरस्कारांचे ते धनी आहेत. मराठवाडा अंधश्रद्धा निमुर्लन समिती, औरंगाबाद तर्फे कार्यगौरव पुरस्कार, आंध्रप्रदेशचे शिक्षणमंत्री पी.व्ही. रंगाराव यांच्या हस्ते हैद्राबाद येथे विद्यामार्तण्ड उपाधी प्रदान, भटके विमुक्त आदिवासी संस्था, मुंबई द्वारा 'भटके विमुक्त आदिवासी मित्र पुरस्कार', अखिल भारतीय स्तरावरील 'मेघजीभाई आर्य साहित्य पुरस्कार' अशा पुरस्कारांनी ते सन्मानित झालेले आहेत. एक सफल सामाजिक नेतृत्वासाठी आवश्यक ती विशेषता, योग्यता त्यांच्यात आहे. स्वभावाने ते सरळ व सोज्वळ आहेत. सामाजिक कार्याच्या प्रती निष्ठावान असून ध्येय निश्चित करण्याची त्यांची दृष्टी व त्यास प्राप्त करण्याची दृढता त्यांच्यात आहे. हे त्यांच्या विविध सामाजिक कार्यावरुन लक्षात येते. जाहिरपणे समाज सुधारणेच्या गप्पा मारणारे पुष्कळ असतात. परंतु प्रा.डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे हे क्रियाशिल समाजसुधारक आहेत. त्यांची वाणी आणि करणी एकच आहे. जातीयता नष्ट करण्याची सुरुवात त्यांनी स्वतः पासूनच केली. डॉ. लोखंडे यांनी महाराष्ट्र, कर्नाटक तसेच आंध्रप्रदेशातील ५०० गांवामध्ये राष्ट्रीय एकतेच्या उद्देशाने भारतीय संस्कृतीचा प्रसार प्रसार करून जातीयता अस्पृश्यता मिटविण्यासाठी अहर्निश कार्य केले आहे. १९९३ मध्ये किल्लारी येथे झालेल्या भूकंपात आपल्या असंख्य कार्यकर्त्यांसमवेत सतत ३ महिने मदतीचे कार्य केले. १९९८ मध्ये मराठवाडा मुक्तीसंग्रामाच्या सुवर्ण जयंती आपल्या संयोजकत्वाखाली साजरी करून ५० स्वातंत्र्य सैनिकांचा ऋणनिर्देश व सत्काराचा कार्यक्रम आयोजित केला होता. २००२ मध्ये अखिल भारतीय स्तरावर रेणापूर येथे दयानंद बलिदान शताब्दी चे यशस्वी आयोजन केले. महाराष्ट्रातील ४५० खेडया पाडयातून सामाजिक व धार्मिक सुधार प्रबोधनासाठी व्याख्याने दिली. स्वतः डॉक्टर असल्याने सतत पंधरा वर्ष वैद्यकीय चिकित्सा, मोफत सर्वरोग निदान, नेत्ररोग चिकित्सा, युवकांसाठी व्यसनमुक्ती शिबीरे घेतली.

या विशेषता आणि अंगभूत गुणांमुळे डॉ. लोखंडे हे पंडित, उपदेषक, डॉक्टर, प्राध्यापक व समाजसेवक या सर्व भूमिकेत त्यांचा लिलया वावर असतो. ''दुबळया जिवासाठी कधी मदतीचा हात व्हावे, अंधारात प्रकाशणाऱ्या कंदीलाची वात व्हावे'' अशा त्यागी वृत्तीने जगणाऱ्या प्रा. डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांच्यामध्ये सामाजिक कार्याच्या तळमळीचा यज्ञकुंड प्रज्वलित राहो हीच शुभकामना.

—जयक्रांती महाविद्यालय, लातूर.

राष्ट्रभाषा हिंदीचे पुरस्कर्ते डॉ. लोखंडे

– प्रा.मुरकुटे एन.एम.

प्रा. एन.एम. मुरुकुटे जिल्हा परिषद नवी मुम्बई चे शिक्षक आहेत. व त्यानी बी.एकृ पर्यंत चे शिक्षण प्राप्त केले तसेच संस्कृती रक्षक मंच चे ते सदस्य आहेत

लातूर जिल्हयाची निर्मिती सन १९८२ मध्ये झाली. त्यापूर्वी लातूर हा उस्मानाबाद जिल्हयातील तालुका होता. पूर्वीसुध्दा लातूरची बाजारपेठ खूप गाजलेली व प्रसिध्द होती. लातूर जिल्हयाची निर्मिती झाल्यानंतर लातूरची ओळख लातूर पॅटर्न म्हणून विविध क्षेत्रात झाली. या प्रगतीत, विकासात अनेक नामवंत विचारवंताचा मोलाचा वाटा आहे. त्या रत्नांमधील असे एक नाव म्हणजे डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे होय. सरांच्या जीवनातील ६५ वर्षाचा प्रवास पाहता त्यांनी अनेक क्षेत्रात आपली वेगळी अशी एक ओळख निर्माण केली आहे. सरांच एक वैशिष्टये हे की, ते ज्या क्षेत्रात जातात ते अर्ध्यावर कधीच सोडून देत नाहीत अन् सोडलंही नाही. तर ते पूर्णत्वास येईपर्यंत ते सोडतंच नाहीत.

हिंदी ही आपली राजभाषा आहे. जवळपास भारत स्वातंत्र्य होऊन ६५ वर्षांचा काळ लोटला पण आजही हिंदी भाषेला बऱ्याच राज्यांमधून प्रखर विरोध केला जातो. उच्च ध्येयांनी प्रेरित होऊन एका अहिंदी भाषीक प्रांतात जन्मलेले डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे याचं राष्ट्रभाषा हिंदीच्या प्रचार प्रसारामध्ये मोलाचं योगदान आहे. योगदान म्हणण्यापेक्षा हिंदीसाठी त्यांनी आपलं जीवनचं समर्पित केलं आहे. सरांच राष्ट्रभाषा हिंदीवरच प्रेम हे किती आहे हे शब्दांत सांगण कठीण आहे. त्यांच्याच शब्दात सांगायचं झालं तर ''मुट्ठीभर तुफान'' या काव्यसंग्रहात त्यांनी लिहिलं आहे की,

" भाशाएँ अल्हड कन्याएँ है, चाहे तमिल मराठी हो या सिंधि,
अंग्रेजी तो होटों की लिपिस्टिक, हिंदी तो माथे की बिंदी। "

आपल्या भारत देशाला जोडण्याचं काम जर कोणत्या भाषेनं केलं असेल तर ती हिंदी. अजुन करीत आहे. हिंदी ही आपल्या भारत देशाला एका धाग्यामध्ये बांधण्याचं काम करते, असं लोखंडे सर सतत म्हणत असतात. राष्ट्रभाषेच्या प्रेमापोटी आणि प्रचार प्रसारासाठी ते लातूर येथे गेल्या २२ वर्षापासून मुंबई हिंदी विद्यापीठाचं केंद्र चालवित आहेत. आजमितीला या केंद्रातून माझ्या सारखे हजारो विद्यार्थी पदवीधर होऊन विविध क्षेत्रात नोकरीला लागले आहेत. जसजशी विज्ञानाची प्रगती होत गेली तेव्हापासून लोकांचा लोंढा म्हणण्यापेक्षा सर्वसामान्य लोकं सुध्दा इंग्रजीकडे धाव घेऊ लागले. पण लोखंडे सरांनी हिंदीकडे कदापि दुर्लक्ष केले नाही. अन् त्याची पावती म्हणून २०१२ मध्ये दिल्ली येथे त्यांना '' राजभाषा सन्मान पुरस्कार'' देऊन गौरवन्वित करण्यात आले.

खेडोपाडयात दलित वस्त्यांमध्ये जाऊन सवर्ण व दलितांना एकत्र आणून सामाजिक समता व बंधुता निर्माण करण्याचे अनमोल कार्य सरांनी केले व करीत आहेत. आपल्या हसमुख वक्तृत्व शैलीतून विविध विषयावर चर्चा घडवून सामाजिक प्रबोधनाचे कार्य स्वतःचे कर्तृत्व म्हणून केले. १७ वर्षे खेडोपाडयात दलित वस्तीत व्यतीत करून माफक दरात वैद्यकीय सेवा करण्याचे पुण्यकर्म सरांनी

केले. महात्मा गांधीजीच्या अहिंसेच्या मार्गाने व डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर यांना अभिप्रेत असणाऱ्या समाजाची निर्मिती करण्यासाठी सर आपल्या लेखणीतून, वक्तृत्वातून समाज प्रबोधन करीत आहेत.

"समाजामधून व्यसनाधिनात नाहीशी व्हावी, नवीन पिढी सुसंस्कारित व्हावी," या उद्देशाने अनेक ठिकाणी त्यांनी व्यसनमुक्तीवर प्रवचने व व्याख्याने दिली. समाजातील अनेक तरूनांना या व्यसनाच्या विळख्यातून सोडविण्याचा प्रयत्न केला व करीत आहेत. ज्याप्रमाणे समाजातून व्यसनाधिता हद्दपार झाली पाहिजे त्याप्रमाणे समता, बंधुता, प्रेम, एकोपा, उच्च विचारसारणींचे मुल्ये रूजवण्यासाठी व भारतीय संस्कृतीचे रक्षण करण्यासाठी जवळ जवळ ४०० हून जास्त खेडया मध्ये प्रवचने, किर्तन, भजनोपदेशाच्या माध्यमातून प्रबोधन केले व करीत आहेत.

जातीविरहीत समाज रचनेची सुरूवात सरांनी स्वतः पासूनच केली.स्वतःचा विवाह व आपल्या मुला-मुलींचे विवाह आंतरजातीय करून समाजसमोर एक आदर्श ठेवला. शेकडो मुला-मुलींचे आंतरजातीय विवाह घडवून आणले. युवा पिढीवर चांगले संस्कार व्हावेत म्हणून अनेक ठिकाणी संस्कार शिबिरे भरवण्याचे काम डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी केले.

कोणत्या तरी कवी ने लिहिले आहे की, " **दुबळया जिवासाठी कधी मदतीचा हात व्हावे, अंधारात प्रकाशणाऱ्या कंदीलाची वात व्हावे!**"

याप्रमाणे १९९३ ला महाराष्ट्रालाच नाही तर संपूर्ण देशाला हादरवून सोडणाऱ्या किल्लारी (लातूर)येथे झालेल्या भुकंपात आपल्या सहकाऱ्यांना सोबत घेऊन चार महिने कार्य केले. वैद्यकीय सेवा, भुकंप ग्रस्तांसाठी अनाथालय सुरू केले.

अशा या अनोख्या व्यक्तीमत्वाच्या माणसाने ज्या क्षेत्रात पाय रोवला त्या क्षेत्राचे परिसर चिटकल्यास जसे लोहाचे सोने होते तसेच त्या क्षेत्राचे सोने केले. आज आपण पाहतो की, प्रत्येक व्यक्ती ही स्वतःच्या विकासात गुंतलेला असतो. पण हे एक अनोखे अद्भुत व्यक्तीमत्व अनेक ध्येय घेऊन लातूरच नव्हे तर देश पातळीवर समाज सुधारण्याचे कार्य करीत आहेत.

६५ वर्षाच्या जीवन प्रवासाचा विचार करता सरांच्या कार्यावर एक ग्रंथ ही अपुरा पडेल एवढे कार्य संरानी केले आहे. शेवटी एवढेच लिहावे वाटते की, भारत मातेच्या पोटी असे अनेक मौल्यवान रत्ने जन्माला यावीत व पृथ्वीवर स्वर्ग निर्माण करण्यास हातभार लावावा. सरांना दीर्घायुष्य लाभो हीच ईश्वर चरणी प्रार्थना!

(सदस्य, संस्कृती रक्षक मंच, लातूर भाखा–मुंबई)

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे एक आदर्श व्यक्तिमत्व

– प्रा.सत्येद्रं संगाप्पा राऊत

प्रा. राऊत हे अणुदर येथील जवाहर महाविद्यालय संस्कृत चे प्राध्यापक असून त्यांचे शिक्षण एम.ए.बी.एड, एम. फिल पर्यंत झाले आहे. सध्या ते पी.एच.डी करीत आहेत. त्यांना राज्यस्तरीय पाच पुरस्कार प्राप्त झाले आहेत.

सामाजिक व शैक्षणिक कार्यात तडफदार, निस्वार्थी, शिस्तप्रिय व मानवतेची जपवणूक करणारे, अन्यायग्रस्त जनतेच्या दुःखला वाचा फोडणारे ''सत्यमेव जयते'' आणि ''अहर्निश सेवामहे'' या दिव्य तत्वाने भारून गेलेले, आदर्श जीवनाचा मार्ग दाखविणारे, प्रत्येकाशी सौजन्य शीलतेने तसेच प्रेमळ पणाने वागणारे आणि आम्हांस आदरणीय वाटणारे डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे सर आपणच आमच्यासाठी महान आहात.

आईकडे अश्रुचे पाट असतात, पण बापाकडे संयमाचे घाट असतात. आई रडून मोकळी होते पण सांत्वन वडिलांनाच करावे लागते आणि रडणाऱ्यापेक्षा सांत्वन करणाऱ्यावरच जास्त ताण पडतो, तसे आपण आहोत, रोज जेवणाची सोय करणारी आई लक्षात राहते आणि आयुष्याच्या शिदोरीची सोय करणारे आपणच असल्याने आम्ही आपणास कधी विसरणार आहोत काय?

पाण्यामध्ये मासा झोप कसा घेत असेल हे जाणून घ्यायचे असेल तर माणसाला प्रत्यक्ष माशाचा जन्म घेतल्याशिवाय कळत नाही. तसे समाजातील सामान्यातला सामान्य कुंटुबातील मुलाची अवस्था काय असते हे सामान्य कुटुंबात जन्म घेतल्याशिवाय कळत नाही. आशाच अतिशय सामान्य कुटुंबात जन्म घेतलेल्या मला आपण गुरूकुलामध्ये आर्ष शिक्षण घेण्यासाठी प्रेरणा दिली. आपण मला नेहमी म्हणायचे सत्येंद्र शिक आणि तुझया दारिद्रय घालविण्यासाठी तयार हो. तु चांगले शिकलास व सुसंस्कारित झालास तर नक्कीच तुझे चांगले झाल्याशिवाय राहणार नाही. हे आपले शब्द माझ्या हृदयाला लागले. मी आपल्या व माझे बंधू श्री महादेव राऊत यांच्या प्रेरणेमुळे घडण्याचा प्रयत्न केला आणि मला त्यात यश मिळाले व मी आज संस्कृत विषयाचा प्राध्यापक झालो. आपल्या मुखातून उद्‌घोषित होणारी याच्या प्रवचन ही आपल्या हृदयरुपी खाणीतून निघालेली रत्नेच जणू, सर्वजण ही रत्ने आपल्या मनात साठवतात.

प्रत्येकांनी उच्च ध्येय बाळगावीत. कठोर परिश्रम घ्यावेत पण स्वतःच्या विकासा बरोबर समाजाचा, राष्ट्राचा ही प्रत्येकांनी विचार करावा. मोठी ध्येय गाठण्यासाठी कर्तृत्वाचे पंख पसरावेत अशीच आपली नेहमी शिकवण आहे. आजकालची मुले-मुली चांगले वक्ते व सुसंस्कारीत नागरिक तसेच देशप्रेमी, ध्येयनिष्ठ बनावीत म्हणून आज पर्यंत अनेक ठिकाणी शिबिरे घेऊन प्रबोधन केले यामुळे आज अनेक मुले-मुली एक आदर्श व्यक्ती म्हणून समाजात वावरत आहेत. भारतीय संस्कृतीचे रक्षण व जतन करण्यासाठी आपण ''संस्कृती रक्षक मंच'' स्थापन करून अनेक कार्यक्रम घेऊन भारतीय संस्कृतीची रक्षा करण्यासाठी सतत प्रयत्नशील आहात. आपल्याकडे मी पाहतो आहे

आपल्या आज पर्यंतच्या मेहनतीची कष्टांची फळे आज गोर-गरीब जनते पर्यंत पोहोचली आहेत. आपल्या आदर्शमय जीवनातून समाजाला प्रबोधन, भवन व किर्तनाच्याा माध्यमातून उद्धाराची दिशा मिळाली आपण वैदिक धर्माचा प्रचार करत आहात. वेदादि ज्ञानाची पवित्रता जोपासत, उपयोगिता, न्यायिकता व जीवन जगण्याचा उच्चतम मार्ग दाखवत बुद्धिची एकरुपतर साधण्याच्या दृष्टीने सर्व साधारण माणसाला अंधश्रद्धेतेन बाहेर काढण्याचा प्रयत्न करत आहात तसेच व्यसनापासून दूर ठेवत. गोर गरिबांना मदत करत सामाजिक विषमता दूर करण्याचे, धार्मिक जीवन जगण्याची प्रेरणा व संस्काराचे धडे देण्याचे महत्वपूर्ण कार्य आपण केले व करत आहात.

अन्यायरहित, शोषणरहित नवा समाज उभारावा, सर्व सामान्यांना उच्च प्रतीचे ज्ञान, ध्येयनिष्ठ नीतिमान शिक्षण, सुखी व समृद्ध जीवन जगावयास मिळावे म्हणून आपण उच्च जीवन मूल्याचा पुरस्कार केलात. आचार विचार आणि उच्चार यांचे सहकार्य जेवढया प्रमाणात असते तेवढे जीवनात प्रभुत्व संपादन व यश प्राप्त होते यामुळे आपण श्रेष्ठ ज्ञानाचा व समाजहित विचारांचा केंद्रबिंदू आहात असे मी मानतो. मानवतावादी तत्वज्ञ असून मानवाचे जीवन सुखी समृद्ध व प्रतिष्ठापूर्ण व्हावे याबद्दल आपणाला नेहमी तळमळ आहे. दलित वस्त्यामध्ये जाऊन दलित सवर्णांना एकत्र आणून **"संगच्छध्वं संवदध्वं, सं वो मनांसि जानताम्"** प्रमाणे सामाजिक समता व वसुधैव कुटम्बकम प्रमाणे बंधुता या विषयावर आपण चर्चा केली व प्रबोधनही केले, हे इथं विशेषत्वाने लिहावसं वाटतं

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वं सन्तु निरामय द्य
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखभागभवेत् द्य

याप्रमाणे गोरगरीब दुबळे व दलित वगैरे जण सुखी व्हावेत सर्व जण निरोगी असावेत या हेतुने सर्वांना वैद्यकीय सेवेमध्ये सवलत देऊन सर्वांची सेवा करण्याचे पुण्यकर्म केले.

आपण कोणत्याही समाजाबद्दल व व्यक्तीबद्दल कधीही द्वेष किंवा मत्सर केला नाही. अशा प्रकारे सर्व समाजातील लोकांनी एकमेकांना कल्याणाच्या दृष्टीने पहावे व कोणाला ही कोणत्याही प्रकारचे दुःख होऊ नये म्हणून आपण सदैव प्रयत्नशील आहात.

समाज सुधारणेची पताका घेऊनी हाती
सर आपण जोडली दलितांची शिक्षणांशी नाती
नाही केली कसलीच आशा नाही केले स्वतःची चिता
फुलविल्या सर्वांच्या आकांक्षा पंरतु केल्या नाहीत अपेक्षा

It does not matter how many times a man proved himself in the past Everyday is a new day and every day he must prove himself Emest hemingway.

प्रत्येक दिवस हा कर्तृत्ववान व्यक्तीसाठी कर्तृत्व सिद्ध करण्यासाठीच असतो आणि ते इतरांसाठी त्यांच्या कार्यातून मार्गदर्शक प्रेरणा स्थान ठरत असतात. आयुष्यभर दीपस्तंभासारखरे असतात. जिद्द आणि परिश्रमाची जोड असेल तर कोणतेही असाध्य ते साध्य होते. "न निश्चितार्थाद् विरमन्ति धीराः" हे आपणा आपल्या कार्यातून दाखवून दिलात. जो थांबतो तो संपतो. सतत

ध्येयपथावर चालत राहिले पाहिजे तरच मानवी जीवनाचे सार्थक होईल." चलना ही जीवन की कहाणी है-रुकना मौत की निशानी है। असे आपल्या वक्तव्यातून व प्रेरणेतून दिसून येते.

आपल्याकडे भव्यदिव्य असे ग्रंथालय व वाचनालय असून हजारो पुस्तके यात कथा, कांदबऱ्या, ऐतिहासिक, अध्यात्मिक सांस्कृतिक व आयुर्वेदिक ग्रंथ तसेच वैचारिक ग्रंथ चोविस तास वाचावयास खुले ठेवले आहेत. आपण एक उत्तम ओजस्वी वक्ता, कवी, लेखन असून अनेक ग्रंथाची रचना केलेली आहे. व करीत आहात. आपणास आज पर्यंत अनेक पुरस्कार राष्ट्रीय स्तरावर मिळालेले आहेत. भविष्यात ही यशाचे शिखर व त्यांच्यापलीकडे ही जाण्याचे सामर्थ्य आपणास ईश्वर देवो.

" घेतली झेप आकाशी नाही उसंत अराशी,
सत्कार्य समाजसेवा जुळल्या इतक्या राशी अभिमान आम्हा सर्वांशी,
आपणास उदंड आयुष्य लाभो हीच माझी प्रार्थना."

(संस्कृत विभाग प्रमुख), जवाहर महाविद्यालय,
अणदुर ,ता.तुळजापूर, जि.उस्मानाबाद

विपद् काल में धैर्य, ऐश्वर्य में क्षमा, सभा में वचन–चातुरी, संग्राम में पाराक्रम, सुयश में अभिरुचि और शास्त्रों में व्यसन–ये गुण महापुरुषों में स्वभाव से ही होते हैं।
–भतृहरि

डॉ. चंद्रशेखर : व्यासंगी इतिहासकार

– प्रा.देवदत्त तुंगार

प्राचार्य देवदत्त तुंगार एक प्रसिद्ध समाज सुधारक,लेखक, पत्रकार आणि स्वामी. रामानंद तीर्थ मराठवाड विद्यापीठा चे समन्वयक आहेत.
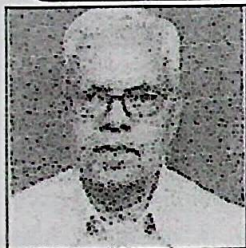
लातूर येथे स्थाईक झालेले रेणापूरचे डॉ. प्रा. चंद्रशेखर लोखंडे यांच्या परिवाराशी माझा घनिष्ट संबंध १९५७ साली झाला. त्यांचे वडिल श्री रामस्वरुप लोखंडे रेणापूरच्या पाच सत्याग्रही बरोबर मी चार महिने पंजाबच्या अंबाला सेंट्रल जेलमध्ये कारावास भोगलो. हा कारावाचा काळ, चर्चा, परिसंवाद व वैचारिक देवान-घेवाणीमुळे संस्कमरणीय ठरला व कौटुंबिक स्नेहसंबंध घट्ट झाले. श्री रामस्वरुपजी लोखंडे यांनी चंद्रशेखर व धर्मदीप या दोन मुलांना संस्कृत, हिंदीला प्राधाण्य देणारे गुरुकुल्य शिक्षण दिले व आज हे दोघेही विद्यादानाच्या क्षेत्रात मौलिक कामगिरी बजावत आहेत. २३ ऑक्टोबर १९४६ हा डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे जन्म दिवस असून सेवानिवृत्त होऊन षष्ठशब्द्पुर्तीनंतर ते पूर्णवेळ समाजकार्यास वाहून घेतलेले प्रेरक व्यक्तीमत्व झाले आहेत. त्यांच्या व्यक्तीमत्वाचे दोन तीन पैलूच फक्त वाढदिवसाचया निमित्ताने वाचकांनासाठी उलघडून दाखवत आहेत.

सेवेचे क्षेत्र :- आयुर्वेद, संस्कृत व हिंदी भाषा यांचे आध्ययन आर्य समाजी गुरुकूल उत्तर भारतात झाल्यानंतर चंद्रशेखर रेणापूर जिल्हा लातूर येथे परतले. हैद्राबाद येथील घटकेश्वर गुरूकुलामध्ये वडिलांचे ते शिष्य होते. व माझे मित्र होते. हा काळ साधारणतः १९५६ ते १९६० सालाचा आहे. रेणापूर तालुक्यातील दलित वस्त्याच तसेच सार्वजनिक आरोग्य सेवेच्या सुविधा नसलेल्या खेडयात त्यांनी १९७० ते १९८० या काळात वैद्यकीय सेवा केली. १९९० साला पर्यंत मराठवाडा विदर्भ आणि कर्नाटकातील भागात व्याख्याने, चर्चा, परिसंवाद या माध्यमातून त्यांनी समाज प्रबोधन केले. १९९० ते २००७ पर्यत लातूर येथील जयक्रांती महाविद्यालयात हिंदी, संस्कृत या विषयाचे अध्यापन केले. तेथून निवृत्त झाल्यावर आता पूर्ण वेळ त्यांनी समाज कार्य वाहून घेतले आहे. वडिल हैद्राबाद मुक्ती संग्रामातील भुमिगत सैनिक असल्याने व आई त्रिवेणीबाई या समाजसेविका असल्याने चंद्रशेखर यांचा मुक्ती संग्रामबद्दल जिव्हाळा व सामाजिक कार्याची आवड म्हटली पाहिजे.

रेणापूर येथील 'अमृतपुत्र' मासिकांचे संचालन व प्रकाशन सौ. त्रिवेणी रामस्वरूप लोखंडे व संपादन डॉ. सौ. शारदा देवदत्त तुंगार यांनी उत्तमरितीने सांभाळला. डा. चन्द्रशेखर लोखंडे यांनी अनेक लेख मराठी व हिंदीत लिहिले असून नाव घेण्यासाठी ग्रंथ रचनाही केली आहे. नये युग की ओर आर्यसमाज, मुट्ठीभर तुफान ही त्यांची पुस्तके दिल्ली हून प्रकाशित झाली आहेत. संत तुकाराम आणि स्वामी दयानंद, आध्यात्मिक आनंदाचा झरा तसेच अवतार निर्णय (प्रस्तावना प्राचार्य तुंगार) आदी पुस्तके लोकप्रिय आहेत. साहित्य क्षेत्रातील त्यांचे अत्यंत महत्वाचे व भारतभर गाजलेले पुस्तक

म्हणजे राजस्थानमधून प्रकाशित झालेले विस्तृत माहिती देणारे 'हैद्राबाद मुक्ती संग्राम का इतिहास' हा ग्रंथराज होय. हैद्राबाद मुक्ती संग्रामाची सर्व भारतात अचूक व विस्तृत माहिती नाही. अशी दुर्लक्षित पण महत्वपूर्ण माहिती हैद्राबाद का मुक्ती संग्राम या ग्रंथात डॉ. लोखंडे यांनी दिली आहे. या उपयुक्त संदर्भ ग्रंथाची तिसरी आवृत्ती ही हातोहात खपली. उत्तराखंड, हरियाणा, राज्यस्थान, मध्यप्रदेश प्रातांत ह्या ग्रथाची मोठया प्रमाणावर विक्री झाली. कर्नाटकचे राज्यपाल श्री. टी.एन. चतुर्वेदी यांनी २००३ साली. डॉ. लोखंडे यांचा ग्रंथ लेखाना बद्दल सत्कार केला. या ग्रंथाचे मराठीतही भाषांतर प्रकाशन लवकरच होणार आहे.

अंधश्रद्धा निर्मुनल :–गंडादोरा, ताईत, बुवाबाजी, बळीप्रथा, नवस सायास इत्यादी अंधश्रद्धा बाळगू नयेत व विवेकनिष्ठ बुद्धीवादाचा ग्रामीण समाजाने अंगीकार करावा यासाठी डॉ. लोखंडे यांनी समाजप्रबोधन केले. अनेक खेडोपाडयात जाऊन व्याख्याने दिली. या कामाबद्दल त्याना औरगाबाद च्या अंधश्रद्धा निर्मुलन समितीने सन २००३ 'अंनिस कार्य गौरव पुरस्कार' प्रदान करण्यात आला.

आर्य समाजाच्या साहित्याचा प्रचार प्रसार कार्याबद्दल व साहित्य निर्मितीबद्दल मुंबईच्या सांताक्रुज आर्य समाजातर्फे 'मेघजी भाई कार्य साहित्य पुरस्कार' डॉ. लोखंडे यांना सन २००६ मध्ये देण्यात आला. आंतरजातीय विवाहांचा सक्रीय पुरस्कार, जातीभेद निर्मुलन व समाजप्रबोधन त्यांचे कार्य सतत चालू आहे. याकामी त्यांची सुविद्य पत्नी सौ. संध्या हिचे त्यांना पूर्ण सहकायर्च आहे. त्या शिक्षिका आहेत. डॉ. लोखंड यांचा ग्रंथ संग्रह मोठा आहे. प्रा.तुंगार डॉ. कुशलदव शास्त्री, कारंजकर, सौ. कुलकर्णी, प्रा. राठोड आदी मंडळी या ग्रंथ संग्रहाचा आपल्या लेखन वाचनासाठी नेहमी मुक्त हस्ते वापर करीत असतात. एक संशोधक लेखक, वक्ता, संयोजक, राष्ट्र भाषा प्रचारक, आर्य कार्यकर्ता, म्हणून उत्साहा ने कार्यरत असणाऱ्या चंद्रशेखर लोखंडे यांना वाढदिवसा निमित्त हार्दिक शुभेच्छा अनेकोत्तम आशीर्वाद.

– निरायम बंगला, नांदेड

जो विश्वासयोग्य न हो, उसका विश्वास नहीं करना चाहिए। मित्र का भी विश्वास नहीं करना चाहिए। कदाचित् ऐसा मित्र रूठकर गुप्त बातों को दूसरों को बता सकता है।

साहित्य निर्मितीचा अखंड झरा डॉ. लोखंडे

– राजाभाऊ पांचाळ

राजाभाऊ पांचाळ यांचे शिक्षण टिळक महाराष्ट्र विद्यापीठाहून एम.ए. पर्यंत झाले आहे. त्यांना मराठी वांग्मय परिषद बडोदा येथील राष्ट्रकवि पुरस्कार प्राप्त झाला आहे.
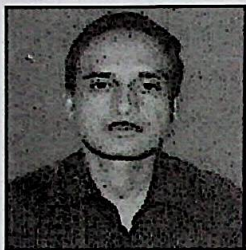
सपनों के साये में भी कुछ लोग जीते है। थोडे से अभाव को मै आपार क्यों मानुँगा जीवन युद्ध जारी है।, हार नही मानुँगा।

जीवनातील संकटांना, प्रसंगाना परिस्थितीला शरण न जाता जीवनाबद्दलचा वरीलप्रमाणे आशावाद व्यक्त करणारे आमचे मित्र डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांचा माझ्याशी असलेला परिचय जवळपास पंधरा वर्षापासूनचा आहे.

आमची ओळख केवळ परिचयापर्यंतच न राहता आम्ही एकमेकांचे चांगले मित्र बनलो. मित्र होण्यासाठी काही ठिकाणी वैचारिक साम्य असावे लागते. वाचन हे आमच्या मधील साम्य- समारेच्या व्यक्तीकडून त्या विचार व्यवस्थित समजून घेणं विचार पटले नसले तरी आक्रमकपणे विरोध न करणं, आपल विचार समतोलपणे मांडणं, आपले विचार समोरच्या व्यक्तीला पटले नसले तरी मैत्री न तोडणं, जीवनाला आणि माणसाला समजून घेणारा हा आमचा समजुतदार मित्र मला तरी अस वाटतं ही एक सर्वात मोठी देणगी आहे. अशी देगणी लाभलेले आमचे मित्र सतत काहीतरी लिहित असतात. उन्हाळयात झारे कधीही आटणार नाहीत, असे आमचे मित्र म्हणा किंवा विचारांचा अखंड झरा म्हणजे डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे.

जेव्हा-जेव्हा मी त्यांच्याकडे जातो. तेव्हा-तेव्हा ते माझ्यासमोर त्यांच्या नवीन पुस्तकाच्या निर्मितीबद्दल बोलायचे मला आश्चर्य वाटायचं की सातत्याने ते कसं काय लेखन करू शकतात. पुस्तक प्रकाशनाचा मार्ग तर खडतरच तरीही प्रकाशनाच्या मार्गावरून कसलीच तक्रार न करता, कुरबुर न करता आपला साहित्य प्रवास हा एकशब्द पंढरीचा वारकरीच!

मुट्ठीभर तुफान ! हा त्यांचा शेरोशायरींचा संग्रह या संग्रहाच्या निर्मितीच्या काळातला मी एक साक्षीदार आहे. तेव्हा या शायराच्या घराच्या वरच्या पहिल्या मजल्यावर एक छोटीशी पत्र्याची खोली होती. त्या खोलीमध्ये स्वतःला कोंडवून भर उन्हाळयातही अंगाची लाही-लाही होणाऱ्या दिवसातही ते त्या खोलीत लेखनात मग्न असायचे प्रसुतीच्या कळा आणि लेखन निर्मितीचा काळ जवळपास सारखाच. मग ते मला शेरोशायरी वाचून दाखवायचे. मी 'वाहवा क्या बात है'! म्हणायचो, मध्येच एखाद्या हिंदी,उर्दू शब्दाचा अर्थ विचारायचो ते मला समजून सांगायचे. नवीन शब्दाचा अर्थ समजल्यामुळं मलाही खुप आनंद वाटायचा. ही ज्ञानाची देवघेव अर्थातचं आनंदाची देवघेव आमची वर्षानवर्षे चालू आहे.

'प्रतिबिंब ' हा माझा पहिला कवितासंग्रह तो १९९६ ला प्रकाशित झाला. काही मित्रांना मी तो संग्रह भेट म्हणून दिला होता. मी तो संग्रह लोखंडे सरांनाही भेट म्हणून दिला. त्यावेळी मी एखाद्या

मान्यवरांना पुस्तके भेट दिलो की काही दिवसांनी पुन्हा त्यांच्याकडे चक्कर टाकायचो. याचा उद्देश असा की, पुस्तकाविषयी ते काय बोलतात, काय मत देतात किंवा प्रतिक्रिया देतात याची उत्सुकता असायाची. तसंच लोखंडे सर आपल्या पुस्तकाविषयी काय म्हणतात, हे पहाण्यासाठी मी त्यांच्याकडे गेलो. गप्पा निघाल्या ते सहज म्हणून गेले की, पुस्तक खूप छान आहे हो तुमचं उलटया कव्हरचं मी दचकलोच, भितीने नव्हे गमतीने गमतीनेही माणूस दचकतो हा माझाही अनुभव पहिलाच भितीने दचकणारा माणूस पण गमतीने दचकणारा माणूस पोट धरून हंसायला लागतो. मी खुप हसायला लागलो तर गंमत अशी झाली होती की बाईडींग करत असतानाच पुस्तकाला उलटं कव्हर चिकटवलं गेलं होतं. मला त्याची काही कल्पना नव्हती. गडबडीत मी ते पुस्तक त्यांना दिलं होतं. मी ही त्यांना गंमतीने म्हणतो की तुम्हालाच उलटया कव्हरचं पुस्तक मिळालं, हा तुमच्या नशिबाचा भाग आहे. डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे म्हणजे विनादाची किनार लाभलेली व्यक्तिमत्व आहे, असे म्हटले तर विनोद होणार नाही. ते विनोदाचे बादशाहा नाहीत हे खंर पण ते बादशाहालाही बेसावध क्षणी नकळत हसवतील हे मात्र खंर आहे. खूप वर्षे मला असं वाटायचं, की ते जनावराचे डॉक्टर आहेत की माणसाचे डॉक्टर आहेत की एखाद्या विषयात पी. एच.डी. करून झालेले डॉक्टर आहेत? मी त्यांच्याकडे गेलो की, डॉक्टरविषयी विचारायचे विसरून जायचो. पण त्यांनीच एका दिवशी ते आयुर्वेदाचे डाक्टर असल्याचे सांगितले, त्यावेळच त्यांची प्रतिकूल परिस्थिती त्यांनी सांगितली प्रतिकुल परिस्थितीतून त्यांनी काढलेली वाट इतरांना निश्चितच प्रेरणा देईल. जीवनाकडे पाहण्याचा मिश्कील दृष्टीकोन यामुळेच ते प्रतिकुल परिस्थितीवर मात करू शकले याची एवढया वर्षांनी मला खात्री पटते.

एखाद्या गोष्टीत फायदा असेल तर बरेच लोक अशा गोष्टी करतात पण ज्या गोष्टीत फायदा नाही पण ती गोष्ट समाजासाठी उपयोगाची आहे अशी गोष्ट लोखंडे सर पुन्हा पुन्हा करतात ती गोष्ट म्हणजे 'वक्तृत्व शिबीर' या शिबीरासाठी ते प्रचंड मेहनत घेतात. पण विद्यार्थ्यांना त्यामध्ये फारसा रस नाही, हे लक्षात आल्यानंतर सुद्धा ते पुन्हा पुन्हा प्रयत्न करतात. आज विद्यार्थ्यांना 'डान्स इंडिया डान्स' यासारख्या विषयामध्ये इंटरेस्ट आहे. अभियानाची शिबीरं होतात. व्यक्तिमत्व विकासाची शिबीर होतात. यासाठी विद्यार्थी मागेल तेवढी फी देवून सहभागी होतात. मी सरांना म्हणालो की, वक्तृत्व शिबीरामध्ये विद्यार्थ्यांना इंटरेस्ट नसेल तर आपण ते का करायचं? सर म्हणतात कमी विद्यार्थी शिबीरासाठी आले तरी चालतील हा आपला व्यवसाय नाही पण आशा शिबीरा मधूनच विद्यार्थी घडतील. " वक्तृत्व ही जीवनाला समर्थ करणारी कला आहे. तो कोणत्याही क्षेत्रामध्ये गेले तरी त्यांच वेगळेपण सिद्ध करणारी कला म्हणजे वक्तृत्व . एखादा वक्ता श्रोत्यांच जीवन बदलवू शकतो. एखादा विचारं माणसाला प्रेरणा देवून जातो. जीवनाला गती देवून जातो. ढासाळेल्या मनाला पुन्हा उभं राहण्याचा मंत्र देवून जातो म्हणून चांगले वक्ते निर्माण झाले पाहिजेत तचे उद्या जनसामान्यांचा प्रश्न लोकसभा विधानसभेतून पोटतिकडकीने मांडतील ते कधी सभाग्रहाला खळखळून हसवतील, तर कधी नकळत चिमटा घेतील, कधी ते आपल्या मार्मिक शैलीत बोचकारे काढतील. सामान्य माणसांच्या जगण्यातील धग ते धगधगीतपणे मांडतील यासाठी वक्ते निर्माण होणं, ही काळाची गरज आहे असा विचार करून वक्तृत्व शिबीराचं आयोजन करणारे लोखंडे सर मला निश्चितच वेगळे वाटतात. शिबीरासाठी फी फक्त २०० ते २५० रूपये असून सुद्धा पंधरा वीस विद्यार्थी बऱ्याच प्रयत्नानंतर येतात. तरीही लोखंडे सर दरवर्षी पुन्हा नव्याने नव्या उत्साहाने वक्तृत्व

शिबीराचं आयोजन करतात. त्यामागे समर्थ वक्ते निर्माण करणे निर्माण होण्यासाठी प्रेरणा देणं, हा हेतू असतो. एका प्रकारे हे नवनिर्मितीचं नव निर्माणाचं कार्य आहे. यामध्ये फायद्या तोटयाचा व्यावसयिक आडाखा नाही. यामध्ये माणूस समृद्ध व्हावा त्याचा उपयोग समाजासाठी व्हावा. देशासाठी व्हावा, हा विचार उद्देश त्यामागे आहे. असा विचार करणारे फारच थोडे लोक समाजामध्ये आहेत. त्या थोडया लोकांमध्ये डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांचा आवर्जून उल्लेख करावा लागतो.

रिटायर झाल्यानंतर खूप लोक म्हातारा झालो आहोत, आता आपण काहीच नव्याने करायचं नसतं असा विचार करून मोडक्या पुलावर गप्पा मारत असतात किंवा मोकळया मैदानात आभाळाकडे बघत बसतात. पण रिटायर झाल्यानंतरही शांत न बसता रिटायरमेंट ही आपल्याला समाजासाठी काही करण्यासाठी मिळालेली संधी आहे असं समजून त्या संधीचं सोनं करण्याच्या मागे लागलेले डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांचं अभिनंदन या तरूणाला माझा सलाम!

दान सुपात्र को देना चाहिए। दया, लगाव और परिचय के कारण अपात्र को दान देना अच्छा नहीं है। अपने तथा परिवार का पालन और सुरक्षा प्रथम कर्तव्य है। उसके बाद बचे हुए का दसवें से सौंवा भाग दान के लिए उपयुक्त माना गया है।

मी अनुभवलेले डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे

पं. दिनकरराव देशपांडे

पं. देशपांडे उत्तम वक्ता, समाजसेवक आणि लेखक आहेत, ते महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभेचे महामन्त्री राहिले आहेत. तसेच गुंजोटी सरपंच आणि सोसायटी चे चेयरमैन राहिले आहे.

संस्कृती रक्षक मंच लातूरचे दि. ०८/०६/२०१२ रोजी पाठवलेले पत्र व काही कागद पत्र पोचले. पत्रातील पहिलीच ओळ सर्वानुमते संपादकीय मडळात आपली निवड करण्यात आली आहे. प्रथम माझा संपादकीय मडंळात समावेश केल्या बद्दल हार्दिक धन्यवाद! माझ्या योग्यतेचा विचार न करता केवळ स्नेहा पोटी समावेश झाल्याचे जाणवले तरी ही जबाबदारी आपण विश्वासाने माझ्यावर सोपवली आहे. प्रामाणिकपणे निर्वहन करण्याचा प्रयत्न करेन.

मृदू भाषी, मित भाषी, परंतु कर्मठ अशी आपली ओळख विद्या विनयेत शोभते. विद्या ददाती विनयम् गुणाः गुणज्ञेषुःगुणा या शुभवचनाचे मोठेपण आपल्या सारख्या व्यक्तिमत्वा मुळेच वृद्धिंगत होते.

डॉ. लोखंड यांच्या विविध गुणांचा सामाजिक संवेदना जाणणारा समाजसेवक कठोर परिश्रमाने " हैद्राबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास" हा अनमोल ग्रंथ प्रकाशित करून एक इतिहासकार शोधकार्तच नव्हे तर अनेक ग्रंथ व काव्य संग्रह प्रसिद्ध करून आपल्या अंगी असलेल्या उत्तम साहित्यिकाचा गुण ही कोदंणातून प्रकाशमान झाला आहे. त्यामुळे अष्टपैलु व्यक्तिमत्वाचे दर्शन घडले.

संस्कृती रक्षक मंच व त्यांच्या असंख्य हितचितकांनी डॉ. लोखंडे यांच्या अष्टपैलु गुणांचे दर्शन समाजालाही व्हावे या भावनेने प्रेरति होऊन डॉ. चंद्रशेखर यांच्या जीवन कार्यावर ग्रंथ उचित व्यक्तीचा उचित गौरव करून सामाजिक ऋणातुन उंमग होण्याचा एक प्रामाणिक प्रयत्न असल्याने हार्दिक शुभेच्छा.

डॉ. लोखंडे व माझा स्नेहसंबंध तसा जुनाच. पण माझ्याकडे महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेचे मंत्री पद आले तेव्हा पासून हे स्नेहसंबंध अधिकच घट्ट होत गेले. मी आज पदावर नसलो तरी ही केवळ त्यांचेच नव्हे तर आर्य समाज सिताराम नगर लातूरचे जिव्हाळयाचे सबंध आहेत.

श्री. लोखंड ज्यावेळी सितारा नगर आर्य समाजाचे मंत्री पद भूषवित होते. त्याच काळात किल्लारी व लातूर परिसरात भूकंपाचा कहर होऊन जनजीवन अस्त-व्यस्तता, छिन्नविछिन्न झाले होते. त्याच काळात सार्वदेशीक आर्य प्रतिनिधी सभा नवी दिल्लीचे उपमंत्री पद ही माझ्या कडे होते.

या भूकंपग्रस्त भागात आर्य समाज सिताराम नगरचे काम विशेष उल्लेखनीय आहे. त्यावेळी पदाधिकारी व कार्यकर्त्यांची एक मजबुत फळी उभी होती. प्रत्येक जण स्वतःला झोकून दिलेला होता. ज्याचे नेतृत्व डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांच्याकडे होते.

सार्वदेशीक सभेकडून भूकंप ग्रस्तांसाठी आलेल्या मदतीचा ओघ वितरण करण्याचे उत्तरदायीत्व डॉ. चंद्रशेखर लोखंडेनी आपल्या सर्वच सहकार्या बरोबर मोठया आत्मियतेने स्वीकारून रात्रीचा दिवस करून भूकंप ग्रस्तांना सर्व साहित्य वितरीत करून एक उच्चांक गाठला. ही त्यांची सेवा

कोणीही विसरू शकणार नाही. या कालावधीत कार्यकर्ते व वरिष्ठ पदाधिकारी यांच्यात व्यवस्थेत दृष्टीने मतभेदही होते. पण खिलाडू वृत्तीने झालेल्या समज गैरसमजाचे निरसन होऊन पूर्ववत कार्य जोमाने चालायचे.

प्रदुषणाचा एक फार मोठा चिंताजनक प्रश्न उपस्थित झाला होता. पण डॉ. लोखंडे व त्यांच्या सहकार्यांनी भूकंप ग्रस्त भागात प्रत्येक ठिकाणी वृहद यज्ञ करून पर्यावरणाचे संतुलन सुस्थितीत ठेवण्याचा आटोकाट प्रयत्न केला.ही दृष्टी केवळ मात्र डॉ. लोखंडे व त्यांच्या कार्यकर्त्यातच दिसून आली. या बरोबरच भूकंपाग्रस्तावर झालेल्या मानसिक आघातातून त्यांना धैर्य देणे, स्नेह दृष्टीने मायेचा हात फिरवणे, या ही प्रतिकुल परिस्थितीतून बाहेर पडून पुन्हा नव्याने जीवन जगण्याची दृष्टी देण्याचे काम हवन व प्रवचनाद्वारे, उपदेशाद्वारे यांच्या कडून होत असे. माझ्या दृष्टीने हे कार्य अत्यंत मोलाचे होते ते केवळ सिताराम नगर आर्य समाजाचे मंत्री व सर्वच कार्यकर्ते यांनी पार पाडले. त्यामुळे गौरवास पात्र आहेत.

सिताराम नगर आर्य समाजाचे मंत्री डॉ. लोखंडे व सर्वच पदाधिकारीगण विशेषतः डॉ. हाजगुडेंच्या सहाय्याने भूकंपात अनाथ झालेल्या मुलांना ईसाइ धर्म प्रचारक पासून सोडवून घेवून १३ मुलांना दत्तक घेतले. जवळ पास तीन ते चार वर्षे त्यांचे पालन पोषण करण्यात आले. मुलांच्या जवळच्या नातेवाईकांच्या विनंती नुसार धरोहर म्हणून सांभाळलेली संपदा त्यांच्या स्वाधीन करण्यात आली.

चित्तथरारक व काही रम्य घटना ही त्यावेळी घडत असत. त्यापैकी वहानाचा अपघात ज्यात राम नगर आर्य समाजाचे पदाधिकारी दिल्ली व कलकत्ता आर्य समाजाचे मंत्री व मी स्वतः एवढया मोठया अपघातून सुरक्षित वाचलो हा एक आश्चर्यकारक प्रश्न आहे. डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे, राजगुडें साक्षीदार आहेत.

संस्कृती रक्षक मंचच्या माध्यमातून विविध विषयावर व्याख्यानमाला आयोजित करून जनजागृती करणे, संस्कृती रक्षक मंचचे संस्थापक अध्यक्ष डॉ. लोखंडे यांनी घेतलेला हा एक नुतन उपक्रम आहे. याद्वारे नवीन पिढीस आपल्या संस्कृतीचे श्रेष्ठत्व व पाश्चात्य सभ्यता, व संस्कृती यातील अंतर दाखवून ऐहिक सुख उपभोगाच्या स्वप्नाळू जगात वावरणाऱ्या समाजाचे अवमुल्यन व अवस्थिती पासून परावृत करण्याचा त्यांना ध्यास हा त्यांच्या अंगी असलेल्या वैदिक संस्कृती, वैदिक सभ्यता व वैदिक तत्वज्ञानाचा प्रचार व प्रसार करण्याचा एक आगळा वेगळा प्रवास आहे.

मला आवडलेल्या त्यांच्या सर्वच गुणपेक्षा ते ज्यावेळी सभेचे भजनोपदेशक म्हणून सेवारत होत. त्यावेळी सभेकडून मिळणाऱ्या तुटपुंज्या मानधनावर संतुष्ट असत. प्रचारासाठी एकदा आम्ही दोघेही एकत्र होतो. तीन दिवसाचा एका गावी कार्यक्रम होता. रात्रीचा मुक्काम असायचा आमची झोपण्याची सोय म्हशीच्या गोठयात होती. दोन खाट होत्या. सकाळी थंडीमुळे अंघोळीसाठी गरम पाणी मिळेल का म्हणून चौकशी केली. उत्तर असे मिळाले की, मेलेल्या पाण्याने अंघोळ करावयाची नसते. जित्या पाण्याने करावी. त्यावेळी त्यांची संस्कृती साथ देत नव्हती. त्याही अवस्थेत प्रचार जोशपूर्ण असे. त्यामुळे मी त्यांच्या ज्युनिअर नवरदेवजी म्हणूनच परिचय करून देत असे. पुढच्या काळात प्रकृती व आर्थिक अडचणीमुळे सभेपासून भजनोपदेशक म्हणून दूर झाले. पण त्यांच्या त्याग व तपस्येमुळे तसेच अनुकुल धर्म पत्नीच्या सहयोगाने आपल्या जीवनात यशाची शिखरावरून शिखरे

पादाक्रांत करीत सुख समाधानाची जीवन यात्रा एक लक्ष्य एक उद्देश घेवून आपल्या गंतव्याकडे अग्रेसर होत आहेत. यात त्यांच्या धर्म पत्नीचा सहभाग उल्लेखनीय आहे. परमेश्वर उभयतांना उभय कुटूंबियांना दीर्घ युगरोगी बनवून लक्ष्य प्राप्तीची संधी प्रदान करो. हीच ईश्वर चरणी प्रार्थना.

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांना एका पत्र्याच्या शेडमध्ये राहताना पाहिले आहे. आणि आज आपल्या कार्याचा डोलारा आणि सुखी संसाराचा वटवृक्ष बरहलेला पाहून मी संतुष्ट आहे. संतुष्टता एवढयासाठी की मी त्यांना माझ्याच परिवारातील सदस्य मानतो. "साधना सेवा समिती" गंजोटी या सामाजिक व स्वायत्त संस्थेकडून "दिव्यत्वाची प्रचिती एकगाव गुंजोटी" हा गुंजोटीचा एक ज्वलंत इतिहासाचा ग्रंथ डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांच्या करकमला द्वारे प्रकाशित केला. त्यानीच ग्रंथ परीक्षण करून त्याला प्रसिद्धीही मिळवून दिली. ही निवड करताना आम्ही त्यांच्या अंगी असलेल्या वरील सर्वच गुणांचा आदर बाळगून प्रकाशनाचा बहुमान त्यांना देण्यात आला.

विद्वान प्रशंस्थेत लोक विद्वार गौरवम् आर्य चाणण्य समानता सर्वत्र विद्वान प्रशासित होतात. विद्वानानीचे आदर मिळतो तो त्यांच्या ज्ञान व विद्येमुळे जोजिव्हाळा आदर व प्रेम संपूर्ण परिवारा कडून पत्र्याच्या शेड मध्येही भरभरून मिळाले आणि आज ही स्वकष्टाने उभ्या केलेल्या वास्तुतून ही अनुभवत आहे.

माजी मंत्री, महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभा,
मु. गुंजोटी ,ता. उमरगा धाराशिव

हमें वैसा आचरण और व्यवहार करना चाहिए जिससे हम सौ वर्ष की आयु पूरी कर वृद्धावस्था तक स्वस्थ जीवन जी सकें। हमारे पुत्र भी हमारे सामने पिता बन जाएं तब तक हम स्वस्थ रहकर पूर्ण आयु भोग सकें, बीच में नष्ट न हो जाएं ।

–यजुर्वेद

कृतीशील आचार्य : डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे

– सौ. ज्योती संजय कुलकर्णी

सौ. कुलकर्णी हया एक उत्तम लेखिका व गृहणी आहेत. यांची दोन ते तीन पुस्तके प्रकाशित झाले आहेत. सध्या त्या लातूर येथील श्रीश्री रवीशंकर विद्या मंदिरात मराठी च्या शिक्षिका आहेत.

लातूर पासून जवळच असलेले रेणापूर हे एक तालुक्याचे गाव या रेणापूर तालुकयात श्री. रामस्वरुप व त्रिवेणीबाई लोखंडे यांच्या पोटी प्रा. डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांचा जन्म झाला. रामस्वरुप लोखंडे यांचे बंधू शिवमंगल लोखंडे हैद्राबादला गुरूकुल घटकेश्वर मध्ये शिक्षक होते. गुरूकुल घटकेश्वराला आपले बंधु शिक्षक असल्यामुळे रामस्वरुपजीं नी ५ वर्षाच्या चंद्रशेखरला शिक्षणासाठी हैद्राबादला पाठविले. आपली मुलं उच्चशिक्षित व्हावी. असे रामस्वरूपजींना वाटत असे. चंद्रशेखरजींचे प्राथमिक शिक्षण इ. १९५४ पासून गुरूकुल घटकेश्वर हैद्राबाद येथे सुरू झाले. इ.स. १९६० मध्ये चंद्रशेखरजी इ. ८ वीत चांगले गुण घेऊन पास झाले.

रामस्वरूप लोखंडे आर्यसमाजाचे कार्य करीत होते. घरची परिस्थिती जेमतेमच होती. चंद्रशेखरजीचे ८ वी पर्यंतचे शिक्षण झाले परंतु पुढच्या शिक्षणासाठी काय करावे या विषयावर रामस्वरूपजींनी आपले मित्र विठ्ठलराव खंदाडे यांच्याशी चर्चा केली. त्यावेळेस श्री विठ्ठलराव म्हणाले " आपण आर्य समाजाचे कार्यकर्ते पं.नरेंद्रजीकडे जावूया विठ्ठलराव व रामस्वरूपजी दोघे मिळून प. नरेंद्रजी कडे गेले. रामस्वरूपजींनी आपल्या परिस्थितीची सर्व कहाणी पं. नरेंद्रजी समोर कथन केली. आपल्या मुलाच्या पुढील शिक्षणासाठी आपण सहकार्य करावे अशी विनंती केली.हे सर्व ऐकल्यानंतर लगेच क्षणाचही विलंब न लावता पं. नरेंद्रजी खासदार पं. प्रकाशवीर शास्त्री यांना पत्र लिहून दिल.त्र त्यांनतर विठठलराव व चंद्रशेखरजींना दिल्लीला पठविले. पत्र व मुलाला घेवून खंदाडे दिल्लीला खा. पं. प्रकाशीवर शास्त्री यांच्या घरी गेले प्रकाशवीर शास्त्रीनी पं. नरेंद्रजींचे पत्र वाचले व चंद्रशेखरजींना शिक्षणाविषयी काही प्रश्न विचारले. चंद्रशेखरजींनी योग्य उत्तरे दिली. मुलगा खरंच चाणाक्ष आहे. प्रकाशवीर शास्त्रीना समजले. पैशासाठी शिक्षणात खंड पडू नये म्हणून चंद्रशेखरसाठी पं. प्रकाशवीर शास्त्रीनी स्पष्ट उल्लेख केला की "मुलास निःशुल्क शिक्षण देण्यात यावे चंद्रशेखर लोखंडे यास कसल्याही प्रकारचे शुल्क लावू नये " श्री खंदाडे व चंद्रशेखजीची जेवणाची व्यवस्था त्यांनी आपल्या बंगतल्याच केली. दुसऱ्या दिवशी त्यांना हरिद्वारला पाठविले. हरिद्वारे येथे गुरूकुल महाविद्यालय, जवालापूरच्या आचार्यांची भेट घेऊन विठ्ठलरावांनी प्रकाशवीर शास्त्रीचे शिफारस पत्र दिले. पत्र वाचल्यानंतर आचार्य साहेबांनी सेवकास बोलावले व चंद्रशेखजींना आश्रामात घेऊन जाण्यास सांगितले. गुरूकुल ज्वालापूरला चंद्रशेखरजींना प्रवेश मिळाला. दुसऱ्या दिवशी खंदाडे रेणापूरला निघुन आले. चंद्रशेखरजींच्या खऱ्या आयुष्याची सुरूवात ज्वालापूरपासूनच सुरू झाली.

गुरूकुल महाविद्यालय ज्वालापूरला चंद्रशेखरजींच्या सोबत गोविंदराव जाधव, बन्रवान शिंदे ही लातूरची बालमित्र कंपनी होती. गुरूकुल मध्ये सर्व मुलांना सकाळी ४ वा. उठावे लागायचे. थंड पाण्याने स्नान करून ६ ते ७ व्यायाम व ७ ते ८ हवन होत असे. ते सर्व मुलांसोबत चांगले वागत

असत. गुरूकुलमध्ये दररोज हवन होत असेत्र हवनच्या वेळी मुलांची हजेरी घेतली जात.त्र एकही मुलगा गैरहजर राहता कामा नये. हा नियम होता जर एखादा मुलगा हवनला आला नाही तर त्याला सकाळची न्याहरी मिळत नसे. नाष्ट्याला गव्हाचा दलिया (लापशी) देत असत. दुपारी १२ वा. मधल्या सुट्टीत दुपारचे भेजन होत असे. त्यात च०पाती (फुलके) भात भाजी, वरण या प्रकारचे साधे पण स्वादिष्ट जेवण असे. कांदा व मिरची वर्ज्य असे. दुध दही, तुप, भरपूर प्रमाणात वाढत असत. गुरूकुल ज्वालापूर येथे इ. १९६३ ला सुद्धा लाईटची व्यवस्था होती. प्रत्येक मुलांना लाकडी कॉट होते. अंगावर पांघरण्यासाठी देत असत. तिकडे थंडी जास्त असल्यामुळे प्रत्येक मुलाला रझई देत असत. गुरूकुल निवासमध्ये मोठ मोठे हॉल आहेत. इयत्ता १० वी पर्यंतची मुलं एका हॉलमध्ये ३० जण अशाप्रकारे राहण्याची व्यवस्था होती. १० वी नंतरच्या मुलांना एका रूममये दोघे जण अशी व्यवस्था होती. गुरूकुलमध्ये प्रत्येक विद्यार्थ्याला सक्तीने व्यायाम करायला लावत. प्रत्येक विद्यार्थी शरीराने व बलवान असला पाहिजे. असे आचार्य नंदकिशोर शास्त्री म्हणतं. नंदकिशोर शास्त्रीचे पुस्तकी ज्ञान देवून समाधान होत नसे. समृद्ध भारताच्या निर्मितीसाठी विद्यार्थी सक्षम असला पाहिजे. ज्ञान, संस्कार आणि नम्रता हे सद्गुण या गुरूकुलमध्ये लोखंडे सरांना मिळाले. चंद्रशेखरजींना नंदकिशोर शास्त्री नेहमी आर्थिक मदत करीत असत. त्याच बरोबर गुरूकुल ज्वालापूर येथील खासदार प्रकाशीवर शास्त्री सर्वच मुलानां आर्य समाजातील विचार पटवून देत असतं.

चंद्रशेखरजींनी ज्वालापूर गुरूकुलमध्ये ११ वर्षे शिक्षण घेतले. प्रत्येक वर्षी यशाची एक एक पायरी यशस्वी चढून चांगल्या मार्कांनी पास होत गेले. गुरूकुल महाविद्यालय ज्वालापूर येथून चंद्रशेखर लोखंडे यांनी विद्याभास्कर, आयुर्वेद भास्कर (बी.ए.एम.एस.) बनारस विद्यापीठाची शास्त्री ही पदवी घेऊन चांगल्या मार्कांनी पास झाले. त्यानंर रेणापूर या आपल्या जन्मभूमीत परत येऊन मेडीकल प्रॅक्टीस सुरू केली.

राष्ट्रीय एकात्मतेची भावना, समाजसमोर एक आदर्श निर्माण करून इ.स. १९७५ ला डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी स्वतःचा आंतरजातीय विवाह केला. समाजातील जाती भेद नष्ट व्हावा, ही भावाना डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांची आहे. स्वतः बरोबरच आपल्या मुलांचे तसेच बहिन- भावाचे आंतरजीतीय विवाह डॉ. सरांनी लावले. आयुष्याचा गाडा पुढे नेत असताना त्यांनी सामाजिक कार्य लेखन, भवनोपदेश, व्याख्यान देणे कधीही सोडले नाही. सुर्य स्वतः तळपतो आणि संपूर्ण जगाला प्रकाश देतो म्हणून त्याचे अनन्य महत्व आहे. नदी अखंड वाहते सर्वांना जीवन देत म्हणून जीवन रक्षक आहे. चंदन स्वतः झिजून दुस-यांना सुगंध देतो म्हणून चंदनाचे महत्व अशा या कृतिशील आचार्यास व त्यांच्या कुटूंबियांना हार्दिक शुभेच्छा !

एक कुशल वक्ता आणि लेखक डॉ. लोखंडे

– स्व.सैनिक यशवंतराव सायगावकर

स्व. सैनिक यशवंतराव सायगावकर मुळ चे कर्नाटकातील भालकी तालुक्यातील सायगाव चे रहिवाशी आहेत. त्यांचे निजामाच्या रजकारी गुंडा बरोबर सशस्त्र केले व ते एक उत्तम वक्ता आणि लेखक आहेत.
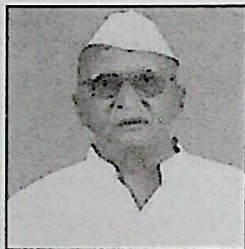
माझे परम मित्र डॉ. चंद्रशेखरजी आर्य लोखंडे यांच्या वयाला ६५ वर्षे होत आहेत.डॉ. चंद्रशेखरजी लोखंडे यांचा जन्म एका मध्यम वर्गीय आर्य समाजी परिवारात झाला. लोखंडे यांचे शिक्षण अनेक गुरूकुल तसेच महाविद्यलायतून झाले. यांनी डॉक्टरेट पदवी मिळविली हिंदी, संस्कृत, मराठी भाषेतून ज्ञान संपादन केले. बालपणा पासूनच डॉ. लोखंडे यांना देशवसेचे धडे त्यांच्या गुरूजनांकडून मिळाले. सत्यार्थ प्रकाश आणि स्वामी दयानंद सरस्वती यांच्या विचारांनी ते भारले गेले. एकंदर त्यांच्याकार्या संबंधी विचार विनियम करून त्यांच्या जीवन संबधी गौरव ग्रंथ काढण्याचा निर्णय त्यांच्या हितचिंतकानी घेतला हा निर्णय म्हणजे काय उपेक्षित समाजसेवकाचा गौरवच आहे. आजच्या बदलत्या युगात भारतीय समाजाला खऱ्या राष्ट्रीय प्रवाह मध्ये आणण्याची डॉ. लोखंडे सारख्या विद्वानाची समाजाला गरज आहे. आज दुर्जनांची चलती आहे. दुर्जनांना राजाश्रय मिळत आहे. हाच काळ समाजाला वाचविण्याचा. तसे पाहिल्यास माझा आणि त्यांचा अल्पसा परिचय मी गेल्या वर्षी त्यांचा हैद्राबाद मुक्ति संग्राम आंदोलनावरचा ग्रंथ वाचला. ग्रंथ वाचल्यानंतर माझ्या हृदयात त्यांच्या साठी जागा निर्माण झाली. सायगावचे एक आर्य समाजी कार्यक्र्ते प्रभाकर बिराजदार यांनी लोखंडे यांना गणेश उत्सावाच्या निमित्ताने सायगावाला आणले. हिच माझ्या आयुष्यातील त्यांची अन् माझी प्रथम भेट. रात्री तास भर चर्चा झाली सकाळचा नाष्टा आणि चहाचे आमंत्रण मी डॉ.लोखंडे साहेबांना दिले. त्यांनी माझे आमंत्रण स्वीकारले. ठरल्या प्रमाणे ते सकाळी आले. जवळ पास दोन तास आर्य समाज आणि हैद्राबाद मुक्ति आंदोलनावर चर्चा झाली. मला पण मनामन आनंद झाला. कारण एका पंडिताची ओळख झाली होती. पुन्हा एकमेकांना भेटायचे ठरले. हिंदी, मराठी, संस्कृत, भाषेवरचे त्यांचे प्रभुत्व श्रोत्याला मंत्रमुग्ध करण्याजोगेच आहे. आम्हा दोघांच्या वया मध्ये साधारपणे २०-२१ वर्षाचे अंतर आहे. आर्य समाजी पींड असल्याकारणाने ते शरीराने मनाने खंबीर आहेत. रेणापूर हे त्यांचे गाव देशभक्तांचे अनेक देशभक्त यागावात जन्माला आले.

लातूर जिल्हयात रेणापूर, निलंगा, औराद शहाजनी, उदगीर हे आर्य समाजाचे गड समजले जातात. जसे बिदर जिल्हयात हक्कीखेड, चिटगोपा, भालकी, बस्वकल्याण, हुमनाबाद, भालकी या गावात भाई बन्शीलाल, भाई श्यामलाल, दत्ताजी प्रसाद यांचा जन्म झाला. परंतु त्यांची कर्मभूमी उदगीर झाली. याच वीर महापुरूषंनी निजाम राज्याचा इतिहास घडवला एकंदर बिदर जिल्हा ही क्रांती वीरां ची भूमी.वर उल्लेख केल्याप्रमाणे डॉ. लोखंडे यांचा जन्म २३/१०/१९४८ चा तो काळ हैद्राबाद मुक्ति आंदोलनाचा १७ सप्टेंबर १९४८ रोजी निजामाचे राज्य संपले. आईच्या गर्भात असतानां हैद्राबाद राज्याच्या स्वातंत्र्याच्या घोषणा गर्जत होत्या. तो आवाज त्यांच्या कानी पडायचा या

काळात जन्म झाल्याने एकंदर त्यांच्या मनावर हळू हळू देशभक्तीचे किरण पडू लागले. रामस्वररूप लोखंडे यांनी आपल्या तान्हया बाळावर बालपणीच संसार केले. आणि देशभक्तीचे धडे शिकविले. रामस्वरूप यांचे स्पप्न साकाराले. म्हणनूच डॉ. लोखंडे विद्यापंडित झाले. त्यांनी विद्या भास्कर शास्त्री बी.ए. एम.एस.नंतर बी.एड. ची पदवी संपादन केली आयुर्वेदरत्न, आयुर्वेद भास्कर, प्राध्यापक म्हणुन कार्यरत असताना त्यांनी जवळपास ५०० गावातून संस्कार शिबिरे घेतली. स्वामी दयानंदाचा सन्देश घरा-घरातून पोहचविला. जातीवादाच्या विरोधात आपल्या प्रभावी वक्तृत्वशैली भाषणाद्वारे जागृती निर्माण केले. डॉ. लाखेंडे यांचे म्हणयचे की, आज मी अवस्था निर्माण झाली आहे त्यापरिस्थ्तीचा बारकाईने अभ्यास केल्यास असे वाटत आहे की असेच चालत राहिले तर देशाचे पुन्हा तुकमडे होणार या परिस्थतीला जर जबाबदार असतील तर केंद्रातील रजकीय परिस्थती सत्ता संपादन करण्यासाठी मताची गरज आहे. ही एकगठ्ठा मे विघटनवाद्यांची आहेत. हे सर्व बांगलादेशी घुसखोर आहेत. या विषयावर लोखंडे माझ्याशी बोलत असताना त्यांचे डोळे पाण्यानी भरून आले होते.

डॉ.लोखंडे यांनी काही काळ आर्य समाजाचे प्रचारक म्हणून कार्य केले. उपनिषद गीतेची शिकवणूक सामान्य लोकांना समजावून सांगितले. याचबरोबर डॉ. लोखंडे यांनी अनेक सामाजिक कार्यात हिराहिरीने भाग घेऊन कार्य केले. जाती प्रथेला ओलांडून पलीकडे जावून त्यांनी कुंटूबातल्या सर्वांची लग्ने गुणकर्मानुसार केली.

किल्लारी येथे झालेल्या भीषण भूंकपात पीडितांची सेवा केली. वैदिक महासंमेलन २००२ साली यशस्वी करून दाखविले. हिंदी राष्ट्र भाषेची अविरत चालू आहे. वेगवेगळया विषयावर डॉ. लोखंडे यांची ग्रंथ संपदा मोठी आहे. आज पर्यंत जवळपास १० ग्रंथाची निर्मिती त्यांनी केली आहे. श्री लोखंडे यांच्या कार्याला आमच्या शुभेच्छा !

अध्यक्ष ,मराठी साहित्यविचार मंच ,
भालकी, जि.बीदर (कर्नाटक)

एक बहुआयामी व्यक्तिमत्व: डा. लोखंडे

प्रा.चव्हाण प्रमोद

प्रा. प्रमोद चाव्हाण हे लातूर येथील जयक्रांती वरिष्ठ महाविद्यालय चे प्राध्यापक आहेत व ते अनेक संस्थाशी जुळलेले आहेत. तसेच त्यांचे पत्र–पत्रिका मध्ये अनेक लेख होता.
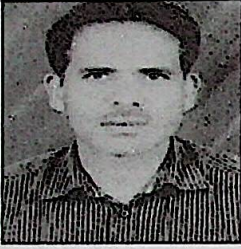
काळाच्या प्रवाहात कितीतरी व्यक्ती प्रवास करत असतात. पण इतिहास हा त्याच व्यक्तीची नोंद ठेवत असतो. जो काळाच्या प्रवाहाला छेद देतो आणि आपल्या उत्तुंग व्यक्तीमत्वाने समाजासमोर आदर्श बनत असतो. त्यापैकीच एक बहुआयामी व्यक्तीमत्व म्हणजे डॉ. चंद्रशेखरजी लोखंडे होय. डॉ. लोखंडे ही केवळ व्यक्ती नसून ते एक विचार आहेत ते विचार प्रेरणादायी आणि प्रवाही आहेत. हजारो वर्षापासून जाती धर्माच्या बंधनात अडकलेल्या शोषीत वर्गाला एक नवी दिशा देण्याचे कार्य ते करत आहेत.

प्रा.डॉ. चंद्रशेखरजी लोखंडे यांचा जन्म २३ ऑक्टोबर १९४६ रोजी आजच्या लातूर जिल्हयातील रेणापूर या गावी झाला. त्यांच्या आईचे नाव त्रिवेणीबाई तर वडिलांचे नाव रामस्वरूपजी. निजामी राजवटीच्या काळात रामस्वपजी लोखंडे स्वातंत्र्याच्या विचाराने भारावून गेले आणि आर्य समाजाशी निगडीत राहून निजामी राजवटी विरूद्ध संघर्ष केला. आपल्या वडिलांचाच वारसा पुढे चालवत डॉ. चंद्रशेखरजी यांनीही आर्य समाजाशी निगडीत राहून मोठे कार्य केलेले आहे. डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी गुरूकुल महाविद्यालय हरिद्वार येथून विद्याभास्कर ही पदवी मिळवली. नंतर त्यांनी आयुर्वेद भास्कर (बी.ए.एम.एस.) ही पदवी मिळवली व डॉक्टर झाले. एवढयावरच आपले शिक्षण न थांबवता त्यांनी पुढे वारणसी संस्कृत विश्वविद्यालयातून शास्त्री व मेरठ विद्यापीठातून एम. ए. हिंदी तर यशवंतराव चव्हाण मुक्त विद्यापीठातून बी.एड. ही पदवी मिळवली.

डॉ. लोखंडे यांनी जवळ जवळ सतरा वर्षे वैद्यकीय क्षेत्रात कार्य केल्यानंतर लातूर येथील जयक्रांती महाविद्यालयात हिंदी व संस्कृतचे अध्यापक म्हणून कार्य केले. या काळामध्ये त्यांनी वेळेचा पुरेपुर सदुपयोग करत आपला सर्व वेळ समाजकार्यात घालवला व भारतोदय प्रतिष्ठानच्या माध्यमातून सामाजिक व धार्मिक सुधारासाठी प्रबोधन केले. इ.स. १९८५ मध्ये रेणापूर येथे मराठवाडा महर्षी दयानंद बलिदान शताब्दी या कार्यक्रमाच्या संयोजकाची जबादारीची भूमिका डॉ. लोखंडे यांनी यशस्वीपणे पार पाडली. या शताब्दी सोहळयात जवळजवळ बारा हजार लोक उपस्थित होते. तीन दिवस चालेल्या या सोहळयात राष्ट्ररक्षा संमलेन, युवक संमेलन, पंजाब बचाव संमेलन, महिला संमेलन, नेत्ररोग निदान चिकित्सा शिबीर इत्यादी समाजोपयोगी कार्यक्रमांना त्यांनी प्रोत्साहन देवून राबवून घेतले. ३० सप्टेंबर १९९३ साली किल्लारी येथे मोठा भूकंप झाला. या ओढावलेल्या नैसर्गिक आपत्तीत हजारो जीव गेले. यावेळी एक संवेदनशील मनाचा हा कार्यकर्ता सोबत दोनशे कार्यकर्ते घेऊन किल्लारी येथे मदत कार्यात अग्रेसर राहिला. डॉ. लोखंडे यांनी किल्लारी येथे सतत तीन महिने

मदतकार्याचे कष्ट उचलले. जवळजवळ बावण्ण भूकंपग्रस्त गावांमध्ये फिरून त्यांनी अन्नवस्त्रांचे वाटप, ढिगाऱ्याखाली दबलेल्यांना काढणे, जखमी लोकांना दवाखान्यात पोचवणे, औषधी पुरवणे असे अहोरात्र कार्य केले. स्वतः डॉक्टर असल्याचा फायदाही या काळात त्यांना झाला. यावेळी त्यांनी लातूर शहरात मदतफेरी काढून जवळ जवळ पाच हजार लोकांना अन्न, वस्त्र पुरवले. तसेच इतर भागातून जी मदत आलेली होती. त्यांचे वाटप करण्याचे कार्य करण्याबरोबरच डॉ. लोखंडेनी भूकंपामध्ये निराधार झालेल्या मुलांना वेगवेगळया अनाथ आश्रमामध्ये पोचवणे, पर्यावरण शुद्धीसाठी लोकांमध्ये जागृती करणे व आत्मशांतीसाठी होम हवन आदींचे आयोजन करणे, इत्यादी कार्य हाती घेवून पार पाडले व भयग्रस्त झालेल्या जनतेला आधार दिला. इतरांना मदत करण्याची एक जबरदस्त तळमळ डॉ. लोखंडे यांच्या किल्लारी येथील कार्यामुळे सर्वांना परिचीत झाली. व सर्वसामान्यविषयी तळमळ असणारा कार्यकर्ता म्हणून त्यांच्या नावाभोवती वलय प्राप्त झाले.

इ.स. २००२ मध्ये लातूर येथे मराठवाडा स्तरावर झालेल्या वैदिक महासंमेलनाच्या संयोजकपदी डॉ. लोखंडे यांचे कार्य पाहून सर्वानुमते निवड करण्यात आली. सतत समाजाभिमूख कार्यक्रम राबवणाऱ्या या सुधारकाने यावेळीही राष्ट्ररक्षा संमेलन, आतंकवाद विरोधी संमेलन, महिलासबलीकरण संमेलन, सर्वधर्म संगोष्टी इत्यादी कार्यक्रम यशस्वीपणे राबविले व वैदिक महासंमेलन यशस्वी केले. या संमेलनात राबवलेल्या कार्यक्रमाचा बारकाईने अभ्यास केला असता असे दिसून येते की, सर्वसामान्य व्यक्ती हाच त्यांच्या कार्याचा केंद्रबिंदू राहिला व राष्ट्रनिष्ठा ही त्यांच्या अंगात ठासून भरलेली आहे.

डॉ. लोखंडे यांचा जन्मच एका क्रांतीकारकाच्या पोटी झाला. त्यामुळे कमालीची राष्ट्रनिष्ठा आहे. यामुळेच त्यांनी हैद्राबाद आणि मराठवाडा मुक्ती संग्रामाबद्दल युवा पिढीमध्ये जाणीव निर्माण व्हावी म्हणून १९९८ च्या १७ सप्टेंबरला मुक्तीसंग्राम दिन जिल्हास्तरावर त्यांनी साजरी केला यात त्यांनी पन्नास स्वातंत्र्य सैनिकांचा सत्कारही केला. तसेच हैद्राबाद मुक्ती लढयावर "हैद्राबाद मुक्तिसंग्राम का इतिहास" हा जवळजवळ पाचशे पानाचं मौलिक ग्रंथ लिहून हैद्राबाद मुक्तीलढयातील सर्वसामान्याच्या सहभागाची इतिहासाला परिचिती करून दिली. आजही ते मुक्तीलढया विषयी व्याख्याने देवून जनजागृती करत असतात.

डॉ.लोखंडे यांचे शैक्षणिक क्षेत्रातील कार्यही उल्लेखनीय असे राहिलेले आहे. गेल्या दहा वर्षापासून ते राष्ट्रभाषा हिंदीच्या प्रचारासाठी कार्य करत आहेत. ते सध्या मुंबई हिंदी विद्यापीठाच्या केंद्र संचालक व जिल्हाप्रमुख म्हणून कार्यरत आहेत. त्यांच्या केंद्रातून अद्याप पर्यंत एक हजारापेक्षा जास्त विद्यार्थी हिंदी पदवी घेवून आप आपल्या क्षेत्राच कार्य करत आहेत. राष्ट्रभाषेच्या प्रचार-प्रसार व्हावा यासाठी ते आजही वेगवेगळे उपक्रम राबवतात त्यामध्ये व्याख्याने आयोजित करणे,मासीक व साप्ताहिकांतून लेख लिहीणे यातते नेहमी अग्रेसर राहतात. डॉ. लोखंडे यांनी समाजकार्य करत असताना आपला कर्त्तव्यात कधीही विसर पडू दिला नाही. नेहमी अध्यापना बरोबर संस्काराचे महत्व विद्यार्थ्यांमध्ये कसे रूजवता येईल, यासाठी प्रयत्नशील असतात. नवीन कोर्से मध्ये प्रवेश घेण्याबद्दल वेळोवेळी विद्यार्थ्यांना ते मार्गदर्शन करीत असतात. विद्यार्थ्यांच्या शैक्षणिक विकासासाठी त्यांची नेहमी धडपड असते. म्हणून ते एक हाडाचे शिक्षक आहेत.

समाजकार्य करत असतानाच डॉ. लोखंडेनी मौलिक असे लेखनही केलेले आहे. त्यांच्या लिखानातुन असे स्पष्ट होते की, समाजाला एक नवी दिशा देण्याची ताकद त्यांच्या लेखनीमध्ये आहे. 'अवतार निर्णय ' ही पुस्तिका लिहून त्यांनी हजारो वर्षे मूर्ती पुजेच्या अंधश्रद्धेत अडकेलल्या लोकांना नवा मार्ग दाखवून दिला आहे. तसेच वेदांतातील पर्यावरणाचे महत्व त्यांनी वेदांमधील पर्यावरण विज्ञान या पुस्तकातून वर्णिलेले आहे. मानवी जीवनात पर्यावरणाचे महत्व पाहिले तर त्यांचा ग्रंथ अतिशय महत्वाचा आणि मार्गदर्शक ठरतो. आर्य समाजावरही डॉ. लोखंडे यांनी मोठे लेखन केलेले आहे' नये युग की ओर आर्य समाज' हा त्यांचा ग्रंथ दिल्ली येथून प्रकाशित आहे. तसेच 'स्वामी दयानंद सरस्वती' संक्षिप्त चरित्रही त्यांनी लिहिलेले आहे. याचबरोबर त्यांची आणखी काही पुस्तके प्रकाशनाच्या मार्गावर आहेत.

डॉ. लोखंडे हे केवळ बोलके सुधारक नाहीत तर ते कृतीशील सुधारक आहेत. समाजातील जातीयता नष्ट करण्यासाठी त्यांनी स्वतःच्या घरापासून सुरूवात केलेली आहे. त्यांनी स्वतःचे व आपल्या मुलामुलीचे विवाह जातीबंधन रहीत केलेली आहेत.

डॉ. लोखंडे हे एक बहुआयमी व्यक्तिमत्व आहे. आर्य समाजाचा पुरस्कर्ता, सर्व सामान्यविषयी कणव असलेला, जातीविरूद्ध बंड करणारा वेदांचे महत्व प्रतिपादन करणारा, एक हाडाचा शिक्षक, मौलिक लेंखन करणारा लेखक अशा अनेक दृष्टीने त्यांचे विचार समाजाला प्रेरक आहेत. म्हणून त्यांचा वेळोवेळी राष्ट्रीय पातळीवर सन्मानही करण्यात आलेला आहे. त्यांना भावी आयुष्याबद्दल शुभेच्छा ....

– जयक्रांती वरिष्ठ कला महाविद्यालय,लातूर.

रेणाकाठचा प्रवासी

-बी.एन.राठोड (लातूर)

प्रा.राठोड यांचे शिक्षण एम.ए.,बी.एड,एम.फिल पर्यंत झाले आहे. आणि त्यांचे दोन पुस्तके तसेच शोध निंबध प्रकाशित झाले आहेत. सध्या ते माध्यमिक शाळा रेणापुर येथे शिक्षक आहेत.

प्रा.डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे हे माझे ज्येष्ठ सेवानिवृत्त सहकारी आहेत. जवळ जवळ एका तपापासून आमचे घनिष्ठ संबंध आहेत. त्यामुळे त्यांच्यावर लेख लिहित असताना काय लिहावे आणि काय लिहू नये हा माझ्यासमोर मोठा यक्ष प्रश्न आहे. कारण त्यांचे व्यक्तीमत्वच बहुआयामी असे आहे. एक लेखक, प्रभावी वक्ता, हाडाचा शिक्षक, आर्य समाजाचा पुरस्कर्ता, सर्वसामान्यां विषयी कणव असलेला समाजसेवक अशी कितीही बिरूदे लावली तरी ती अपूरी वाटायला लागतात. असे एक महत्वपूर्ण व्यक्तीमत्व म्हणजे डॉ. चद्रशेखरजी लोखंडे होय.

प्रा. डॉ.चंद्रशेखरजी लोखंडे यांचा जन्म रेणा नदीकाठी वसलेल्या रेणापूर या गावी २३ ऑक्टोबर १९४६ रोजी झाला. त्यांच्या आईचे नाव त्रिवेणीबाई तर वडिलांचे नाव रामस्वरूप असे आहे. त्याचे वडील श्री रामस्वरूप लोखंडे हे वक्ता, स्वातंत्र्य सैनिक होते. निजामी राजवटीच्या विरोधात त्यांच्या वडिलांचा लढा हा महत्वपूर्ण होता. हाच वारसा पुढे चालवत डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनीही आपले पूर्ण आयुष्य समाजसेवेसाठीच वेचलेले दिसून येते. ते उच्च विद्याविभूषीत आहेत. डॉ. लोखंड सरांनी गुरूकुल महाविद्यालय हरिद्वार येथून विद्याभास्कर ही पदवी मिळवली व नंतर आयुर्वेद भास्कर (बी.ए.एम.एस.) ही पदवी मिळवून ते डॉक्टर झाले. एवढयावरच आपले शिक्षण न थांबवता त्यांनी पुढे वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालयातून शास्त्री व मेरठ विद्यापीठातून एम.ए. हिंदी तर यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विद्यापीठातून बी.एड. अशा उच्च पदव्या त्यांनी प्राप्त केल्या व जवळ जवळ सतरा वर्षे त्यांनी लातूर येथील जयक्रांती महाविद्यालयात विद्यादानाचे कार्य केलेले आहे. याशिवाय त्यानी समाजसेवेत जे योगदान दिलेले आहे ते अतिशय भरीव अशा स्वरूपाचे आहे.

इ.स. १९९३ साली महाराष्ट्रातील लातूर जिल्हयाला मोठया नैसर्गिक आपत्तीस तोंड द्यावे लागले. किल्लारी या गावी झालेल्या भुकंपाने अवघ्या महाराष्ट्राला हादरवून सोडले. अशा कठीण काळात मनाने अतिशय संवेदनशील असणारे डॉ. चंद्रशेंखर लोखंडे दोनशे कार्यकर्त्यासह मदतकार्यासाठी भूकंपस्थळी कार्यरत होते. यावेळी ते असलेल्या बावन्न गावांमध्ये फिरून त्यांनी अन्नवस्त्राचे वाटप करणे, औषधी पुरवणे, हे कार्य हाती घेतले स्वतः डॉक्टर असल्याचा फायदाही याकाळात त्यांना झाला यावरून डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांची सामान्याविषची तळमळ दिसून येते.

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे हे आर्य समाजाचे पुरस्कर्ते आहेत. कार्यकर्त्यांच्या दोन जाती असतात. एक कर्ते आणि दुसरे बोलके असे दोन जातीचे कार्यकर्ते असतात. यापैकी डॉ. लोखंडे हे कर्ते समाजसुधारक आहेत. त्यांनी स्वतः आंतरजातीय विवाह केला. तसेच आपली मुले आणि मुली

यांचेही विवाह आंतरजातीयच केलेले आहेत. एवढयावरच न थांबता त्यांनी अद्यापर्यत जवळप जवळ पन्नास आंतरजातीय विवाह जुळवले आहेत. याचबरोबर जातीला तडा देण्यासाठी त्यांनी अनेकवेळा आंतरजातीय वधु वर परिचय मेळाव्यांचे आयोजन केलेले आहे. त्यांच्या या कार्या वरूनच ते किती प्रखर विचाराचे पालन करणारे आर्यसमाजी कार्यकर्ते आहेत याची प्रचीती येते.

उपेक्षित वर्ग हा डॉ. चंद्रशेखर लोंखंडे यांच्या जिव्हाळयाचा विषय राहिलेला आहे. भारतीय समाजातही हा वर्ग लोकसंख्येने अतिशय मोठा आहे. यासाठीच विषमतेची ही दरी कमी करण्यासाठी लोखंडे यांनी दलित वस्तीमध्ये जाऊन सामाजिक समता आणि बंधुता या विषयावर नेहमी प्रबोधन केलेले आहे. दीन दुबळयांना वैद्यकीय सेवेत सवलती सर्वरोग निदान शिबीरे पोलिओ डोसच्या बाबतीत जागृती आयुर्वेदीक औषधी द्वारा दीनदलितांना अरोग्या विषयी मार्गदर्शन आदि बाबतीत डॉ. लोखंडे यांनी केलेले कार्य अतिशय अनमोल असेच राहिलेले आहे.

डॉ. लोखंडे यांचे वडिल स्वातंत्र्यसैनिक होते. हाच वारसा पुढे चालवत आपल्या वडिलांचया कार्याची जाण ठेवून डॉ. लोखंडे यांनी हैद्राबाद मुक्ती संग्रामाबद्दल जनजागृती करण्याचे महान कार्य हाती घेतलेले आहे. या विधायक स्वररूप देण्यासाठी त्यांनी सर्वप्रथम 'संस्कृती रक्षक मंच ' या संस्थेची स्थापना केली. संस्कृती रक्षक मंचच्या बॅनरखाली आमच्या सारख्या नव्या कार्यकर्त्यांना जमा करून 'हैद्राबाद मुक्ती संग्राम सप्ताह' पाळण्याचे त्यांनी निश्चित केले. आणि त्याच व्याख्याने, लेख आदिच्या माध्यमातून हैद्राबाद मुक्तीसंग्रामाचा विसरत चाललेला इतिहास नव्या पिढीसमोर त्यांनी जिवंत केला. लोखंडेच्या या ऐतिहासिक कार्यास तोंड नाही.

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांचे शैक्षणिक क्षेत्रातील कार्यही अतिशय उल्लेखनिय अशा स्वरूपाचे राहिलेले आहे. जयक्रांती कनिष्ठ महाविद्यालयात जवळ जवळ १७ वर्षे त्यांनी हिंदी आणि संस्कृत विषयाच्या अध्यापनाचे कार्य केलेले आहे. यावेळी ते विद्यार्थी प्रिय शिक्षक सुपरिचित होते. याचबरोबर मुंबई हिंदी विद्यापीठाच्या माध्यमातून त्यांनी हिंदी या राष्ट्रभाषेचा प्रचार प्रसारासाठी केलेले प्रबोधनही महत्वपूर्ण असेच राहिलेले आहे.

डॉ. लोखंडे हे व्यासंगी प्राध्यापक होते. त्यांच्या घरी गेल्यानंतर त्यांच्या स्टडी रूम मधील हजारो पुस्तके पाहून त्यांचा व्यासंग लक्षात येतो. सतत समाजकार्यात अग्रेसर राहणारे हे व्यक्तीमत्व लेखनातही अग्रेसरच राहिलेले आहे. कधी कधी मी त्यांना विचारत असतो की, सर तुम्ही ऐवढा वेळ कोठून आणता?तेव्हा ते हसत हसत उत्तर देतात राठोड सर ज्यांना आवड असते त्यांना सवड भेटतच असते. आज त्यांच्या नावावर जवळ जवळ अकरा मौलिक ग्रंथ प्रकाशित आहेत. त्यापैकी काही महाराष्ट्र राज्य सोडून इतर राज्यातूनही प्रकाशित झालेली आहेत. यावरून डॉ. लोखंडे यांचे लेखन किती मौलिक आहे याची प्रचीती आल्याशिवाय राहत नाही.

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांचे अनेक ग्रंथ गाजलेले आहेत. त्यापैकी एक अनमोल असा ग्रंथ म्हणजे "हैद्राबाद मुक्तिसंग्राम का इतिहास" हा होय. हैद्राबाद मुक्तीसंग्रामावर लेखन अतिशय अल्प होते. त्यातही तळागाळातून हैद्राबाद मुक्तीसंग्रामाकडे कोणी पाहिले नव्हते. पण डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी मात्र हैद्राबाद मुक्तीसंग्रामाचा इतिहास संशोधन पध्दतीने लिहिला आहे. याग्रंथात त्यांनी दिलेल्या नोंदी हया त्यांच्या संपर्क आणि प्रत्यक्ष पाहतीच्या पावत्या ठरतात. ज्या निजामाच्या तावडीतून

मराठवाडा १७ सप्टेंबर १९४८ ला मुक्त झाला त्या हैद्राबाद मुक्तीसंग्रामाविषयी माहिती अल्प होती वसंत पोतदारांच्या नंतर हैद्राबाद मुक्तीसंग्रामावर खोलवर अभ्यास करणारे लेखक म्हणून डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांचे नाव घेतले तरी ते संयुक्तीच ठरले असे मला वाटते.

एकंदरीत असे म्हणता येईल की, डॉ. लोखंडे यांचे व्यक्तीमत्व हे बहुआयामी असे राहिलेले आहे.एक व्यासंगी व्यक्तीमत्व, प्रभावी वक्ता हाडाचा शिक्षक, सामान्यविषयी कणव असलेला समाजसेवक अशा अनेक गुणांनी त्यांचे व्यक्तीमत्व बहरत गेलेले आहे. खरे तर त्यांचे कार्य शब्दामध्ये गुंफणे अतिशय कठीण आहे.त्याच्या कार्याचा गौरव होता. त्या अंकात मी माझ्यापरीने त्याचे कार्य सांगण्याचा प्रयत्न केलेला आहे. त्याच्या कार्याचा गौरव करताना मी शेवटी एवढेच सांगु इच्छितो की,

"वह कौन सा है दरिया जो पार हो नहीं सकता!
इरादा मजबुत हो तो क्या हो नहीं सकता !

- सहसचिव, संस्कृती रक्षक मंच,लातूर

गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते न महत्योऽपि सम्पदः। पूर्णेन्दु किं तथा कनष्कलंको यथा कृशः।।
अच्छे गुणों की सभी जगह पूजा होती है। गुणहीन मनुष्य के पास यदि धन के भण्डार भी हों तो भी उसे आदर–सम्मान नहीं प्राप्त होता। बहुत थोड़े से प्रकाश वाला, दाग–धब्बों से रहित दूज के चाँद को जिस प्रकार पूजा जाता है, क्या पूर्णिमा के चन्द्रमा को वैसा सम्मान प्राप्त होता है।

"अहर्निष सेवामहे" चा ध्यास ठेवणारे डॉ. लोखंडे

–सौ. स्वाती फलटणकर

सौ. स्वाती फलटनकर त्यांचे शिक्षण एम.ए.बी.एकृ पर्यंत झाले आहेत. ते सध्या दैनिक दिव्य मराठी मध्ये पत्रकार आहेत.तसेच त्याना सामाजिक व अध्यात्मिक कार्या मध्ये आवड आहे.

" सेवा है यज्ञकुंड समीधासम हम जले ध्येय महासागर मे सरितरूप हममिल।"

हा सेवाभाव जपणाऱ्या अनेक व्यक्ती आपल्या अवती भवती असतात. समाजाला आपण काही ना काही देणे लागते हे भावना ठेवून कोणतीही अपेक्षा न बाळगता डॉ. लोखंडे काकांचे कार्य अखंडपणे सुरू असते. काम करण्याचा कोणताही अभिनिवेशा त्यांच्याजवळ नसतो म्हणूनच आपल्या जवळच्या व्यक्तीचे मोठे कार्यही आपल्याकडूनच दुर्लक्षित होते.

एखादे पुस्तक वाचताना अगदीच डोळयासमोर ते नेले तर त्यातील शब्द आपल्याला स्पष्टपणे दिसत नाही. असे ते आपल्याला वाचताच येत नाही. परंतु थोडे अंतर ठेवल की त्यातील शब्द आपल्याला स्पष्टपणे दिसून लागतात. त्यातील आशय उमगातो. त्याप्रमाणे आपल्या अवती भोवती चालणारे हे कार्य समजण्यासाठी आशा कार्याकडे तटस्थ पाहिल्यास आपल्याला या कार्याची महती प्रत्यक्षात जाणूव लागते.

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे हे असेच एक व्यक्तिमत्व होय. त्यांच्या जो कार्यवरील गौरवग्रंथ प्रकाशित करण्यात येणार असल्याचे ऐकले आहे. तेव्हा त्यांच्या विषयी काहीतरी लिहावे असे मनापासन वाटले. त्यांच्या सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक, प्रबोधनात्मक योगदान विषयी सर्वजण लिहितीलच पण एक व्यक्ती म्हणून ते कसे आहेत. याविषयी लिहिण्याचा माझा प्रयत्न आहे

वलांडीसारख्या अगदी लहान गावात अत्यंत माफक दरात वैद्यकीय सेवा देणारे लोखंडे काका यांना मी माझ्या वयाच्या सातव्या वर्षा पासून ओळखते. मुलांच्या शिक्षणासाठी लातूरला घर केले तरीही आजूबाजूच्या खेडयातील लोकांची गरज ओळखून त्यांनी कित्येक वर्ष वलांडीत अपली वैद्यकीय सेवा दिली. त्यानंतरची काही वर्ष त्यांनी सामाजिक प्रबोधनासाठी स्वतःला वाहून घेतले. मराठवाडा, विदर्भ, कर्नाटक, आंध्र आदी प्रांतात जाऊन त्यांनी व्याख्याने, प्रवचने दिली. हे करत असतानाच लातूर येथील जयकांती महाविद्यालयात हिंदी व संस्कृत भाषेचे त्यांनी अध्यापन केले. एक अत्यंत व्यासंगी प्राध्यापक म्हणून त्यांची विद्यार्थ्यांमध्यें ओळख आहे. तसेच मुंबई हिंदी विद्यापीठांतर्गत चालणाऱ्या अभ्यासक्रमात त्यांनी अनेक विद्यार्थी घडवले.

महर्षी दयानंद सस्वती व आर्य समाजाच्या विचारसरणीचा त्यांच्यावर जबरदस्त पगडा आहे. समाजातील विषमता नष्ट करण्यासाठी संवाद साधणे वे उपनिषदांचे महत्व समजून सांगणे, आतरजातीय विवाहाचा प्रचार करणे, संस्कृत भाषेचे महत्व विद्यार्थ्यांना पटवून देणे, अशा त्यांच्या अनेक कार्यां विषयी लिहायचे ठरवले तर शब्द ही अपुरे पडतील. कोणत्याही क्षेत्रातले ज्ञान अवगत करण्याचे कसब त्यांच्यात आहे. त्यासाठी अनिश्चित मेहनत करण्याचीही त्यांची तयारी असते. असे एकही क्षेत्र नाही ज्यात लोखंडे काकांना रस नाही.

मला आठवतंय एकदा काकूंच्या (त्यांच्या पत्नी सौ.संध्या) शाळेत स्नेहसंमेलन होते तर काकांनी त्या छोटया मुला मुलींना घरी आणून स्वतः हार्मोनिअमची साथ देवून छान छान अमूचा बाग किती छान यासारखी अनेक गाणी बसवून दिली. काका स्वतःही उत्तम गात असत. त्यांच्या मुलांनाही ते गाण्यासाठी सतत प्रोत्साहन देत. साहित्य, कला, संगीत, यांची त्यांना अत्यन्त आवड आहे.

बागकाम काही त्यांच्या खूप आवडीचे त्यांच्या या व्यापातून थोडा जरी वेळ मिळाला तरी ते घरासमोरच्या अंगणात बाग फुलवीत. वांगे, गवार, पाले भाज्या, फळे, तसेच विविध प्रकारच्या फुलांनी बाग नेहमी बहरलेली असे मुलांनी झाडांच्या, निसर्गाच्या सानिध्यात बसून अभ्यास करावा असा त्यांचा आग्रह असे. चांगल्या कलाकृतीची त्यांना उदत्तम जाण होती. एखादा उत्तम चित्रपट, नाटक, गाण्याविषयी ते सर्वांना सांगायचे प्रसंगी कार्यक्रमाला घेवूनही जायचे. मराठवाडा मुक्तीसग्रामाच्या इतिहासाचा त्यांनी सखोल अभ्यास केला आहे. अनेक स्वातंत्र्यसैनिकांच्या भेटी घेवून त्यांचे अनुभव "हैद्राबाद मुक्तिसंग्राम का इतिहास" या ग्रंथात नमूद केले आहे. सातत्याने अभ्यासपूर्ण लेखन केले.

आज जवळपास त्यांची बारा पुस्तके प्रकाशित आहेत. मुट्ठीभर तुफान' अध्यात्मिक आनंदाचा झरा 'वेदों मे पर्यावरण विज्ञान' अशी अनेक पुस्तके त्यांच्या अभ्यासपूर्ण व्यक्तिकमत्वाची साक्ष देतात. जातीयता नष्ट करण्याचे त्यांचे काम पाहुन २००३ चा 'अंनिस कार्यगौरव पुरस्कार' तसेच २००४ साली समाजवेक बाब आमटे यांच्यातर्फे 'भटके विमुक्त आदिवासी मित्र पुरस्कार' देवून त्यांना गौरविण्यात आले. दिल्ली विद्यापीठात 'राजभाषा सन्मान पुरस्काराने' त्यांचा गौरव झाला. वैद्यकीय क्षेत्रातल्या उत्तम कार्याबद्दल भारतीय संस्कृती निर्माण हैद्राबादतर्फे २००७ मध्ये राष्ट्रीय धन्वंतरी सद्भावना पुरस्कार त्यांना देण्यात आला.

अनेक पुरस्कार मिळूनही आज त्यांचे काम तितकेच जोमाने सुरू आहे. आयुष्यात कितीही सकटे आली तरीही न डगमगता आपले कार्य सुरूच ठेवणे, हे त्यांच्याकडून शिकण्यासारखे आहे. लोखंडे काकांच्या इतक्या यशस्वी आयुष्यात एक घटना मात्र घडायला नको होती. ती म्हणजे त्यांचा मुलगा सुमत्र यांचे आकस्मित जाणे. अत्यंत सुस्वभावी व उमद मुलगा ऐन तारूण्यात सर्वांना हुरहुर लावून गेला. पोटच्या गाळयाच्या या मृत्येने काका काकूंच्या आयुष्यात खूपच मोठी पोकळी निर्माण झाली. पण हे दुःख कवटाळूनन बसता त्यांनी पुन्हा समाजकार्यात स्वतःला वाहून घेतले.

आम्हा घरी शब्दाचीच रत्ने, शब्दाचीच शस्त्रे यत्न करू जगदगुरू संत तुकारामांच्या या उक्तीप्रमाणे सातत्याने काकांनी सखोल, वाचन चिंतन कार्यात स्वतःला वाहून घेतले आहे.स्वतःचे ग्रंथालय सार्वजनिक करण्याचा त्याचा संकल्प कौतुकास्पद आहे. तसेच पुढील लेखनातून भारतीय संस्कृतीच्या शोधाविषयी लिहिण्यचा त्यांचा संकल्प येणाऱ्या पिढीसाठी निश्चितच दीपस्तंभाप्रमाणे उपयोगी पडेल. त्यांच्या पुढील कार्यासाठी त्यांना मनःपूर्वक शुभेच्छा !

जातीयता नष्ट करणारा समाजसेवी

प्रा.सोमदेव शिन्दे

प्रा. सोमदेव शिन्दे त्यांचे शिक्षण गुरुकुल होशंगाबाद मध्य प्रदेश येथुन शास्त्री नंतर त्यांनी एम.ए. संस्कृत पुणे येथे प्राप्त केले. सध्या ते लातूर येथील राजर्षि शाहू महाविद्यालयत संस्कृत विषयाचे प्राध्यापक आहात. आर्यसमाजशी आपण निगडित आहात.

सामाजिक कार्य असो वा शिक्षण प्रसार कोणतेही काम तळमळीने व निष्ठेने करणारे व महर्षि दयानंदच्या विचाराची समाजात पेरणी करण्यासाठी सातत्याने प्रयत्नशील असणारे आमचे स्नेही प्रा. डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे आम्हा आर्य समाजा च्या कार्यकर्त्यांसाठी नेहमी मार्गदर्शक व प्रेरणा देणारे ठरले आहेत.

आर्य समाज जातिभेदाचा कट्टर विरोधक आहे.स्वामी दयानंदानी सर्व जातीधर्मातील मुलांसाठी वैदिक शिक्षणाचा पुरस्कार केला. तीच विचार परंपरा आपल्या अंगी बाणत आर्यसमाजाच्या अनेक उत्साही कार्यकर्त्यांनी समाजातून जातीयता नष्ट करण्याकरीता कसोशीने प्रयत्न केले. डॉ. लोखंड सरांनी ग्रामीण भागातील जाती भेदाचा द्वेष दूर व्हावा व परस्पर सलोख्याने लोकांनी राहावे या उदात्त हेतूने १९८५ मध्ये आंतरजातीय विवाह परिचय मेळाच्याचे आयोजन केले होते. या मेळाव्यास उत्सुक उमेदवारांनी मोठया संख्येने हजेरी लावली. पुढे आंतरजातीय विवाह मुळे आर्यसमाजाची ग्रामीण भागात जात पात नष्ट करणारी सामाजिक संस्था म्हणून ओळख होऊ लागली याचे श्रेय डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांना जाते.

सामाजिक कार्याची जाण असलेल्या प्रा. डॉ. लोखंडे सरांनी आजतागयात राष्ट्रभाषा हिंदीच्या प्रचाराची धुळ सांभाळली आहे. हिन्दी शिकण्याची इच्छा असलेले विद्यार्थी त्यांच्याकडे सातत्याने येत असतात. राष्ट्र व समाजाच्या जडणघडणी साठी भाषिक एकात्मता खूप गरजेची आहे. भाषावादातून समाजाचे कसे मातेरे होते हे त्यांनी चांगल्याप्रकारे ओळखले व स्वतः अनेक कष्टांना सामोर जावे लागत असले तरी ते हिंदी शिक्षणाचे आपले काम नेटाने पुढे नेत आहेत.

डॉ. लोखंडे यांना लातूर परिसरात पुस्तक वेडा प्राध्यापक म्हणून ओळखले जाते, ते त्यांच्या अफाट ग्रंथ संग्रहामुळे. दुर्मिळ पुस्तकांसह अलीकडची नवनवीन पुस्तंकं त्यांच्या ग्रंथालयात दिसून येतात. आर्य समाज रामनगर लातूर येथे डॉ. म.वि.सहस्त्रबुद्धे ग्रथालयाची स्थापना करून डा. लोखंडे सरांनी वाचन संस्कृतीला वेग दिला. उत्तम ज्ञानार्जनातूनच सभ्य समाजाची निर्मिती होत असते. हे त्यांनी ओळखले आहे. आर्य समाजाचे संस्थापक महर्षी दयानंदाच्या शताब्दी निमित्त नेत्ररोग शिबिरात डॉ. लोखंडे सरांनी सक्रिय सहभाग नोंदवून ग्रामीण भागातील गरजू व गरीब जनतेची जी सेवा केली ती आजही लोकांच्या स्मरणात आहे. ते स्वतः आयुर्वेदाचे अभ्यासक व चिकित्सक असल्याने सर्व सामान्य जनतेच्या सुखादुखात आपल्या विद्येचा नेहमीच वापर करीत सेवा भावा प्रयत्न करीत असतात.

आर्यसमाज रामनगर तर्फे आयोजित रक्तदान शिबीरात त्यांचे कार्य वाखाणण्याजोगे आहे.

डॉ. लोखंडे यांनी लातूर येथील जयक्रांती कनिष्ठ महाविद्यालयातील अनेक कार्यक्रमात उत्तम वक्ता म्हणून नावलौकिक मिळवले आहे. राष्ट्रभाषा हिंदी विषयी त्यांचे प्रेम सर्वश्रुत आहे.

मराठवाडया सारख्या शैक्षणिक दृष्ट्या मागासलेल्या भागांत हिंदी भाषेच्या प्रचार प्रसाराची धुरा सातत्याने सांभाळत आले आहे. त्यानी लिहिलेले मराठवाडा मुक्ती संग्रामावरील प्रमाणिक पुस्तक आर्य समाजा शिवाय इतर हिन्दी प्रेमी मध्ये आवर्जून वाचले जाते. त्यांनी मोठया प्रयत्नातून मराठवाडा मुक्ती संग्रामाचा जो इतिहास लिहिला त्यातून समाजाला शिकण्यासारखे खूप काही उपलब्ध झाले हे नक्की आजच्या तरूणांनी इतिहासाकडून प्रेरणा घेऊन सामाजिक कार्यासाठी सातत्याने झटावे अशी अभिलाशा डा. लोखंडे बाळगत असतील तर त्यात वावगे असे काय ? त्यांनी स्वतःच्या कार्याचा जो ठसा मराठवाडयात उमटविला आहे त्यामुळे त्यांना कैक राज्यस्तरीय व राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त झाले आहेत. राष्ट्रीय आर्यलेखक परिषदचे ते सदस्य आहेत.

महर्षि दयानंदाच्या विचारांना समाजाच्या सर्व थरापर्यंत पोहोचविण्यासाठी प्रा. लोखंडे सरांनी संस्कृती रक्षक मंचाची स्थापना केली. तरूणांनी संस्कारी हावे. लोकांमध्ये सांस्कृतिक ऐक्य वाढून देशाची भरभराट व्हावी. असा या माणसाच्या स्थापनेमागचा हेतू आहे.

भारतीय संस्कृतिच्या ऱ्हासामुळ व पाश्चात्यांच्या विलासी व भोगवादी संस्कृतीच्या माऱ्यामुळे आजची तरुण पिढी कशी वाया जात आहे. हे लोखंडे सरांनी अनेक भाषणामधून सातत्याने मांडले आहे व त्यावर उपायदेखील सुचविले आहेत. परभणी जिल्हयातील हट्टा येथे १७ फेब्रुवारी २००५ रोजी संतसंमेलन भरले होते. या संमेलनात प्रा. लोखंडे सरांनी आपल्या बहारदार वक्तृत्वशैलीतून संतांच्या शिकवणीची आज समाजाला कशी गरज आहे हे निक्षून सांगितले सांगायाचे तात्पर्य असे की समाजप्रबोधनाची किंचित संधी देखील त्यांनी कधी वाया घातली नाही लातूरच्या या युवा समाजधुरीणांने हरिद्वार येथे गुरूकुल महाविद्यालय ज्वालापूरमध्ये हैद्राबाद मुक्तिसंग्रामात आर्यसमाजाचे योगदान या विषयावर अभूतपूर्व व्याख्यान दिले जे आर्य विचारवंताना आजही ठावूक आहे.

अष्टपैलू व्यक्तिमत्व लाभलेले श्री लोखंडे सरांचे सामाजिक योगदान सांगावयाचे झाल्यास एखादं स्वतंत्र पुस्तक त्याकरीता उपयुक्त होईल. एका लेखातून हा विषय पूर्ण स्पष्ट होणार नाही. याची मला जाणीव आहे. तेव्हा इथेच थांबतो व डॉ. लोखंडे सरांच्या दीर्घायुष्य व आरोग्याची प्रभुचरणी कामना करीत इथेच लेखणीला विराम देतो.

संस्कृत विभाग, राजर्शी षाहू महाविद्यालय,लातूर.

सामान्यातला असामान्य माणूस

—श्री शेखर कुलकर्णी

संस्कृति रक्षक मंच चे सदस्य श्री शेखर कुलकर्णी हे प्रसिद्ध समाजसेवी आहेत. तसेच त्यांचा मुलगा इंजिनीयर मुलगी पत्रकारिता आहे.

उन्हाळयाचे दिवस होते. मी लातूरातील सिताराम नगर भागात असलेल्या प्रमोद गॅस एजन्सी या खाजगी क्षेत्रातल्या कंपनीत नोकरीला होतो. त्या भागातध्ये राहायला यायचं होतं म्हणून मी खोल्याची चौकशी करीत होतो. मला लोखंडेच्या इथं दोन पत्र्याच्या खोल्या मिळाल्या. अनू मी तिथं सपरिवार स्थिर झालो. यातूनच माझी व डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांची ओळख सन १९८७ च्या उन्हाळयात झाली.

लोखंडे यांचं संपूर्ण शिक्षण उत्तर प्रदेशातील गुरूकुल महाविद्यालय ज्वालापूर (हरिद्वार) व बनारस युनिव्हर्सिटी येथे झालं. तेथून त्यांनी आयुर्वेदातील आयुर्वेद भास्कर संस्कृतमध्ये बी.ए., एम.ए. हिंदी इत्यादी पदव्या संपादन करून महाराष्ट्रात आले. त्यावेळी ते वलांडी ता.चाकूर येथे डॉक्टरकी करीत होते. लातूरात त्यांच पत्नी संध्या वहिनी दोन मुलं व एक मुलगी यांना सोबत घेवून राहत असत. परिस्थिती खूपच बिकट होती.त्यावेळी डॉक्टरकीमध्ये दिवसाकाठी २ रूपये मिळकत व्हायची पाच जणांच्या असलेल्या कुटूंबाचा उदरनिर्वाह करणे फार कठीण असायचे डॉक्टरकी करीत करीत लोखंडे सर भजनोपदेश आर्य समाजाचा प्रचार प्रसार करीत हे संस्कार त्यांना त्यांच्या वडिलाकडूनच मिळाले. त्यांच वडील श्री रामस्वरूप लोखंडे हे आर्यसमाजाचे कार्यकर्ता होते.

असामान्य बुद्धी असलेला माणूस सामान्य बुद्धी असलेल्या माणसांत कधीच राहू शकत नाही. आपल्या परिवारासाठी, स्वतःसाठी प्रत्येकजण जगतो. पण आपण आपल्या मातीचं आपल्या देशाचं काहीतरी देणं लागतो हे ध्येय उराशी बाळगून डॉ. लोखंडे समाजासाठी सतत काही ना काही कार्यक्रम,व्याख्याने, संस्कार शिबीरे इत्यादीच्या माध्यमातून आणि आपल्या ओजस्वी लिखाणातून समाज प्रबोधनांच कार्य करीत आलेले आहेत.

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांच जेवढ सामाजिक कार्य मी १९८७ पासून जवळून पाहिलं त्यापेक्षा मी त्यांच्या इथं राहतल असताना त्यांचा स्वभाव, त्यांच दिलदार व्यक्तीमत्व मी अत्यंत जवळून पाहिलेले आहे. आम्ही त्यांच्या इथं भाडेकरू आहोत असं त्यांनी कधीही जाणवू दिलं नाही, यातून त्याचं माणूसपण, आपलेपणाची भावना दिसून येते. त्यावेळी त्यांची परिस्थिती बेताची असताना सुद्धा त्यांच्या कुटूंबात कधी ही ही दुरावा किंवा कोणत्याही कारणावरून मतभेद झाले नाहीत. कुटूंब कसं असावं किंवा कुटूंब कशा पद्धतीनं निर्माण करावं याचं जिवंत उदाहरण पाहायचं असेल तर डॉ. लोखंडे यांच्या कुटूंबाकडं पाहाव असं म्हणलं तर वावगे ठरणार नाही ते स्वतः गुरूकुल मध्ये शिकले असल्यामुळे त्यांनी आपल्या मुलांना योग्य संस्कार देऊन आज ते आप आपल्या क्षेत्रात चांगल्या पद्धतीने कार्य करीत आहेत.

एक काळ असा होता की, दोन वेळेचं जेवणं करायचं म्हणलं तरी खूप अडचणी असायच्या .पण परिस्थितीवर मात करून त्यांनी आपलं कतृत्व सिद्ध करून दाखविलं अशा या सुखी कुटूंबात त्यांचा मोठा मुलगा सुमंत्र हा जग सोडून गेला आणि त्यांच्या कुटूंबावर दुःखाचा डांगर कोसळला.

आज त्याला सहा - सात वर्ष झाली. ते दुःख बाजूला ठेवून पुन्हा त्यांनी आपलं कार्य जोमानं पुढं चालू ठेवलं. तेआठवडयातील ६ दिवस खेडोपाडी राहायचे, मुलं वहिनी त्यांची वाट पाहायचे, सुमंत्र, साधना, शैलेश आपल्या आईला सतत म्हणायचे 'आई, पिता कधी येणार गं ' आई म्हणायची अरे थोंडे थांबा शनिवारी येणारचं आहेत. लोखंडे सर शनिवारी आले की, मुलं खुश व्हायची खेळणी खाऊ आणलेत काय पहायचे. पण काहीच नाही.मुलं निराश व्हायची. घर चालणेच अत्यंत अवघड तिथे खेळण्याचे काय? असे लोखंडे पती पत्नीनी २० वर्षे अडचणीत काढले. घरातून अंगावरच्या कपडयावर निघालेलं जोडपं चैनीच्या वस्तु कूठून आणणार?त्यांचे व्यवसाय दुर्देव असे की, जो त्यांचा पिंड नहव्ता त्या व्यवसायात ते शिरले आणि त्यांना २० वर्षे आर्थीक विवंचनेत भटकावे लागले. एका गावातून दुसऱ्या गावाला, तिथून पुन्हा काही काळानंतर तिसरीकडे पसारा उचलून निघायचे. संध्या वहिनी त्यांच्या पाठाशी खपंबीरपणे उभी राहून त्यांना साथ कुठेच वैद्यकीय व्यवसायात त्यांना यश येईना म्हणून त्यांनी एका दवाखान्यात २५० रू मासिक पगारावर कम्पांउडरी केली. लोखंडे दाम्पत्य तेवढयातच आपला खर्च भागावयाचे. त्याही डॉक्टरने त्यांचा दोन महिन्याचा पगार बुडविला आणि कामावरून कमी केले. वडिलांचा अचानक मृत्यू झाला असल्यामुळे ते घरी आईला किंवा भावांना खर्चासाठी त्रास देऊ इछित नव्हते. आणि वडिलांच्याहयातीत सुद्धा त्यांन घरातून काहीही घेतले नाही. आपल्या मुला बाळांचे व आपले किती ही हाल झाले तरी त्यांनी घरच्यांना कधी त्रास दिला नाही. ज्यावेळी त्यांना कम्पाउडरच्या कामावरून काढल त्यावेळी त्यांनी काही दिवस किराणा दुकानासाठी कागदाच्या पिशव्या बनवण्याचा उद्योग केला. दोघा नवरा बायकोला हा उद्योग देखील करावा लागला. या व्यवसायात देखील त्यांना यश आले नाही. आता काय करावे त्यांचे त्यांनाच सुचत नव्हते. कुटूंब चालविणे तर माहगच होत होते. मग सरानी व संध्यावहिननींनी हनुमान चौकात रोडवर बसून तिबेटी लोकांसारखे उलनच्या टोप्या विकल्या, सुख दुःखत एकमेकाला साथ देण्याचे कार्य त्यांच्या पत्नीने पार पाडले यालाच 'गृहस्थ धर्म' म्हणतात. ते त्यांच्या पत्नीने निभाविले. वहिनीच्या मनात असा कधीचा विचार आला नाही की आपण या घरण्यात येवून चूक झाली आहे. काही असो आपण आपल्या पतीसोबत राहून संसार पुढे न्यायचाच.

एवढी कौटुंबीक आणि आर्थिक संकट असताना दोघा नवरा बायकोंनी मुलांना संस्कार आणि शिक्षण देण्यात कधीही कसर केली नाही केली नाही. फिरतीवर असल्यामुळे त्यांच्या मुलांच्या १०-१२ ठिकाणी शाळा बदलाव्या लागल्या. टी.सी. काढणे आणि शाळा बदलणे असा त्यांचा क्रम असयाचा.पण मुलाचें शिक्षण त्यांनी थांबविले नाही. म्हणून त्यांची मुल आज सुसंस्कारीत असून नौकरीवर आहेत. लोखंडे पती पत्नीचे दूसरे वैशिष्टये असे की २० वर्षाच्या बिकट परिस्थितीत देखील त्यांनी समाजिक कार्य व्याख्यान देणं, भजनोपदेश, लेखन करणे, हे कार्य सोडले नाही. असाच एक प्रसंग दिवाळीचा सण जवळ आला होता. संध्यावहिणी आणि मुले लोखंडे सरांची वाट पाहत होती. आज येतील, उद्या येतील पण उपदेशासाठी विदर्भाकडे गेलेले लोखंडे सर काही येत नव्हत. त्यावेळी लोखंडे पती पत्नीनी आमच्या शेजारीच दोन पत्र्यांच्या खोली राहत होते. मुले आईल सतावतीत होती की, सगळी मुले फटाके उडवीत आहेत सगळयांचा घरी गोड सोड होत होते. मुले शेजारी पाजारी जाऊन पाहायची. आई आपल्या घरी गोड खायला का करीत नाहीत?आई जवळ पैस कुठ हो दिवाळीचा सण सजारा करायला ती म्हणायची अरे बाळांनो ! तुमचे पिता येतील त्यावेळी करू पण दिवाळी जवळ आली असताना देखील वडील येत नाहीत म्हणून मुलं रडायची योगा योग असा झाली की दिवाळीच्या एक दिवस अगोदर लोखंडे सर घरी आले. त्याच्या अगोदर त्यांचे स्नेही मुशिराबाद बोरी चे पंढरी पाटील घरी आलेले होते ते सरांच्या घरी वेळोवेळी यायचे. वडील घरी आल्याचे बघूनमुले वडिलांना बिलगली पिता आम्हाला फटके, लाडू , करंज्या आणायच्या आहेत. आणून द्या संध्या वहिनी देखील आपल्या पतीची वाट पाहत होती. ती म्हणाली, एक महिना झाला,

तुम्ही काही निरोपही दिला नाही आणि घर खर्चासाठी पैसेही पाठविले नाहीत.लोखंडे सरानी सांगितले काय करू विदर्भाकडे मला पाठविल होते. मला कार्यक्रम सोडून मध्येच येता येत नव्हते. म्हणून मी वेळेवर येऊ शकलो नाही. संध्या वहिनी म्हणाल्या उद्या दिवाळी आहे.घरात अन्न धान्य नाही. माझ्या जवह पैसा नाही. मुलं आरडा ओरडा कीरत आहेत, आम्हाला गोड करून दे, फटाके तरी आणून दे. पण माझ्या जवळ फुटकी कौडी नाही मी काय करू आता तर येताना पैसे घेवून आला असाला ना, द्या पैसे मी दिवाळीचे सामान घेवून येते. मी तिथेच होतो. लोखंडे सरांचे हारा एकदम पडला. ते मान खाली घालून इकडे तिकडे पाहू लागले. ते काहीच बोलत न्वहत. त्यांना काय बोलावे हेचसुचत नव्हते. अश्रुंचे बांध पापण्याआड लपवून ते हळूच म्हणाले मला पगार मिळाला नाही. तीन महिन्यापासून सभेच्याा अधिकाऱ्याकडे पगार मागत आहे पण ते देत नाहीत. टाळाटाळ करीत आहेत. मी काय करू? परळी, जळगाव, नाशिक, नांदेड सगळी कडे जावून आलो. पण मला पगार मिळू शकला नाही. सरना त्यावेळी ६०० रू महिना पगार होतो. तीन महिन्यापासून त्यांची मंडळी असेच उसने पासने करून निभावत होती. आता तर दिवाळीचा सण होता. हे जोड़पे कसे दिवाळीचा सण साजरा करणार. पैसे न आणल्यामुळ संध्या वहिनी खूपच निराश झाल्या आणि रडू लागल्या दोघ्यामध्ये भांडण झाले. मी लोकांना काय सांगू. उद्या दिवाळी आहे. घरात अन्नाचा कण नाही. मी कशी करू दिवाळी. सर बायकोला शांत करीत म्हणाले, हे बघ! या वर्षी आपण दिवाळीच साजरी करायची नाही.मी तरी काय करू? तीन महिन्यापासून मला जर कोणी पगार देत नसेल तर मी कोठून पैसे आणू? मग काय चोरी करू? आता कसं करू तुच सांगा? घरात रडापडी सुरू झाली. माझे नशिबच फुटंक म्हणून संध्या वहिनी रडू लागल्या. बाहेर प्लॉटमध्ये पंढरीनाथ पाटील गवत उपटीत होत प्लॉट स्वच्छ करीत होते. भांडणाचा अन रडापडीचा आवाज ऐकल्याबरोबर पंढरी पाटील भांडणं सोडविण्यासाठी आले. भांडणं पाहून लेकरंही रडू लागली. मी आणि पंढरी पाटील शांत राहण्यास सांगत होतो. सर म्हणाले, पिताजी तुम्हीच सांगा जर माझ्याकडे पैसेच नसतील तर मी पैसे कोठून आणू? डॉक्टरकी चालत नाही, अधिकारी पगार देत नाहीत तर मी काय करू? पंढीर पाटील मध्येच म्हणाले थांबा दिवाळी साजरी करण्यासाठी पैसे नाहीत ना तुमच्याजवळ मी स्वतः चार पायल्या गहू आणून देतो. त्यांनाच दया आली आणि ते लगेच गावाकडे निघाले. त्यांनी संध्याकाळ पर्यंत चार पायल्या गहू आणून दिले. गहू विकून दोघ नवरा बायकोने दिवाळी साजरी केली. अशा प्रकारे लोखंडे सर आणि त्यांच्या पत्नीने जे जीवनातले २० वर्ष बिकट परिस्थितीत काढली.

" माझ्या आठवणीतील डॉ. चंद्रशेखरजी "

श्री वेदपाठक अशोक विश्वनाथ

अशोक वेदपाठ यांचे शिक्षण बी.बीएड पर्यंत झाले आहे. ते निवृत होण्यापूर्वी चांपोली येथे जि.प्र. शिक्षक होते. धारुर आर्य समाज चे सक्रिय कार्यकर्ते होते.

२ फेब्रुवारी १९७४ चा दिवस. मी प्रथमच कंत्राटी प्राथमिक शिक्षक म्हणून उस्मानाबाद जिल्हयातील बरमवाडी अहमदपूर तालुका येथे सेवेत रूजु झालो. माझी घरची परिस्थिती अतिशय हालाखीची वडील साधे मजुरी व्यवसाय करायचे. भावी आयुष्यात सर्वजण अधिक सुखात राहतील या उमेदीने मी कामाला लागलो.

नोकरीच्या गावी महिना दोन महिन्याचा काळ गेला. जवळच चापोली नामे एक गाव होते. तेथे सर्व व्यवहार दळण वळण तेथूनच चालयाचा मी शालेय विद्यार्थ्यांबरोबर किराणा मालाची यादी देत असे. यादी देताना त्यावर "ओ२म''' हा तीन अक्षरी शब्द लिहिलेला असे. माझे मुळचे गाव किल्ले धारूर ता.केज जि.बीड असून तेथूनच आर्यसमाजाशी माझा सबंधा आला व एक वैचारिक मन माझी बनली. वेद, दयानंद सरस्वती, "ओ२म''' याबद्दल आकर्षण निर्माण झाले. वरील "ओ२म''' नाव असलेली चिठी चापोलीचे किराणा व्यापारी श्री. मद्रेवार यांच्याकडे श्री. लोखंडेजींनी पाहिली व त्यांनी मद्रेवारशी चौकशी केली. ही चिठ्ठी देणारी व्यक्ती कोण आहे?तेव्हा व्यापाऱ्योन माझी ओळख संगितली व त्यामुळे लोखंडेजींनी मला भेटण्याची उत्सुकता निर्माण झाली. एक दिवशी माझी भेट झाली. त्या भेटीचे रूपांतर नंतर गाढ मैत्रीत झाले.

छोटयाशा ५० घरांच डोंगर कुशीत आदिवासी व भटक्या जमातीच्या त्या गावात मी नोकरी करत होतो. गावातील धार्मिक, सामाजिक, आरोग्य व शैक्षणिक समस्याबद्दल मी सतत जागरूक राहून कार्य करू लागलो. गावातील व्यक्ती आजारी पडल्यास मी डॉ. लोखंडेजींना बोलवित असे. त्यामळे अल्प पैशात आरोग्य सेवा करू लागले. गावातूनच एक चारधाम यात्रेसाठी गाडी निघाली तेव्हा मी हिरीरीने पत्नी, आई, वडील, काकी व थोरले बधू या सर्वांना सहभागी करून यात्रा घडवून आणली. त्या दरम्यान मलाअचानक छातीचे दुखणे सुरू झाले. त्यांनी मला जे औषधोपचार दिले ते आजही माझ्या शरीरात संजीवनी रूपात बसून आहेत हे मी विसरू शकत नाही.

मी डॉ. लोखंडेजीच्या अगदी सान्निध्यात आलो. त्यांनी एका आंतरजातीतील सुस्वरूप मुलीशी विवाह केला होता. ते सहकुटुंब चापोली येथे राहू लागले. माझे येणे जाणे सुरू झाले. त्यांची पहिल डिलेव्हरी होती. सुदैवाने त्यांना मुलगा झाला. परिस्थिती अतिशय बेताचीच होती. सुविध्य पत्नी सर्व परिस्थितीशी जुळते घेवून सहकार्य करत असत. विवाह जेव्हा जमला मी देशमुख घराण्यातील व हेतली समाजातील सामान्य व्यक्तीशी विवाह करतेस म्हणून डॉक्टरांच्या अंगावर बंदुकीची गोळी

झाडणार तेव्हा सावधानतेने वागून माझ्या अंगावर गोळ्या झाडापण आता माझा पती तुम्ही मारू नका से ठणवकून प्रतिकुलतेत मी विवाह केला असे त्या सौ.लोखंडेताईनी सांगितले. त्यामुळे मी अधिकच भारावून गेलो होतो.

आंतरजातीय विवाह केला म्हणून चापोली येथील घरमालक नेहमी दोघांना चढउतार बोलून अपमानित करू लागले. त्यामुळे दैनंदिन जीवनात समस्यांना सामोरेज जावे लागले. अशा परिस्थितीत मी संबंधित घरमालक यांना वारंवार भेटून मी हे सांगत असे. त्या गावातील प्रतिष्ठित व्यक्तीचा माझा संबंध असल्यामुळे डॉ. लोखंडेजीना माझ्या अत्यंत मदतीची त्यांत आवश्यकता वाटे तन, मन धनाने मी त्यांच्या सहवासात असे.

डॉ. लोखंडेजी अतिशय मृदू भाषिक, मनमिळवू,चारित्र्यासंपन्न, दयाळू वृत्ती, सहकार्याची भावना जोपासणारे, काल व योग्य रोगनिदान करणारे, सामाजिक चळवळीतून काही तरी करावे, अशी भावना असणारे त्यांचे व्यक्तीमत्व होते. चापेली येथे मी शालेय कामासाठी सतत येत असे. एका "ओ३म"' या शव्दाने आमचे भावनिक विश्व फुलत होते. एकमेकांबद्दल प्रेम व जिव्हाळा निर्माण होत होता. असेच आमचे दोघांचे आनंदी वातावरणातील दिवस जात होते. एके दिवशी मला सकाळीच निरोप आला की गुरूजी आपण तात्काळ चापोली या. या निरोपाने मी अतिशय हवालदिल झालो व सहा किलोमीटर अंतरचालत जावून विचारमग्न अवस्थतेच त्यांना भेटलो. काय आश्चर्यम! समोर घरातील सामानाने बैलगाडी भरलेली होती. दवाखाना व घर रिकामे केले होते. घरमालक ती बैलगाडी जावू देत नव्हता. त्यांना पैशाची मागणी केली. डॉ. लोखंडेजी मला हे सर्व कथन करत होते. तेव्हा मी माझ्या विश्वासातील पोलीस पाटील देशमुख, तत्कालीन सरपंच, इतर प्रतिष्ठित व्यक्तींना भेटलो व या सदंर्भात चर्चा करून प्रश्न सोडला. जबाबदारी घेवून पुढील गावाला जाण्यासाठी त्यांना मार्गस्थ केले.

आता त्यांचा प्रवास सुरू झाला. 'सघर्षशिवाय जीवन नाही ' सुख दुःखे समेकृत्वा लाभौ लाभौ जया जयौ या भगवदगीतेतील वचना माला आठवीत होत्या. आता डा. लोखंडेजी बोरी या गावी स्थलांतरित झाले होते. बऱ्याच दिवसानंतर त्यांचे एक पत्र मला आले गुरूजी मी बोरीला दवाखाना सुरू केला असून सध्या माझ्या दैनंदिन जीवन अतिशय मजेत चालले आहे. आपण एकवेळेस अवश्य भेटण्यास या. त्यांचा हा समाचार ऐकून मला ही आनंद झाला. वेळ काढून मी त्यांच्या भेटीसाठी गेलो. सर्व काही व्यवस्थित चालेलेले होते. समाधान वाटले. डॉ. लोखंडेजीचा परिवार वाढला होता. एक मुलगी व दोन मुले असे त्यांचे कुटूंब होते. सौ.लोखंडेताईनी पण माझे यथोचीत स्वागत केले. साधकबाधक इतर बाबींवर ही चर्चा झाली. पुढील वाटचालीस शुभेच्छा देवून मी परत गावी आलो.

पुढे अशीच आमची भेट झाली. तेव्हा आपण लातूर या ठिकाणी स्थलांतरित झालात तर बरे होईल असा विचार मांडला. त्यांनी तो मान्य केला व ते लातूरला स्थाइक झाले. हेच लातूर त्यांच्या जीवनाना मैलाचा दगड ठरले. स्वतःचे घर, मुलांचे शिक्षण, पत्नीचे शिक्षण, स्वतःचे शिक्षण असा शैक्षणिक दर्जा वाढवून दोन्ही मुले शिक्षक, पत्नी शिक्षिका, स्वतः प्राध्यापक अशी प्रगती काही वर्षातच झाली. मुलीच्या विवाहाप्रित्यर्थ मी जेव्हा गेलो तेव्हा हे सर्व पाहून त्यांच्याबद्‌दल सार्थक अभिमान वाटला. कर्मजम् बुद्धीलय फक्ताहि फलं त्यक्त्वा मानेषिणाः अशीर्कबुद्धी झाली तशी त्यांना फलश्रुती

प्राप्त झालीहे म्हणणे वावगे ठरणार नाही.

लोखंडेजी हे भजनोपदेशक असून आर्यसमाजाच्या व्यासपीठाच्या माध्यमातून त्यांनी महाराष्ट्र व भारतभर फिरून अंधश्रद्धा, चालीरिती याबद्दल आपले विचार व्यक्त केले. ते प्रचारासाठी जेथे जात तेथे समाज संघटन, तरूण वर्गाचे संघटन, आरोग्य शिबीरे, रक्तदान शिबीरे या कार्यात ते अधिक रूची दाखवत असत, नव्हे तर प्रत्यक्ष अंमलात आणण्याचा प्रयत्न करीत असत 'तरूण वर्गात असलेली व्यसनाधिनता हा देशाला लागलेला मोठा कलंक आहे ' असे ते म्हणाचये. त्यांचे फिरत ग्रंथालय असायचे. जेथे जात तेथे शालेय विद्यार्थ्यांना संबोधीत करून मोफत खुले वाचनालय याचा लाभ त्यांना मिळवून देत असत. तरूणांची वैचारिक पातळी उंचावी, त्यांच्यात माता पिता प्रेम, राष्ट्रप्रेम निर्माण व्हावे म्हणून ते सतत विविध उपक्रम राबवण्याचा प्रयत्न करीत असत. 'इदंन्मम- ची भावना निर्माण व्हावी असे त्यांना वाटे. एवढे जरी असेल तरी संसारिक व्यक्तींना दुःखाचे चटके बसत असतातच संत तुकाराम महाराज म्हणतात की, संसार दुःख मूळ नाही विश्रांतीचा थारा कोठे, चोहीकडे इंगळ संसाराचे मूळ दूःखातच आहे. सुख जवापरी, दुःख पर्वता एवढे. अचानक थोरल्या मुलाने आत्महत्या केली. त्या सुखाला दुःखचे ग्रहण लागले. पण नियतीच्या पुढे काही चालत नाही. सून व नातवाचा त्यामुळे झालेला विरह त्यांना सहन झाला नाही. परंतु धैर्य खचू न देता पुढील वाटचालीस पुन्हा शडटू ठोकून तयार झाले.

डॉ लोखंडेजींची आर्थिक परिस्थिती चांगली झाली. उत्तम घर, उत्तम सहचारिणी, उत्तम पूत्र पौत्री असा सध्या काळ आहे. हिंदी भाषेला समद्धीच्या मार्गाने न्यावे, तिला सोन्याचे दिवस प्राप्त व्हावे. ही राष्ट्रभाषा विश्वभाषा व्हावी असे त्यांना वाटत असे. त्या साठी हिंदी विद्यापीठाचे परिचालन ते करत आहेत. १० ते ११ विविध वैचारिक क्रांती घडणारे ग्रंथलेखन त्यांनी केले. असून ते प्रकाशित झालेले आहेत. तसेच काही ६ ते १० पुस्तके प्रकाशनाच्या मार्गावर आहेत. त्याबद्दल माझ्या कुटुंबीयातर्फे हार्दिक शुभेच्छा हे सर्व करीत असताना कर्मण्येवाधिकाररस्ते, मा फलोकुदाचन कार्य करणारा व्यक्ती फळाची अपेक्षा करत नाही. फक्त आपले अंतिम लक्ष्य गाठण्याच्या धावपळीत असतो. या धावपळीत ही कुठेतरी कोणीतरी विचारत असतो. त्याप्रमाणे समाजाने, शासनाने, व्यक्तींनी त्यांचा वेळोवेळी यथोचित असा गौरव सत्कार हा केला.

हैद्राबाद येथे "विद्यामार्तण्ड" उपाधि प्रदान करण्यात आली. तसेच भटके विमुक्त आदिवासी मित्र पुरस्कार आणि कार्य गौरव पुरस्कार, राजभाषा सन्मान पुरस्कार, राष्ट्रीय धन्वंतरी सद्भावना पुरस्कार इ. विविध राज्य व राष्ट्रीय स्तरावर गौरव करण्यात आले.

'पुत्र व्हावा ऐसा गुंडा, ज्याचा तिन्ही लोकी लागी झेंडा' या संत वचनाची पुर्तता सन्मानीय डॉ. लोखंडेजीनी केलेली आहे. याचा मला फार मोठा अभिमान आहे. माझा जिवलग मित्र यशाच्या अत्युच्च शिखरावर पोहचल्याशिवाय राहणार नाही याची मला खात्री आहे.

भविष्यातही वयाची ६५ वर्ष पूर्ण होत आहेत तरी त्यांचा आणखी कार्यसंकल्प खूप मोठा आहे. त्यांनी भावी कार्य संकल्पासाठी पुढील वाटचालीसाठी हार्दिक शुभेच्छा!

यालाच जीवन ऐसे नाव लोखंडे चंद्रशेखर रामस्वरूपजी हे नाव सार्थक होणार हे निर्विवाद

सत्य आहे. हा अल्पसा माझ्या जीवनात त्यांचा आलेला सहवास 'आनंदाचे डोही आनंद तरंग' निर्माण करणारा होवो ही ईश्वरचरणी प्रार्थना. त्यांना दीर्घायुष्य, कौटुंबिक स्वास्थ्य, भरभराट, आनंदी जीवनाचा सतत अनुभव होत राहो.

घ.न. ६-३७१, मंगळवार पेठ,
अंबाजोगाई - ४३१५१७

बड़े बड़े जो दीसहि लोग। तिन कउ बिआपै चिंता रोग।।
कउं न बड़ा माइआ वडिआई। सो बड़ा जिनिराम लिवलाई।।
भूमिआ भूमि ऊपरि नितलुझै। छोडि चलै त्रिसना नहीं बुझै।।
व्हु नानक इहु ततु बीचारा। बिनु हरिभजन नाही छुटकारा।।

– श्री गुरुगंथसाहिब

डॉ. चंद्रशेखरजी : एक गाढे आर्य विद्वान

पं. राजवीर विद्यावाचस्पती

पं.राजवीर शास्त्री (विद्यावाचस्पति) त्यांचे शिक्षण दयानंद ब्राहम महाविद्यालय हिसार(हरियाणा) येथे झाले आहे. ते एक उत्तम वक्ता आहेत. तसेच शास्त्री जी आर्य समाज सोलापुर चे पुरोहित आहेत.

आर्य समाजाच्या स्थापनेमागचा उद्देष स्पष्ट करताना महर्षी दयानंद म्हणतात, 'जगावर उपकार करणे हाच आर्य समाजाचा मुख्य उद्देश आहे. अर्थात शारीरिक आत्मिक व सामाजिक उन्नती करणे आणि उपकाराविषयी म्हणतात" ज्या योगे सर्व मानवाचे दुराचार व दुःख नाहीशी होतील. श्रेष्ठाचार व सुखे बुद्धदीवंत होतील असे कार्य करणे यालाच मी परोपकार म्हणतो." यावर चिंतन केल्यास आर्य समाजाची महत्ता, महानता, कार्याची व्यापकता व उपयोगी आर्य समाजाच्या मुख्य उद्देशाची एकरूप होणे. आर्य समाजी होणे म्हणजे दीर्घायुषी बलवान, तेजस्वी विज्ञान, धर्माला चरित्रवान , सुस्वाभावी व सुकरणी असा आदर्श नागरिक होणे. सच्चा ईश्वरभक्त व देशभक्त होणे आणि आपल्या लेखनी, वाणी व व्यवहारातून इतरांना ही वैदीक धर्माचे अवलंबन, वैदिक संस्कृतीचे पालन करण्यास प्रवृत करणे. या गोष्टी मनोमन पटल्याने लोखंडे यांनी आर्य समाजाची धुरा आपल्या खाद्यांवर घेतली आणि ते कामाला लागले. शास्त्रपुराणााच्या नावाखाली अंधश्रद्धा व याचक रूढी परंपरा, दुष्टा चालीरिती, निरर्थक कर्मकांडाना जोपासणाऱ्यांना उन्नती मार्गावर वळविणे हे खडतर काम आहे. उपकाराच्या बदल्यात उपेक्षा, उपद्रवच विरोध व उपहार म्हणून स्विकारायची ज्यांची तयारी असते. तेच आर्य समाजाचे कार्य करू शकतात. आर्य समाजाला चिटकून राहतात. आर्य समाजाचे विरोधक कोण कोण आहेत त्यांची यादी मी सांगत बसत नाही.अपवाद वगळता बहुतांश कार्यकर्त्यांना घरातल्या लोकांचा विरोध सहन करावा लागतो. यावरून आर्य समाजासाठी किती प्रतिकूल वातावरण आहे हे लक्षात येते. त्यामुळे त्यांचा साधन संपत्तीवर व मनुष्य संख्याबळावर परिणाम होतो. त्यामुळे कामाची गती मदांवते व अनुत्साहाचे सावट रूंदावते. आशाही स्थिती जी माणसे आर्य समाजाच्या विचार धोरणावर मनापासून प्रेम करतात. त्यांना निष्ठावान माणसे म्हणतात. त्या निष्ठावंतापैकी डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे हे एक आहेत.

तसेच आर्य समाजाचे बाळकडू त्यांना वडीलांकडून मिळाले आहे. रेणापूर निवासी स्व. रामस्वरूपजी लोखंडे स्वातंत्र्य सेनानी व कट्टर आर्य समाजी होते. आपला चद्रशेखर वैदीक धर्माचा संदेश वाहक बनावा. वैदिक संस्कृतीचा रक्षक बनावा. व आर्य समाजचा कर्तृत्वान कार्यकर्ता बनावा. या विचाराने शिक्षणासाठी गुरूकुल महाविद्यालय ज्वालापूर उत्तरप्रदेश येथे पाठविले. याठिकाणी चंदशेखर यांनी मनःपूर्वक वेदशास्त्राचे ज्ञान संपादन केले. हिंदी व संस्कृत शिकून घेतले. विद्या भास्कर व आयुर्वेद भास्कर उपाधीने अलंकृत होवून तरतले. पुढे त्यांनी एम.ए.बी.एड. ही केले. सामाजिक व धार्मिक कार्यात रूची असल्याने ते महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेचे उपदेशक बनले. सतत पाच वर्षे त्यांनी गावी गावी, खेडो-पाडी जावून आर्य समाजाचा प्रचार केला. वैद्यकीय सेवा ही सोबतीला होतीच. पुढे त्यांना लातूर येथील जयक्रांती महाविद्यालयात हिंदी व संस्कृत भाषेचे अध्यापन कार्य करण्याची संधी मिळाली. एकीकडे आर्थिक विवंचना संपली तर दुसरीकडे आपल्या ज्ञानाची व गुणांची छाप लाखो विद्यार्थ्यावर टाकली. असे असले तरी ही आपण भले अनू आपली नोकरी भली हे धोरण

न स्वीकारता त्यांनी वैदिक धर्मग्रंथाचा स्वाध्याय आर्य समाज व हैद्राबाद मुक्ती संग्रामाचा इतिहास यांचे वाचन लेखन व प्रवचन काम चालूच ठेवले. आर्य समाजाची नाळ तोडली नाही. या उलट आर्यसमाजात आलेली मरगळ दूर करण्यासाठी उपाय शोधत राहिले. प्राप्त परिस्थितीत व आपल्या क्षमतेनुसार जे जे करता येणे शक्य होते ते ते करत राहिले ते केवळ प्राध्यापक, वैद्य, वक्ते, कवि, लेखक, पंडीत उपदेशक एवढेच नाहीत तर ते एक कुशल संघटक ही आहेत. त्यांच्या पुढाकाराने राम नगर लातूर येथे १९७८ साली आर्य समाज भवन निर्माण झाले. रेणापूर येथे झालेल्या मराठवाडा वैदिक आर्य सम्मेलनाचे व २००२ साली लातूर झालेल्या आर्य महासंम्मेलनाचे यशस्वी संयोजक ठरले. आर्य समाजामध्ये सत्संग, उत्सव व सप्ताहाच्या कार्यक्रमात लोक येत नाहीत. वेळ देत नाही, म्हणून निराश हताश न होता त्यांनी साधनांची अनेक कतार काढली. आर्य समाज तुमच्या घरी दारी हे धोरण ठेवून परिवारिक सत्संग व विविध शिबिरे यांच्या आयोजनावर भर दिला.

"सोबतील कोणीच नसल्यावर स्वतः पुरतं स्वतःला पोहता आले पाहिजे एक किनारा सुटला म्हणून काय झाले. दुसरा किनारा गाठता आलं पाहिजे!"

या उम्मेदीने त्यांनी ठिक-ठिकाणी व आवश्कतेनुसार वेगवेगळी उपक्रमे राबविली. जसे दलित बांधवाना एकत्रित करून समाजिक समता बंधूता या विषयावर परिसंवाद घडवून आणणे, सहभोजनाचा कार्यक्रम राबविणे, व्यसनमुक्ती, पशूबळी, धार्मिक अंधश्रद्धा या विषयी मार्गदर्शन, योगासन वर्ग, आंतरजातीय विवाह जुळविणे, वधु वर परिचय मेळावे घेणे, नेत्ररोग निदान शिबिर, रक्तदान शिबिर अशी विविध शिबिरे घेतली. याशिवाय डॉ. सहस्त्रबुद्धे ग्रंथालयाची स्थापना, राष्ट्रभाषा हिंदीच्या प्रचारासाठी विद्यार्थी मेळावा, स्वा. सै.श्री. गोविन्दलालजी बाहेती अभिनंदन समारंभाचे आयोजन, मराठवाडा मुक्ती संग्राम सुवर्ण जयंती निमित्त १९९८ मध्ये ५० स्वातंत्र्य सैनिकांचा सत्कार समारंभ असे अनेक कार्यक्रम घेतले. १९९३ मध्ये किल्लारी येथे भूकंप ग्रस्तांची सलग चार महिने सेवा व मदत केंद्र चालवून आर्य समाजाचे यश वाढविले. याशिवाय आगामी काळात सास्कृंतिक शोधसंस्थान चालविणे, मराठवाडा मुक्ती संग्राम सप्ताहाचे आयोजन करणे, हुतात्मा अभिवादन रॅली काढणे, अनाथ विद्यार्थ्यांच्या शिक्षणाची सोय करणे असे उपक्रम चालविण्याचा त्यांच्या मानस आहे.

डॉ. लोखंडे हे लेखनीचे धनी आहेत. लेखनकार्यामुळे त्यांची ख्याती महाराष्ट्र बाहेर ही पसरली आहे. आज ते राष्ट्रीय आर्य लेखक परिषद कोटा च्या कार्यकारीणीचे सदस्य आहेत.आज पर्यंत त्यांची नये युग की ओर आर्य समाज हैद्राबाद मुक्तिसंग्राम का इतिहास, अवतार निर्णय, स्वामी दयानंद संक्षिप्त चरित्र व विचारधन, वेदों पर्यावरण विज्ञान, संत तुकाराम व स्वामी दयानंद यांचा सुधारणावाद, आध्यत्मिक आनंदाचा झरा व मुट्ठीभर तुफान एकूण अकरा पुस्तके नामंकित प्रकाशनांकडून प्रकाशित झाली आहेत. याशिवाय 'निजामाचे पानीपात', दयानंदोक्त औषधी, आरोग्य दयानंद तर्क संग्रह वगैरे ८-९ पुस्तके प्रकाशनाच्या मार्गावर आहेत. त्यांच्या या सामाजिक कार्याबद्दल व लेखन कार्यबद्दल वेगवेगळया संस्था व मान्यवरांकडून वेळोवेळी त्यांचा गौरव ही केला गेला आहे. जसे अंनिस कार्य गौरव पुरस्कार, भटके विमुक्त आदिवासी मित्र पुरस्कार,मेघजी भाई आर्य साहित्य पुरस्कार, राजभाषा सन्मान पुरस्कार व राष्ट्रीय धन्वंतरी सदभावना पुरस्कार या पुरस्काराने ते पुरस्कृत आहेत. 'हैद्राबाद मुक्तिसंग्राम का इतिहास' या ग्रंथाबद्दल कर्नाटकचे राज्यपाल श्री टी.एच. चतुर्वेदी यांच्या हस्ते त्यांचा सत्कार करण्यात आला इ.स २००४ मध्ये आंध्रप्रदेशचे शिक्षणमंत्री श्री रंगाराव याचे हसते हैद्राबाद येथे विद्यामार्तण्ड ही पदवी दिली गेली. आर्य समाजाच्या गौरवमय इतिहासाची ओळख नव्या पिढीला करून देण्यासाठी त्यांनी 'मराठवाडा मुक्ती संग्राम सप्ताहाचे'

औचित्य साधून ते स्वतः शाळा कॉलेज मधून भाषणं देतात. याशिवाय वारकरी संपद्राय महानूभाव पंथ, जमाते इस्लामी हिंद संस्था, आंबेडकर जयंती व संत संमेलना मधूनही त्यांनी आपले विचार मांडले आहेत. या सर्वाचा विचार करून म्हणावे लागे ' हे ही तसे थोडके नाही ' तर मला कुणी साथ देत नाही, मला पद मिळत नही, माझी किंमत होत नाही. मला टाळल जात किंवा सत्ता हाती असल्याशिवाय काम करता येत नाही. अशा मानसिकतेने ग्रासलेले लोक एकतर वेडया वाकडया मार्गाने हस्तगत करण्याचा प्रयत्न करतात नाही तर निराश होवून घरी बसतात.पण डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे हे मुरलेले आर्य समाजी आहेत. पदाशिवाय ही भरपूर कामे करता येतात. हे त्यांनी ओळखलं पदाचा हव्यास आला की संस्थेत गटबाजी संघर्षचा खेळ सुरू होतो. आणि यात आर्य समाजाचा मुख्य उद्देश बाजूला राहतो. एकाच ठिकाणी राहून एकमेकांचे पाय ओढत बसण्यापेक्षा त्यांनी स्वतःचे दालन निर्माण केले कुणालाही शह न देता संस्थेला बाधक न बनता वेदाच्या सिद्धांताशी आर्य समाजाच्या मान्यता व नियामांशी ईमान राहून कार्य केल्यास महर्षी दयानंदानी दाखवून दिलेला मार्ग प्रशस्त झाल्याशिवाय राहणार नाही.

'वसंत मनात ठेवून
शिखर झेलता आलं पाहिजे
बाण सोडायचा असेल दूर तर
धनुष्य पेलता आलं पाहिजे
आपलं झाड आपणच जगवायला पाहिजे
जगणं म्हणज झुरणं नाही, झरणं असतं
जगणं म्हणजे मरण नाही, मुरणं असत"

असाच संदेश डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे आपल्या कार्यातून देतात. डॉ.लोखंडे आता ६५ वर्षाचे झाले आहेत. चंद्र जसा आकाशात स्वतः चमकतो व अन्य ताऱ्यानांहि चमकण्याची संधी देतो. अन्न वनस्पतीमध्ये रस भरण्याचे काम करतो. असचं काहीसं त्यांच्या उर्वरीत जीवनात व्हावं त्यांची वृद्धावस्था शानदार व्हावी व आर्य समाजासाठी बहारदार ठरावी हीच अपेक्षा!!!

पुरोगामी विचारांचे विचारवंत प्रा.डॉ. चंद्रशेखरजी लोखंडे

—प्रा. दत्तप्रसाद बनाळे पत्रकार

प्रा. दत्तप्रसाद बनाळे यांचे शिक्षण एम.बीएड पर्यंत झाले आहेत. ते एक पूर्वी प्राध्यापक आहेत. सध्या ते एकमत दैनिक पत्रिका मध्ये पत्रकार म्हणून काम पाहतात. तसेच ते एक चांगले वक्ता आणि लेखक आहेत. संस्कृती रक्षक मंच च्या व्याख्यान मालेशी जुळलेले आहेत.

कोणत्याही माणसाची ओळख ही त्याच्या दिसण्यावरून होत नसते. तर त्या माणसाची विचार करण्याची दृष्टी व शक्ती यावरून ठरत असते. माणूस जगत असताना माणसे अनेक मुखवटे घालतात. परिस्थितीने ते घालणे ही व्यवहार्य आहे. परंतु डॉ. प्रा. लोखंडे सरांनी आयुष्याच्या कोणत्याही वळणावर आपला विचार व तत्व यांच्याशी कधीही तडजोड केली नाही. सातत्याने सुधारणावादी आधुनिक विचार त्यांनी समाजाला देण्याचे काम केले. आपली स्वतःची दृष्टी विवेकवादी व विज्ञानवादी ठेवून अंधश्रद्धेने, भेसूर कल्पनांनी व्यतीत झालेल्या अज्ञानी माणसांच्या वाडी तांडयावर जावून विवेकवादी व विज्ञानवादी विचार त्यांनी त्या झोपडीतल्या माणसांना दिला. भयभती झालेल्या मनामध्ये ज्ञानाची ज्योत पेटविण्याचे केलेले काम हेच खऱ्या अर्थाने पुरोगामी आहे. म्हणून मी जाणीवपूर्वक विचारांचे विचारवंत असा उल्लेख केला.

आदरणीय लोखंडे सर सध्या सेवानिवृत्तीचा उपयोग घेत आहेत. वयाची ६५ वर्षे पूर्ण होत आहेत तरी ही त्यांची धडपड कायम सुरू आहे. मग ते कधी संस्कृती रक्षक मंचच्या माध्यमातून 'मराठवाडा मुक्ती संग्राम' या विषयावर व्याख्याने शाळा महाविद्यालयात आयोजित करण्याची असेल तर कधी समाजातील लहान मुलं बोलके झाले पाहिजे. शब्दांशी त्यांनी खेळावे, प्रचंड वाचावे, आवाजाला धार प्राप्त करावी. प्राप्त शब्दांच्या सामर्थ्याने दीन दलित अन्यायी अत्याचारी पिडीत माणसाची मरगळलेली आस्मिता जागी व्हावी.ही प्रामाणिक भावना आपल्या ठायी ठेवून प्रत्येक वर्षी सरांनी वक्तृत्व विकास शिबिरांचे केलेले आयोजन, सेवानिवृत्तीनंतर बहुतेक माणसे भुतकाळ उगाळत बसतात व आपला बढेजाव पणा सांगण्यात धन्यता मानतात. पण त्याही पलीकडे जाऊन सर हे भूतकाळ सांगण्यात वेळ न घालवता कायम नवनीवन उपक्रम समाजाच्या हितासाठी राबवत असतात.

माणूस शिकला पाहिज, संघटीत झाला पाहिजे अन्याय अत्याचारा विरोधात उभे राहून त्यानं चळवळ केली पाहिजे हा डॉ. बाबासाहेब आंबेडकरांचा विचार त्यांनी स्विकारला आणि मुंबई हिंदी विद्यापीठाच्या माध्यमातून गावकुसा बाहेर राहणाऱ्या, वाडी - तांडयावर राहणाऱ्या, महाविद्यालयात न जाऊ शकणाऱ्या कोणत्याही वयाच्या माणसाला पदवीचे शिक्षण देण्याचे काम सरांनी केले उपेक्षित माणसाला, गरीबीने पिचलेल्या माणसाला उमद्या मनाने आपण शिक्षणाच्या प्रवाहात आणले.

आयुष्याची एवढी वर्षे आपण समृद्धपणे जगलात या मागे आपल्या कुटूंबीयांचाही मोलाचा वाटा आहे. विशेषतः आपल्या धर्मपत्नी सौ. लोखंडे मॅडम यांनी आपणास दिलेली मोलाची भक्कम

साथ ही सुद्धा विशेष आहे. आपल्या भावी आयुष्याला या निमित्ताने शुभेच्छा देताना आपल्यासारखे जगणे प्रत्येकांना प्राप्त व्हावे. याचसाठी आपण केलेली धडपड हीच खऱ्या अर्थाने महत्वाची आहे. माझ्या सारख्या सामान्य माणसाला आपल्या संस्कृती रक्षक मंचच्यावतीने अनेक व्यासपीठ मिळवून दिले आणि वक्ता म्हणुन माझी समाजात ओळख निर्माण झाली. यामध्ये सरांचे मार्गदर्शन व प्रोत्साहन महत्वाचे आहे. हैदराबाद मुक्ती संग्राम व्याख्यान माला आणि महर्षि दयानन्द आणि शिवाजी महाराजचे व्याख्यान मालाच्या माध्यमातून लोखंडे सराच्या मार्गदर्शनाखाली मी लातूर, रेणापुर, मुरुड, भालवी, बोरगाव, शाहू कॉलनी लातूर, इत्यादी ठिकाणी अनेक व्याख्याने दिली. आज त्याच्या वैदिक उपक्रमा मध्ये ३० ते ३५ शिक्षक, प्राध्यापक,पत्रकार व सामाजिक कार्यकर्ते जुळले गेले आहेत. ते गावेगावी, शाळा व महाविद्यालयामध्ये जाऊन व्याख्याने देतात तसेच आपल्या संस्कृतीची मुलांना ओळख करुन देतात.अध्यात्मीक बरोबर विज्ञानाची ओळख विद्यार्थ्यांना व्हावी यासाठी डा. लोखंडे सर अहोरात्र धडपडतात. संस्कृति रक्षक मंचच्या मध्ये त्यांनी अनेक तरूणांना कार्य करण्याची संधी प्राप्त करुन दिली आहे.जीवनात आपण आपल्या पुरते मर्यादित रहावे अशी त्यांची भावना कधीच राहिलेली नाही उलट आपण जीवन जगत असताना इतरासाठी शक्य होईल ते करावे, आपल्या आशित असणारे आपल्या सोबत चालणारे यांच्या साठी काही तरी करावे ही त्यांची भावना कौतुकास्पद आहे. ते आतून अत्यन्त निर्मळ व सर्वाचे हित साधनारे आहेत. निसर्ग जसा स्वतः जगत असताना इतराना जीवन देतो तशाच प्रकारे माणसाने इतरांना सहकार्य करावे अशी त्यांची भावना असते. आज पर्यत त्यांनी अनेक तरुणांना सहकार्य केले आहे. ते आज आप आपल्या क्षेत्रात सुस्थितीत आहेत.

मला एके ठिकाणी स्वामी दयानंदा विषयी व्याख्यानांस जावयाचे होते मला दयानंदा बदल पुरेशी माहिती नव्हती परन्तु त्यांनी संदर्भ पुस्तके मिळवून दिली आणि चर्चेच्या माध्यमातून मुद्दे ही मिळवून दिले.

मला त्यांच्या ६५ व्या वाढदिवसा च्या निमित्याने त्यांच्या बदल काही लिहिण्याची संधी प्राप्त झाली ही मला अभिमानस्पद बाब वाटते. त्यांनी केलेल्या कार्यामुळे इतरांना प्रोत्साहन मिळो हीच ईश्वराचरणी प्रार्थना.

त्याच्या भावी आयुष्यास माझे लाख-लाख शुभेच्छा।

डॉ. चंद्रशेखरजी लोखंडे यांचे संघर्षमय जीवन

–सौ. प्रणिता देशपांडे

सौ. प्रणिता देशपांडे यांचे जन्मगांव लातूर तालुक्यातील खुलगापूर आहे. त्यांचे शिक्षण बी. एस्सी पर्यंत झाले आहे. त्या एक लेखिका असून साहित्य क्षेत्रात त्यांचा मौलाचा वाटा आहे.

जेव्हा आपण एखाद्या थोर महापुरूषांची जंयती साजरी करतो तेव्हा त्या तिथीला विशेष महत्व प्राप्त होते. आपल्या महराठवाडयाला निजामाच्या मगरमिठीतून मुफ्त करण्यासाठी हजारो देशप्रेमींनी आपले सर्वस्व त्याग करून, काहींना तुरूंगात हालपेष्टा सहन केलया आणि स्वतःचे प्राण अर्पण करून आपल्या मातृभूमिला मुक्त केले. तो दिवस होतो १७ सप्टेंबर १६४८. आणित्याच संघर्षाच्या काळात डॉ. चंद्रशेखर लोखंडें चा जन्म त्रिवेणीबाईच्या उदरी झाला. त्यांचे जन्म नाव "शंकर" होते. शंकर रामलिंग लोखंडे यांचे पूर्वज मूळचे जानवळ ता.चाकूर जि. लातूरचे राहणारे होते. चि. शंकरचे नावनंतर बदलून चंद्रशेखर ठेवण्यात आले. आर्यसमाजामध्ये आल्यानंतर वडिलांचे देखील नाव बदलून रामस्वरूप असे करण्यात आहे. आजोबा साखराप्पा जानवळ येथे मोलमजूरी करत असत. घरावर कर्ज झाल्यामुळे साखराप्पांना गाव सोडून दुसऱ्या गावाला म्हणजे बिटरगावला मोलमजूरी करत असत. तिथे ते सालगडी म्हणून नौकरी करू लागले. त्यांना आपले कर्जफेड करण्यासाठी स्वतःचे जानवळ येथील घर एका सावकाराला विकावे लालगे. आता साखराप्पा लोखंडे बेघर झाले होते. सावत्र आई होती. तिने साखराप्पाला गावातून जाण्यास भाग पाडले. बिटरगावाला ते पोटावर नौकरी करू लागले. घरात कोणीच डले नव्हते. विंच्याचे बि्हाड पाठीवर घेऊन ते भटकत बिटरगावला आले होते.

साखरप्पा आता युवावस्थेत होते. त्यांचे लग्न रेणापूर येथील पर्वताप्पा राऊत यांच्या मुलीशी ठरले. चंद्रशेखरचे आजोबा साखराप्पांची परिस्थिती लग्न करण्यासाठी नव्हती. परतु गावावतून पट्टी गोळा करण्यात आली आणि हुंडयामध्ये गुळाच्या दोन ढेपी देऊन काशीबाई राऊत या मुलीशी लग्न लावण्यात आले. राहायला घर नाही, गावाबाहेर शेती नाही आणि काशीबाईला भाऊ नाही म्हणून गावच्या लोकांनी सारखरापपांना घरजावई करून रेणापूर येथेच राहण्याचा आग्रह केला. साखराप्पा आता रेणापूरचे घरजावई झाले होते. ते आता सासरच्या घरी राहून शेतमजूरी करू लागले. इ.स. १६२७ मध्ये त्यांना पहिला मुलगा रामलिंग (रामस्वरूप) झाला. हेच चंद्रशेखर सरांचे वडील. त्यांचे शिक्षण सातवी पर्यंत झालेले. रेणापूर येथे आर्यसमाजाची स्थापना १६३७ मध्ये झाली. त्यावेळी रामस्वरूपजींचे वय १० वर्षे होते. ते आर्यवीर दलामध्ये सामिल झाले. किशोर अवस्थेमध्येच रामस्वरूपजींना समाज कार्याची आवड निर्माण झाली. सरांच्या आईचे नाव त्रिवेणीबाई चंद्रशेखरजींचा जन्म २३ ऑक्टोंबर १६४८. तो काळ रजाकारांच्या अत्याचाराचा होता. अशा कठिन प्रसंगी गावच्या

महिला मुलांना गावच्या बाहेर माणिकराव कुलकर्णी यांच्या वाडयात ठेवण्यात आले. सर त्यावेळी ५ दिवसाचे होते. पहिला मुलगा वडिलावर जात असतो असे म्हणतात. तसेच झाले. सरांवर मुक्तीसंग्रामाचे संस्कारयाच काळात झाले. म्हणून त्यांनी पुढे चालून पाच वर्षे परिश्रम घेऊन "हैदराबाद मुक्तिसंग्राम का इतिहासः लिहिला. आणि त्यासंबंधीचे कार्य सा करीत अहोत. भारत १५ ऑगस्ट १९४७ ला स्वतंत्र झाला. परंतू मराठवाडा पारतंत्र्यातच राहिला. पुढे १७ सप्टेंबर १९४८ ला मराठवाडा देखील मुक्ता झाला. या १ वर्षे १ महिन्यात हैदराबाद स्टेटमध्ये निजामी पोलिस आणि रजाकरांनी उच्छाद मांडला होता. कित्येक स्वातंत्र्यसैनिक शहीद झाले. रामस्वरूप लोखंडे यांनी या रजाकारांचा प्रतिकार केला. अनेकांना अत्याचारापासून वाचविले. चंद्रशेखर लोखंडेने त्यांचे अपूरे कार्य पुढे आपल्या लेखनीतून) जाणीव जागृतीतून चालू ठेवले. आपल्या क्रांतीकारी विचारांचे धगधगते निखारे त्यांच्या पुस्तकातून, व्याख्यानातून बाहेर पडू लागले.

त्यापूर्वी त्यांना १९५४ मध्ये गुरूकुल घटकेश्वर, हैदराबाला पाठविण्यात आले होते. त्या ठिकाणी त्यांचे चुलते शिवमंगल लोखंडे, हरिसखाराम तुंगार, पानगावचे हरिभाऊ सुडे गुरूजी यांच्या सानिध्यात ते शिकेले. पं. नरेंद्रजींनी त्यांच्या शिक्षणाची मोफत व्यवस्था केली. वडील समाजसेवेत गुंतलेले असायचे. त्यांच्या अनुपस्थितीत त्यांची आई पीठाची गिरणी चालून लेकरा बाळांचे पोट भरायची. १९५७ मध्ये वडील ८-९ महिने हिंदी सत्याग्रहासाठी पंजाबला गेले. तिथे त्यांना ९ महिन्याचा तुरुंगवास भोगावा लागाला. चंद्रशेखरचे शिक्षण थांबले. ते गावच्या सरकारी शाळेत दुसरील शिकू लागले. पण पैशा अभावी मध्ये च शिक्षण सोडावे लागले. आई तीन मुलांचा व चार मुलींचा उदरनिर्वाह चक्कीतून पडलेल्या पीठाच्या भाकरी करून चालयावयाची सरांचे वडील पंजाबहून आल्यानंतर खासदार पं. प्रकाशवीर शास्त्रीजींच्या सहकार्याने गुरूकुल महाविद्यालय, ज्वालापूर येथे शिकायला गेले. प्रकाशवीर शास्त्री त्यावेळी लोकसभेचे सांसद होते. चंद्रशेखर सरांना श्री. विठ्ठलराव खंदाडे दिल्लीला घेवून गेले. तिथे खासदार पं. प्रकाशवीर शास्त्रींची भेट घेतली. त्यांच्या शिफारशीमुळेच चंद्रशेखर सरांचे संपूर्ण शिक्षण निशुल्क झाले. गुरूकुल महाविद्यालयातील शिक्षण आणि शिस्त फार कडक होती. हा उत्तराखंड प्रदेशाचा बर्फाळ प्रदेश होता. पहाटे चार वाजता उठावे लागत असे. स्वतःचे कपडे, भांडी स्वतः धुवावी लागत होती. पहाटे व्यायाम, असान, प्राणयाम करणे अनिवार्य होते. सकाळ, संध्याकळ यज्ञ होत असे. शिवाय शिकत असताना शेतातील कामे करावे लागत असत. गुरूकुल घटकेश्वर हैद्रबादच्या कडके शिस्तीला आणि अभ्यासाला भिऊन त्यांचा चुलता भारत हा गुरूकुलमधून पळून आला पण चंद्रोखर सन मन घट्ट करून तिथेच राहिले आणि शेवटपर्यंत शिक्षण घेत राहिले. इकडे वडील ही कडक शिस्तीचे होते. त्यांना वाटत असे माझा मुलगा खुप शिकावा, त्याने प्राचीन संस्कृतीचे ज्ञान घ्यावे. वेद, उपनिषद, दर्शनशास्त्र या विषयात विद्वान व्हावे. या उद्देशासाठी त्यांनी सरांना गुरूकुला पाठविले होते. वडिलांची प्रेरणा आणि आशिर्वाद पाठीशी होता म्हणून सर इतके शिकू शकले. आर्थिक परिस्थिती जेमतेम असल्यामुळे त्यांना दोन्ही गुरूकुलामध्ये मोफत शिक्षण घ्यावे लागले. उत्तर भारतातील अनक विद्वानांनी ओळख असल्यामुळे शक्य झाले. अन्यथा शिक्षण घेणे अशक्य होत दुसरी गोष्ट म्हणजे पं.प्रकाशवी शास्त्रींनी दिल्ली येथे सरांची चाचणी

परीक्षा घेतली. त्यांना चंद्रशेखरची बुध्दीमत्ता लक्षात आली आणि त्यांनी त्यांच्या गुरूकुलच्या प्राचार्यला शिफारिश पत्र दिले. त्यात त्यांनी लिहिले हाते.... " हा मुलगा अतिशय गरिब परिस्थितीला असून शिक्षणात हुशार आहे. त्याला मोफत शिक्षण,जेवण, निसाची व्यवस्था करण्यात यावी. " आमदार पं. नरेद्रजी आणि खासदार प्र. प्रकाशवीर शास्त्री यांच्या सहकार्याने डॉ. चंद्रशेखरजींचे शिक्षण पूर्ण होऊ शकले. ते गुरूकुलमध्ये २१ वर्षे शिकले. परतु घरून त्यांना आर्थिक मदत मिळू शकली नाही. कारण घरची परिस्थिती हालाकीची होती. एकदा कॅंटीन मध्ये बसले असता सर्व विद्यार्थी दुध आणि पाव (ब्रेड) घेत होते आणि चंद्रशेखर चुपचाप असून हातं होते. कारण त्यांच्या जवळ पैसे नव्हते.सर्व मुले सकाळी काही ना काही खायची. सर आपल्या मित्राबरोबर नुसते बसून राहयचे. एके दिवशी आचार्य नंदकिशोर जी शास्त्री यांनी हे दृश्य पाहिले. त्यांना सरांची कीव आली. काही दिवसांनी आचार्यजींनी दिल्लीच्या एका श्रीमंताकडून हुशार विद्यार्थ्यांसाठी असलेली शिष्यवृत्ती लावून दिली ती शिष्वृत्ती होती महिन्याला ५ रूपये. त्यावेळी दुध आणि पावाचा खर्च महिन्याला पाच रूपये होता. त्यांना शिष्यवृतीचे पाच रूपये मिळू लागले. सर त्या पाच रूपायाचा नाष्टा किंवा दूध पाव न घेता वह्या, पुस्तके पेनासाठी खर्य करायचे. वर्षातून एकदा गुरूकुलहून गावाकडे आल्यानंतर सरांना खूप आनंद वाटायचा. पण परत जाताना अवघड वाटायचे. पाच उचलायचे नाही. पण वडील कडक शिस्तीचे होते. ते सरांना बळजबरीने पानगावाला नेऊन रेल्वेचच्या डब्यात बसवाचे. १२ वर्षाचे सर गाड्या बदलीत, पानगावहून परळी, परळीहून पूर्णा, पुणेहुन खंडवा, खंडव्याहून दिल्ली, आणि दिल्लीहून हरिद्वारला जाचे. ते एकटेच. अशा प्रकारे शिक्षणाचा क्षडतर प्रवास चंद्रशेखरजींनी पूर्ण केला. त्यांनी मध्ये शिक्षण कधीच सोडले नाही. म्हणून त्यांनी वयाच्या २२ -२३ वर्षापर्यंत अनेक पदव्या संपादन केल्या. शिक्षण हे वाघिणीचे दूध आहे म्हणतात, ते यामुळेच चद्रंशेखजी गुरूकुलात राहिल्यामुळे ते सिनेमा आणि इतर व्यसनापासून दूर राहिले. वयाच्या २१ व्या वर्षापर्यंत त्यांनी दोन किंवा तीन चित्रपट पाहिले असतील. म्हणून आजच्या काळात त्यांचे जीवन शिस्तबध्द आहे. शरीराचा व्यायाम म्हणून आसनं, प्राणायमा, दंड बैठक तसेच खेळामध्ये फुटबॉल, व्हॉलीबॉल, बॅडमेंटन हे त्यांचे आवडते खेळ होते. फुटबॉल चे तर ते कॅप्टन होते. गंगेत पोहणे, जंगलात प्रवास करणे आणि डोंगर चढणे इत्यादी छंद यांना लहानपणासासूनच होते. त्यांचे जेवण आणि जीवन अत्यंत साधे आहे. जेवणात मिर्ची, कदां, लसून नसायचा सादी राहणी आणि सतत अभ्यास ही जीवनाची वाटचाल आज ही त्यांनी सातत्याने नियमित ठेवली आहे. वयाच्या २१ व्या वर्षापासून आजपर्यंत ते दररोज ४ किलोमीटर चालतात. आपली उपजीविका भागवित बसताना त्यांनी समाजकार्य कधी सोडले नाही. वैद्यकीय सेवेत असतांना ते व्याख्यान, कार्यक्रम इतदीला अवश्य जात. लेखन, वाचन सामजसेवा कधीच सोडली नाही. त्यांच्या हातून तीन सम्मेलन झाली. ती ही निःस्पृह भावनेने. वयाच्या ४१ व्या वर्षापर्यंत त्यांची परिस्थिती फार लहाकीची होती. त्यांची पत्नी सौ.संध्या लोखंडहया फक्त ७ वी पास होत्या. नंतर त्यांनी तीन मुले झाल्यानंतर १० वी उत्तीर्ण करून डी.एड. केले. आज त्या नामांकित शाळेत शिक्षिका म्हणून कार्यरत आहेत. २० वर्ष खडतर प्रवास करून चंद्रशेखरजीनी आज एक सुस्थितीचे शिक्षपर गाठले आहेत. ते आपल्या जीवनात वेगवेगळ्या मार्गावर चालत आज एक उत्तम जीवन जगत आहेत. त्यांच्या

जीवनाची सुरुवात डॉक्टर म्हणून झाली. नंतर ते उपदेशक, प्राध्यापक, वक्ता, लेखक व समाजसेवक या विविध पैलूंनी जीवनमार्गाचा प्रवास केला आहे. त्यांच्या घरी सर्व सदस्य शिक्षक म्हणनू सेवारत आहेत. सुस्थीत आले म्हणून त्यांनी आजही समाजकार्य आणि साहित्यसेवा सोडली नाही. संकट समयी ते सर्वांच्या सहकार्यासाठी धावतात. आज त्यांच्या जीवनाला ६५ वर्ष पूर्ण होत आहेत. म्हणून देशातील विद्वान त्यांच्या बद्दल गौरवग्रंथ प्रकाशित करीत आहेत, आम्हा सर्वांना गौरवास्पद बाब आहे. माझया ही मनात सरांबद्दल श्रध्दा आहे म्हणून त्यांचच्या जीवन कार्यावर मी हा लेख लिहावा वाटला. त्यांना दीर्घायुष्य प्राप्त होवो, हीच ईश्वरचरणी प्रार्थना ....!

"माता–पिता, आचार्य और अतिथि की सेवा करना देवपूजा कहलाती है
और जिस–जिस कर्म से जगत् का उपकार हो –वह करना
और हानिकारक छोड़ना ही मनुष्य का मुख्य कर्म है।"

आर्यसमाज लातूरच्या स्थापितेत डॉ.लोखंडेचे योगदान

–ईश्वर गोविंदलाल बाहेती

श्री ईश्वरचंद बाहेती यांचे शिक्षण बी.कॉम पर्यंत झाले आहे. श्री बाहेती एक लातूर चे सामाजिक सेवक म्हणुन आहे. तसेच ते वनश्री मंडळाचे अध्यक्ष, माध्यम संस्थे चे कोषाध्यक्ष, आणि लातूर तालुका केमिस्ट असोसियशन चे भी अध्यक्ष आहेत.

अखिल भारतीय आर्यसमाजाची स्थापना १८७५ साली महर्षि दयानंदानी समाजाच्या सर्वांगीन विकासासाठी मुंबई येथे केली होती. त्यात माणूस हा केंद्रबिंदू होता. वैयक्तिक प्रगतीबरोबर संपूर्ण समाजाची उन्नती ही दयानंदांना अभिप्रेत होती. लातूर येथे गांधी चौक आर्यसमाजाची स्थापना इ.स. १९३२ मध्ये झाली होती. त्यानतर शहराचा विस्तार झाला. दूरच्या लोकांना आपापल्या विभागात कार्यकरता यावे म्हणून आर्यसमाज सीताराम नगर (पश्चिम विभागाची) येथे कागदोपत्री स्थापना करण्यात आली. इ.स. १९९० ला डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे हे वलांडीतून लातूरला आले आणि या भागात त्यांनी दवाखाना चालू केला. सतत काहीतरी धडपड करीत राहणे आणि तमून सृजनात्मक कार्य करणे हा त्यांचा पिंड असल्यामुळे त्यांनी इथल्या आर्यसमाजी कार्यकर्त्यांना सोबत घेऊन समाजाची इमारत स्थापन करावी असे ठरविले. सर्व सभासदांना बोलावून रामनगर येथे जागा खरेदी करण्यासंबंधी विचार झाला. त्यावेळी घड्याळाचे व्यापारी आणि दानशुर श्री रामचंद्र शुंढारामजी वर्मा यांना श्री. डॉ. लोखंड जी व श्री. शंकररावजी मोरे यांनी आर्य समाजासाठी जागा देण्ययाची विनंती केली. वर्माजी काही दिवस आढेवेढे घेत राहिले. त्यावेळचे प्राधान प्रा. अरूण मदनसुरे आणि श्री. लोखडे व श्री. मोरे यांनी त्यांना क्रिडा स्पर्धेचे प्रमुख पाहुणे केले. या कार्यक्रमात डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी आपल्या प्रास्ताविकता श्री. रामंचद्र वर्मा यांना राजस्थानचे भामाशाह असे संबधेनू त्यांच्या समोर असा प्रस्ताव ठेवाला की तो त्यांना मान्य करावाच लागला. डू. चंद्रशेखर लोखंडे म्हणाले श्री वर्माजी दानशूर आहेत. दानशूर भामशाह यांनी राणा प्रताप यांना अकबर बादशाह विरूध्द लढण्यासाठी आपली सपूर्ण संपत्ती दान केली. तसेच मर्वाजीनी एक राष्ट्रवादी संहासी आर्य समाजासाठी थोडा जमिनीचा तुकडा दिला तर इथले कार्यकर्ते आणचखीन जोमाने कार्य करतील. आम्ही अशा स्पर्धा इतरांच्या खुल्या प्लॉटवर घेत आहोत. आर्यसमाजाला स्वःची जागा झाली तर असे शेकडो आर्य तरूण व्यायाम, आसन, प्राणयाम व खेळाच्या स्पर्धांमध्ये भाग घेऊ शकतील आणि याच तरूणांमधून देशभक्त निर्माण होतील. डॉ. चंद्रशेखर जीः च्या शब्दाने त्यांना विचार करण्यास भाग पाडले. काही दिवसानंतर श्री. शंकरराव मोरे आणि श्री. चंद्रशेखर लोखंडे यांना बोलावून त्यांनी आर्यसमाजासाठी जागा देण्यासंबंधीची सहमती दाखवली. अशा प्रकारे श्री. रामचंद्रजी वर्मा यांनी दि. १५ मार्च १९९१ रोजी २७ ८० चा खुला प्लॉट आर्यसमाज रामनगरला देणगी स्वरूपात देवून टाकला. नंतर डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे आर्य समाजाचे मंत्री झाले. इथून पुढे आर्यसमाज रामनगर या नावाने या आर्यसमाजाची ओळख झाली. या पूर्वी जे कागदपत्रार आर्यसमाज सीता रामनगर पश्चिम विभाग लातूर असे होते. ते जागा मिळाल्यानंतर संपुष्टात आले. ९/१०/१९९१ रोजी लोखंडे यांच्या नेतृत्वाखाली आर्यसमाज रामनगरच्या वास्तुसाठी परिसरातील लोकांकडून देणगी जमा करण्याचे ठरविले आणि श्री. माणिकरावजी भोसले

कोषाध्यक्ष, श्री. शंकरराव मोरे प्रधान, यांच्या प्रयत्नाने जवळ-जवळ २ लाख रूपये वास्तु निर्माणासाठी एकत्रित करण्यात आले. श्री. शंकरराव मोरे यांच्या प्रयत्नाने माजी आमदार श्री. शिवाजीराव पाटील कव्हेकर यांच्या आमदार निधीतून आर्यसमाजाच्या वास्तुसाठी ४ लाख रूपये मिळविण्यात यश आले. त्यांनी ते स्वखुशीने दिले. असे एकूण ६ लाख रूपये एकत्रित झाल्यानंतर पायाभरणीचा कार्यक्रम मा.ना.विलासराव देशमुख (तत्कानिल उद्योगमंत्री महाराष्ट्र राज्य) आणि आमदार शिवाजीराव पाटील कव्हेकर यांच्या हस्ते दि. २०-१०-१९९१ रोजी करण्यात आला. अशाप्रकारे परिसरातील नागरिक आणि आमदार शिवाजीराव पाटल कव्हेकरांच्या आर्थिक मदीने १९९२ मध्ये आर्यसमाजाचे भवन निर्माण झाले. या भवनाच्या लेकर्पणासाठी मार.ना.श्री. विलासराव देशमुख आणि मा.आ.शिवाजीराव पाटीलकव्हेकर यांना बोलविण्यात आले होत. आपल्या ददघाटनपर भाषणात श्री. शिवाजीराव पाटील कव्हेकरांनी आर्यसमाजाबलिचे काढलेले उद्‌गार महत्वाचे आहेत. ते म्हणतात "आर्यसमाजाने भारतीय स्वातंत्र्य संग्रामात आणि हैदराबाद मुक्ती आंदोनलात महत्वाची भूमिका बजावली आहे. स्वामी दयानंदाच्या तपस्येतून आर्यसमाजाची चळवळ देशात अन्याय व अत्याचारा विरूध्द उभा ठाकली आह. आर्यसमाजानेच समाजाला पूरूषार्थ व मानवता शिकवली. आज आर्यसमाजाची देशाला अत्यंत गरज आहे. "आर्यसमाज रामनगरासाठी जागा मिळवून त्या ठिकाणी सत्संग भवनपूर्ण होईपर्यंत डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे आणि त्यांचे सहकारी पदाधिकारी प्रधान श्री शंकरराव मोरे आणि कोषाध्यक्ष श्री. माणिकराव भोसले यांनी अथक परिश्रम घेतले. डॉ.पं. चंद्रशेखर लोखंडेचा एक विशेष गुण म्हणजे ते एकदा एक काम हाती घेतले की पूर्ण करेपर्यंत स्वस्थ बसत नाहीत. आपली प्राध्यापकीय सेवा व पारिवारीक व्याप सांभाळून त्यांनी आर्यसमाजाची वास्तु उभी राही पर्यंत अहोरात्र परिश्रम घेतले. त्यांच्याकडे नियोजन आणि अपील करण्याची एक विशिष्ठ पध्दती आहे. ज्यामुळे सामाजिक कार्य करतेवेळी त्यांना सर्वाकडून सहकार मिळतो. डॉ.लोखंडे मंत्री पदावर असे पर्यंत आर्यसमाज रामनगर तर्फे दरवर्षी योगासने, प्राणायाम, ध्यान, संध्या प्रशिक्षण, रक्तदान तसेच आयुर्वेद व प्राकृतिक चिकित्सा शिबीरे घेतली जात होती. इ.स. १९९३ मध्ये किल्लारी भूकंपामध्ये डॉ.चंद्रशेखर लोखंडे व डॉ. गीतमुमार हाजगुडे यांच्या नेतृत्वाखाली भूकंप पिडीताना मदतीचे कार्य सतत तीन महिने करण्यात आले. यामुळे आर्यसमाज रामनगरची प्रसिध्दी भारतातच नव्हे तर संपूर्ण जगामध्ये झाली. याच काळात आर्यसमाज रामनगरासाठी ग्रंथालयाची गरज भासू लागली. प्रत्येक आर्यसमाजमध्ये एक पुस्तकाध्यक्षाचे पद खास करून असते. पुस्तके कोठून मिळवावी हा पदाधिकाऱ्यांसमोर प्रश्न होता. डॉ.चंद्रशेखर लोखंडेनी त्या प्रश्नाचे उत्तर शोधून काढले. महात्मा बसवेश्वर महाविद्यालयत इतिहासाचे प्राध्यापक म.वि. सहस्त्रबुध्दे हे पुस्तकाचे व्यासंगी होते. त्यांच्या घरी इतिहास, समाजषस्त्र आणि हिंदी विषयांचच्या पुस्तकांचा मोठा संग्रह होता. मंत्री डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी मोठ्या कौशल्याने यांच्या पुस्तकाचा संग्रह आर्यसमाज राम नगरासाठी देगणी रूपाने प्राप्त करवून घेतला. अनेक सस्थाचालकांचा डोळा या संग्रहावर होता. परंतु प्रा.म.वि. सहस्त्रबुध्देंचे सासरे बाळकृष्ण शर्मा शाहू महारांजाचे एक विश्वासू शिक्षण तज्ञ होते. ते पूर्वी गुरूकुल कांगडी येथे प्रोफेसर होते. नंतर ते शाहू महाराजांकडे आले. तसेच ते कोल्हापूर युनिवर्सिटीच्या संस्थापकापैकी एक सदस्य होते. आर्यसमाजाशी निगडीत असल्यामुळे त्यांच्या जावयांनी अर्थात प्रा.म.वि. सहस्त्रबुध्दे यांनी डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांना आर्यसमाजासाठी आपले निजी ग्रंथालय देण्यचे निश्चत केले आणि ते आर्यसमाजासाठी देऊनही टाकले. त्यानंतर इ.स. १९९८ मध्यये संपूर्ण मराठवाड्यात मराठवाडा मुक्तीसंग्रमाची स्वर्णजयंती साजरा करण्यात येत होती. त्यावेळी पं. च्रदशेखर लोखंडेनी आर्यसमाज गांधी चौकात मराठवाडा मुक्ती आंदोलनातील ५० स्वातंत्र्य

सैनिकाचां सत्कार करून मराठवाडा मुक्ती आंदोलनाची स्वर्णजयंती साजरी केली. हे कार्य आर्यसमाज रामनगरच्या कार्यकर्त्यांच्या सहकार्यानेच संपन्न झाले. असे प्रा.डॉ.लोखंडे आजही सांगतात देशासाठी कष्ट सहन करणाऱ्या स्वा. सैनिकाबद्दल त्यांच्या मनात आदराची भावना आहे. हे यावरून कळते. नंतर त्यांनी त्यासंबंधी इतिहासची लिहिला . ग्रंथ उत्तर भागात अत्यंत प्रसिध्द आहे.

दि. १३-०२-२००० रोजी आर्यसमाजाचे कर्मठ कार्यकर्ते आणि स्वातंत्र्यासेनानी गोविंदलाल जी बाहेती यांचा सत्कार मा.चंद्रशेखर बाजपाईंच्या हस्ते करण्यात आलात्र अध्यक्षस्थानी अप्पर जिल्हाधिकारी जी.आर.बनेसाडे होते तर गुरूकुल येडशीचे आचार्य सुभाषजी प्रमुख पाहुणे होतेत्र या गौरव समारंभाला यशस्वी करून डॉ.चंद्रशेखर लोखंडे यांनी ५१ हजार रूपायांची थैली श्री. गोविंदलाल जी बाहेती यांना समर्पित केली. तसेच या कार्यक्रमाच्या माध्यमातून आर्यसमाज रामनगर येथे ७० हजार रूपयाची स्थिर निधी श्री.गोविंदलाल जी बाहेतींच्या नावाने ठेवण्यात आली. आज त्या निधीच्या व्याजातून अनेक सामाजिक उपक्रम घेतले जातात. हे कार्य देखील डॉ.लोखंडे जी नी जिद्दीने यशस्वी करून दाखविले.

इ.स. २००२ मध्ये आर्यसमाज रामनगर लातूरच्या कार्यकर्त्यांच्या परिश्रमाने महासंमेलन लातूरात घेण्यात आले. या कार्यक्रामात संपूर्ण मराठवाड्यातून १० हजार आर्य नागरिक एकत्रित झाले होते. त्यांची संपूर्ण राहण्याची, जेवणाची सोय आर्यसमाजातर्फे करण्यात आली. या संमेलनात अनेक कार्यक्रम घेण्यात आले. त्यात राष्ट्ररक्षा संमेलन,महिला सशक्तीकरण संमेलन, भ्रष्टाचार निर्मुलन, युवाशक्ती संमेलन, भव्य शोभायात्रा इत्यादी कार्यक्रम योगरित्या पार पाडण्यात आले. या संमेलनाचे संयोजक पद देखील श्री. डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी भूषविले होते. आर्य जनतेला संबोधीत करण्यासाठी महाराष्ट्रातून आणि उत्तर भागातून १८ आर्यविद्वान बोलविण्यात आले होते. तीन दिवस चालणाऱ्या वैदिक महासंमेलनामध्ये अनेक राष्ट्रीय, सामाजिक तसेच आध्यत्मिक विचार मांडण्यात आले आणि लोकहितकारी प्रस्ताव पास करण्यात आले. त्यांच्याच संयोजकत्वामध्ये रेणापूर येथे घेण्यात आलेलजे, १९८५ चे 'दयानंद बलिदान शताब्दी महासंमेलन रेणापूर' आणि लातूर येथील 'वैदिक महासंमेलन २००२' हे आर्यजनतेच्या चिरस्मरणात राहिल. आज ही लोक डॉ. चंद्रशेखर संयोजकत्वाची महती सांगतात. कारण 'योजकस्तत्र दुर्लभ' अर्थात नियोजन करणारा दुर्मिळ असतो. आता ते "संस्कृती रक्षक मंच" च्या माध्यमातून अनेक आर्येतर बुध्दीजीवी सहकाऱ्यांना बरोबर घेऊन नव तरूणांमध्ये कार्य करीत आहेत. त्यांना वैदिक संस्कृतीच्या वाटेवर चालण्यासाठी प्रेरित करीत आहेत. अशा कृतीशील आचार्याला शत् शत् अभिवादन आणि त्यांना दीर्घायुष्य लाभो हीच ईश्वर प्रार्थना !!

श्रोत्यांना मंत्रमुग्ध करणारा वक्ता: डॉ. लोखंडे

—पं. सत्यवीर शास्त्री

पं. सत्यवीर शास्त्री हे संस्कृत विषयाचे पूर्वी शिक्षक, वक्ता आणि लेखक आहेत. सध्या आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ चे प्रधान आहे.

मराठीत एक म्हण प्रसिध्द आहेत्र " पुत्र व्हावा ऐसा गुंडा ज्याचा तिन्ही लोकी झंडा" प्रत्येक माणसाला लग्नानंतर लागलेली असते की, मुलगा झाला पाहिजे. जर का मुलगी झाली की सगळीकडे नाराजी आजच्या परिवार नियोजन काळात तर विचारूच नको हो! एका अध्यापक बाईने पहिल्या दोन मुली नंतर सात वेळा डॉक्टराकडून 'गर्भपात' करून घेतले.कारण गर्भलिंग पीरक्षा कॅली असता मुलीचेच लिंग होते. आता मुलींची संख्या कमी झाली तर ओरडायला लागले. 'बेटी बचाओ-बेटी बचाओ"

पुत्र पाहिजे पण पुत्री ही पाहिजे. तिच्या शिवाय वंश चालणार नाही. पुत्र शब्द संस्कृत भाषेचा आहे. पु नामनरक, तस्मात जायते इति पुत्र पुं नावाचे नरक आहे. त्या नरकात आई बापांना जा न देणाऱ्याचे नाव पुत्र आहे पुत्र आई वडिलाना सुखी ठेवतो. म्हणून त्याचे महत्व आहे पंरतु नुसता नावाचा मुलगा नको तो योग्य असालया पाहिजे. त्यांचयावर कंभाराच्या मडकी प्रमाणे संस्कार झालेले हवेत. संस्कारित पुत्राचाच तिन्ही लोकी झंडा फडककवतो. राष्ट्रकवी मैथिली शरण गुप्त ही म्हणतात. 'पुत्राला सपूत बनवा. पूत सपूत धन का संचय ?पूत कपूत का धन संचय?"

रामस्वररूपजी लोखंडे यांनी आपल्या चिरंजीवाला गुरूकुल महाविद्यालयात शिक्षणासाठी पाठविले. पुत्रप्रेमाचे वेड प्रत्येकाला असते पण त्यांनी प्रेमाचा त्याग करून मुलाला योग्य शिक्षण व वैदिक धर्माच्या मार्गाला लावले. स्वतः पदवीधर नसून मुलाला उच्च शिक्षण दिले. आज रामस्वरपूजी लोखंडेंच्या मुलालचा झोंउतिन्ही लोकी डोलाने फडकतो आहे डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांचा प्रथम परिचय पंचवीस वर्षापासूनी अमरावती जिल्ह्यातील परसपूर या गावी झाला. मी त्यावेळी आर्य प्रतिनिधी सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ नागपूर या संस्थेचा सेक्रेटरी होता. परसापूर आर्यसमाजने वेदप्रचाराचे कार्यक्रम आयोजित केले होते.. मी डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांना प्रचारकरीता आमंत्रित केले. यांना पाहिल्यानंतर आर्यसमाजाचीपदाधिकारी यांना पाहिल्यानंतर आर्यसमाजाची पदधिकारी मला म्हणाले शास्त्रीजी प्रचारकरीता भारदस्त रूबाबदार प्रचारक बोलवायला हवा होता, लोक प्रभावित व्हावेत. आर्यसमजाकडे आकर्षित वहवे हा प्रचाराचा उद्देष आहे. यांचा काय प्रभाव पडणार?मी त्यांना काहीच उत्तर दिले नाही. गप्प बसलो. प्रचार सभेला सुरूवात झाली. स्वागतानंतर अगदी थोडक्या शब्दामध्ये डॉ. साहेबांचा परिचय करून देण्यात आला. समोर पाच दहा मुले बीस बाया आणि पंचवीस माणसं बसली होती. माझ्या या प्रास्तविक भाषणानंतर डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी हार्मोनिअमच्या माध्यमाने, " ज्योत से ज्योत जलाते चलो वेदों की गंगा बहात चलो " या गीताने

प्रचारास सुरूवात केली. मधूर स्वरांचा वर्षाव झाला. गावातील मंडळी एकक म्हणून यायला लागली. अर्धा तासातच पायखेचया जवळपास मंडळी जमली.

स्वामी दयानंद व त्यांचे कार्य या विषयाची मांडणी डॉ.साहेबांनी तळमळीने, अवर्णनीय शैलीत विशद केली. ते म्हणाले हिंदू समाजाला जागृत करण्याकरीता महर्षि दयानंदानी अठरा तास समाधीचे आनद सोडून सोळा वेळा विष प्राशन केले. दगड विटांचा मारा सहन केला. राजा महाराजांच्या आक्क्रमणाला धैर्याने तोंड दिले. '''बताऐं तुम्हे हम दयानद क्या थे ?ऋषि थे, मुनि थे, या देवता थे?बताऐं तुम्हे हम....!

डॉ. साहेबांचे भाषण वैदिक ग्रंथाच्या आधारावर आर्यसमाजाच्या प्रचारार्थ वीररस करूणस रसाने ओतप्रोत भरलेले होते. अठराव्या शतकात विधवा स्त्रियांची स्थिती अतिषय करूणाजनक होती. नेसायला एकच साडी असलेल्या व त्याच साडीचा पदर फाडून एकुलत्या एक मुलाचे मृत शरीर गंगा मातेला अर्पण करून परतणाऱ्या मातला पाहून धैर्यधनी ऋषि दयानंदाचे डोळे पानावले होत. हा प्रसंग वर्णन करणाऱ्या डॉक्टरांचे नयन ओले झाले तर समोर बसलेल्या आया बहिणी अक्षरश: रडायला लागल्या सगळी कडे नीरव शांतता. सभामंडप पूर्ण भरलेले प्रभावशाली भाषणाने श्रोते एवढे एकाग्र झाले की, दोन तास कधी संपले हे कळलेच नाही. कार्यक्रम संपला तरी गावकरी उठायला तयारच नव्हते. आणखी दोन दिवस तरी कार्यक्रम ठेवा अशी मागणी करीत होते. आयोजकानी डॉ. चद्रशेखर लोखंडे यांचे खूप आभार मानले व त्यांचे तोंडून नकळत शब्द निघाले " मूर्ती लहान पण किर्ती महान "

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे महाराष्ट्र प्रांताचे प्रचारक असून, देखील ते आर्य प्रतिनिधी सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ भांगामध्ये प्रचारासाठी यायचे. त्यांनी अमरावती, जळगाव, धुळे खानदेश इत्यादी विभागामध्ये बराच प्रचार केला आहे. विदर्भाची भाषा व्हराडी मराठी असाची ते मराठवाडी भाषेत बोलायाचे संयोजकाने भाषण संपल्याचे जाहिर करीत असतानाच अनेक श्रोते उठायचे आणि म्हणायचे पंडित जी अजून बोला भाषण संपवू नका आपल मराठी आम्हाला फार गोड वाटते. तुमची वाणी रसाळ आहे. तरी भाषण चालू द्या. असे अनेक गवामध्ये मला ऐकायला मिळाले. पथ्रोट जि. अमरावती येथे डॉ.पंडित लोखंडे जी हे दोन दिवसासाठी आले होते. परंतु त्यांचे वक्तृत्व ऐकून तिथल्या लोकांनी त्यांना ७ दिवस थांबवून घेतले.

त्यांच्या भाषणाचे वैशिष्टये हे की, ते समाजातील वाईट चालिरीती बद्दल खंडन करायचेत्र पण ते खंडन विनोदपूर्ण असायचे. संत गाडगेबाबा आणि राष्ट्रसंत तुकाडोजींच्या शैलीचे ते असायचे. द्वेषमुलक खंडन ते कधीच करीत नसत. त्यांच्या भाषणाने प्रेरीत होवून अमरावती व जळगाव विभागातील शेकडो तरूणांनी आर्यसमाजाची दीक्षा घेतली आणि व्यसनमुक्तीची प्रतिज्ञा केली.

मी त्यांना २००६ मध्ये नागपूर येथे आर्य प्रतिनिधी सभा मध्यप्रदेश व विदर्भाच्या कार्यक्रमाला बोलवले होते. त्यात पं.चंद्रशेखरजीनी स्वामी दयानंदाची आणि सर आइझक न्युटनच्या जिज्ञासू वृतीची तुलना केली. दयानंदाच्या बालपणी महादेवाच्या पिंडीवर चढून नैवेद्य खाणाऱ्या

उंदरापासून बोध झाला आणि न्युटनने फळाच्या माध्यमातून गुरूत्वाकर्षणाचा शोध लावला. एकाने भौतिकवादाला दिशा दिली तर एकाने खऱ्या अध्यात्मवादाचा शोध लावला. डॉ. साहेबांनी या भाषणातून एक नवा विचार माडला. त्यांचे एकच म्हणणे असायचे की, आर्यसमाजाला आधुनिक जगापासून वेगळे करू नका. प्राचीन ते बरोबर आधुनिक काळामध्ये आर्यसमाजाला कसे नेता येईल, यावर त्यांचा भर असायचा. अशा या गुणी वक्त्याच्या जीवनावर गौरव ग्रंथ प्रसिध्द होत आहे, याचा आम्हाला साभ्र अभिमान आहे. ते ६५ वर्षे अविश्रांत कार्यरत राहिले आहेत. विविध क्षेत्रात त्यांनी आपल्या कर्तृत्वाचा ठसा उमटवला आहे. त्यांना दीर्घायुष्य लाभो अशीच समाजाची सेवा करण्याचा योग प्राप्त होवो हीच शुभेच्छा !

प्रधान,
आर्य प्रतिनिधी सभा म.प्र.विदर्भ,
नागपूर

वही सत्य कर सकता मानव जीवन का परिचालन
भूतवाद हो जिसका रजतन, प्राणवाद जिसका मन
औ, अध्यात्मवाद हो जिसका ह्रदय गंभीर चिरंतन
जिसमें मूल सृजन विकास के विश्व प्रगति के गोपन (पंत)

हुतात्म्याची ज्योत तेवत ठेवणारे डॉ. लोखंडेजी

—श्री राजेश बिराजदार

श्री बिराजदार राजेश शेषराव जी उस्मानबाद येथे पत्रकारिता, अध्यात्म द्वारा सामाजिक कार्य करत आहेत. तसेच ते ' धाराशिव वार्ता ' हे चालवितात. आणि ते बालसंस्कार ची मोहिमा राबवितात.

मुंबई हिंदी विद्यापीठाच्या निमित्ताने लोखंडे सरांचा अल्पसा सहवास लाभला. प्रवेश फॉर्म भरण्यासाठी प्रथमतः मी त्यांच्या ऑफीसमध्ये गेलो असता तिथं मला फक्त ग्रंथ आणि ग्रंथच दिसले. स्वामी दयानंद सरस्वती यांचा एक फोटो होता. यावरून समजले की, 'आर्य समाज' तत्व, त्याग, संस्कार, निश्चितच असणार हे जाणून मी वेळ घेवून मुलाखत घेण्याचे ठरविले.

आजच्या या २१ व्या शतकात प्रत्येक जण आपण आपलं कुटूंब अन् नोकरी, इस्टेट, यापलीकडे त्यांना कशाचंच काहीही देणघेणं नाही. पैशापेक्षा आज या जगात वेळेला महत्व आहे. पण डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांच व्यक्तीमत्व या सगळ्यापेक्षा निराळच आहे. सरांच्या ऑफीसमध्ये आलेला कुठलाही व्यक्ती जाताना आनंदानेच जातो. अन् जाताना लोखंडे सर त्यांना विचारांची शिदोरी सोबत दिल्याशिवाय जाऊ देत नाहीत. मी त्या दिवशीचा माझा प्रवेश घेऊन निघालो. सरांना नमस्कार केला की, आपणास जेव्हा सवड मिळेल त्यावेळी आपण येवू शका?सरांचं ते मार्मिक उत्तर ऐकून मी विचारांच्या गर्तेत जावून त्यांना निरोप घेतला व पुन्हा मुलाखत घेण्यासाठी येण्याचे सांगितले. जाता जाता मनात विचार आला की एवढा मोठा व्यक्ती आपल्याला " आपणास ज्यावेळी वेळी सवड मिळेल त्यावेळेस आपण येवू शकतां असं म्हणाहेत" या वरून लोखंडे सर प्रत्येक व्यक्तीला किती मान सन्मान देतात हे लक्षातं आलं. आयुष्यात जर तुम्हाला मोठं व्हायचं असेल तर तुम्ही आयुष्यभर कोणालाही आपल्यापेक्षा कमी लेखू नका हे त्यांच्या उत्तरातला सारांश होता हे लक्षात आलं.

मुलाखत घेण्याचा दिवस आला, मी स्वतः पत्रकार असल्यामुळ मी या अगोदर अनेकांच्या मुलाखती घेतल्या होत्या. अन् अजूनही घेतोय. पण एखादा लेखक, कवींची मुलाखत घेणे यात काही वेगळीच मजा असते.

प्रा. लोखंडे यांच मूळ गाव रेणापूर, त्यांचे वडील रामस्वरूप लोखंडे हे कट्टर आर्यसमाजी कार्यकर्ते होते. मराठवाडा मुक्तिसंग्रामात त्यांचे योगदान राहिले आहे. सर प्राथमिक शिक्षण हैद्राबाद येथे तर माध्यमिक ते पदवीपर्यंतचे शिक्षण गुरूकुल महाविद्यालयात ज्वालापूर उत्तरप्रदेश येथे झाले. २१ वर्षे शिक्षणासाठी महाराष्ट्राबाहेर राहून सरांनी विद्याभास्कर, आयुर्वेद भास्कर, (बी.ए.एम.एस) एम.ए.बी.एड् इ. पदव्या संपादन केल्या. नंतर आपल्या गावी येवून त्यांनी मेडीकल प्रॅक्टीस सुरू केली. सरांना लहानपनापासून गायनाची खूप आवड होती. डॉक्टरकी करत करत ते गायन, भजनोपदेश, व्याख्यान देत इत्यादी समाजकार्यात ते सतत पुढे राहतात. लोखंडे सरांच्या लेखनामध्ये फार मोठा विरोधाभास आढळतो. तो म्हणजे एकीकडे ते इतिहासाचे गाढे अभ्यासक आहेत. तर

दुसरीकडे ते कवी मनाचे आहेत. आपल्या मराठवाड्याला इतिहास भवी पिढीला कळावा. हुतात्माचे स्मरण व्हावे, खरा इतिहास लोकासमोर आला पाहिजे. या भावनेने सरांनी सतत पाच वर्षे परिश्रम घेवून ''हैद्राबाद मुक्तीसंग्राम हा इतिहास' हा पाचशे पानांचा ग्रंथ लिहिला. तसेच राष्ट्रप्रेमाने भारावून '' मुठी भर तुफान' हा हिंदीतून काव्यसंग्रह त्यांचा आहे. हिंदी भाषेवरील प्रेमापोटी त्यांनी लातूर जिल्हयात २२ वर्षापासून मुंबई हिंदी विद्यापीठ चालवित आहेत. आजतागायत या विद्यापीठातून हजारो विद्यार्थी पदव्या संपादन करून आपल्या क्षेत्रात नाव कमावत आहेत. उद्योगधंद्याला लागले आहेत.

डॉ. लोखंडे यांच मत आहे की, जोपर्यंत समाजातील अन अज्ञान नष्ट होत नाही तोपर्यंत भारत देश संपूर्णपणे विकसित होवू शकत नाही. इ.स. २००६ साली सरांनी 'संस्कृती रक्षक मंच' या संस्थेची स्थापना केली. त्याच्या माध्यमातून दरवर्षी हैद्राबाद मुक्तीसंग्राम व्याख्यानमाला आयोजित केली जाते. तसेच स्वातंत्र्यसैनिकांचा जाहिर सत्कार केला जातो. एका प्रश्नाचे उत्तर देताना लोखंड सर म्हणाले की, ज्या देशाचा इतिहास तरूण पिढीला माहित नाही किंवा त्या देशाची संस्कृतीचे व्यवस्थीतपणे जतन केले जात नाही. त्या देशाची तरूण पिढीसमोर भविष्यात खूप संकटे निर्माणे होतात. आपल्या देशाचा खरा इतिहास तरूण पिढीला समजावणे, माहिती करून देणे हे आपले आद्यकर्तव्य आहे.

अशा या ज्ञानपिपासू व्यक्तींच्या जीवनाचा ६५ वर्षाचा प्रवास कसा झाला ते कागदावर उतरवणे फार अवघड आहे. कारण कितीही लिहिलं तरी ते कमीच वाटतं अन् काहितरी मागे उरतच 'संस्कृती रक्षक मंच' आणि मुंबई हिंदी विद्यापीठाचे आजी माजी विद्यार्थी मिळून लोखंडे सरांच्या सामाजिक कार्यावर त्यांच्या जीवनार गौरव ग्रंथ करताना मला त्यांच्याविषयी दोन शब्द लिहिण्याची संधी मिळाली त्याबद्दल मी संयोजक मंडळीचे आभार मानतो. सरांना व त्यांच्या परिवारास सुआरोग्य व दीर्घायुष्य देऊन त्यांच्या हातून असेच कार्य पुढील पिढीपर्यंत चालू राहावे अशी ईश्वरचरणी प्रार्थना करतो.

मु.पो.लामजना, जि.लातूर

महाराष्ट्र सभेचे पहिले उपदेशक डॉ. लोखंडे

–प्रा.नरदेव गुडे विद्याभास्कर

प्रा. गुडे यांचे शिक्षण गुरुकुल झज्जर व भैसंवाल (हरि.) येथुन माध्यमिक तर महाविद्यालय ज्वालापूर येथुन उच्च माध्यमिक शिक्षा प्राप्त केले। सध्या ते लातूर येथील राजर्षी शाहू महाविद्यालय चे पूर्व वरिष्ठ प्राध्यापक आहेत.

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी आपले संपूर्ण आयुष्य आर्यसमाजाच्या प्रचार प्रसारासाठी वेचले आहे. ते सलग १७ वर्षे वैद्यकीय क्षेत्रामध्ये राहून खेडोपाड्यून गोर-गरिबांची सेवा करीत होते. त्यांनी रूग्णांची सेवा करीता असताना देखील सामाजिक कार्य सोडले नाही. खेडोपाडी वैद्यकीय सेवा करीत असताना रात्री बेरात्री, वेळी अवेळी ते रूग्णांच्या सेवेतहजर राहत असत. सकाळी सात वाजता ते प्रॅटिक्ससाठी निघाले की सायंकाळी चार वाजेपर्यंत घरी परतत असत. आजारी लोकांच्या चिकित्सेत ते इतके रमन जात की ते स्वतःची तहान भू हरवून जात असत. या सतरा वर्षात त्यांनी १० ते १५० गावामध्ये जावून वेद्यकीय व्यवसाय केला. नंतरा दि. ५/२/१९८२ रोजी त्यांना सभेच्या अंतर्गत भजनोपदेशक म्हणून ६०० रू मानधनावर नेमण्यात आले. मी त्यावेळ महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेचा उपमंत्री होतो. माझे आणि शेखरचे संबंध गुरूकल महाविद्यालय ज्वालापूर (उत्तराखंड) पासूनचे आहेत, आम्ही दोघेही बालसखा किंवा गुरूकुलचे सहपाठी म्हणा एकत्रित शिकलो आहोत. पं. लोखंडे हे बालवयापासून कृतीशल स्वाभावाचे आहेत. आठवीपासूनच वादविवाद स्पर्धेत (वकतृत्व स्पर्धा) मध्ये भाग घ्याचे, त्यांचा आवाज गोड आणि संगीतास अनुकूल होता. सुरूवातीला कोणत्याही कार्यक्रमात भजन किंवा गीत म्हणयाचे. त्यामळे त्यांना स्टेज करेज प्राप्त झाले नंतर ते भनाबरोबरच उपदेशही करायला लागले. त्यामुळे त्यांन भजनोपदेशक होण्यास कही अडचण झाली नाही. त्यांन गुरूकुलमध्ये येणाऱ्या भजनोपदेशकाचे विचार ऐकण्यास गोडी लागली. प्रसिद्ध भजनोदपदेशक आणि प्रखर वक्ते कंवर सुखललाल आर्य मुसाफिर यांचा तयांचा जीवनावर भरपुर प्रभाव पडला. कुंवर सुखलाल म्हण्जे आग ओकरणारे वक्ते. पं. चंद्रशेखरने ठरविले की, आपणही त्यांच्यासारखे भजनोपदेशक व्हायचेच. महाराष्ट्रात आल्यानंतर प. नरदेवजी स्नेही असतं. मराठी जनतेवर प्रभााव पाडण्यासीमराठी भाषेतूनच उपदेश करावयास हवा, हे त्यांचे मत आहे. म्हणून त्यांनी प्रयत्नपूर्वक मराठी भजनोपदेशावर प्रभूत्व मिळविले. ते हिंदी आणि मराठी दोन्ही भाषेतून व्याख्यान देत असतात. सध्या त्यांनी भजनोपदेश सोडले आहे पण व्याख्यान आणि लिखान थांबले नाही.

ते. दि. २४/०५/१९८२ च्या एका पत्रामध्ये धारूरचे श्री.सोमनाथ शंकरप्पा कांबळे आर्य यांना लिहितात " आर्यसमाजाच्या प्रचाराचे वेड मला लहानपासूनच आहे. आता सभेच्या माध्यमातून ती संधी मला प्राप्त झाली आहे. आपल्यासारख्यांचे मला सहकार्य मिळाल तर मी आणखीन जोमाने प्रचार कार्य करीन" आपल्या समाजात आर्यसमाजात प्रचार-प्रसार अत्यल्प आहे. यासाठी आपण

सर्वांनी प्रयत्न केले पाहिजेत आणि संकुचित जातीव्यवस्थेच्या बंधनातून बाहेर पडले पाहिजे असे ते आपल्या भाषणात सतत म्हणत असत. या कार्यात देखील त्यांनी आपले सर्वस्व पणाला लावून प्रचार कार्य केले. त्यांनी इ.स. १९८२ ते १९८७ पर्यंत २५० त ३०० गावामंध्ये प्रचार कार्य केले. आता त्यांनी आर्यसमाजासाठी आपली शक्ती पणाला लावल.संगतीच्या माध्यमातून त्यांनी गावोगाव वैदिक धर्माचा प्रचार केला, शेकडो तरूणांना व्यसनमुकत केले. शेकडो लोकांना आर्यसमाजाची दिक्षा दिली. पश्चिम महाराष्ट्र, मराठवाडा, विदर्भ, खान्देश, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश इत्यादी भागामध्ये आर्यसमाजाचे प्रचार प्रसार कार्य केले.या काळात त्यांची आर्थिक परिस्थिती टयंत हलाकीची होती तरी पण त्यांनी समाज प्रबोधनाचे कार्य सोडले नाही ते एकदा प्रचारासाठी निघाले की, महिनपा महिना घराकडे येत नसत. त्याची सौ संध्या लोंखंडेनी तया प्रतयेक परिस्थितीमध्ये साथ दिरली आहे. तीनलहान मुलांना घेवून रेणापूर येथे राहत्या घरी आपल्या पतीची वाट पहात बसत. सभेकडून दोन दोन महिने मानधन मित नसे, त्यावेळी त्याची पत्नी उपाशीपोटी दिवस काडीत असे. पं. चंद्रशेखर लोखंडे यांना तर आर्यसमाजाच्या प्रचार कार्याचे एवढे वे लागले होते की, मोह मायेच्या बंधनात अडकून न पडता धार्मिक कार्य व सामाज कार्य केले पाहिजे हे विचार मनामध्ये खोलवर रूजलेले होते. संसार हे असत्य आणि क्षणभुगुर आहे आणि ईश्वरीय कार्य हे शास्वत आहे असे त्यांना वावत असे. महर्षि दयानंदाचे कवचार आपण समाजात रूजवायलाच हावे यासाठी तळमळीने गावो गाव फिरून आर्यसमाजाचा प्रचार करीत असतं.

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेमध्ये कार्य करीत असताना भारतातील अनेक विद्वानांसोबत त्यांनी आर्यसमाजाच्या स्टेजवरून भजनोपदेश आणि व्याख्यान देण्याचा योग आला, त्यात काही प्रमुख व्याख्यातांची नावे अशी आहेत. आचार्य आर्य नरेश (हिमाचल प्रदेश), पं. जयप्रकाश जी आर्य (पूर्व मौलाना खुर्शीद आलम), पं.ॲड शेषेराव वाघमारे, बेतिया बिहार, श्री अमरेश आर्य (पूर्वनाम शेख अमीर अली, हैद्राबाद) पं.नरेंद्रजी (हैद्राबाद), प्राचार्य कृश्णप्रसादजी आर्य (हैदराबाद), पूज्य हरिश्चद्रं गुरूजी (स्वामी श्रध्दानंद सरस्वती), प्रा. कुशलदेव शास्त्री (नांदेड), कॅ. देवरत्न आर्य (मुंबई), प्राचार्य वेदकुमार वेदालंकर (उस्मानाबाद), श्री वि.रा.पाटील, (सोलापूर), श्री. आर्य मुनी (उस्मानाबाद), श्री. बापू साहेब वाघमारे (पूर्व डी.एसपी. उस्मानाबाद), श्री डॉ. हरिश्चद्र धर्माधिकारी (लातूर), प्रो. रत्नसिंहजी (गाजियाबाद, उ.प्र.), पं. प्रेमचंदजी प्रेम (मदनूर आं.प्र.), पं. प्रल्हादजी आर्य (उदगीर), प. नरदेवजी स्नेही (धारूर जि.बीड), प्रो. योगेंद्रकुमार जी विद्याभास्कर (जम्मु) डॉ. स्वामी सत्यप्रकाशजी, प्रयाग उ.प्र., श्री गणेश देवजी आर्य (बीदर),श्री.प.विश्वबंधूजी शास्त्री, ब.वेदपालजी (राजस्थान) श्री उत्तम मुनीजी, पूर्वाश्रमी श्री.डी.आर. दासजी (लातूर) पं. धर्मवीरजी, प्रो. हरिश्चंद्रजी रेणापूरकर, आचार्य सोनेरावजी, आचार्य तानाजी, प्राचार्य देवत्त तुंगार, प्रो. चंद्रकांत शास्त्री (अजमेर राजस्थान), डॉ. भवानीलाल भारतीय (राजस्थान), शेख मुजी बुर्रहमान (गुलबर्गा), श्री. दिनकरराव देशपांडे, (गुंजोटी उमरगा) खासदार श्री.जनार्दनराव वाघमारे (लातूर), आचार्य सोमदेव शास्त्री, मुबई, प्रो. रंगनाथ तिवारी (अंबाजोगाई) माजी मुख्यंमत्री धर्मसिंहजी (कर्नाटक राज्य) आचार्य सुभाषचद्र जी गुरूकुल येडशी, श्रीमती पुष्पाशास्त्री (हरियाणा), आचार्य भगवानदेव चैतन्य (हिमाचल प्रदेश), स्वामी संकल्पनानंदजी (विदर्भ) पं.वेदप्रकाश (क्षेत्रिय-दिल्ली), आचार्य पं. नरेशदत्त (बीजनौर उ.प्र.) पं.धर्मापालजी शास्त्री (मेरठ), पं.सत्यवीर शास्त्री (अमरावती), पं. विश्वनाथजी

(भजनोपदेशक बीदर), पं. सुरेंद्रपाल आर्य (नागपूर), स्वामी ओमानंद पूर्व आचार्य भगवानदेव (हरियाना), स्वामी निगामनंदजी,(पंजाब), पं.ज्ञानेंद्रजी शर्मा (औरंगाबाद), प. प्रल्हादजी आर्य, स्वा. सैनिक नारायणराव पवार, निजमावर बॉम्ब फेकरणारे, पं.सुधाकर शास्त्री (औराद गुंजाटी).

डॉ. चंद्रशेखर लोखंडेह महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेचे अधिकृत प्रचारक होते. त्यांनी वरील विद्वानांसोबत महाराष्ट्रात अनेक गावामधून वैदिक विचारांचा प्रचार केला आहे. परंतु सभेमध्ये येण्याच्या अगोदर आणि इ.स. १९९६ नंतर त्यांनी सभा सोडल्यानंतर ही ते सामाजिक प्रबोधनाचे कार्य करीत आहेत. त्यांचा एक विचार की आपल्या प्राचीन संस्कृतीवर ही ते सामाजिक प्रबोधनाचे कार्य करीत आहेत. त्यांचा एक विचार की, आपल्या प्राचीन संस्कृतीवर जी परकीयांचे काळे ढग आलेले आहेत. त्यांना दूर केलेच पाहिजते आणि ते सातत्याने आजतागायत कार्य करीत आहेत. त्यांनी निम्न गावामंध्ये अनेक वेळा महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभा व आर्यसमाजाच्या माध्यमातून समाजसुधारणेचे व समाज परिवर्तनाचे विचार मांडले आहेत ती गावे अशी आहेत.

गाव ता.जि.
रेणापूर – लातूर
माडज, उमरगा
नळदुर्ग, उस्मानबाद
बोरी, लातूर
औसा,लातूर
उदगीर, लातूर
बोरोळ,उदगीर
पाटोदा, बीड
करडखेल,उदगीर
रोहिणा, उदगीर
येरोळ, उदगीर
बेलकुंड, औसा
शिवणखेड, कळंब
वाशी, उस्मानाबाद
परळी वै. बीड
पथ्रोट, अमरावती
उस्मानाबाद
अजनी, उदगीर
गव्हाण, रेणापूर
साखरा, रेणापूर
अंबुलगा, निलंगा
हनमंतवाडी, निलंगा
बोटकुळ, निलगा
होसूर,निलंगा

गाव – ता.जि.
किल्लारी औसा
कवठा, औसा
मोगरगा, औसा
गुर्जोटी, उमरगा
केज, बीड
बीड
मालेगाव, नाषिक
औरगाबाद
लातूर
अंबेजोगाई, बीड
बनसारोळा, अंबाजोगाई
येडशी, उस्मानाबाद
कळंब, उस्मानबाद
सोलापूर
कासार शिरसी, उमरगा
मुळज, उमरगा
साकोळ, उदगीर
कामखेडा, रेणापूर
बाभळगाव,लातूर
गंगापूर,लातूर
सुमठाणा, लातूर
येरोळ, उदगीर
धुळे
देवलाली कॅंप,नाशिक

नदिवाडी, उदगीर
पळसी,रेणापूर
इन्दपवाडी, परळी
गोवर्धन, परळी
नागापूर, परळी
टाकेवाडी, परळी
दौनापूर, परळी
पूस, परळी
घाटनांदूर, अंबाजोगाई
हिंगोली
नांदेड
धर्माबाद, नांदेड
पूना
पिंपरी आ.स.पूना
नरनीळ, उदगीर
मुरूड अकोला,लातूर
इकुरका, मुरूड
नागरसोगा, औसा
महापूर,लातूर
हारवाडी,लातूर
साई,लातूर
धंसरगाव,रेणापूर
गडीगंवडगाव,निलंगा
मुमराबाद, जळगाव
तगरखेडा, औ.शहा.
हेळंब, उदगीर
माटिगडी, उदगीर
निटूर,निलंगा
सय्यद अंकुलगा, निलंगा
उजेड, निलंगा
नळेगाव, उदगीर
ताडमुगळी, निलंगा
नालेवाडी, औंरगाबाद
अंतरवाली,औरगाबाद
साष्टी पिंपळगांव, औंरगाबाद

भगूर नाशिक
जालना
तलवडा, बीड
गंगाखेड, परभणी
गुळखेडा, औसा
टाका,औसा
मासुर्डी, औसा
षिंदाळ औसा
कारला, किल्लारी
लामजना, औसा
तांबरवाडी, औसा
खरोसा रामेगाव , निलंगा
मुदगड औसा
शेळगी, निलंगा
माळेगाव, निलंगा
चिलवंतवाडी, निलंगा
दैठणा, निलंगा
हडोळी, निलंगा
झरी, निलंगा
टाकळी, निलंगा
धनेगाव,उदगीर
मिरखल, निलंगा
सुदलेगाव, जळगाव
रामेगाव, निलंगा
भोलाने, जळगाव
नांद्रा, जळगाव
दिदुर, जळगाव
धामणगाव, जळगाव
आवार, जळगाव
धामणगाव,जळगाव
पुनगाव, जळगाव
मुशिराबाद, लातूर
शिरूर अनतपाळ,लातूर
साखरा,लातूर
पानचिंचोली,लातूर

जायकवाडी, जालना
लाळी कुमठा, उदगीर
वडीगोद्रा, जालना
हासेगाव,कळंब
वायगाव, उदगीर
जवळा, कळंब
बालाजीवाडी, उदगीर
तुरूरी,उमरगा
देवर्जन, उदगीर
चिचकोट, उमरगा
केसरजवळगा, भालकी
धमोरी, उमरगा
सायगाव, भालकी कर्नाटक
तेलखडी, अमरावती
जानापूर, कर्नाटक
कासमपूर, अमरावती
बसवकल्याण, कर्नाटक
टेंबूसोंडा, अमरावती
निरगुडी, भालकी कर्नाटक
कुष्ठा अमरावती
वलांडी, उदगीर
शिंदी, अमरावती
जळगाव, खानदेश
चौसाळा, अमरावती
नानापेठ, पूना
तुळजापूर, उस्मानाबाद
खडकी, पूना
मुरूम, उमरगा
उत्तमनगर,पूना
सुजलेगाव, बिलोली, नांदेड
ईदगाव, जळगाव
अंधोरी,अहमदपूर
येलदरी, अहमदपूर
काठेचीवाडी, उमरगा
बडूर,उमरगा
बेडगा, उमरगा
तेर, उस्मानाबाद
रामवाडी, तेर, उस्मानाबाद
पेठ बुदडा,लातूर
येल्डा, परळी
मांजरी, मुरूड
हाडोळती, अहमदपूर
सलगरा, निलंगा
बाळापूर आखाडा, परभणी
परभणी
सोमनाथपूर, उदगीर
कोराळी,उदगीर
कासार बालकुंदा, निलंगा
तुगाव, उदगीर
देवणी, उदगीर
खडकवासला, पुणे
देगलूर, नांदेड
भोकर, नांदेड
पानगाव, रेणापूर
जगळपूर, अहमदपूर
वडवळ ना.अहमदपूर
कव्हा,लातूर
औराद गुंजोटी, उस्मानाबाद
शहापूर, नांदेड
बिचकुंदा, निजामाबाद आंध्र
सुल्तान बाजार हैदराबाद
जहिराबाद आंध्रप्रदेश
बीदर, गुलबर्गा कर्नाटक
मेहकर, बीदर कर्नाटक
ज्वालापूर, हरिद्वार उत्तराखंड
गाजियाबाद, उत्तरप्रदेश
मुंबई, महा.
मुदखेड, नांदेड
हदगाव, नांदेड
मदनसुरी, निलंगा

शिराढोण, कळंब
भोकर, नांदेड
औराद शहाजनी निलंगा
काळेचे बोरगाव,लातूर
जमगी, जि.बीदर कर्नाटक

वरील गावामध्ये डॉ.चंद्रशेखर लोखंडे यांनी आपल्या उपदेशकीय कारकीर्दीत अनेक वेळा जावून व्याख्यानें दिल आहेत. त्यांच्या भजनोपदेशाचे वैशिष्ठये असे की, ते रात्री ९ वाजता संगीतबध्द उपदेश देण्यास सुरूवात केली असता, सर्व श्रोते मंत्रमुग्ध होत असत. रात्रीचे १२ वाजेपर्यंत त्यांचे गायन उपदेश चालत असे. एकदा भोकर नांदेड येथे उपदेश करीत असताना ते स्टेजवरच कोसळले. त्यांना बोलून थकवा आला होता. या ध्येयवेड्या प्रचारकाला न परिवाराचे भान होते न स्वतःच्या शरीराचे त्यांनी प्रचारकार्यामध्ये स्वतःला वाहून घेतले होते म्हणून तर स्वातंत्र्यसेनानी ॲड. शेषेरावजी वाघमारे त्यांना 'आर्यसमाज का दिवाना' म्हणायचे ते श्री. शेषेराव वाघमारे –आनंदमुनीजी आणि त्यांची पत्नी सौ.सुमित्रा वाघमारे यांच्यासोबत एक महिना खेडो-पोडो आर्यसमाजाचा प्रचार करीत फिरले. एखाद्या गावात कार्यकर्ते नसल्यामुळे त्यांना एखाद्या मंदीरात उतरावे लागत असे. श्री. वाघमारेंचे धिप्पाड व्यकितमत्व पाहून थोड्या वेळातच लोक गोळा व्हायचे आणि व्याख्यानाची प्रसिध्दी आपोआप व्हायची. रात्री संपूर्ण गाव गोळा व्हायचा. पं. लोखंडेजीचे भजनोपदेश अगोदर व्हायचे आणि नंतर श्री. शेषेराव पिताजी चे दोन तास भाषण चालायचे. गर्भीर्याचा व हास्याचा संगम त्याच्या भाषणात असायचा. कधी रात्री गाराज वाले, श्रोत्यांनाव्हाचे नाही असे पं. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी शेकडो विद्वानांबरोबर महाराष्ट्राच्या कानाकोपऱ्यात आर्यसमाजाचा प्रचार केला आहे. त्यांना समाजकार्यापुढे सांसारिक जबाबदारी नगण्य वाटायची. भजनोपदेशानंतर प्रश्नोत्तरासाठीते वेळं देत असत. ते सर्व प्रश्नकर्त्यांचे समाधानकारक उत्तर द्यायचे ते स्वतः एक कवी आहेत. त्यांनी विद्यार्थीदशेत असताना आर्यसमाज देशभक्तीपर आणि स्वामी दयानंदाच्या कार्यावर अनेक गीत लिहिले आहेत. त्यांचे ५०गीतांचे एक पुस्तक कुछ गीत कुछ संगीत इ. १९७५ मध्ये प्रकाशित झाले. महाराष्ट्रातील अनेक प्रचारक त्यांचे गीत गात असत. या पुस्तकाच्या प्रस्तावनेमध्ये ॲड.शेषेराव वाघमारे तत्कालिन धन आर्य प्रतिनिधी सभा मध्य दक्षिण हैदराबाद लिहितात. डॉ.चंद्रशेखर लोंखंडेंनी माझ्या सोबत अनेक ठकाणी आर्यसमाजाचा प्रकचार माध्यमातून त्यांनी आर्यसमाज आणि महर्षी दयानंदाच्या कार्यावर प्रकाश टाकला आहे".

प्रचारकीय जीवनात वावरत असताना पं. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी वाणी आणि लेखणीद्वारे समाज जागृतीचे कार्य केले आहे" तर्काच्या तराजूत अवतारवाद" हे पुस्तक दखील त्यांनी आपल्या प्रचार कार्यकाळात लिहिले आहे. ईश्वराचे सत्य स्वरूप सांगत असताना देव हा कधी मानवी अवतार घेवू शकत नाही असत्यांनी शास्त्राच्या आधारे सिध्द केले आहे. या पुस्तकाच्या प्रस्तावनेत पूज्य हरिश्चद्र गुरूजी मंत्री आर्य प्रतिनिधी सभा महाराष्ट्र लिहितात- "तर्काच्या तराजूत अवतारवाद पं. चंद्रशेखर लोखंडे जीचे मराठी भाषेत एएक उत्कृष्ट पुस्तकम आहे. एक गुरूकुलय स्नातकाने मोठ्या कौशल्याने हे पस्तके लिहिले आहे. मराठी भाषेत त्यांचा स्तुत्थ्य प्रयत्न आहे. पुस्तक शेवटपर्यत वाचावे वाटते. "पं. चंद्रशेखर लोखंडे हे महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेचे पहिले उपदेशक होते. हैदराबाद मध्ये दक्षिण प्रांतातून महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेची वेगळी स्थाना १९७९-८० मध्ये झाली. या सभेचे पहिले प्रधान ॲड. शेषेराव वाघमारे आणि मन्त्री हरिश्चंद्र गुरूजी यांना नेमण्यात आले. आणि

उपदेशक किंवा प्रचारक म्हणून पं. चद्रशेखर लोखंडे यांनी ५ वर्षे सभेचच्या प्रचार कार्यात अहोरात्र प्रयत्न केले त्योंचया कार्याकाळात मराठवाड्यात तीन महासंमेलने झाली. ते यशस्वी करण्यात पं. चंद्रशेखर लोखडेजी चा फार मोठा वाटा आहे. महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभेचे पहिले अधिवेषन १९८२ मध्ये नांदेड येथे झाले, दुसरे सभेच्या सहकार्याने रेणूर येथे दापंद बलिदान शताब्दी संमेलन १९८५ साली झाले. त्यानंतर लगेच निलंगा येथे महाराष्ट्र आर्य महासंम्मेन १९८६-८७ मध्ये संपन्न झाले. तिन्ही अधिवेशनाच्या यशस्वीतेसाठी पं. चंद्रशेखर लोखंडे यांनी अहोरात्र कार्य केले आहे.

डॉ. लोखंडेंचे एक वैशिष्ट्ये असे की ते ज्या क्षेत्रात उतरले त्या क्षेत्रात त्यांनी संपूर्ण जीव ओतून कार्य केले. सध्या ते संस्कृती रक्षक मंच च्या माध्यमातून समाजकार्यात उतरले आहेत. तसेच लेख पुस्तके आदी लिहिण्यात रमून गेले आहेत. त्यांची जवळजवळ एक डझन पुस्तके तसेच चारशे-पाचशे लेख आजतागायत प्रकाशित झाले आहेत. ते एक गतिशील कर्मयोगी आहेत. परिवारात राहून देखील ते अविश्रांत सामाजिक कार्य करीत असतात. हे एक आश्चर्यच म्हणावे लागेल. त्यांना वयाचे ६५ वर्षे पूर्ण होत आहेत. त्यांच्या आयुष्याची वेल आयुष्याच्या शिखरावर जावो हीच एक बालसखा या नात्याने शुभेच्छा !

वसुदेव नंदनवन कॉलनी,लातूर

काव्य सर्ग

मातृभूमि के तुम सपूत

श्री प्रेम परिहार

श्री प्रेम परिहार दूरदर्शन से जुड़े हैं। हिन्दी साहित्य और संस्कृति में गहरी रुचि रखते हैं। स्वयंसेवी संस्थाओं से जुड़कर समाजसेवा का कार्य करते हैं।

भारत माँ के सच्चे सपूत जीवन अपना अर्पित करते
आगे कदम वढ़ाकर वे फिर पीछे कदम न धरते।
इनका सारा जीवन परहित प्राणी-हित करना होता है
देश, संस्कृति, धर्म के खातिर ही जीवन अर्पित होता है।

ऐसे ही एक राष्ट्र-पूत रेणापुर में जिनका जन्म हुआ
विद्या पढ़कर आगे वढ़कर जिनका राष्ट्र-सेवा ही कर्म हुआ।
एक सार्थक संतुलित जीवन जिनका होता दिव्य महान
वही जगत् का अप्रतिम प्राणी कहलाता है अक्षय जहान।

ऐसा ही दिव्य जीवन इस रेणापूर वासी कवि चन्द्रशेखर का
जिसके निष्काम कर्म पर यकीन करने वाले शंकर सिन्धु का।
शिक्षा ज्वालापुर हरिद्वार गुरुकुल से जिसने पाई दिव्य
शिक्षा व संस्कार ने मिलकर वना दिया यह जीवन दिव्य।

जीवन जिसका दिव्य उसे यश, मान, ज्ञान मिल जाता है
इससे जीवन धर्म सुरक्षित निज व परजन का हो जाता है।
समाज-सेवा, साहित्य-सेवा, धर्म-सेवा, संस्कृति-सेवा
सारे सेवाओं से बढ़कर मानवता की अभिनव सेवा।

अभिनव सेवा करना सीखा शेखर ने बचपन से अविराम
शहर, नगर, कस्बे-कस्बे में और अहिर्निश नित् ग्राम-ग्राम।
मंगल भवन अमंगल हारी है वनी तुम्हारी नीति नियति
दृढ़ संकल्पी, दृढ़ विश्वासी, दृढ़ ज्ञानमार्ग के प्रबल व्रती।

देश धर्म भाषा, स्वदेशी, स्व का स्व पर कितना अभिमान
इसी 'स्व' के बूते पाया तूने अपनो से नित मान-सम्मान।
दुख दुखियारों के तुम हरते अपनी अमित सेवाओं से अविलम्ब
शुभ संकल्प के शुभव्रती बने तुम शेखर शंकर का नाम सुलम्ब।

चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का अभिनन्दन करता संसार

पं. संजय सत्यार्थी

रचनाकार आर्य जगत् के क्रान्तिकारी कवि एवं विद्वान हैं, 'आर्य संकल्प'(पटना) के सह सम्पादक तथा बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के उपमन्त्री हैं ।

आर्य जगत् के गौरव को हम करते है अभिनन्दन प्यार
चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का अभिनन्दन करता संसार ।
दयानन्द के ये सबल सिपाही आर्य समाज के दीवाने
वेदों के पावन प्रकाश को निकले हैं जग में फैलाने
श्रद्धा, सहिष्णुता, विद्वता जिनके अन्दर अपरम्पार
चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का अभिनन्दन करता संसार ।

जिनके कलम से आग उगलती शब्द धधकता ज्वाला
हैदराबाद मुक्ति आन्दोलन का इतिहास विपुल रच डाला।
सच का दामन थाम असत्य पर करते रहते नित प्रहार
चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का अभिनन्दन करता संसार ।

भारत माता के चरणों में जिसने अपना जीवन वार दिया
सच धर दिया सरल रूप से पाखण्ड का प्रतिकार किया
वेद को जानो वेद को मानो, वेद ही है जीवन आधार
चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का अभिनन्दन करता संसार ।

अभिनन्दन ग्रन्थ का सम्पादन कर रहें हैं 'आर्येन्दु' जी
कदम कदम पर विद्वतजन के साथ खड़े सत्यार्थी भी
नस नस में हो लहर आग सी तभी सुरक्षित है संस्कार
चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का अभिनन्दन करता संसार ।

चन्द्रशेखरो जयेद्यथा हि भास्करः

आत्मानन्द शास्त्री

शिलष्टा क्रिया तवैवास्ति परात्मसंस्था।
त्वयि संविशान्ति सततं स्तुतयो विशिष्टाः।।
अप्यग्रणी त्वमसि भासि हि तारकाणाम्।
मध्ये रवेरिव स्वयं सततं प्रकामम्।।

त्वग्रणीः कर्मकृतां हि धीमताम्।
सखे! त्वमेवासि गुरुर्गरीयान्।
यतस्त्वया ज्ञानमशेषमाप्तं।
लोकेन चैतन्यमिवोष्णरश्मेः।।

त्वया सुविहितानि हितानि यानि।
कर्माणि लोके ह्यसकृत कृतानि।।
तेनैष लोको भजते भवन्तम्।
संभाजयामीह निरन्तरं त्वाम्।।

चन्द्रशेखरो यथा स्वतन्त्रता सुसंगरेषु।
रीतिनीति प्रीतिभिः जयश्रियं चकार स्वम्।।
तथैव ह्येष चन्द्रशेखरो महर्षिकार्यकृत्।
मुदा हृदा श्रिया युतो जयेद्यथापि भास्करः।।

धैर्य यस्य पिता क्षमा च जननी शान्तिश्चिरं गेहिनी,
सत्यं मित्रामिदं दया च भगिनी भ्राता मनः संयम्।
शय्या भूमितलं दिशोऽपि वसनं ज्ञानामृतं भोजनम्,
प्रेते यस्य कुटुम्बिनो वद सखे कस्माद् भयं योगिनः।।

धैर्य जिसका पिता है, क्षमा जिसकी माता है, लम्बे काल तक साथ देने वाली शान्ति जिसकी स्त्री है, सत्य जिसका मित्र है, दया जिसकी बहन है, मन का संयम जिसका भाई है, भूमि ही जिसकी शय्या है, दिशायें ही जिसके वस्त्र हैं और ज्ञान रूपी अमृत का पान करना ही जिसका भोजन है, हे मित्र! जिस योगी के ऐसे कुटुम्बीजन हैं, उसे संसार में किसी से भय नहीं होता है।

शुभकामना सन्देश

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि

स्वामी देवव्रत सरस्वती सार्वदेशिक आर्यवीर दल के प्रधान एवं आर्य जगत् के प्रसिद्ध संन्यासी हैं। कई पुस्तकों के लेखक वक्ता के रूप में आप जाने जाते हैं।

श्री चन्द्रशेखर लोखण्डे यथानाम तथा गुण को सार्थक करते हैं। इनके पूर्वजों के लोहे के व्यापारी होने के गुण इनकी लौह लेखनी में आ गया है। चन्द्रशेखर शिव का विरुद् है। शिव संहार के देवता हैं। यही कारण है कि इनकी लेखनी सामाजिक अन्याय, विषमता एवं शोषित, पीड़ित जनों के पक्ष में गतिशील रहती है। स्पष्ट एवं बेबाक लिखना इनकी प्रकृति में स्वभावतः ही विद्यमान है। इतना सब कुछ होने पर भी विषय की गहराई में जाकर वस्तु स्थिति की अभिव्यक्ति करना इनका विशेष गुण है। कई बार देखा गया है कि व्यक्ति भावावेश में मर्यादा का भी अतिक्रमण कर जाता है परन्तु श्री लोखण्डे जी इसके अपवाद हैं।

मेरी इनसे बहुत पुरानी मित्रता है। मैं जब भी लातूर (महाराष्ट्र) जाता हूँ तो प्रायः इनसे मिलना होता है। पारिवारिक जीवन की अनेक प्रतिकूल परिस्थितियों ने इन्हें व्यथित तो किया परन्तु इनके मनोबल को डिगा नहीं सकीं। किसी कवि की निम्न उक्ति इन पर ठीक चरितार्थ होती है।

अम्भोजिनी वन विहार विलासमेव, हंसस्य हन्ति नितरां कुपितो विधाता।
नत्वस्य दुग्ध जल भेद विधौ प्रसिद्धा, वैदग्ध्यकीर्तिमपहतुर्मसौ समर्थः।।

अर्थात् कमलिनियों के मध्य में क्रीडा करते हुये हंस पर कुपित होकर विधाता में तुषार के प्रहार से सभी फूलों की शोभा को श्री विहीन कर दिया परन्तु वह नीर क्षीर का विवेक करने वाली हंस की सद्बुद्धि को आहत नहीं कर सका।

लक्ष्मी और श्री के स्थान पर इन्होंने सरस्वती को आराध्य मान उसी की आराधना को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया है। इन्होंने वेदों में पर्यावरण विज्ञान, आर्य समाज नये युग की ओर, हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास, अवतार निर्णय, मुट्ठी भर तूफान, स्वामी दयानन्द सरस्वती का संक्षिप्त जीवन चरित्र जैसी अनेक अन्य पुस्तकों का सृजन कर करके आर्य जगत् में अपना जो बहुमूल्य अवदान दिया साथ ही समाज सुधार और समाजसेवा का जो कार्य करते आ रहे हैं उसके लिए इनकी जितनी भी प्रशंसा की जाय कम ही है। आप के अत्यन्त उपयोगी लेख प्रायः पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

:मानो हि महतां धनम्' महापुरुषों का सम्मान ही धन है और वे इसके उचित पात्र भी हैं। इनके 65 वर्ष पूर्ण होने पर अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन हो रहा है यह मेरे लिए बहुत प्रसन्नता की बात है। मुझे विश्वास है कि वे मान–प्रतिष्ठा की भूल–भूलैया में न फंसकर आगे भी सृजन करते रहेंगे । मैं सार्वदेशिक आर्य वीरवीर दल की ओर से उनका हार्दिक अभिनन्दन करते हुये उनके सुखद जीवन की कामना करता हूँ।

शुभाकांक्षी
स्वामी देवव्रत सरस्वती,
प्रधान संचालक

जे जगत् का जितना उपकार करेगा उसको ईश्वर की व्यवस्था से उतना सुख प्राप्त होगा
–महर्षि दयानन्द सरस्वती

आने वाले पीढ़ी के मार्गदर्शक

डा. बाघमारे जी एक महान् शिक्षाशास्त्री, लेखक और राजनीतिज्ञ हैं। समाज सेवा, सृजन, राजनीति और परोपकार के कार्य करना आप का स्वभाव है। अद्यतन राज्यसभा के मनोनीत सांसद हैं।

श्री डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे मूलतः समाज सेवक हैं। दलित एवं कमजोर वर्गों को वे विद्यार्थी जीवन से ही सेवा करते आये हैं। अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए वे काफी प्रयास करते आये हैं। आयुर्वेदिक डाक्टर होने के नाते उन्होंने गरीब तबकों के लोगों की वैद्यकीय सेवा की है। आर्य समाज के संस्कारों ने उनको संवेदनशील बनाया है। समाज प्रबोधन का कार्य वे जीवनभर करते आये हैं। अन्तरजातीय विवाह आन्दोलन में वे सक्रिय हैं। उन्होंने स्वयं अन्तर जातीय विवाह किया है। उनके परिवार के अन्य सदस्यों ने भी अन्तरजातीय विवाह किये हैं। 'जाति प्रथा' नाम शेष करने की धुन उनके मन पर सवार है।

डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी एक विद्यार्थी प्रिय अध्यापक हैं। वे जाने माने लेखक भी हैं। मराठी और हिंदी में उन्होंने कई ग्रन्थों का लेखन किया है। समाज में भाईचारा बढ़ाने का कार्य वे कर रहे हैं। आर्य समाज के माध्यम से समाज सुधार का कार्य उनके जीवन का मिशन है। बहुआयामी व्यक्तित्व के वे धनी हैं।

भविष्य में प्रा.डॉ. चन्द्रशेखर जी का जीवन सफल हो, सुखी हो और सम्पन्न हो मैं कामना करता हूँ।

जीवेम शरदः शतम्

डॉ. जनार्दन बाघमारे
सांसद (राज्यसभा)
179 साउथ अवेन्यू,
नई दिल्ली – 110001

पशूनपाहि, गां मा हिंसी, अजां मा हिंसी, अविं मा हिंसी,
इमंमा हिंसीद्विपादं मा हिंसीरेकशं पशुं माहिंस्यात्, सर्वा भूतानि।(यजुर्वेद)
पशुओं की रक्षा करो, गाय को मत मारो, बकरी को मत मारो, मनुष्य और दो पैर वाले पक्षियों को मत मारो, एक खुर वाले घोड़े व गधे को मत मारो और किसी प्राणी को मत मारो।

संघर्ष के योद्धा

श्री प्रकाश मुनि वानप्रस्थी .आर्य विरक्त वानप्रस्थ संन्यास आश्रम के संस्थापक एवं संचालक हैं। आर्य समाज के प्रचार–प्रसार में अनवरत रत रहते हैं।

आप द्वारा प्रेषित पत्र प्राप्त हुआ। पत्र से विदित हुआ कि आर्य समाज के प्रसिद्ध गवेषक, इतिहासकार और समाजसेवी महाराष्ट्र निवासी डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी के जीवन पर आधारित एक अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन आर्य जगत् के कुछ सक्रिय कार्य कर्ताओं और समाजसेवियों के सम्मिलित प्रयासों से किया जा रहा है। पत्र से यह भी ज्ञात हुआ कि वे 65 वर्ष की आयु पूर्ण करके 66 वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। इस विशेष अवसर पर उनका अभिनन्दन किया जाएगा। डॉ. साहब का कृतित्व और व्यक्तित्व के बारे में मैंने पत्र से विस्तार से समझा है।निश्चित ही ऐसे महान् व्यक्ति का अभिनन्दन होना ही चाहिए। उनके अभिनन्दन से आने वाली पीढ़ी को राष्ट्र, समाज, धर्म और संस्कृति की रक्षा और सेवा करने की सीख भी मिल सकेगी, मुझे ऐसी आशा है। लोखण्डेजी का जीवन जितना संघर्षमय रहा है उतना ही पवित्र भी रहा है। वे इसी प्रकार से राष्ट्र, समाज और संस्कृति की सेवा करते रहें।

मै उनके जीवन के हेतु भूयश्य शरदः शतात् की शुभकामना व्यक्त करता हूँ।

शुभकामनाओं के साथ

प्रकाश मुनि वानप्रस्थी
संस्थापक एवं संचालक,
आर्य विरक्त वानप्रस्थ संन्यास आश्रम
ग्राम–चिलौडा, फूलपुर, इलाहाबाद–212404.

जो क्रोध को सह लेते हैं, पी जाते हैं और लोगों के अपराध क्षमा कर देते हैं, ऐसे लोगों के लिए हजरत रसूल ने फरमाया है कि जो कोई गुस्से को रोकेगा, अल्लाहताला उससे अपना दण्ड रोक देगा।

–कुर्आन सरीफ़

एक सन्तुलित जीवन

डा. प्रियव्रतदास हिन्दी एवं उड़िया के एक यशस्वी लेखक एवं आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान हैं। आर्य प्रतिनिधि सभा उड़ीसा के वर्षो प्रधान रहे हैं।

जीने को सभी जीते हैं, पर जीना किस प्रकार चाहिए, यह कोई बिरले ही जानते हैं। पक्षी जन्म के बाद आकाश में उड़ जाता है। पशु चल पड़ता है, परन्तु मनुष्य शिशु जन्म लेने के समय अत्यन्त असमर्थ और असहाय रहता है। 20–25 साल तक माता–पिता शिक्षक और वृहत्तर समाज का आश्रय लेकर मनुष्य बनता है। इस लिए कहा गया है कि मनुष्येतर जीव बनकर जन्म लेते हैं, परन्तु बनने के लिए मनुष्य जन्म लेता है। उसको मनुष्य बनाने वालों के प्रति कृतज्ञ रहकर कर्तव्य सम्पादन करना उसका उत्तरदायित्व है। यही कारण है कि मनुष्य जीवन ऋण–ग्रस्त है और वह जिस गरिमा के साथ ऋण–परिशोध करता है, उस प्रकार महान बनता है। प्रो. चन्द्रशेखर लोखण्डे को मैं इस कारण से महान पुरुष मानता हूँ क्यों कि वे ऋण चुकाने के लिए कटिबद्ध हैं।

ज्वालापुर से बने 'विद्याभास्कर' युवक चन्द्रशेखर अपने संकल्प और पुरुषार्थ से सेवा, संस्कार व शिक्षा क्षेत्र में आर्य जगत् में जाज्वल्यमान भानु के समान प्रकाशित हो रहे हैं। वे मुझसे 18 वर्ष छोटे हैं और मैं 83 वर्ष की आयु में ओडिसा जैसे पिछड़े प्रान्त में अपने को और समाज को प्रशिक्षित करने में तत्पर हूँ। मेरे सामने वे युवा हैं। वे भूयश्य शरदः शतात् की अवस्था प्राप्त करें और अपने व्रत को अधिक सक्रिय करें। मैं उनके परिवार जनों के हेतु मंगल कामना करता हूँ।

ईशावास्यम्

डॉ. प्रियव्रतदास
139 शहीदनगर, भुवनेश्वर, ओडिसा
चलभाष : 09437053732

जिन्दगी अपने दम पर जी जाती है दूसरों के
कन्धों पर तो जनाजे निकलते हैं।

–शहीद–ए–आजम भगतसिंह

आदर्श व्यक्तित्व के धनी

प्रो. रूपकिशोर शास्त्री एक यशस्वी वैदिक विद्वान एवं वैदिक धर्म के प्रखर वक्ता हैं। आप महर्षि संदीपनी राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान दिल्ली के सचिव हैं।

अत्यन्त हर्ष एवं प्रेरणा का विषय है कि प्रो. डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डेजी के जीवन के 65 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर एक अभिनन्दन ग्रन्थ लोकार्पित करने जा रहे हैं। यह अपने में एक ऐतिहासिक एवं आगे आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणास्पद अध्याय प्रारम्भ होगा। एक ऐसे विद्वान के सम्मान में अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन कर रहे हैं जिन्होंने संस्कृत एवं वैदिक वांगमय के क्षेत्र में महनीय योगदान प्रदान कर उन सभी के लिए एक उत्साहवर्धक मार्ग प्रशस्त किया है जो इस क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने जा रहे हैं। इस दृष्टि से आचार्य लोखण्डेजी उन सभी के लिए आदर्श व्यक्तित्व के रूप में एक नक्षत्र हैं। उनके द्वारा की गई सारस्वत साधना संस्कृत व वैदिक जगत् के अतिरिक्त आर्य जगत् के लिए एक मानक है।

महर्षि सांदीपनि राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान की ओर ऐसे गुणगौरव के प्रखर पुरोधा के सम्मान में निकाले जाने वाले अभिनन्दन ग्रन्थ के लिए जहाँ हार्दिक शुभकामनायें हैं वहीं लोखण्डेजी के उत्तम स्वास्थ्य, दीर्घायु की कामना के साथ इनके प्रशस्त जीवन के लिए शुभाशंसायें इस श्लोक के द्वारा प्रषित करता हूँ –

ऋणरोगादि दारिद्रं, पापं च अपमृत्यवः। भयशोकमनस्तापाः नश्यन्तु ते सर्वदा।।

आप का

प्रो. रूपकिशोर शास्त्री

सचिव, महर्षि सान्दीपनि राष्ट्रीय वेदविद्या प्रतिष्ठान

(मानव संसाधन विकास मन्त्रालय, भारत सरकार)

वेदविद्या मार्ग, चिन्तामण गणेश, जवासिया, उज्जैन, म.प्र.

जिस व्यक्ति ने कभी गलती नहीं की उसने कभी कुछ नया करने की कोशिश नहीं की

–अल्बर्ट आइंस्टीन

मानवता के सच्चे सेवक

डॉ. भटनागरजी आर्य जगत् के समर्पित कार्यकर्ता, यज्ञधर्मी, सफल चिकित्सक, समाजसेवी और आर्य सन्देश प्रत्रिका के सह व्यवस्थापक हैं।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आर्य जगत् के प्रसिद्ध लेखक, गवेषक और समाज सेवक डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के 65 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर उनके महान 'कृतित्व और व्यक्तित्व' अभिनन्दन ग्रन्थ के रुप में कुछ संस्थाओं द्वारा उन्हें भेंट करने का उपक्रम किया गया है। डॉ. लोखण्डे ने महाराष्ट्र के लातूर जनपद में 1993 में आये भूकम्प में मानवता की जो सेवा की थी उसे कभी भुलाया नहीं जा सकता है। इसके अतिरिक्त अस्पृश्यता और जन्मगत जातीयता के विरुद्ध उन्होंने जो अभियान चलाये उससे उनके समाज सुधार परक व्यक्तित्व और कृतित्व की अमिट पहचान बनी। आज भी 65 वर्ष की आयु में वे जिस प्रकार सृजन और सेवा के कार्य में लगे हैं, उससे समाज को जनहित के कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।

ऐसे महान् व्यक्तित्व के उत्तम स्वास्थ्य और शतायु की मैं कामना करता हूँ और आशा करता हूँ कि डॉ. साहब इसी प्रकार शेष जीवन अपना अवदान देते रहेंगे।

शुभकामनाओं सहित

आर्य ओमप्रकाश भटनागर

243 ए.जी.सी.आर एन्क्लेव
दिल्ली—110092
(आर्य जगत् के वरिष्ठ समाज सेवक)

ऐसे भी लोग हैं जो देते हैं, लेकिन देने में कष्ट अनुभव नहीं करते, न वे उल्लास की अभिलाषा करते हैं और पुण्य समझ कर ही कुछ देते हैं। इन्हीं लोगों के हाथों ईश्वर बोलता है और इन्हीं की आंखों से वह पृथ्वी पर अपनी मुस्कान बिखेरता है।

—खलील जिब्राल

महान राष्ट्र सेवक

डा.जे.पी. गुप्ता एक सफल दन्त चिकित्सक के साथ प्रसिद्ध समाजसेवी भी हैं। आर्य समाज के प्रचार–प्रसार में रुचि रखते हैं।

आप का भेजा पत्र मिला । पत्र के अनुसार आर्य जगत् के मूर्धन्य लेखक, गवेषक और इतिहासकार डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के साहित्य, इतिहस लेखन, आर्य समाज के प्रचार–प्रसार, समाज सुधार और एवं समाजसेवाओं को लेकर देश की कुछ संस्थाओं ने उनके 65 वर्ष पूर्ण होने के अवसर पर उनके(डॉ. लोखण्डे जी के) उन्हें अभिनन्दन ग्रन्थ भेंटकर उनके महान कार्यों एवं व्यक्तित्व का अभिनन्दन करने का फैसला किया है जो स्तुत्य ही है। डॉ. साहब आर्य जगत् के ही नहीं देश के भी एक महान राष्ट्रसेवक हैं। उनका अभिनन्दन होना एक कृति–व्यक्तित्व का अभिनन्दन करने जैसा है। इस अवसर पर प्रकाशित अभिनन्दन ग्रन्थ से निश्चित ही उनके समग्र व्यक्तित्व और कृतित्व के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

मैं आर्य समाज भोगल, दक्षिण दिल्ली वेद प्रचार मण्डल और वरिष्ठ नागरिक क्लब एवं अपनी ओर से उनके शतायु और उत्तम स्वास्थ्य की शुभकामना करता हूँ। ऐसे गौरवशाली व्यक्ति का अभिनन्दन होने से आने वाली पीढ़ी को राष्ट्र एवं धर्म चेतना की सीख भी मिल सकेगी।

अनेक शुभकामनाओं के साथ

डॉ. जे.पी गुप्ता
पूर्व प्रधान
दक्षिण दिल्ली वेद प्रचार मण्डल
एवं प्रधान आर्य समाज भोगल, नईदिल्ली

एक ऐसी स्थिति होती है जब मनुष्य को विचार प्रकट करने की आवश्यकता नहीं रहती। उसके विचार ही कर्म बन जाते हैं, वह संकल्प से कर्म कर लेता है। ऐसी स्थिति जब आती है तब मनुष्य अकर्म में कर्म देखता है, अर्थात् अकर्म से कर्म करता है।

–गांधी

सबके बन्धु

श्री प्रताप सिंह गुरुकुल के स्नातक रहे हैं। आप एक सामाजिक कार्यकर्ता के साथ–साथ वैदिक धर्म प्रचार–प्रसार में समर्पित हैं।

विविध सूत्रों ये ज्ञात हुआ कि प्रो. डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे जी का एक अभिनन्दन ग्रन्थ छप रहा है। अपार प्रसन्नता हुई कि मैं चन्द्रशेखरजी का सहपाठी होने के नाते पूर्ण दावे के साथ इस उक्ति को कह सकता हूँ–होनहार विरवान के होत चीकने पात। बचपन में ही उनके पैरों व नेत्रों की छलक से योगी लोग, ज्योतिषाचार्य लोग बालक के भविष्य की विद्वता को खोज लेते हैं। लातूर महाराष्ट्र की भूकम्प की घटना ने मेरा दिल तोड़ दिया था। सहसा टीवी पर उस समय के दृश्यों को देखा था। काफी खोजने के बाद जब मुझे अपने सहयोगी मित्र की कुशलता की जानकारी हुई, मैं खुश था। बहुत खुश था। मैंने मिठाई भी गाँवों में बँटवाई थी क्योंकि मैं उस समय गाँव का प्रधान था।

अधिक विशेष विवरण न लिखकर संक्षिप्त में अपनी स्वयं का रिश्ता शादी की घटना लिख रहा हूँ, जो स्वयं आप इनकी विद्वता के बारे में जान सकेंगे। डॉ. ओमपाल सिंह चौहानजी, डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डेजी एवं आत्मानन्द शास्त्री जी विशेष रूप से मेरी शादी में निमन्त्रित थे। मेरे पिताजी, परिवार वाले इन्हें देखकर बहुत खुश थे, क्यों सभी आर्यसमाजी परिवार, आर्य विचार वैदिक रीति से पाणिग्रहण संस्कार गाँव सलेमपुर से (बारात प्रस्थान से लेकर) गाँव सहजात पुर तक और शादी मण्डप तक शादी का सम्पूर्ण कार्य महर्षि कृत संस्कार विधि से डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डेजी एवं श्री आत्मानन्द शास्त्रीजी ने मिलकर कराया था। जो प्रथा प्रा. चन्द्रशेखरजी व आत्मानन्द जी ने गाँव में वैदिक रीति की प्रारम्भ की थी आज भी वही प्रथा पचास गाँवों में बिना दहेज प्रथा की चल रही है। कुछ गाँवों में घूम–घूमकर चन्द्रशेखरजी आर्य समाज खोलने, वैदिक रीति अपनाने व नशा मुक्ति अभियान चलाने की प्रेरणा दी थी, जिसे आज सभी गाँवों के लोग याद करते हैं। लोखण्डेजी में बचपन से महर्षि दयानन्द जी की प्रेरणा रही। वैदिक धर्म, वैदिक शिक्षा, आयुर्वेद स्वास्थ्य सम्बन्धी लेख एवं संस्कृति रक्षक मंच व संस्कृत शोध संस्थान की स्थापना आप ने की है। आप का नई पीढ़ी के जवानों को आर्य समाज से जोड़ना बड़ा योगदान रहा है। ईश्वर ऐसे विद्वान बन्धु को दीर्घायु प्रदान करे।

डॉ. प्रतापसिंह(ग्राम प्रधान)
ग्राम–सलेमपुर, बिजनौर, उ.प्र.

देशवासियों के प्रेरणा स्रोत

डा. दिनेश शास्त्री गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में वेद विभाग के अध्यक्ष एवं वैदिक धर्म के अध्येता हैं।

गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के सुयोग्य विद्वान प्रो. (डॉ.) सुशील कुमार त्यागी'अमित' द्वारा प्रेषित पत्र से ज्ञात हुआ है कि आप प्रो. डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे के 65 वर्षीय वय के पूर्ण करने पर एक अभिनन्दन ग्रन्थ सम्पादित करने जा रहे हैं, यह अत्यन्त प्रसन्नता एवं उल्लास का विषय है। डॉ. लोखण्डे एक उच्चकोटि के साहित्यकार, समाजसेवी, शिक्षाविद् एवं सुमानव हैं। डॉ. लोखण्डेजी ने 1960–70 के दशक में गुरुकुल महाविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की है। वे अपने विद्यार्थीकाल से एक प्रबुद्ध, सुयोग्य, परिश्रमी एवं अन्य छात्रों के लिए पथप्रदर्शक रहे हैं। शिक्षा प्राप्तान्तर श्री लोखण्डेजी साहित्याराधना, समाज कल्याण, परोपकार, हिन्दी भाषोत्थान व वैदिक संस्कृति के वाहक के रूप में हमारे सामने आये हैं। उन्होंने दक्षिण भारत में जन चेतना एवं समाज के उद्धार के लिए जो कार्य किये वे न केवल दक्षिण भारतवासियों के लिए ही प्रेरणाप्रद हैं अपितु सम्पूर्ण देशवासियों के प्रेरणा के स्रोत हैं। उन्होंने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया, जिनमें से 'वेदों में पर्यावरण विज्ञान, मुटठीभर तूफान, हैदराबाद मुक्ति संग्राम का इतिहास' आदि प्रमुख हैं। मैं प्रो. लोखण्डे जी से सम्बन्धित अभिनन्दन ग्रन्थ के सम्पादन हेतु आपको अग्रिम बधाई देता हूँ। इस अभिनन्दन ग्रन्थ को पढ़कर जहाँ पाठकवृन्द को उनके एवं उनके द्वारा कृत कार्यों के बारे में जानकारी मिलेगी साथ ही साथ उनके जीवन–पथ को नई दिशा दे सकेंगे।

भवदीय

प्रो. दिनेशचन्द्र शास्त्री
अध्यक्ष, वेद विभाग
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

बड़े बड़े जो दीसहि लोग। तिन कउ बिआपै चिंता रोग।।
कउं न बड़ा माइआ वडिआई। सो बड़ा जिनिराम लिवलाई।।
भूमिआ भूमि ऊपरि नितलुझै। छोडि चलै त्रिसना नहीं बुझै।।
क्हु नानक इहु ततु बीचारा। बिनु हरिभजन नाही छुटकारा।।
– श्री गुरुगंथसाहिब

एक प्रतिष्ठित विद्वान

डा. राकेश शास्त्री संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान व लेखक हैं। संस्कृत एवं वैदिक धर्म के प्रचार –प्रसार में रुचि रखते हैं।

आप का दिनाँक 1/12/2012 का कृपा पत्र अभी कुछ दिन पूर्व ही मुझे प्राप्त हुआ। आप आर्य समाज के प्रतिष्ठित विद्वान प्रो. चन्द्रशेखर लोखण्डे के अभिनन्दन ग्रन्थ का प्रकाशन कर रहे हैं। इसके लिए साधुवाद एवं बधाई। मेरी शुभकामना है कि यह ग्रन्थ प्रो. चन्द्रशेखर के सुगढ़ व्यक्तित्व के समान ही अपनी आन्तरिक एवं वाह्य साज सज्जा के साथ अपने श्रेष्ठ आकार–प्रकार में प्रकाशित हो। मैं लोखण्डे जी के शतायु और अच्छे स्वास्थ्य की कामना करता हूँ।

आदर के साथ

डॉ.राकेश शास्त्री
अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग
श्री गोविन्द गुरु राजकीय महाविद्यालय, बांसवाड़ा(राज.
पिन-३२७००१, वायुदूत : ०९४६०३०८६२३

जिसकी सन्तान उसके वश में है, पत्नी अनुगमन करने वाली और आज्ञाकारिणी है और जिसके पास धन की कमी नहीं है यानी जो आर्थिक रूप से सम्पन्न है, ऐसे मनुष्य के लिए स्वर्ग इसी संसार में है

एक राष्ट्रचेता पुरुष

डा. सुरेशचन्द्र त्यागी एक प्रखर शिक्षक, समाजसेवी, और राष्ट्रधर्मी तपःपूत हैं। आप की अन्यन्य सेवाओं के लिए अनेक संस्थाओं ने सम्मानित किया हैं।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि शिक्षाविद् एवं आर्य जगत् के मूर्धन्य विद्वान प्रो. डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे की आयु के 65 वर्ष पूर्ण होने पर देश की कुछ संस्थाओं ने आप को एक अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट करने का निर्णय लिया गया है।

डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे आर्य जगत् की सुप्रसिद्ध शिक्षण संस्था गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के यशस्वी स्नातकों में से एक हैं। आप का जीवन शिक्षा, साहित्य एवं समाजसेवा के लिए समर्पित रहा है। आप वैदिक साहित्य तथा संस्कृत साहित्य के ही नहीं अपितु आयुर्वेद विज्ञान के भी विशिष्ठ विद्वान हैं। किल्लारी(लातूर) भूकम्प में सहायता कार्य, राष्ट्रभाषा के प्रचार–प्रसार में योगदान, आरोग्य एवं चिकित्सा सम्बन्धी कार्य, सामाजिक एवं राष्ट्रीय चेतना आदि महनीय कार्यों के माध्यम से अपनी कर्मठता, लगनशीलता एवं निष्ठा का पूर्ण परिचय दिया है। ऐसे महान मनस्वी, तपस्वी व यशस्वी व्यक्ति का जीवन धन्य है। राष्ट्र–निर्माण, समाजसेवा तथा उत्कृष्ट साहित्यिक सेवा के लिए बहुमुखी प्रतिभा के धनी लोखण्डेजी को राष्ट्रीय सेवायोजना प्रकोष्ठ उत्तराखण्ड(संस्कृत विश्वविद्यालय बहादराबाद, हरिद्वार) की ओर से हार्दिक शुभकामनायें। परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना है कि आप इसी प्रकार अहिर्निश सेवा करते रहें। महाकवि कालिदास के शब्दों में– "उदन्वदाकाश–मही तलेषु रोधमाप्नोतु यशस्त्वदीय' आप का यश निरन्तर वृद्धि प्राप्त होता रहे।

भवदीय

डॉ. सुरेशचन्द्रत्यागी
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय
एन.एस. एस पुरस्कार प्राप्त
कार्यक्रम समन्वयक
राष्ट्रीय सेवा योजना प्रकोष्ठ
बहादराबाद, हरिद्वार

वैदिक सिद्धान्तों के प्रति समर्पित

श्री खुशहाचन्द्र त्यागी आर्य जगत् के सुप्रसिद्ध समजसेवी एवं लेखक हैं। वैदिक धर्म एवं आर्य समाज के लिए पूर्णतः समर्पित हैं।

पत्र 1 आप का दिनाँक 12/10/2012 का लिखा मिला, जिसमें आपने लिखा कि आदरणीय डॉ. चन्द्रशेखर जी लोखण्डे जो आर्य जगत् के एक देदीप्यवान् नक्षत्र हैं जिनका सम्पूर्ण जीवन साहित्य सेवा, वैदिक धर्म व आर्य संस्कृति के प्रचार–प्रसार में बीत रहा है, उनके जीवन पर एक अभिनन्दन ग्रन्थ छपने जा रहा है जिसको पढ़कर मुझे अति प्रसन्नता हुई। इससे भी अधिक प्रसन्नता मुझे तब हुई जब आप ने मुझे भी इस योग्य समझकर, उनके सम्बन्ध में कुछ लिखने का सुअवसर दिया। आप ने मेरे जैसे एक साधारण आर्य लेखक को इतना सम्मान दिया, यह मेरे लिये सौभाग्य की बात है। आप की इस उदात्त भावना का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ तथा आप के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

लोखण्डे जी एक प्रखर वक्ता, दृढ़ ऋषिभक्त, निष्ठावान आर्यसमाजी और कई भाषाओं के ज्ञाता हैं । वैदिक संस्कृति इनके नश–नश में बसी हुई है। ये एक बहुत बड़े प्रमाणिक वैदिक विद्वान हैं, खोजपूर्ण लेख लिखते रहते हैं तथा बड़ी–बड़ी संगोष्ठियों में बराबर भाग लेते रहते हैं। इस लिये ये आर्य जगत् के सर्वपरिचित व्यक्ति हैं।

मुझे स्मरण आ रहा है, एक बार दिल्ली में मिले थे और मैं उनके लेखों से उनसे पहले से ही सुपरिचित हूँ। अब आप का पत्र पढ़ने से मेरी जानकारी और भी बढ़ गई है। जैसा मैंने इनको जाना, उसके अनुसार इनकी योग्यता, विद्वता और वैदिक सिद्धान्तों के प्रति इनके समर्पित भाव को देखते हुये ऐसे व्यक्तित्व का अभिनन्दन अवश्य ही होना चाहिए। यह आर्य जगत् के लिए भी गौरव की बात होगी। इससे केवल, नव युवकों को ही नहीं बल्कि सभी साहित्य प्रेमियों को प्रेरणा व एक नई दिशा मिलेगी।

मैं इनके अभिनन्दन ग्रन्थ की सफलता की कामना करते हुये ईश्वर से इनके उत्तम स्वास्थ्य की कामना करता हूँ और शतायु नहीं बल्कि शताधिक आयु की कामना करता हूँ। परमात्मा से प्रार्थना है, ये अपनी योग्यता और कार्य क्षमता से आर्य समाज को ही नहीं बल्कि पूरे राष्ट्र व पूरे विश्व की सेवा करके अधिक समय तक लोगों को लाभान्वित करते रहें।

आप का

खुशहालचन्द्र आर्य
वरिष्ठ उपप्रधान,
आर्य समाज बड़ा बाजार, कोलकाता
पिन–700007, चलभाष : 09830294432

धार्मिक और सामाजिक सुधार के योद्धा

श्री एस.पी. सिंह एक श्रेष्ठ शिक्षक के अतिरिक्त सामाजिक कार्यकर्ता भी हैं। वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार में रुचि रखते हैं।

मुझे गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर के डॉ. सुशील कुमार त्यागी जी के द्वारा यह जानकर अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि ऐसे महान व्यक्ति समाजसेवी एवं शिक्षाविद् परम आदरणीय डॉ. चन्द्रशेखरजी के लोखण्डे के जीवन के 65 वर्ष पूर्ण होने पर अभिनन्दन ग्रन्थ की रचना की जा रही है।

मैंने लोखण्डे जी को महान इस लिखा क्यों कि कोई भी मनुष्य अपने कार्यों से महान बनता है। लोखण्डे जी द्वारा किये गए समाजोपयोगी कार्य, धार्मिक सुधार एवं राष्ट्रीय एकता के लिए भारतीय संस्कृति का प्रचार–प्रसार कर रहे हैं। साथ ही सामाजिक परिवर्तन हेतु जातीयता, अस्पृश्यता तथा ऊँच–नीच का भाव मिटाने का बेमिसाल कार्य कर रहे हैं। इनकी जीवनशैली एवं कार्यों का वर्णन उस ग्रन्थ में सम्मिलित हो जिससे आने वाली पीढ़ी को कुछ करने के लिए नई दिशा मिल सके।

मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि डॉ. लोखण्डेजी दीर्घायु होकर समाजसेवा कर भावी पीढ़ी के मार्गदर्शक बने रहें।

शुभकामनाओं सहित

एस.पी.सिंह

प्रवक्ता, पी.बी म्यु इण्टर कॉलेज,
हरिद्वार

प्रवास में विद्या मित्र होती है, घर में विदुषी पत्नी मित्र होती है,
रोगी के लिए औषधि मित्र होती है और
अन्त समय में धर्म ही एक मात्र मित्र होता है

मराठवाडयाच्या मातीला लाभलेले एक बहुआयामी व्यक्तिमत्व

आ. विक्रम वसंतराव काळे मूळचे बोरगाव जि. लातूरचे राहणारे आहेत. आपण राष्ट्रवादी नेते असून महाराष्ट्र विधान परिषदेचे शिक्षक आमदार आहेत.

प्रा. डा. चंद्रशेखर लोखंडे यांच्या पासष्ठी निमित्य गौरव ग्रंथ प्रसिद्ध होत असल्याचे समजले वाचून आनंद झाला. प्रा. डा. लोखंडे यांचा जीवनपट शैक्षणिक, सांस्कृतिक, सामाजिक व साहित्यक अशा अनेक रंगाने असुन, प्रा. लोखंडे हे उत्तम अध्यापक तर आहेत तसेच साहित्यक व तज्ञ आयुर्वेदाचार्य म्हणुन संपूर्ण महाराष्ट्राला सुप्रसिद्ध असलेले एक बहुआयामी व्यक्तिमत्व मराठवाडयाच्या मातीला लाभले हे आपल्या सर्वाचे भाग्यच आहे असे मी समजतो. डा. लोखंडे हे आपल्या कारकिर्दीचे पासष्ट वर्शे पूर्ण करत आहेत, त्यांनी चालवलेली साहित्याची चळवळ ते आयुष्याच्या शेवटच्या क्षणापर्यत चालवतील याची मला खाली आहे. प्रा. लोखंडे सरांनी साहित्य आणि सामाजिक क्षत्रातील आपली धडपड सतत तेवत ठेवली आहे. समाजासाठी त्यांनी केलेले कार्य मग ते स्वातंत्र्यसैनिकांचा सत्कार असो किवा देशाचे भावी आधारस्तंभ बालकांसाठीचा पल्स पोलिओ अभियानाचा कार्यक्रम, व्यसनमुक्ती, वैधकीय निस्वार्थ सेवा आदि महत कार्य तरूणासाठी निष्वतच प्रेरणादायी राहील याची मला खात्री आहे. शैक्षणिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व साहित्यक कार्याशी त्यांची असलेली नाळ अजीवन अशीच राहो ही ईश्वर चरणी प्रार्थना. गौरव ग्रंथ संपादन समितीस व प्रा. डा. चंद्रशेखर लोखंडे सरांच्या भावी वाटचालीस तसेच गौरव ग्रंथास माझ व मराठयातील तमाम शिक्षक बांधवाच्या वतीने मनपूर्वक शुभेच्छा....

धन्यवाद

आ. विक्रम वसंतराव काळे
भाऊ महाराश्ट्र हाऊसिंग सोसायटी,
बार्षी रोड,लातूर - ४१३५३१

प्रवास में विद्या मित्र होती है, घर में विदुषी पत्नी मित्र होती है, रोगी के लिए औषधि मित्र होती है और अन्त समय में धर्म ही एक मात्र मित्र होता है

डॉ. लोखण्डे कर्मठ, समाजसेवी विशिष्ट पुरुष

लेखिका आर्य जगत् की विश्व प्रसिद्ध विदुषी, लेखिका, गवेषिका और पाणिनी कन्या महाविद्यालय, वाराणसी उ.प्र. की आचार्या है

मुझे यह बात ज्ञात कर अति प्रशन्नता हुई कि 'श्री मान्य भ्राता चन्द्रशेखर लोखण्डे' का महानगर मुम्बई के श्रेष्ठीवर्यों द्वारा व मान्य आर्यसमाजों द्वारा अभिनन्दन किया जा रहा है। इस अवसर पर 'अभिनन्दन ग्रन्थ' भी प्रकाशित होगा, यह उत्तम कार्य है।

डॉ. चन्द्रशेखरजी लोखण्डे कर्मठ, समाजसेवी विशिष्ट पुरुष हैं। आप ने आर्य जगत् की महनीय सेवा की है, यह सर्वविदित है। आप ने लेखन, प्रवचन आदि विधाओं द्वारा वैदिक सिद्धान्तों को जन–जन तक पहुँचाया है। वेदों का प्रचार कार्य आप के जीवन का उद्देश्य बना हुआ है। समय–समय पर आप ने जन–जागृति के कार्य भी किये हैं। बहुशः वर्धापनानि।

परमात्मा आप को स्वस्थ, निरोग व दीर्धायुष्य प्रदान करे। देशभर के उन सभी सदस्यों का मैं मान करती हूँ जो तपस्वी लोखण्डे जी का सम्मान कर रहे हैं। अभिनन्दन स्मारिका प्रकाशन की सम्पूर्ण समिति को सादर नमन्। सभी को हार्दिक शुभकामनायें।

भूयश्च शरदः शतात्

आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा
पाणिनि कन्या महाविद्यालय

वाराणसी, उ.प्र.–10

सज्जन व्यक्ति दुष्टों के सम्पर्क में आने से अपना अच्छा स्वभाव नहीं छोड़ते,
जैसे कोयल कौएं का साथ होने पर भी अपनी मधुर कूक नहीं छोड़ती।

खण्ड–3

फोटो गैलरी

- समाज को समर्पित क्षण
- अंतरंग क्षण
- अविस्मरणीय क्षण

मेघजीभाई आर्य साहित्य पुरस्कार, मुंबई के पुलिस कमिश्नर डॉ.सत्यपाल सिंह से प्राप्त करते हुए प्रो.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे

सांसद, पूर्व कुलपति डॉ.जनार्दनराव वाघमारे और पूर्व विधायक श्री.शिवाजीराव पाटील कव्हेकर और मध्य में प्रो.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे

स्वतंत्रता सेनानी श्री.गोंविदलालजी बाहेती के गौरव समारंभ में डॉ.लोखण्डे सी.आर.एवं धर्मपत्नी सौ.संध्या लोखण्डे

भारत की प्रसिद्ध शिक्षा संस्था शाहू महाविद्यालय लातूर में भारतीय स्वतंन्त्रता संग्राम पर व्याख्यान देते हुए प्रा.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे एवं प्राचार्य व प्राध्यापक गण

किल्लारी भूकम्प (१९९३) मे गाँव नांदुरगा ध्वस्त हो गया था उसका निरीक्षण कराते हुए डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे और पंजाब प्रान्त के आर्य प्रतिनिधि
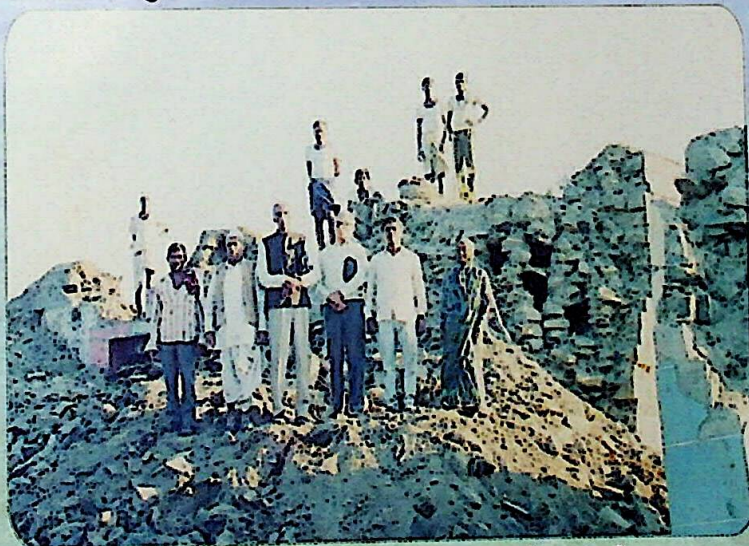
किल्लारी भूकम्प में दाऊ लिम्बाळा गाँव पूरी तरह से नष्ट हो गाय उसका निरीक्षण करते हुए पंजाब प्रान्तीय आर्य प्र.सभा के पदाधिकारी एवं डॉ.लोखण्डे।

संस्कृति रक्षक मंच द्वारा संचालित वक्तृत्व प्रशिक्षण शिविर का मार्गदर्शन करते हुए अध्यक्ष डॉ.लोखण्डे जी, प्रा.राजेश कारंजकर, प्रा.कोमटवाड और श्री.[illegible] सर

प्रसिध्द साहित्यिक प्रा.श्री.रंगनाथ तिवारी जी, डॉ.सूर्यनारायण रणसूभेजी, प्रा.राजेन्द्र जी शास्त्री, श्री.जयप्रकाश शर्मा, प्रा.नागनाथ कुंठे, श्री.मोरे, श्री.के.ई.हरदास के साथ प्रा.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे।

हैदराबाद मुक्तिसंग्राम समारोह के अवसर पर भाषण देते हुए डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे

गुलबर्गा विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे का व्याख्यान हुआ, इस अवसर पर उनका स्वागत करते हुए विभागाध्यक्षा

प्रा.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे के साथ डॉ.रूपकिशोरजी शास्त्री (अध्यक्ष वेद विभाग गुरुकुल कांगड़ी), डॉ.कुशलदेव शास्त्री (प्रसिद्ध संशोधक आर्यजगत्) प्रा.नरदेवजी गुडे (हिन्दी विभागाध्यक्ष शाहू कॉलेज लातूर)

कर्नाटक के राज्यपाल श्री.टी.एन.चतुर्वेदी डॉ.लोखण्डे का सत्कार करते हुए

[illegible]नगर लातूर के भूमिपूजन के समारोह पर मा.मुख्यमंत्री [illegible] जी देशमुख और समाज के मंत्री डॉ. लोखण्डे

हैदराबाद मुक्तिसंग्राम स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर भाषण देते हुए डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे, तथा मंचपर उपस्थित आर्य वीर दल व आर्य समाज लातूर के पदाधिकारीगण
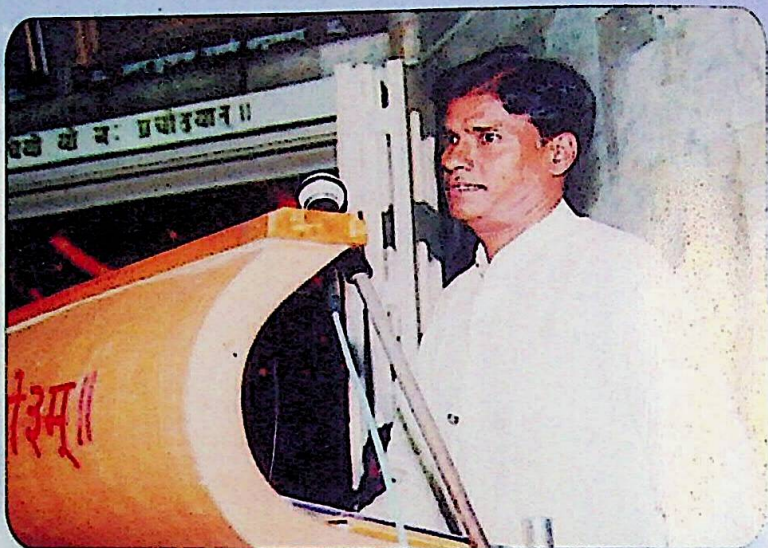
मुंबई सान्ताक्रुज आर्यसमाज में भाषण देते हुए प्रो. डॉ.लोखण्डे

गुरुकुल महाविद्यालय के स्नातक सहपाठी डॉ.कुशलदेव शास्त्री और नरदेवजी गुडे के साथ डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे (बांये)

[illegible]व.सावंत गुरूजी लिखित पुस्तक का विमोचन
[illegible] हुए प्रा.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे एवं सावंत परिवार

प्रजातन्त्र दिवस के शुभ अवसर पर केशवराज प्राथमिक विद्यालय लातूर में ध्वजारोहण करने के पश्चात एक सामूहिक दृश्य

डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे लिखित 'वेदों मे पर्यावरण विज्ञान' (मराठी) का [illegible]
डॉ.भवानीलाल भारतीय एवं प्रा.आखिलेश शर्मा तथा लातूर आर्यसमाज के [illegible]

प्रा.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे लिखित 'स्वामी दयानन्द चरित्र (मराठी) का विमोचन करते हुए दिनकर देशपांडे (पूर्व महामंत्री महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधी सभा) एवं सुमंत्र चन्द्रशेखर लोखण्डे व अन्य कार्यकर्ता

"संस्कृति गौरव पुरस्कार" समारोह में अपने विचार प्रकट करते हुए प्रा.सौ.स्मिता खानापुरे (महापौर, लातूर महानगरपालिका) मंच पर प्रो.डॉ.लोखण्डे (अध्यक्ष) तथा अन्य मान्यवर

भारत की प्रसिद्ध शिक्षा संस्था शाहू महाविद्यालय लातूर में भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम पर व्याख्यान देते हुए प्रा.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे एवं प्राचार्य व प्राध्यापक गण

गॉंव गुंजोटी में पुस्तक के विमोचन के अवसर पर भाषण [illegible]
डॉ. लोखण्डे तथा मंचपर उपस्थित आर्यजन

प्राध्यापकीय सेवा से सेवानिवृत्ति के अवसर पर लोखण्डे पति-पत्नी का स्वागत करते हुए संस्था संचालक प्रा.गोंविदराव जी घार एवं अन्य।

समाजिक कार्य के बारे चर्चा करते डा. जनार्दनराव वाघमारे तथा डा. चन्द्रशेखर लोखण्डे
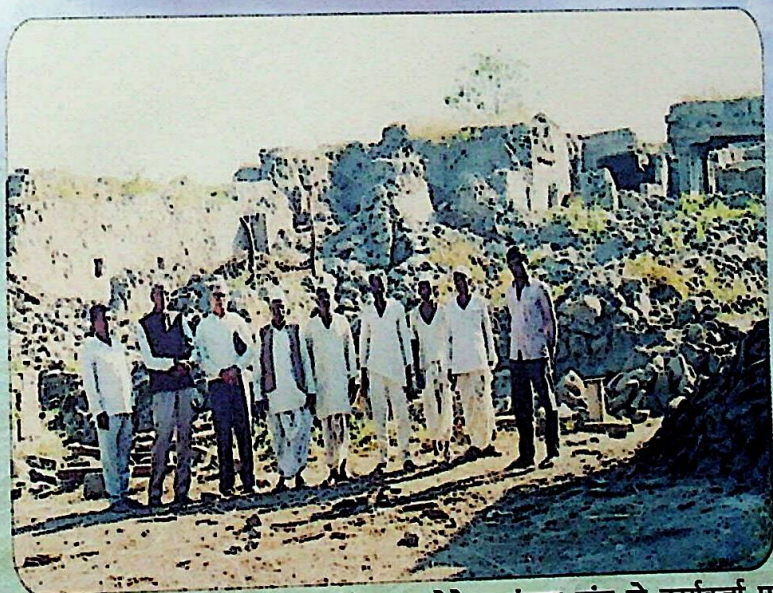
भूकम्प में दाऊ लिंबाळा (किल्लारी) नष्ट होनेपर पंजाब प्रांत के कार्यकर्ता एवं प्रा.चन्द्रशेखर लोखण्डे निरीक्षण करते हुए।

प्रो.डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे लिखित 'अवतार निर्णय' का विमोचन करते हुए सांसद [illegible]
एवं आचार्य सानेराव (अमेरिका) तथा आर्यसमाज के प्रधान शंकरराव मोरे व विरदीच [illegible]

डॉ.चन्द्रशेखर लोखण्डे लिखित 'वेदों में पर्यावरण विज्ञान' का विमोचन करते हुए सांसद डॉ.जनार्दनराव वाघमारे, कुलपति डॉ.येडेकर व अन्य अतिथि मान्यवर।

के जीवन–दर्शन आधार–सूत्र

र 'इदन्नमम' से प्रारम्भ होकर व्यक्ति, सम
सी त्याग [illegible]ना से स्वयं एवं समाज को मज
नवी[illegible] [illegible] राष्ट्र को समर्पित होता
है।

मी हो[illegible] [illegible]हासकार इतिहास का
य को [illegible] इतिहास रचते हैं।

नहीं बे[illegible], [illegible] जज्बा है जो राख में चिं
में वह एक अंगार की तरह होता है जो कभी–
है और देश की हर बुराई को जलाकर राख क

नक बुराइयों से लड़ना हमारा पहला काम है,
रही कुपरम्पराओं को नष्ट कर नहीं सकते वे
कर सकते।

रों से संस्कृति बनती है, जब बच्चों पर अ
माज सुसंस्कृत होंगे। राष्ट्र संस्कृतियों से
आंधियों में बह जाने की बजाय पूरब की
ठंडक पहुँचाना कहीं बेहतर है।